THE UNIVERSITY OF JODHPUR LIBRARY

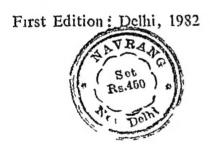
| Class N | 0. | | ario 43 | Book | No. | | |
|---------|----|------------|---------|------|-------------------------|----------------------|------|
| Acc. No | | The second | | Date | frestra est as | an e distribus que e | 7.50 |
| | | D | ATE I | UE | * * *. * * * * * * * | | |

This book should be returned on or before the date last stamped below. If the book is kept beyond that date, an overdue charge will be payable simultaneously with the return of the book according to the Library rules in force.

| Due date of return | Membership No. | Token No. | Initials of C.A. |
|--------------------|-------------------|--------------|------------------|
| | | | · |
| | | | * |
| , , , , | | | |
| | | | , , , , |
| | ; | . , | |
| | , | | |
| | b 4 | | , |
| | | | |
| | | 100 | |
| <u> </u> | - | | () |
| | | ٠, | - · · · · - · |
| | | •. | ` |

DHARMASASTRA SAMGRAHA VOL. 1

© NAVRANG Booksellers & Publishers RB-7 Inderpuri New Delhi-110012





Printed in India.

Processed & printed at G.N. Photomatics, Hari Nagar, New Delhi and Arun Composing Agency, D-102, Seclampur, Delhi-110053.

Published by Mrs. Nirmal Singal for Navrang, RB-7,

Inderpuri, New Delhi-110012

विषयानुक्रमणिका

Foreword

xvii

| roreword | | 241-4 |
|--------------|---|---------|
| Editor's Not | te | xix |
| Introduction | • | xxi |
| | 2 2 4 | |
| | लघ् ग्रत्रिसंहिता (पृ. १-१०) | ₹ |
| श्रध्याया: | विषया: | पृष्ठा: |
| ٧. | प्राणायाममाहात्म्यवर्णेनम् | ? |
| ₹. | प्रणवजापमाहोत्म्यम् | |
| ₹. | वेदाध्ययनप्रशंसा, - | 8. 8 |
| 8 | प्रायहिचत्तरहंस्यवर्णनम् | Š |
| y. | अभ्युक्षणनिर्माणविधिः . | ¥ |
| · | निषद्धजनान्नुभोजने प्रायश्चित्तवर्णनम् | × |
| દ્દ્ | देवराजस्य स्वगुरं वृहस्पति प्रति सर्वोत्तम- | |
| • | दानविषये प्रश्नः | 3, |
| | देवगुरुणा विविधोत्तमदानस्य वर्णनम् | १० |
| | , , , , , | • |
| , | अन्निसंहिता (पृ. १०-३६) | . • |
| · | £ | * |
| विषयसंख्या | विषया: | पृष्ठाः |
| १. | धर्मस्वरूपज्ञानाय अत्रिं प्रति ऋषीणां प्रस्तः | |
| | अत्रेश्च प्रत्युत्तरम् | १० |
| २. | धर्मज्ञानप्रदानयोग्यानि पात्राणि | " |
| ₹. | गुरोः शास्त्रस्य चावमाननाया दुप्फलम् | ११ |
| 8. | वर्णधर्मवर्णनम् ' ' | 15 |
| ሂ. | जपहोमपरस्य राष्ट्रद्रोहिणः शूद्रस्य | |
| | वधविधानम् | 3, |
| E. | स्वधर्मपालनफलनिरूपणम् 🗦 | ול |
| 9. | म्लेच्छान् प्रति राज्ञः कर्त्तव्यम् | 27 |
| | | •, |

(vi)

| ۲. | ब्राह्मणधर्मः | १२ |
|--------------|--|----------|
| 8. | नृपस्य प्रजापालनमाहात्म्यम् | 22 |
| 80. | स्नानविधिः | " |
| 88- | मनुष्याणां मलाः परिशोधनञ्च | ,, |
| १२. | ब्राह्मणस्य लक्षणानि | 71 |
| १3. | असूयालक्षणम् | ** |
| १४. | शौचलक्षणम् [े] | ,, |
| १५. | मंगललक्षणम् | ,, |
| १६. | अनायासलक्षणम् | • , |
| <i>१७.</i> | अस्पृहालक्षणम् े | " |
| १ <u>५</u> . | दमलक्षणम् | १३ |
| 38. | दानलक्षणम् | |
| २०. | दयालक्षणम् | |
| २१- | एतद्गुणयुक्तस्य विप्रस्य मुक्तिवर्णनम् | .27 |
| २२. | इष्टापूर्त्तलक्षणम् अनुष्ठानवर्णनञ्च | ." |
| २३. | यमनियमवर्णनम् | 'n |
| २४. | स्नानफलं, पुत्रप्राप्तिफलञ्च | |
| २५. | तीर्थविशेषे स्नानस्य फलम् | १४ |
| २६. | आहारशुद्धिः | • |
| २७. | सन्ध्यास्नानाद्यनुष्ठाने प्रायश्चित्तविधानम् | " |
| २८. | विविधशुद्धिप्रायश्चित्तवर्णनम् | " |
| ₹€. | अन्तस्थशवदूषितगृहंस्य शुद्धिवर्णनम् | १ १ ५ |
| ₹0. | सूतकस्य विनिर्णयः | |
| ३१. | चान्द्रायणव्रतविधानम् | १७ |
| ३२. | विविधप्रायश्चित्तवर्णनम् | |
| ₹ ₹. | स्त्रीशूद्राणांस्थानम् | १५ |
| ₹४. | द्विजानां स्थानम् | 38 |
| ३५. | वेदमाहात्म्यम् | 20 |
| ₹ ६ . | हव्यकव्यविधानम् | |
| ₹₹. ₹७. | दानार्थं सुवर्णादिघटितपात्राणां माहात्म्यवर्णनम् | 11 |
| ₹5. | भिक्षूणां भिक्षाग्रहणविधिः | 27 |
| ₹€. | महापातकानि, तेषां प्रायश्चित्तनिरूपणञ्च | " २१ |
| 1 - | Guinella and state and state a | 11 |

(vii) विविधपापानां शोधनोपायाः २१ मीनव्यवस्था 38 दानविधिः ·37 श्राद्धे निमन्त्रणीयविप्राणां योग्यता-काल-दानादि-विषये विचारः 34 कतिपयानामुपपातकानां प्रायश्चित्तविधानम् ३५ स्नाननियमाः फलञ्च '३६' आचारसंहितापालनफल**म्** ३६ वृद्धात्रेयसंहिता (पृ. ३६-४६) विषया पृष्ठाः 3 & प्राणायाम-माहात्म्यवर्णनम् प्रणवजापमाहात्म्यम् 30 वेदाध्ययनप्रशंसा `३,5 रहस्यप्रायंश्चित्तवर्णनम् 80 अभ्युक्षणनिर्माणविधिः 88 निषद्धजनान्न भोजने प्रायाश्चित्त विधानम् ४१ विविधशुद्धिवर्णेनम् 83 विष्णुस्मृतिः (पृ. ४६-४७) विषय: पृष्ठा:

38

पृष्ठाः

18

५5

义与

£ 8,

3

विष्णुमाहात्म्यकीर्त्तनम्

यज्ञवराहवर्णनम्

वर्णानां विभागः

द्रव्ययरिमाणम्

ऋणादानम् लेख्यम्

महापातिकनां देण्डः

राजधर्माः

विष्णुस्मृतिः (पृ. ५३-१४८)

विषयर:

त्रसरेणुमारभ्य सुवर्णनिष्ककार्षापणादि-

٧o.

४१.

४२.

४३.

88.

४५.

४६.

श्रध्यायाः

8.

٤.

श्रध्यायाः

8.

٦.

3.

6.

(viii)

| ጜ ₊ | साक्षणः | .46 |
|-----------------|---------------------------------------|-------------|
| .3 | समयिकया | ७१ |
| १ 0. | घटदिव्यम् | ७२ |
| १ १- | अग्निदिव्यम् | ७२ |
| 8.2. | चदकदिव्यम् | ७३ |
| १ ३. | विषदिव्यम् | ७३ |
| १४- | कोशदिव्यम् | ७४ |
| રે . ૫- | पुत्रविशेषाः | ७४ |
| १६. | संकरजपुत्राः | ७५ |
| १७. | दायविभागः | ७६ |
| १ 5. | अंशनिर्णयः | ७६ |
| ξ ε. | पैतृमेधिकविधिः | ७५ |
| ₹0- | प्रेतवन्धूनामाश्वासनम् | 3 र |
| २ १- | एकोह्ष्टिादिश्राद्धनिरूपणम् | 5२ |
| २२. | आशौचनिरूपणम् | इ ं३ |
| ₹₹. | अत्यन्तोपहृतशुद्धिः | ५ ६ |
| 28. | संस्काराः | ५ ६ |
| २५० | स्त्रीधर्माः | 03 |
| २६. | ज्येष्ठपत्न्या अधिकारः | 60 |
| ₹७. | निषेकः | 03 |
| २८. | प्रायश्चित्तोपोद्धातः | ६६ |
| ₹8- | अतिपातकानि | ७३ |
| ₹0. | कामकृतमहापातकानि | <i>७</i> ३ |
| ३१. | कामकृतानुपातकानि | ७३ |
| 3 7- | कामकृतोपपातकानि | 23 |
| 33. | कामकृतजातिभ्रं शकराणि | 82 |
| ३४. | कामकृतसंकरीकरणानि | ٤٣ |
| ३४. | कामकृतपात्रीकरणानि | ६८ |
| ₹६. | कामकृतमलावहानि | 33 |
| ३७- | कामकृतप्रकीर्णकपातकानि | 33 |
| ३८: | कामकृतपातकेष्वकृतप्रायश्चितानां नरकाः | 33 |
| -3 € | तेपामेव विविधयोनिपु जन्म | १०० |

१०१

088

तेषामेव विविधरोगाः

80.

नित्यश्राद्धानि

| 00. | त्राचन । पापव रागाः | 1.1 |
|-------------------|------------------------------------|--------------|
| ४१. | कामकृतपातकप्रायश्चित्तानि | १०२ |
| ४२. | कामकृतपातकप्रायश्चित्तानि | १०३ |
| ४३. | कामकृतपातकप्रायश्चित्तानि | १०३ |
| 88. | कामकृतपातकप्रायश्चितानि | 808 |
| ४५. | अकामकृतपातकप्रायश्चित्तानि | १०५ |
| ४६. | अकामकृतपातकप्रायश्तिानि | १०६ |
| ४७. | अ कामकृतपातकप्रायश्चित्तानि | ११० |
| ४८. | अकामकृतपातकप्रायश्चित्तानि | 380 |
| 86. | संसर्गप्रायश्चित्तम् | १११ |
| ųο. | रहस्यपातकप्रायश्चित्तम् | ११ ३ |
| પ્ર १. ં | प्रायश्चित्तीयमन्त्राः | ११४ |
| ५२. | अननुतापिपातकिनः | \$ 6.8 |
| ५३. | धनविवेक: | 224 |
| 48. | गृहस्थधर्माः | ११५ |
| ५५. | शौचविधि: | ११६ |
| ५६. | दन्तधावनविधिः | <i>শ্ १७</i> |
| ४७. | आचमनविधिः | ११७ |
| ४८. | गृहस्थस्य धनार्जनम् | १ १८ |
| ¥ E. | स्नानविधिः | 358 |
| ξο. | विष्णपूजाविधिः | 250 |
| ६१ | विष्णुपूजाविधिः | १२१ |
| ६२. | पूजोत्तराङ्गानि | १२१ |
| € ₹. | भोजनविधिः | '१२३ |
| ६४. | स्त्रीसंगमः | 18-58 |
| ६४. | शयनविधि: | १२५ |
| ६६. | स्नातकधर्माः | १२४ |
| <i>६७.</i> | साधारणधर्माः | १२७ |
| ६८. | श्राद्धविधि: | १२७ |
| E. | अष्टकाश्राद्धविधिः | |
| ٧o. | श्राद्धदेवता: | 358, |
| ७ १. | ਰਿਕਾश्राहानि | 378 |

| ७२. | र्नैमित्तिकश्राद्धानिः | १३० |
|-------------|--------------------------------|-------------|
| ७३. | काम्यश्राद्धानि | १३० |
| ७४ | श्राद्धोपकरणानि | 8 3 8 |
| ७४- | श्राद्धोपकरणानि | <i>१</i> ३२ |
| ७६. | श्राद्धभोक्तृधर्मादयंः | 833 |
| 99. | पङ्क्तदूर्षकाः | १३३ |
| 95. | पङ्क्तिपावनाः | ? ३३ |
| -30 | वर्जनीयदेशः | १३४ |
| 50 | प्रशस्तदेशाः | 8.38 |
| ५ १. | वृषोत्सर्गविधिः | १३५ |
| 57. | कु ^{ष्} णाजिनदानविधिः | १३६ |
| 53. | उभयतोमुखंदानम् | १३६ |
| ፍ ሄ. | कात्तिकस्नानविधिः | १३६ |
| ፍ ሂ. | प्रकीर्णकदानविधिः | १३७ |
| ८ ६. | कूपादिदानम् | १३८ |
| 50. | अभयादिदानम् | 388 |
| 55 | दानपात्राणि ं | १४० |
| ५ ६. | वानप्रस्थधर्माः | १४० |
| .03 | ् वानप्रस्थधर्माः | १४१ |
| ६१. | संन्यासिधर्माः | १४१ |
| £2- | मोक्षार्थंचिन्तनम् | 888 |
| ६३. | धरणीकर्तृ कविष्णुस्तुतिः | १४४ |
| 88. | धरणीकर्तृ कलक्ष्मीस्तुतिः | १४६ |
| £4. | शास्त्राध्ययनफलश्रुतिः | १४८ |
| | | |

लघु हारोतस्मृतिः (पृ. १४८-८६१)

| ञ्रध्यायाः | विषया: | पृष्ठाः |
|------------|----------------------------|---------|
| ?. | वर्णाश्रमधर्मवर्णनम् | १४५ |
| ₹. | चतुर्वर्णानां धर्मवर्णनम् | १५० |
| 3. | व्रह्मचर्याश्रमधर्मवर्णनम् | १५१ |
| ૪. | गृहस्थाश्रमधर्मवर्णनम् | १४२ |

(xi)

१५७

१५५

वानप्रस्थाश्रमधर्मवर्णनम्

संत्यासाश्रमधर्मवर्णनम्

¥.

٤,

| Z . | सत्यासाअगवगनगरम् | • • |
|---------------------------------------|--|--|
| ڻ. | योगवर्णनम् | १५६ |
| | बृद्धहारीतसंहिता (पृ. १६१-३२०) | |
| भ्रव्यावाः | विवयाः | पृष्ठाः |
| ₹. | पञ्चसंस्कारप्रतिपादनम् | १६१ |
| ₹. | वैष्णवानां पुण्ड्रसंस्कारवर्णनम् वैष्णवानां नामसंस्कारवर्णनम् वैष्णवानां मन्त्रसंस्कारवर्णनम् वैष्णवानां पञ्चसंस्कारवर्णनम् | १ ६३ १६८ १६ <i>६</i> १७२ |
| ź. | भगवन्मन्त्रविधानम् | १७२ |
| ٧. | प्रातःकाले भगवदाराधनविधिवर्णनम् प्रातःकालेभगवत्समाराधनविधौ | १६८ |
| • | कृषिवर्णनम् प्रातःकालभगवत्समाराधनविधौ | २०६ |
| e. | राजधर्मवर्णनम् | २१० |
| ¥. | भगवन्नैमित्तिकसमाराधनविधिवर्णनम् | २१५ |
| , , , , , , , , , , , , , , , , , , , | भगवतो यात्रोत्सववर्णनम् वैष्णवेष्टिकियातः श्राद्धपर्यन्तं वर्णनम् महापातकादिप्रायश्चित्तवर्णनम् रहस्यप्रायश्चित्तवर्णनम् महापातकादिप्रायश्चितवर्णनम् | २ ५१ २५७ २६२ २६६ २७३ |
| v. | नानाविधोत्सववर्णनम् | २७६ |
| ₩. | विष्णुपूजाविधिवर्णनम् सवृत्यधिकारभाण्डादीनां शुद्धिवर्णनम् सभावदुष्यादिद्रव्यभाण्डादीनां संसुद्धिवर्णनम् | 7 6 6 3 0 8 |
| | | |

यमस्मृतिः (पृ. ३६७-३७२)

| चिषयाः | पृष्ठाः |
|--|---------------|
| चतुर्णा वर्णानां नानाविधप्रायश्चित्तवर्णनम् | इह् |
| श्रापस्तम्बस्मृतिः (पृ. ३७२-३५२) | |
| श्रंध्याया: विषया: | वृष्ट्याः |
| १. गोरोधनादिविषये गोहत्यायां च प्रायहिचत्तवणिनम् | ३७२ |
| २. उदकशुद्धिनिरूपणं, वापीकूपादीनां शुद्धिवर्णनम् | ३७४ |
| ३. गृहेऽविज्ञातस्यान्त्यजादेनिवेशने बालादिविषये च | • |
| प्रायश्चित्तम् प्रायश्चित्तम् | રૂ ૭ ૬ |
| ४. चाण्डालकूपजलपानादौ पानादिषूदवयादिसंस्पर्शे च | • |
| प्रायश्चित्तम् | ३७६ |
| ५. वैश्यान्त्यजश्वकाकोच्छिष्टभोजने प्रायश्चितवर्णनम् | ३७७ |
| ६. नीलीवस्त्रधारणे नीलीभक्षणे च प्रायदिचलम् | ३७८ |
| ७. अन्त्यजादिस्पर्शे रजस्वलायाः, विवाह्यदिषु कन्याय | Γ |
| रजोदर्शने च प्रायश्चित्तम् | ३७६ |
| मुरादिदूषितकांस्यशुद्धिवर्णनम् | ३५० |
| शूद्रान्नभोजने निन्दानिरूपणम् | ३ ५ १ |
| ६. अपेयपानेऽभक्ष्यभक्षणे च प्रायश्चित्तर्णनम् | ३ँ८२ |
| १०. मोक्षाधिकारिणामभिधानवर्णनम् | ३५४ |
| विवाहोत्सवादिष्वन्तरामृतसूतके सद्यः शुद्धिवर्णनम् | ३५४ |
| , | |
| सम्बत्तंस्मृतिः (पृ. ३८६-४००) | |
| ग्रध्याया विषयाः | पूर्वे |
| १. ऋषीणां सम्वत्तंप्रति प्रश्नः | ३५३ |
| २. धर्म्यकृत्याय योग्यदेशवर्णनम् | ३,५६ |
| ३. ब्रह्मचारिधर्मवर्णनम् | ३५६ |
| ४. आचमनभोजनयोविधिः | ३५७ |
| ५. सन्ध्याऽग्निहोत्रयोरकरणे पायञ्चितम् | 350 |

| Ę. | ब्रह्मचारिणो धर्माः | ३८७ |
|----|---------------------------------------|------------------|
| ড. | जन्मसमये मृत्युसमये चाणीचव्यवस्था | ⁻ ३८८ |
| | दाननियमाः | 3=8 |
| ξ. | गृहस्यवानप्रस्यसन्धासिकत्तंव्यवर्णनम् | 735 |
| | न।न।विधप्रायश्चित्तवर्णनम् | ₹3 \$ |
| ₹. | निधनेऽपि अणोच्याः पुरुषाः | ७३६ |
| ٦. | निपिद्धं भोज्यपेयेऽन्त्यजस्पर्शे च | |
| | प्रायदिचत्तविधानम् | 386 |
| ₹. | लघुपातकानां प्रायश्चित्तविधानम् | 33€ |
| | इत्यनुक्रमणिका समाप्ता । | , , , |

(xviii)

which was not critically edited has gone long out of print and an endeavour, therefore, to publish an edition with introduction, text and notes has been over due. We congratulate the editor, for his painstaking endeavour in the field. The academic world will welcome this edition as this will serve the purpose of research by the present generation of scholars working in the field of Smṛti & Dharmasastra.

Varanasi 21-1-1982 Gaurinath Sastri

EDITOR'S NOTE

The Smrti literature has served a very useful purpose in the multifacet stories of Indian civilisation and culture. In the yesteryears, serious readers of this branch of Indology were provided with the editions of only some important Smrtis. But the nonavailability of certain minor Smrti works had deprived the researchers of providing the academic world the main themes contained in them. The main objective in the publication of this Collection is to make available the minor texts to the academic world and to the general reader geniunely interested in the ancient scriptures. Dharmasāstra Samgraha was first edited by Pandit Mahadeva Shastri Amarpurkar in the Saka Era 1805 and printed at Jnāna Darpan Press, Bombay. Pandit Amarpurkar, for reasons best known to him, had not provided us the Subject index and Contents of the different Smrti works. I have, however endeavoured to bridge this gap by the addition of an exhaustive subject index, and introduction in the beginning and an important word index at the end of the collection. I express my deep sense of gratitude to my Gurudeva Professor Gaurinath Sastri, Vice-Chancellor, Sanskrit University, Varanasi who has very kindly written a foreword to this Collection and has thereby enhanced its importance.

New Delhi 15.1.1982

Vachaspati Upadhyaya

INTRODUCTION

The authority of the revealed literature 'Veda' or 'Sruti' has never been disputed. It has been regarded as the fountain source of religions and religious practices of the ancient Hindus. According to Laghu-Hārīta Samhitā the śruti and Smrti are the two eves of the Brahmanas created by God. If deprived of the knowledge of the one a person is called one eyed and if devoid of both, he is called blind. In matters of discrepancy between the Srutis, Smrtis and Puranas, the former should be held as decisive. whereas the Smrtis should have preference in all topics where there would be a difference of opinion between them and the Purānās.2 In the Smrti Sāstra, manner and conduct have been specially dealt with as they constitute the very essence of a cultured life. The major Smrti works are divided in three parts: Āchāra, Vyavahāra and Prāyaścitta. The section on manners 'Samsakaras' have been described as the basis of social conduct. By performing these 'Samsakārās' at the right time and in a proper way, the physical and mental dross is wiped out with the help of the 'Mantras'. As a result, one's mind develops and the person concerned gains spiritual strength. Further more, social and ethical codes have also been described at great length in these Smrtis. In this collection, however, there is hardly any Smrti which deals with Vyavahāra in a comprehensive manner, though stray references are not far to seek. The prayascitta, however, is a major issue with all the Smrtikaras. They also spell out in detail the different kinds of sins and their consequences so that people may defer from sins and may take recourse to noble path. The

^{1.} Laghu Harita Smrti 1.25

^{2.} Vyas Samhita 1,4;

(xxiv)

- (ix) Prāyascittas for taking forbidden food or drink and for other transgressions (59-76).
 - (x) Impurity on birth and death (77-81).
- (xi) Chândrāyaṇa and various penances (112-133).
- (xii) Regulations about gifts (318-336).
- (xiii) Śrāddha (337-363).
 - (xiv) Fruits for following injunctions (389-391).

Authorities quoted by Airi

It is indeed curious to note that Atri himself has been quoted as an authority (p. 33) (cf—tasya sraddham na datvyam tu andhaksyratriabravit p. 33) Āpastamba (p.23), Vyāsa, (p. 18), Šankha (pp. 17, 27), Šātātapa (p. 27).

The Vedanta, Samkhya, yoga have been referred to as forming a syllabi for a 'vipra, to elevate him to the rank of a 'dwija (cf. Vedantam pathite nityam sarvasangam pari tyajet, samkhya yoga vicarasthah sa vipro dwija ucyate p. 34). The references to the study of the Purana and Bhagavata can also be traced (p.35). Some salient view points:—(i) At seems to be fairly liberal in his attitude towards untouchability when he remarks that in fairs, marriage seasons, in Vedic sacrifices and on all festive occasions there is no question of untouchability.2 (ii) Atri's views on adoption of a son by a sonless person, has been regarded as authority by Dattakamimamsa. Atri opines that the representatives of a son should be appointed by a sonless person (i.e. should adopt a son) with care, for the rite of offering Pinda and water (p. 13)1. (iii) Atri enumerates the washerman, the shoemaker, nata, buruda, fisherman (kaivarta), meda, and bhilla in degraded class (Antyajas)3 (iv) Atri opines that the panegyrists, the flatterers, cheats, those who act harshly, and those who are avaricious these five Brahmanas should never be invited at Śrāddha, even if

^{1.} देवयाताविवाहेषु यज्ञप्रकरणेषु च । उत्सवेषु च सर्वेषु स्पृष्टास्पृष्टिनं विवते ॥ (p. 26)

^{2.} श्रपुत्तेणैव कत्तंव्यः पुत्रप्रतिनिधिः सदा । पिण्डोदकिकयाहेतोर्यस्मात्तस्मादप्रयत्ततः ॥ (p. 13)

^{3.} रजकथचर्मकारण्य नटो बुद्द एव च। कैवर्त्तो मेदिभिल्लाश्च सप्तैतेऽचान्त्यजा; स्मृता।। (p. 23)

they are equal to Brhaspati in learning. It seems difficult to agree with the interpretation of MM P.V. Kane, when he says that Brahmanas from Magadha, Mathurā and three other places are not honoured (at a Śrāddha) though as learned as Bṛhaspati.

Vrddha Atreya Samhita (p. 36-46)

The Vrddhätreya Samhita is not factually different from Laghu Atri Samhita, the contents of which have been pointed out earlier. It is divided into five chapters and consists of 140 verses. Some variations in the readings of the two Smrtis is given below to cater to the needs of a researcher interested in textual criticism and reconstruction of a text:—

| Laghu Atri Samhita | | Vrddha Atreya Samhita | |
|----------------------------------|--------|---|---------|
| Chapter III | | क्षिप्रमप्सु | (p. 38) |
| क्षिप्तं सर्वं | (p. 3) | • | |
| वेदवंत | 32 | देवव्रतं • | (p. 39) |
| सावित्रिरेव च | " | साविव्ययापि च | " |
| मनिषड्गादयस्तो | ** | भ्रतिष्ठान् गाः पदस्तो | •• |
| प्रमृ तं | ,, | न्नुवं | 33 |
| हिरण्यं | (p. 4) | सुवर्गः: | |
| यद्वा मनसि वत्तंते | ,, | तद्वेश्मनि स वद्यंते | 39 · |
| सुवर्णनाभं | ,, | - · · · · · · · · · · · · · · · · · · · | (p. 40) |
| Chapter IV | | सुवर्णानि | ** |
| विपदा | (p. 4) | द्विपदा | |
| ब्रह्महा गुरूतल्पे वा गामी गम्या | (p. 5) | गुरुतल्पी वाऽगम्यागामो | (p. 41) |
| गोघ्नी | n | गोध्नश्च | • |
| घ्यायं नियतमभ्यसेत् | " | ध्यायन् निमिषम्च्येत | 3. |
| Chapter V. | | , , | " |
| उपजीबन्ति | (p. 5) | उपभुञ्जन्ते | >> |
| कुर्वीत | " | कुर्वन्ति | 73 |
| राक्षसाः | •• | तथासुरा | |

Similarly some other variations may also be traced out.

^{4.} मागधो माथुरश्चैव कापट: कीटकानजी । पञ्च विष्ठा न पुज्यन्ते बृहस्पितसमा यदि ॥ (A.S. p. 35)

^{5.} Kane, P.V. (MM) H.D.S. Vol. I Part I Page 262.

Vishņu Smrti (p. 46-53)

There are two smrtis in the present collection which have been named after Visnu. The first one is a smaller treatise and runs roughly to seven pages (46-53) only. It seems quite intriguing that the name of Vishņu does neither figure in the commencement verses nor in the colophon of the printed text. transpires from a study of the verses in the beginning that it reproduces a dialogue between Saunaka, Bhisma Yudhisthar, Nārada and Sri Bhagawān Vishņu. The verse pattern closely resembles the style of Srimad Bhagavada Gitā and sings the glory of Lord Vishnu. Hence it has been named Vishnu. It seems plausible that it is taken from the Mahābhārata. This Smrti lays special stress on the worship of Brahman in the form of Vishnu, the equilibrium required in controlling the conative and cognitive senses, the necessity of meditation, yaina, offering gifts and (dāna) tapas and Śraddhā.

A close study of the text reveals that this Smṛti seldom touches the topics generally understood to come under the purview of Smṛti Literature. It rather seems to be a panegyric composition in the praise of Lord Vishnu. The nomenclature is therefore unjustified. It may be better named as Vishnu Stava.

Vishnu Smrti (53-148)

Vishnu Smṛti: The title:

The Vishnu Smrti a Vaishnava Dharm sastra or Vishnu sutra is in the main a collection of ancient aphorisms on the sacred laws of India, and as such it ranks with the other ancient works of this class which have come down to our time. In furtherance of this remark Julius Jolly has remarked that it may be styled a Dharma-Sutra, though this ancient title of the sutra works on law has been preserved in the MSS of those Smrtis only, which have been handed down, like the Dharma-Sutras of Apastamba, Baudhāyana, and Hiranyakesin, as parts of the respective

^{1.} Maxmuller F. History of Ancient Sanskrit Literature P.134.

Kalpasutras, to which they belong. The size of the Vishnu sutra, and the great variety of the subjects treated in it, would suffice to entitle it to a conspicuous place among, the five or six existing Dharma Sutras.1 It is also heartening to note that Jolly has endeavoured to give us as complete a reference as possible to the analogous passages in the Smrtis of Manu, Yajnavalkya, Apastamba, and Gautama.2 An attempt, therefore, to refer to the analogous passages may be safely avoided. It may however be pointed out that an attempt has been made to enhance the bulk of the old recension by adding slokas to it. In the beginning of this Smrti the description of Vishnu as 'the boar of the sacrifice (Yajnavarāha) seems to be a direct borrowing from the Harivamsa. The epithets employed in the praise of Vishnu (p. 57) are identical with those found in the Vishnu-Sahaśranām a portion of the Mahabhrata.3 Apart from the introductory Chapter which profusely mentions Vishnu, the final chapters with different epithets referring to Him in the form of Purusha, Bhagayat. Vāsudeva etc,4 amply justify the title of the work.

Analysis of the text: The main drawback of this Smrti in the present collection lies in the fact that though it had been sub-divided in different chapters, the numbers of the slokas has not been given. This Smrti is mostly written in the sutra style and comprises of one hundred chapters. Some of the chapters namely 40, 42 and 76 contain only one sutra. The first and the last chapters are conspicuously written in verse, others are however in campu style. The contents of this Smrti have been very well classified by MM. P. V. Kane in the following manner:

1. The earth, being lifted out of the surging ocean by the great Boar, went to Kasyapa to inquire as to who would support her thereafter, and was sent by him to Vishnu who told

Jolly Julius Introduction, Institutes of Vishnu. P. IX S.B,E. 1.

^{2.} Ibid.

^{3.} See Mahabharata chapter XC VIII (7-100)

⁽i) Pandit Jivananda Vidyasagar in his Dharma Sastra samgraha (1876 Part I pages 70-175)

⁽ii) Asiatic society. Bengal. 1881 ed. by D.R. Jolly.

⁽iii) Dutta, M.N. Dharmassatra texts Vol II PP 541.-66, Calcutta 1909.

(xxviii)

her that those who would follow the duties of varnas and asramas would be her support, where upon the earth pressed the great God to impart to her their duties;

- 2. the four varnas and their dharmas;
- 3. the duties of kings (rajadbarmah);
- 4. the Karsapana and smaller measures;
- 5. punishments for various offences;
 - 6. debtors and creditors, rates of interest, sureties;
 - 7. three kinds of documents;
 - 8. witnesses;
 - 9. general rules about ordeals;
- 10-14. ordeals of balance, fire, water poison and holy water (Kosa)
- 15. the twelve kinds of sons, exclusion from inheritance, eulogy of sons.
- 16. offsprings of mixed marriages and mixed castes;
- 17. partition, joint family and rules of inheritance to one dying sonless, re-union, stridhana;
- 18. partition among sons of a man from wives of different castes;
- carrying the dead body for creamation, impurity on death, praise of Brahmanas;
- 20. the duration of the four yugas, Manvantara, Kalpa, Maha kalpa, passages inculcating that one should not grieve too much for the departed;
- 21. the rites for the dead after the period of mourning, monthly sraddha, sapindi karans:
- 2?. periods of impurity on death for sapindas, rules of conduct in mourning, impurity on birth, and rules about impurity on touching various persons and objects;
- 23. Purification of one's body and of various substances.
- 24. marriage, forms of marriage, inter-marriage guardians for marriage;
- 25. the dharmas of women;
- 26. precedence among wives of different castes;

- 27. the samsakars, garbhādhāna and others;
- 28. the rules for brahmacarins:
- 29. culogy of acharya:
- 30. time for the starting of Vedic study and hol.days;
- 31. father, mother, and acharya deserve the highest reverence:
- 32. other persons deserving of respect;
- 33. the three sources of sin, viz, passion, anger, greed;
- 34. kinds of atipātakas, deadliest sins;
- 35. five mahapatakas;
- 36. anupātakas, that are as deadly as the mahapatakas.
- 37. numerous upapatakas:
- 38-42. other lesser sins:
- 43. the twenty one hells and the duration of hell torments for various sinners:
- 44. the various low births to which sinners are consigned for various sins;
- 45. the various diseases su Tered by sinners and low pursuits they have to follow by way of retribution;
- 46-48. various kinds of k cohras (penances), santapana, candrāyana, prasrtiyāvaka;
- 49. actions prescribed for a devotee of Vasudeva and rewards thereof;
- 50. prāyaścitta for killing a brahmana and other human beings, for killing cows and other animals;
- 51-53. prāyaścittas for drinking wine and other forbidden substance, for theft of gold and other articles, for incest and sexual intercourse of other kinds.
- 54. prāyaścittas for miscellaneous acts;
- 55. secret penances;
- 56. holy hymns like Aghamarşana that purge sin :
- 57. whose society should be avoided, vratyas unrepentant sinners, avoiding gifts:
- 58. the pure, variegated (mixed) and dark kinds of wealth;
- 59. the duties of house holders, pakayajnas, the five daily mahayajnas, honouring guests;

- (0. the daily conduct of a householder and good breeding;
- 61-62. rules about brushing the teath, acamana;
- 63. means of livelihood for a house-holder, rules for guidance good and evil omens on starting. on journey, rules of the road;
- 64. bathing and tarpana of gods and Manes;
- 65-67. worship of Vasudeva; flowers and other materials of worship; offering of food to deities and pindas to ancestors and giving food to guests;
- 68. rules about time and manner of taking;
- 69-70. sexual intercourse with wife and about sleep;
- 71. general rules of conduct for a snātaka;
- 72. value of self-restraint;
- 73-86. śrādhas, the procedure of śrāddha, astaka sraddha, the ancestors to whom śrāddha is to be offered, times of śrāddha, fruits of sraddha on the several week days and the 27 naksatras and the tithis materials for śrāddha, brahmanas unfit to be invited at śrāddha, brahmanas who are panktipavana; countries unfit for sraddha, tirthas, letting loose of a bull;
- 87-88. gifts of antelope skin, or a cow;
- 89. kārtika-snāna;
- 90. eulogy of gifts of various sorts;
- 91-93. works of public utility such as wells, lakes, planting gardens, embankments, gifts of food, flowers and c.; difference in merit according to the recipient;
- 94-95. rules about forest hermit (vanaprastha);
- 96-97. about sannyāsa, anatomy of the bones, muscles, veins, arteries & c.; concentration in various ways;
- 98-99. praise of Vāsudeva by the Earth and of Laksmi;
- 100. rewards of studying this Dharmaśāstra.1

^{1.} Kane, P.V. H.D.S. Vol. 1. Part I page No. 113-115.

Laghu Hārita Samhitā (p. 148-161)

Hārīta is often quoted by various Dharma-Sūtrakaras as an authority.¹ About the antiquity of this Smṛti named after him in this collection it is believed that Hārīta originally wrote his law-treatise in prose. But the original work is not available and the one now extant, seems to be a metrical abridgment of the same. The metrical work is also regarded by the tradition as an authentic treatise on Āchāra (duties in general). What is popularly called positive law is not to be found in this treatise.

The work consists of seven chapters and contains hundred and ninety four slokas. Jivānanda's collection however, contains 250 verses. The contents of this Smrti are given below:

| 1 | Creation of the universe etc. | Śloka (1-14) | Pages 148-50 | | |
|-------------|-------------------------------|--------------|--------------|--|--|
| | The duties of a Brahmana | | ., 1:0 | | |
| II | The duties of the Kshatriyas, | | | | |
| • • | Vaisyas and the Sudras | | ,, 150-51 | | |
| Ш | Religious studentship | t ' | 151-52 | | |
| IV. | The domestic mode of life | • | , 152-157 | | |
| V ., | The Vanaprastha mode of life | | ,, 157-158 | | |
| VI | | , | ,, 158-159 | | |
| VI | Essence of yoga | | ,, 159-161 | | |

In the prefatory verses, it is noticed that Hārīta, who is mentioned as son of Bhṛgu, is requested by the Rshis to describe the duties of various castes and orders as also in brief the Yoga-Sastra and everything else that goes to create faith in Viṣnu. Accordingly Hārīta is supposed to have given his considered opinion on all these topics. The style of this Smṛti is lucid and expressions are distinct and clear. The daily routine of the bramcharin, the grhastha, the vānapratha and the sānnayasi is thoroughly discussed. The seventh chapter which deals with the essence of yoga deserves special mention. According to this Smṛti all the sins are dissipated by the practice of yoga,

^{1.} See Kane P.V .- H.D.S. Vol. 1/Part np. 127-122

therefore, resorting to yoga and performing all religious rites, one should daily perform meditaion. Describing the object of meditation Hārīta remarks that seated in a solitary place with a concentrated mind, one should, till death, meditate on the Ātman, that is situated in the hearts of all and which is worthy of being known by all and is also effulgent like gold Lastly sage Markandeya remarks in the concluding verses that having studied this religious code, in full, emanating from the mouth of Hārīta, he who follows its religious teachings, attains the most excellent state. It also transpires from this that Hārīta himself has been quoted as an authority.

Vrddha Hārīta Samhitā (p. 161-320)

The Vṛddna-Hārīta Saṁhitā, which also appears in the collection of Pandit Jivananda Vidyāsāgar, is undoubtedly a Vaisnavite work. The tradition records that it was proclaimed by Hārīta to Ambarīṣa. It is a fairly extensive work consisting of eight chapters and 2600 ślokas. The opinion of Vṛddha-Hārīta and Harīta have been profusely referred to by later writers on Dharmaśāstra. Keeping in view the different versions and variations it appears plausible that several compilations were made at different times, embracing different topics of dharma and were then ascribed to Hārīta. It also seems that they were based more or less on the Haritadharmasūtra. In the colophons of all the chapters of this text the use of the epithet 'Viśista Dharma śastra' deserves mention.

As mentioned earlier this Smrti being profusely Vaisnavite gives vent to this in the introductory verses where a dialogue between sage Hārīta and King Ambrīşa has been recorded. These verses lay down in terms distinct and clear that Lord Viṣṇu, who is also remembered as Nārāyaṇa and Mahādeva being the creater of this universe, should be worshipped. It further says that to be

^{1.} See p. 159 Verses 2. 3.

^{2.} See p. 160 Verses 6, 7.

^{3.} See p. 160 Verses 14-15.

^{4.} See Kane, P. V. H.D.S. Vol. Part I p. 135-138.

a true Vaisnavite one should wear the sacred marks of this sect (p.161-163) In the second chapter methodology involved in the initiation of a bramcharin belonging to Vaiṣṇāvite sect is extensively discussed (p. 163-172). The third chapter gives in detail the nature and importance of Mantra consisting of 25,18,12 and 16 syllables in serial order. Apart from these it also refers to Hayagrva Mantra and their applications. The method pertaining to the worship of Lord Viṣṇu is also discussed in detail (p. 173-198). The fourth chapter conspicuously discusses in brief the kingly duties and Laws of punishment.

In the beginning of the fifth chapter, the names of various sages have been enumerated.¹ It discusses extensively 'Nitya Naimitika Samārādhana Vi-dhih' in about five aundred sixty eight verses. The sixth chapter, though devoted mainly to the enumeration of sins and their expiation, starts with giving guide lines regarding the festive journey of Lord Viṣṇu. It also surprisingly contains a prose passage. There are four hundred thirty nine verses in this chapter. At the request of King Ambarīṣa Sage Hārīta discusses the nature of Istis' and the method to be followed to celebrate the festival of Lord Visnu in the seventh chapter. The 'Visnu puja vidhi' forms the subject matter of the concluding chapter of this Smṛti.

Ausanas Dharmasāstram (p. 320-324)

In the Dharmasastra samgraha the title of the present collection, the Auśanas Dharmaśāstra and the Auśanas Smrti are separately mentioned in view of the fact that they differ from each other in both matter and manner. Auśanas Dharmasastram consists of 51 verses and deals mainly with mixed castes and vocations as is well evident from the prefatory verse.² The verses, where in mixed castes are referred to, are important in as much as they reflect the state of society and the vocations laid down for those who are born of the illicit relations of a man and a

^{1.} मनुभू गुवंशिष्ठमच मरीचिर्देक्ष एव च । महिगरा: पुलहम्चैव पुलस्त्योऽस्निमहालपाः ।। Vr. H.S. V. 3.

Compare: मत: पर प्रवस्यामि जातिवृत्तिविधानकम् । मनुलोमविधानञ्च प्रतिलोम विधि तथा।।

woman who belonged to different strata of the society, Names of some important mixed castes referred to in this Dharmaśāstra are as follows:—(The numerals indicate the number of the verse in this collection) Sūta (3) Charmkār, Rathakār (5), Māgadha (7), Chāndāla (8), Śvapa (ii), Ayogava (12), Sunika (15), Pukkasa (17). Rajaka (18). Vaidenika (20), Manikār (39), Katkār (49), According to Viynaneswar¹, the celebrated commentator of the Yajnavalkya Smrţi, the works of Uśa ias and Manu should be consulted to decide the vocations for the mixed castes.

Ausanas Smrti (p. 325-363)

This smrti consists of nine chapters and approximately 600 verses where in a number of topics have been dealt with. The smrti opens with a dialogue between the hermits headed by Saunaka and the ascetic Usanas's son, born in the race of Bhrgu,2 where Ausanas is requested to spell out the religious duties. It discusses the dress and the use of the sacred thread (upanayan) for religious student, the mode of adoration, saluation and mode of address to elders and preceptors apart from duties towards parents and the eldest brother. It is noticeable that in the third chapter (pp 331-340) smrti discusses in detail the rules of Vedic study, the superiority of the Gayatrī while dealing with the life and conduct of a bramacharin. It is quite interesting to find the mention of a number of situations where Ausanas recommends that no Vedic studies should be prosecuted. (cf. Au. S. III. pages 334). In the fourth chapter he disusses the regulations regarding Śrāddha and the persons qualified to be invited at it (cf. pp 340). At the end of this Ausanas provides a long list of persons whose presence at a Srāddha is to be avoided by all means (cf. pp 341-342). The fifth chapter also deals with the rules of Śrāddha (pages 342-348). The various forms of impurity (Asaucha) have been discussed in the sixth chapter (pages 349-352). Rites after death, prayascittas for the mortal sins form the subject matter of the last three chapters.

^{1.} Compare: Mitakshara on yajnavalkya Au. D.S. pages 320 1.94—(एतेपां च वृत्तय श्रीशनसे मानवे च द्रप्टज्या:)

^{2.} ComPare : "शौनकाग्राश्च मुनय ग्रीशनं भागं वं मुनिम् । नत्वा प्रपच्छुरखिलं धर्मशास्त्रविनिण्यम् ॥" Au. S. pages 324.

Authorities quoted in the Ausaras Smrti:

The influence of the great law maker Manu on Au.S. is quite evident from the fact that he quotes Manu Smṛti in the first chapter adverbitam (cf. Manu II, 42, 49, 50, 125). Au. S. also refers to Manu (p. 341) Bhṛgu and Prajapati (p. 337). Amongest the systems of thought dharmasatra¹ (p.33°), Itihāsa Purāṇas (p. 335-346), Mīmamsā, Vedanta, Pāncavatra are mentioned. The references to Kāpālika, Pāśupatās and atheists are also available.²

Angiras Smṛti (p. 363-367)

The name of Angiras is well known in ancient lore. Manu refers to him as one of the ten primordial sages. According to certain legends he was reborn out of the vāruṇi yajña by an oblation in the Angāra. Angiras Smṛti of the present collection seems to be an abridgment of a larger work as it comprises of only seventy two verses. It mainly deals with prāyāścitta and śuddni. A detailed content of the important topics are enumerated below together with the number of verses which are bracketed.

- (i) Penance for accepting food and drinking water from persons belonging to lower castes (2, 4-7).
- (ii) The use of clothes dyed with Indigo (12-24), this topic seems to be rather peculiar.
- (iii) Penance for killing cow or cruely injuring it, (25-31 & 34).
- (iv) Regulation about menses (35-42).

प्रनच्यायो विनाशे च नेतिहासपुराणयोः ।
 ने घमंशास्त्रीव्यन्येषु पर्वण्येतान् विसर्जयेत् ॥ Au. S. III p. 355

^{2.} कापाक्षिका: पाश्चपता पाश्चणश्चीवतद्विधाः । यस्याग्निन ह्वीय्यते दुरात्मनस्तु तामसा: ।। Au. S. IV p. 341 3. Manusmrtt 1. 34-35.

(xxxvi)

- (v) Purification of metals (43-45).
- (vi) Regulation about food and drink (46-60).
- (vii) Interdiction about food (65-72).

Angiras mentions a washerman, cobbler, actor, Varuda, Kaivarta, Meda and Bhilla as seven low castes., which, whoever view point enumerated by Atri (p. 23). He also refers to the viewpoint of Angiras¹ and Apastamba².

Yama Smṛti (p. 367-372)

Yājnavalkya Smṛti⁸ mentions the name of Yama in the list of ancient writers on Dharmasastra. The Yama Smrti in the present collection discusses prāyaścitta and suddhi in seventycight slokas. He quotes Manu⁴ adverbatum when he opines that the sin, that a twice-born person commits by associating with a Vrsati for a night, is dissipated in three years by living upon food acquired by begging and reciting (the Gayatrī) daily (cf. Yama Smṛti 26, p. 3(9). At another place he borrows the opinions of Manu⁵ when he says that there is no redemption for the person who has drunk the saliva of a Vṛṣali, has been sullied by her breathing, and has procreated a son on her (cf. Yama Smrti. 28, p. 369). The metrical change in verse 44 (p. 370) is also noteworthy. We also find a reference to Bhāsvati (cf. verse 33, p. 369) which may mean Manu or Yama himself. Verse Nos. 16 and 17 on pages 368 of this Smrti are identical with that of Angiras Smrti (p. 364-65) verse No. 32 and 33 respectively.

The important subject index of this Smrti may be enumerated as follows:

¹ एतदेवहितं कुच्द्र मिदमाङ्गरसं भतम्

An. S. p. 31 p. 364.

^{2.} त६ द्विजेभ्यो न दातव्यमापस्तम्बोऽग्रवीन्मुनि:

An. S 54 p. 366.

मन्वित्र विष्णुहरीत याज्ञवल्वयोशनोऽङ्गरा । यमापस्तम्ब संवत्तोः कात्यायनवृहस्पती ॥

Y.S. 1 4

^{4.} Manu Smṛti II. 178.

^{5.} Manu Smṛti III. 19.

('iivxxx'i')

- (i) Penances for the drunk etc., for those who return from the order of hermits and for one cremating a cowslaughterer or a Brāhmaņa committing suicide—pages 357-368.
- (ii) The regulation of Chandrayana; (p. 368)
- (iii) Penance for taking prohibited food (p. 368);
- (iv) Persons not to be invited at a Śrāddha (p. 369).

Apastamba Smrti (p. 372-386)

The Apastamba Smrti like other Smrtis opens with a dialogue between a host of sages (the names are conspicuously not mentioned) and Rsi Apastamba. The sages expresses their indignation because human beings are not following the right path and thus request the so called writer of this Smrti to instruct them about the rightcous conduct to be followed by the members of the society. This Smrti is divided in ten chapters and bears close affinity to Angiras Smrti on several topics. Quite a good number of Slokas of this Smrti are found in Angiras. Apastamba refers to Ausanas (p. 375) verse no. 34. It is noteworthy that he himself has been quoted as an authority on several occasions. The topics discussed in each chapter are mentioned below:—

| Subject | • | , , , , | · . · , ; | Page |
|--|-----|---------|-----------|------|
| Chapter 1. Expiation for obstructing the movements of Cows killing them. | and | t | | 374 |
| Chapter II. Discrimination of pure and impure | | | | 375 |
| Chapter III. Rules of Expiation for the sin incurred by the entrance of low caste in the house | the | | | 376 |

[.] See Chaster VI verse 9, p. 379 Chapter VII verse 21, p. 380, Chapter VIII verse 21, p. 382,

says that a maiden of eight years becomes a Gouri: one of nine years a Rohirī, and often years a Kanyā (maiden) and after that, a Rajasvata (a woman in menses). This was perhaps most famous and of quoted verse¹ during the ancient days in the support of child marriage.

^{1.} See verse 66 p. 390.

लघु अविसंहितायाम्।

॥ श्रीगणेशायनमः॥

हुतानिहोंनमासीन मिनें कतवतां वरम्। उपग्म्य च् पृ न्छिनि अर्पयः शांसितव्रताः ॥ भगवन् । केन दानेन जपेन नियमेन च । श्रध्यन्ते पातकेर्युक्ता स्तं बवीषि महामुने ॥ अविख्यापिनदोषाणां पापानां महतां तथा । सर्वीषां चो पपातानां शुद्धं वस्यामि तत्वतः ॥ प्राणायामैः पवित्रेश्च दानेहीं भेजींपे स्तथा । शब्दि कामाः प्रमुच्यन्ते पानकेश्यो न संशयः ॥ पाणायामान् पवित्रांश्य चाहतीः प्रणवन्तथा। पवित्रपाणिरासीनोऽध्यभ्यस्य ब्रह्म नैति कम्॥ आवर्त्तयेल दायुक्तः प्राणायामान् पुनः पुनः । आकेशायादानखानात पस्तव्यत उत्तमम् ॥ निरोधा ज्ञायते वायुवियोर्भिहिं जाय ते । नापेनापोहि जायन्ते ननोऽन्तः शुध्यते त्रिप्तिः ॥ नथा नर्म न्यानङ्ग दोषा अभ्यति धर्मतः । तथेन्द्रियकता दोषा द्यन्ते पाणानियहात् ॥ पाणायामेर्दहेत् दोषाद्वारणाभिश्र किल्विषम् । पत्याहारेण विषयान्ध्यानेनाने अवरान् गुणान्॥ न न नीत्रेण तपसा न स्वाध्यायेनीचेच्छया । मतिं गन्तुं सु राः शका योगात्सं प्राप्तुवन्ति याम् ॥ योगात्सम्प्राप्यते ज्ञॉनं यांगाइमास्य उक्षणम् । योगः परं तपो नित्यं तस्माद्युक्तः सदा भवेत् ॥ यणवाद्या स्तथा वेदाः यणवे पर्यवस्थिताः। वाग्मयः प्रणवः सर्वं स्तरमात्यणवमभ्यसेत् ॥ प्रणवे वि नियुक्तस्य व्याह्नीषु च सप्तसः । त्रिपदायां च गायत्र्यां न भयं विद्यते क्वित् ॥ एकाक्षरं परंब्रह्म पाणायामः परंतपः ब्रह्माणी चैव गायत्री पावनं परमं स्मृतम् ॥ समाहतीकां

लघु अनिसंहितायाम्।

स्यणवां गायत्रीं शिरसा सह । भिः पुरेदायनः पाणः पाणा यामः स उच्यते ॥ ॥ इत्यांत्रेयस्मृती पथमोऽध्यायः । माणायामां स्तथा कुर्च्याद्यथाविधिरतन्द्रितः । अहोराशिक्ष नात्पापात्तत्भणादेव शुध्यति ॥ कर्मणा मनसा वाचा य देनः कुरुते निशि। अतिष्ठत् पूर्वसन्ध्यायां प्राणायामैस्त शब्यति ॥ प्राणायामैयं आत्मानं संयम्यास्ते पुनः पुनः । दशद्दादशभिर्वापि चतुर्विशासरं तपः ॥ कीत्सं जप्त्वाप इ त्येन दासिएच्च तृचं पति । कुष्पाण्डं पावमानं च सरापोऽ पि विशक्त्यति। सरुज्जपत्वास्य पानीयं शिवसङ्ख्यमेव च। स्तवर्णमप्रहत्यापि क्षणाद्भवति निर्मुलः ॥ हैविष्मानी यमभ्यस्य नतमंह इतीव्रच । स्कन्तु पीरुषं जप्त्वा मुच ते मुरुतल्पगः ॥ सेव्याहतीकाः संप्रणेवाः पाणायामास्तु षोड्शा। अपि भूणहनं मासात् पुनन्यहरहः कृताः ॥ अपि वाप्सु निमंज्जन्वा विः परेद्यमर्पणम् । यथाभवमे-धः कृतुराट् तादशं मनुरब्रवीत् ॥ आरम्भयज्ञः क्षत्रस्य इवियंज्ञी विशामपि। परिचर्ययंज्ञः शूद्रस्तु जप्यज्ञी हिजो त्तमः ॥ आरम्भयज्ञ ज्ञपयज्ञो विशिष्टो दशिभिर्गुणैः उपांशु स्याच्छतगुणः सहस्रो मानसः समृतः ॥ अधरोष्ठ विभागी वा विश्वासीपांशु उक्षणः । निर्विकारेण बक्रेण मनसा मानसः स्मृतः ॥ सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां द शावराम् । गायत्रीं यः पटेद्वियो न स पापेन हिप्यते ॥ क्षत्रियो बहुवियेण तरेदापदेमात्मनः । विशेते वेशयभू द्रातु जपहों में दिजोत्तमः ॥ यथाश्वा रथही नास्तु रथी-वाश्वेयेथा विना। एवं तपोऽप्यविद्यस्य विद्या वाप्यतप् स्विनः ॥ यथान्तं मधुसंयुक्तं मधुवान्नेन संयुतम् । एवं

नपस्य विद्या च संयुक्तं भेषजं महत् ॥ विद्यानपोभ्यां संयुक्तं ब्राह्मणं जपत्तरारम् । कुत्सितेरपि वृर्तन्ते मनोन प्रतिप द्यते ॥ ॥ इति आनैयस्पृती दितीयोऽध्यायः। यस्य कार्ये शतं सायं रुतं वैद्यञ्ज साध्यते ॥ सर्वे तत्तस्य वेदानिर्दहत्यिनि रिवेन्धनम् । यथा जातबस् वानिर्दह त्याद्रीनिप दुमान् ॥ तथा दहित वेदज्ञः कर्माजन्दोषमा-त्मनः। यथा महान्हदे छोष्टं क्षिप्तं सर्वे विनश्यति ॥ एव मात्मकृतं पापं त्रयी दहित देहिनः । न वेदबरुमाश्रित्य पा पकर्मारितर्भवेट् ॥ अज्ञानाच प्रमादाच दहाते कर्मा नेतर त्। तपस्तपति योऽरण्ये मुनिर्मूलफलाशनः ॥ अरुचमेका श्चरोऽधीते तच्च तानिच तन्फल्लम् । वेदाभ्यासी यथाश त्त्या महायज्ञिकया क्षमा ॥ नाशयत्याशु पापानि महा पातकजान्यपि । इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपग्रंहयेत् ॥ विभेत्यल्पश्वतादेदान्यामयं प्रतिष्यति । याज्नाध्यापन्। द्दानात्त्रथेवाहुः मतियहात् ॥ विषेषु न भवेद्दोषो ज्वलनार्क समाहिते। शङ्कास्थाने समुत्यन्ने भस्यभोज्यप्तियहे । आहारशुद्धिं वर्ध्यामि तन्मे निगदतः शुणु । सर्ववेदपाव-त्राणि व्ह्याम्यह मतः प्रम् । येषां जपेश्व होमेश्व तिलक ल्पश्च संव्रता ॥ अधमर्षण्ं वेद्वतं शुद्धवत्यस्तरत्समाः कुष्माण्डः पावूमानश्च दुर्गा सावित्रिरेव च ॥ शतरुद्रं धर्मी शिरं विस्मपणे महाव्रतम् । अनिषद्गादयस्तोभासामानि व्याहित स्तथा ॥ गारुडानि च सामानि गायनी रैवतं तथा पुरुष्यतञ्च भावञ्च तथा वेदकतानि च ॥ अव्हिङ्गा बाहे स्पत्यं च वाक्सूकत्र्वामृतं तथा । गोस्कत्र्वावसूक्तेत्र्व इन्द्र शुदेश्व सामित ॥ श्रीण्याज्यदोहानि रथन्तरञ्च मग्नेवतं वा

8 मदेच्यं इहच । एतानि जप्यानि पुनाति पापाज्ञातिस्मरसं लुभते यदिच्छेत् ॥ अग्नेरपत्यं प्रथमं हिरण्यं भूवेष्णावी सू येंसुताश्व गावः । लोकास्त्रयस्तेन भवन्ति दत्ताः यः काञ्च नङ्गाञ्च महीञ्च दद्यात् ॥ सर्वेषामेव दानानामेकजन्मान गुं फेलम् । हाटकिसिति धेनूनां सप्तजन्मानुगं फलम्॥ स र्वकामफला रक्षा नद्यः पायसकर्माः । काञ्चना यत्र मा सादा स्तत्र गच्छन्ति गोघदाः ॥ वैशाख्यां पीर्णमास्यान्त ब्राह्मणान् सप्त पञ्च या । तिल्क्षोद्रेण संयुक्ता स्तर्पयि-त्वा यथाविधि ॥ श्रीयतां धर्मराजेति यद्दा मनसि वृत्ति । यावजीवकृतं पापं तत्रक्षणादेव नुश्यति ॥ स्तवणीनाभं यो दद्यात् समुखं इतमार्गकम्। तिलेर्द्यात्तस्य प्रथपहं पुण्यं च यत् शृणु ॥ सा स्वर्णधरा धेनुसरीलवनकानना या तु सागरपर्यन्ता भवेद्ता न संदायः ॥ तिलान् रूष्णा जिने इत्वा सवर्णमधुसर्पिषा । ददानि यस्तु विभाय सर्वे तरित दुष्कृतम् ॥ ॥इति आत्रेयस्मृती नृतीयोऽध्यायः। अथ रहस्य प्रायश्वितानि व्याख्यास्यामः ॥ सामान्यस्वी गमनरहस्येरहस्यपकाशे पकाशंपावनं अनुतिष्ठेत्। अध वाप्सु निमज्य लाभिराजन्तरत्समं दीयमावर्त्य शुने गोव-न्यवर्ध कन्याद्वणे इन्द्रशुन्धा इत्यापः पीत्वा मुन्यते।वेद स्येकराणा वापि सद्यः शोधनमुच्यते । एकादशागुणा वापि रुद्रानावर्त्य शाध्यति ॥ महापातकोपपातके भयो म लिनीकरणेश्यो मुच्यते। विपदा नाम् गायवी वेदे वाजस नेयके । भिः कुर्लोऽन्तर्जले पोक्ता सर्वपापं व्यपोहित ॥ श्रा सणीगमने साला उद्क्रम्भं बाह्मणान् सिवय वैश्यागम ने तापमं विराचत्य शरूद्दि गुरुदाराङ्गत्वा ऋषभं दादशा-

इत्य शन्द्राति अपेयं पीलाघमष्णेनापः पीला शन्येत्। अशक्तप्रायश्विते सर्वरात्रि मनुशोच्य शहध्येत् अग्निसो मेन्द्रसोमाकन्यादुषी विमुच्यते सोम राजानिमिति जपि-त्वा विषदा अग्निदाश्च विमुच्यन्ते । सर्वेषामेव पापानां -सङ्ररे समुपस्थिते ॥ दशसाहस्रमभ्यस्ता गायत्री शोधनी परी। ब्रह्महा गुरुनल्पे वा गामी गम्या तथैव च ॥ स्व र्णस्तेयी च गोझी च तथा विस्नमाघातकः । शर्णागत घाती च कूटसाक्षित्वकार्यच्त् ॥ एवमाद्येषु चान्येषु पा पेष्वभिरतिश्वर्म् । पाणायामांस्तु यः कुर्यात् सूर्यस्योद-यनं पति ॥ सूर्योदयनम्पाप्य निम्मेला धीतकल्मेषाः । भ वन्ति भास्कराकारा विधूमाइव पावकाः ॥ न हि ध्याने न सदशं पवित्रमिइ विद्यते । श्वपाकेष्वपि भुज्जानो ध्या नेनैवात्र हिप्यते ॥ ध्यानमेव परो धर्मी ध्यानमेव परं तपः । ध्यानमेव परं शीचं तस्मान्धानपरो भवेत् ॥ सर्व पापमसक्तोऽपि ध्यानं नियत मभ्यसेत्। सर्वदा ध्यान-युक्तभ्व तपस्वी पंक्तिपावनः॥ ॥ इति आत्रेयसमृती न तथींऽध्यायः।

चतुरसं ब्राह्मणस्य त्रिकोणं शत्रियस्य तु ॥ वर्तु उच्चेव वेश्यस्य श्रद्भयाभ्यक्षणं स्मृतम् । ब्रह्मा विष्णुश्य रद्र श्व श्रीहताशन एव च ॥ मण्डलान्युपजीविन तस्मात् कुर्वीत मण्डलम् । यातुधानाः पिशाचाश्य क्र्राश्चेव तु रा श्वसाः ॥हरनि रसमन्तस्य मण्डलेन विवर्जिते । गोम् यं मण्डलं कृत्वा भोक्तव्यमिति निश्चितम् ॥ यत्र काप् तितस्यान्नं भुत्का चान्द्रायणं चरेत् । यतिश्च ब्रह्मचारी च पकान्तस्यामिना बुभी ॥ नयोरन्नमदन्या च श्वन्द्रा च

उधु अभिसंहिनायाम्। न्द्रायणं चरेत्। यतिहस्ते जलं दद्याद्रैक्षं द्द्यात् पुनर्जलम्॥ तद्भेशं मेरुणातुल्यं तज्जलं सागरोपमम् । वामहस्तेन यो भुइन्ते पेयं पिबति वा दिजः ॥ सरापानेन तत्तुल्यं मनुः स्वायम्भुवीड बवीत्। इस्तद्त्रांस्तु ये सोहालवणव्यञ्ज-नादि न ॥ दातारं नोपतिष्ठिन्त भोका भन्नीत किल्बिष म्। अभोज्यं ब्राह्मणस्यान्नं वृषछेन निमन्त्रितम् ॥ तथै व वृषलस्यानं ब्राह्मणेन निमन्तितम् । ब्राह्मणानं दद च्छ्रदं श्रद्धान्नं ब्राह्मणो ददत् ॥ उभावेतावभोज्यान्नी भु स्को चान्द्रायणं चरेत् । अमृतं ब्राह्मणस्यान्नं क्षियान्नं पयः स्मृतम् ॥ वैश्यस्य चान्नुमेवान्नं शूद्रान्नं रुधिरं स्मृ तम् । श्रूद्रान्नेनोदरस्थेन योऽधिगच्छति मेथुनम् ॥य स्यान्त्रं तस्य ते पुत्रा अन्नाच्छुकं प्रवृत्ति । शूद्रान्नरस-पुष्टाङ्गी अधीयानोऽपि नित्यशः ॥ जिब्हाचापि जपन्वा पि गतिमूद्भिन विन्दति । यस्तु वेदमधीयानः शूद्रान्नम् पभुञ्जिति ॥ श्रूद्रो वेदफलं याति श्रूद्रत्वं चाधिगच्छिति। मृतस्त्रकपुणाङ्गो हिजः श्रद्रान्नभोजनम् ॥ अहमेव न जानामि काङ्गां योनिङ्गमिष्यति । श्वानस्तु सप्तजन्मानि नवजन्मानि श्रेकरः ॥ गृधो हादशजन्मानि इत्येवं मनुर ब्रवीत । परपाक मुपासन्ते ये दिजा गृहमेधिनः ॥ ते वै खरत्वमुष्ट्रत् श्वत्वक्रीवा धिगच्छति । श्रादं दत्का च भुत्का च मैथुनं योऽधिगच्छति ॥ भवन्ति पितरस्त-स्य तन्मासे रेतसोभुजः। उच्छिष्टेन तु संस्पृष्टो द्रव्य-हुस्तः कथञ्चन ॥ भूमी निधाय तह्यमाचान्तः शुचिता मियात् । स्पृशन्ति बिन्द्वः पादी य आचामयतः प्रान्॥ भूमिगेस्ते समाज्ञेया न तैरप्रयतो भवेत्। आचान्तोडप्य

शनिस्तावद्यावत्यात्र मनुन्हत्म् ॥ उन्हत्भ्यः शुनिस्तावद्या वन्मण्डल शोधनम्। आसने पादमारोप्य ब्राह्मणी य-स्तु भुञ्जिति ॥ मुखेन यमिते चानां तुत्यं गोमांसभक्षण म्। उपद्शान्नशेषं वा भोजने मुखनिः सृतम् ॥ हिजा तीनाम् भोज्यान्नं भुत्का चान्द्रायणं चरेत्। पीतशेषन्त यत्तीयं ब्राह्मणः पिंवते पुनः ॥ अपेयं तद्भवेदापः पी-सा चान्द्रायणं चरेत्। अं वंशन्तु भुज्जीत् नानुवंश-न्तु संविशेत् ॥ अनुवंशन्तु मुज्जानो दीर्घमायुरवामु यात् । आर्द्रपादस्तु भुज्जात् नार्द्रवासस्तु संविशेत् ॥ आर्द्रपादस्तु फुज्जाना दीर्घमायुरवामुयात् । अनार्द्र पादः शय्ने दीघी श्रियमवाभुयान् ॥ आयुष्य पाङ्च खो भुङ्के यशस्यं दक्षिणामुखः । श्रियं पत्यङ्मुखों-भुङ्क्ते भरतं भुङ्क उदङ्मुखः ॥ शावे शवगृहं गत्वा -श्मेशाने बान्तरे पिच। आतुरव्यञ्जनं कृत्वा दूरस्थोऽप्य शुचिर्भवेत् ॥ अतिकान्ते दशाहे तु त्रिरात्र मरेहिनिर्भवे त्। सम्बत्सरे व्यतीते तु स्पृष्टीवापो विशाध्यति ॥ नि देशं ज्ञातिमरणं श्रुत्वा पुत्रस्य जन्म च । सवासा जल माप्तत्य शुद्धो भवति मानवः ॥ अशुद्धं स्वयमप्यन्नं न शुद्रस्तु यदि स्पृशेत्। विशुध्यत्युपवासेन भुड्के हुन्छे ए। स हिज्ः ॥ स्तके स्तकं स्पृष्ट्वा स्नानं शाचे न स्त के । स्तकेनीय शादिः स्यान्मृतस्यान्निर्शे शाविः ॥ स्तके स्तकं स्पृष्टा स्नानं शावे च स्तके। फत्का पी त्यो नदज्ञानादुप्वासुरुग्हं भवेत् ॥ मृण्ययानाञ्च पा-त्राणां द्शाहे शुचिरिष्यते। स्नानादिषु प्रयुक्तानां त्याग एव विधायते॥ स्तके मृतके चैव मृतान्ते च प्रस्तके।

तस्मानु सङ्गताशीचे पृताशीचे न शुध्यति ॥ सूतकाद्-हिगुणं शावं शाबाद हिंगुणमार्त्तवम् । आर्तवाद हिगु णो स्तिस्त नो अधिशेवदोहकः ॥ अनुगच्छे द्यथा भेत-ज्ञातिमज्ञातिमेव या । स्नात्वा सचैलं स्पृष्वाग्निं घृतं पा श्य विशुध्यति ॥ रजसा शुध्यते नारी नदी वेगेन शुध्य-ति । भस्मना शुध्यते कांस्यं पुनः पाकेन मृण्मयम् ॥ नो द्रन्वतोष्ट्रमासि स्नानं क्षुरकमीं नथेव च। अन्तर्वत्या प तिः कुर्वलयजा भवति ध्रुवम् ॥ दम्पती शिश्रुना सार्द्धः तके दशमेऽहिन्। क्षीरं कुर्यात्ततः पूता द्रानभाजनया ग्यता ॥ जलमध्ये जलं देयं पितृणां जलिन्छनाम् । धन स्थाने न दातव्यं पितृणां नोपगच्छति ॥ रात्रं वृत्वा विभागन्तु दो भागी पूर्व एव च । उत्तरांशः प्रभातेन युज्य ने मृतस्तिके ॥ इति पश्येतु भुत्का तु पादुकारोहण स्मृ तम्। स्नालेन्द्रव्रतमादाय देवताभयो निवेदयेत् ॥ अपू पं लवणं मुद्रं गुडिमिशं यथा हिवः । दत्वा बाह्मणप-लीभ्यो निशि भोजनमेव च ॥ चतुर्थेऽहिन कर्त्रव्यं धुर कर्मातियलतः । पुण्याहं वाचि वाने ने मोक्तव्यं शुद्धिमे च्छता ॥ अपुण्याहे तुं भुद्धीत विघो धर्म मजाननः । न्स्य जातिमयं भुइके प्रायश्चितं ध्वयं भवेत् ॥ विवाहे वितते तुन्ले होमकाल उपस्थिते। कन्यामृतुमतीं दृष्या कथं कुवंनित याज्ञिकाः ॥ हविष्मत्या स्नापयित्वा अन्यवः स्त्रमलड्कता । युज्जानामाहतिं कत्वा ततः कर्मा मवर्त ते ॥ मथमे ५ इनि चाण्डाली हितीये ब्रह्मधानकी । तृतीयं रूजकी पोक्ता चतुर्थे ५ इनि १० स्थति ॥ आर्तवाभि पुता न री चण्डालं पतितं शुनम्। भोज्यान्तरे प्रयुज्यन्ते स्नाला

पञ्जमोऽध्यायः।

मान स्तृचं जपेत् ॥ आर्त्वाभिषुतां नारीं दस्या भुङ्केऽ-न्धकातराः । तद्नां च्छद्यित्वां तु कुशचारी पिबेदपः ॥ ये ता दत्वा तु यो फड़के पाजापत्य विशोधनम्। आ र्त्तवाभिष्ठुता नारी आर्त्तवाभिष्ठुता मिथः ॥ भाषेयित्वा तु मधोहादुपवासस्तयोभीवेत्। उदक्यायाः करेणाथ फेत्का चान्द्रायणं चरेत् ॥ प्राजाप्त्यं अमत्या चेत् वि रात्रं स्पृष्भोजने । तद्स्ताभोजनञ्जीव विगुणं सह भोज ने ॥ चतुर्गणतदु छिप्टे पानीये तर्दमेव च । उद्क्याया स म्पदस्थ मन्नं फ़त्कावकाम्तः ॥ उपवासेन शुद्धः स्यासि बेद् ब्रह्मसम्बर्चरम् । आर्तवी यदि चण्डारु मुख्छिपेन् तु पश्यित ॥ अस्मातकालं नाश्रीयादासीना वाग्यता बहिः। पादकुच्छ्नु यः कुर्याद् ब्रह्मकुच्छ्ं पिवेन् पुनः ॥ ब्राह्मणा न् भोजयत्यश्वादिपाणा मनुशासनान् ॥ मृतसूनकसम्प र्के अतुं द्वा कथं भवेत् ॥ अस्मातकालं नाश्मीयाद्भाः त्का चान्द्रायणं चरेत् । आर्तवाभिधुता नारी चण्डालं स्पृ शते यदि ॥ आर्त्तवािमधुता नारी आर्त्तवािमधुता स्पृशेत्। स्नात्वोपवासं क्रयाचि पंच्चगव्येन शुध्यति ॥ हुच्छ्मेकञ्च रेत्सा त तदर्थ चान्तरीकृते । आतुरा या अरतुस्माता स्मान कर्मा कथं भवेत् ॥ स्नात्वा स्नात्वा पुनः स्पृत्य दशकुत्व स्वनातुरः । वस्त्रापनयनं कृत्वा भस्मना परिमार्जयेत् ॥ दत्त्वा तु शक्तिनो दानं पुण्याहेन विशुध्यति । इति ओ वेयस्पृती पञ्चमोऽध्यायः। इस्वा क्तुशतेरेव देवराजो महाद्युतिः । स्वगुरुं वागिनां श्रष्ठं पर्यपुच्छ्द्बृहस्पतिम् ॥ भगवन् । केन दानेन स्वर्ग-तः सरवमेधते । यदक्षयं महाभाग ! त्वं ब्रूहि वदताम्बर! अभिसंहिता।

॥ एवं पृष्टः स इन्द्रेण देवदेवपुरोहितः । वाचस्पतिर्महातेजो बहस्पित रुवाच ह ॥ हिरण्यदानं गोदानं भूमिदानन्त्र वा सव।। एतस्यच्छमानोऽपि स्वर्गतः सुरवमेधने ॥ सुब र्ण रजतं वस्त्रं मणिरत्नं वसूनिच । सर्वमेव भवेद्दं व सधां यः प्रयच्छिति ॥ फलोकृषां महीं दद्यान् सबीजां स स्यमालिनीम् । यावत् सूर्यकरा लोके तावत् स्वरी मही-यते ॥ ॥ इति श्राञात्रेयस्मृतो धर्मशास्त्रं सम्पूर्णम् ।

अभिसंहिता।

श्रीगणेशाय नमः॥ ॥ इताग्निहोत्रमासीनमिन वेदविदां वरम् । सर्वशास्त्रविधिज्ञातमृषिभिश्च नमस्कृतम् ॥ न
मस्कृत्य च ते सर्वद्रदं वचनमञ्जवन् । हितार्थे सर्वलोका-नां भगवन् ! कथयस्व नः ॥ अत्रिरुवाच ॥ ॥ वेदशा-स्त्रार्थतत्त्वज्ञा । यन्मां पृच्छय संप्रायम् । तृत् सर्वे संपव ध्यामि यथादषं यथाश्वतम् ॥ सर्वतीर्थान्यपस्पत्रय स व्यनि देवान् प्रणम्य च । जम्बानु सर्वस्तानि संविशाखा नुसारतः ॥ सर्वपापहरं नित्यं सर्वसंशयनाशनम् । च तणीमपि वणीनामितः शास्त्रमकल्पयत् ॥ ये च पाप् रुतो लोके येचान्ये धर्मादूषकाः । सर्वे पापेः प्रमुच्यन्ते श्रुत्वेदं शास्त्रमुत्तमम् ॥ तस्मादिदं वेदविद्भिरध्येतव्यं प यत्ताः । शिष्येभ्यश्च प्रवक्तव्यं सद्वृत्तेभ्यश्च धर्मातः॥ अक्रुडीने हासदूर्न जडे श्रुद्रे शहे दिने । एतेष्वेव न दा त्यमिदं शास्त्रं दिजोत्तमेः ॥ एकमप्यसरं यस्तु गुरुः शि प्ये निवेदयेत् । पृथिव्यां नास्ति तद्वयं यद्ता ह्यन्णी भ

वेत् ॥ एकासर प्रदातारं यो गुरु नाशिमन्यते । शुनां योनि-शतं गला चाण्डालेष्यपि जायते ॥ वेदं गृहीत्या यः कश्विच्छा राज्येवावपन्यते । स् सदः पस्तां याति सम्भवानेकविं शतिम् ॥ स्वानि कूम्मीणि कुर्व्याणा दूरे सून्तोऽपि मान-वाः। पिया भवन्ति छोकस्य स्वे स्वे कर्मण्यवस्थिताः॥ कर्मी विशस्य यजनं दानमध्ययनं तपः। प्रतियहो ऽ ध्यापनञ्च याजनन्त्रीत रत्तयः ॥ क्षियस्यापि यजनं दानमध्ययनं तपः । शस्त्रोपजीवनं भूतरसणञ्चेति एत यः ॥ दानमध्ययने वापि यजनञ्ज्ञेति वे विशः । शुद्रस्य वात्ती शुश्रुषा दिजानां कारुकर्मा च ॥ मुयेष धम्मी अभि-हितः संस्थिता यत्र वर्णिनः । बहुमानमिह प्राप्य प्रया-न्ति परमा ग्रिम् ॥ ये त्यत्कास स्वधर्मास्य परधर्मा व्य वस्थिताः । तेषां शास्तिकरो राजा स्वर्गलोके महीयते॥ आत्मीये संस्थितो धर्मी श्रूदोऽपि स्वर्गम्सुते । पर्ध-म्मीभवेत्याज्यः सुरूपपरदार्वत् ॥ वध्यो राज्ञा स वे शू द्री जपहोमपरश्चे यः। तती राष्ट्रस्य हन्तासी यथा व क्रयः। याज्यं चतुर्भिरप्येतैः स्वविद्पतनं स्मृतम्॥स द्यः प्तित मांसेन लास्या ठवणेन च। त्र्यहेण शूद्रो-भगति ब्राह्मणः सीरविक्रयात् ॥ अवताश्चान्धीयाना यम् भेक्षचराहिजाः । तं याम् दण्डयेद्राजा चीरभक्षपदं वधैः ॥ विद्वद्रोज्यमविद्दांसी येषु राष्ट्रेषु भुञ्जते । तेऽ प्यनावृष्टिमिच्छनि महद्दा नायते भयम् ॥ ब्राह्मणान् वे द्विदुषः सर्विशास्त्र विशारदान् । तत्र वृष्ति पर्जन्यो य नैतान् पूजयेन्तृपः ॥ त्रयो होकारुयो वेदा आश्रमाश्र

त्रयोऽग्नयः । एतेषां रक्षणार्थाय संसृष्। ब्राह्मणाः पुरा ॥ उभे सन्ध्ये संमाधाय मीनं कुर्वन्ति ते हिजाः । दिव्य वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥ य एवं कुरुते राजा गुणदोषपरीक्षणम् । यशः स्वर्ग नृपत्वन्त्र पुनः कोपं स मृद्येत् ॥ दुष्टस्य दण्डः सजनस्य पूजा न्यायेन कोशस्य च संप्रहिद्धः । अपसपातोऽर्थिषु राष्ट्ररक्षाः पञ्चीव यज्ञाः कथिता नृपाणाम् ॥ यत् प्रजापालने प्रण्यं पाप्तवन्तीहे पार्थिवाः । न तु ऋतुसहस्रोण प्राप्तवन्ति हिजोत्तमाः ॥ अलाभे देवरवातानां न्हदेषु च सरःसु च । उन्हत्य चतुरः पिण्डान् पारके स्नानमान्रेत् ॥ वसाश्वकमसृद्ग्जां मू त्रविट् केणिदिरणरवाः । श्लेष्मास्थि द्षिकाः स्वेदो द्वादे शते नृणां मलाः ॥ षणणां षण्णां कम्णीव शुद्धिरुक्ता म् नीषिभिः । मृद्दारिभिश्च पूर्व्यषासुत्तरेषान्तु वारिणा ॥शी चुमङ्गलनायासाअनस्याऽस्पृहादमः । लक्षणानि च विशस्य तथा दानं दयापि च ॥ न गुणान् गुणिनो हिन स्तीति चान्यान् गुणानि । नहसेचान्यदोषांश्र सानसू-या मकीर्तिता ॥ अभध्यपरिहारश्चा संसर्गश्चाप्यनिन्दि तैः। आचारेषु व्यवस्थानं शीचमित्यभिधीयते ॥ प्रशस्ता चरणं नित्यम्प्रशस्तविवर्जनम् । एति मङ्ग्लं भोक्त मृ षिपिर्धर्मादिशिभिः॥ शरीर् पीड्यतं येनं शर्भेन् लशुभे न् वा। अत्यन्तं तन्न कुर्वित अनायासः सउच्यते॥ य थोत्पन्नेन कर्त्तव्यं सन्तोषः सर्ववस्तुषु । न स्पृहेत् परदा रेषु साऽस्पृहा परिकीर्तिता ॥ वाह्यमाध्यात्मकं वापिदुः खमुला बते उपरेः। न कुप्यति न चाहन्ति दमइत्यभिधीं-यते ॥ अहन्यहिन दातव्यमदीनेनान्तरात्मना । स्तोकादिप

प्रयहोन दानिमत्यिभिधीयते ॥ परिसान बन्धवरी वा मि बे हेस्ये रिपो तथा । आत्मवहर्तितव्यं हि देयपा परि-कीर्तिता ॥ यभ्येते र्ठक्षणे र्युक्तो गृहस्थोऽपि भवेद हिजः स गच्छित परं स्थानं जायते नेह व पुनः ॥ अग्निहोत्रं त पः सत्यं वेदानाञ्चेव पालनम् । आतिथ्यं वेश्वदेवश्च इ ष्टिमत्यिभिधीयते ॥ वापीक्पतडागादिदेवतायतनानि च अन्नपदानमारामाः प्तिमित्यभिधीयते ॥ इष्टं पूर्ने पक-र्तव्यं ब्राह्मणेन पयल्तः । इष्टेन् लमते स्वर्गे पूर्तेन मोक्ष मास्यात् ॥ इष्टापूर्ती दिजातीनां सामान्यो धर्मीसाधनीं अधिकारी भवेच्छूद्रः पूर्ते धर्मी न वैदिके ॥ यमान् सेवत स्ततं न नित्यं नियमान् बुधः । यमान् पतत्यकुर्वाणो नियमान् केवलान् भजन् ॥ आनृशंस्ये क्षमा सत्यमहिंसा दानमार्जवम्। भीतिः भसोदो माधुर्य्यं मार्दवन्त्र यमा द-मीनोपवासाश्च स्नानव्य नियमा दश ॥ मितकृतिं कुशम-यीं तीर्थवारिषु मज्जयेत् । यमुद्श्य निमज्जेत् अष्टभा गं लभेत सः ॥ मातरं पितरं वापि भातरं सहदं गुरुम्। यमुद्दिश्य निमज्जेत हादशांशफ्छं लभेत् ॥ अपुत्रेणीय कत्तेच्यः पुत्रप्रतिनिधिः सदा । पिण्डोदकिकयाहेतीर्यस्मा तस्मात् प्रयक्षतः ॥ पिना पुत्रस्य जातस्य पश्येच्य जीवतो मुखम्। अरुणमस्मिन् संनयति अमृतत्वञ्च गच्छति ॥ जातमात्रेण प्रत्रेण पितृणामनृणीः पिता । तद्क्षि शुद्धि माप्त्रोति नरकात्रायते हि सः ॥ जायन्ते बहवः पुत्रा यद्ये-कोऽपि गयां व्रजेत् । यजते नाश्वमधळ्य नीलं वा च्छमु त्सृजेत् ॥ काङ्क्षान्ते पितरः सर्वे नरकान्तरभीरवः । गयां

यास्यति यः पुनः स नस्त्राना भविष्यति ॥ फल्गुतीर्थे न रः स्नात्वा द्वा देवं गदाधरम् । गयाशीर्षे प्राक्रम्य मु च्यने ब्रह्महत्यया ॥ म्हान्दीमुपस्पृश्यु तर्पयेत् पितृदेव ताः । अस्तयान् लभते खोकान् कुल्झीय समुद्देन् ॥श इास्थान् समुख्ने भस्यभागविवजिते । आहार्शहिं वेंस्यामि तन्मे निगदतः शृणु ॥ अक्षार छवणं भेक्षं पि वेदब्राह्मीं सुवर्चसम्। त्रिरात्रं शङ्खपुष्पीम्बा ब्राह्मणः पयसा सह॥ मद्यभाण्डाद्दिनः कश्चिदज्ञानात् पिवते जलम्। प्रायश्चितं कथं तस्य मुच्यते केन कर्माणा॥ प लाशाबिल्वपत्राणि कुशान् पद्मान्युदुम्बरम् । काथियला पिबेदापस्त्रिरात्रेणीय शुद्धाति ॥ सायं मातस्तु यः सन्धां पमादाहिकमेन सकुन्। गायन्यास्तु सहस्रं हि जपेन् सा त्या समाहितः ॥ शोकांकांतोऽथ वा श्रान्तः स्थितः स्नान-जपाद्दिः। ब्रह्मकूर्चे चरेद्रत्तया दानं दत्ता विशुद्धिति ॥ गवां शृद्गोदके स्नात्वा महानद्यपसङ्ग्रमे। समुद्रदर्शनेने व व्यालदेखः १६ विभवेत् ॥ इकश्वानशृगालेस्त यदि दष्ट्-श्व ब्राह्मणः । हिरण्योदकसंभित्रं घृतं पाश्य विश्वन्द्राति ॥ बाह्मणी तु शुना दश जूम्बुकेन चुकेण वा । उदितं य हनक्षत्रं दक्षा सद्यः श्रुविभिवेत् ॥ सन्तश्र्व श्रुना दष्ति रात्रमुप्वासयेत् । सध्तं यावकं पात्रय व्रतशेषं स्मापये त्। मोहात् प्रमादात् संलोभाद्वतभङ्गं तु कारयेत्। विरावेणीव शुन्धेत पुनरेव वती भवेत् ॥ ब्राह्मणान्नं यदु न्धिष्टमश्रात्यज्ञानतोहिनः । दिन्ह्यं तु गायत्र्या न्पं ह-त्वा विश्वद्यति ॥ क्षित्रयोन्नं यदुच्छिष्टमन्मत्यज्ञानतो हिनः त्रिरात्रेण भवेच्छुदिर्यथा क्षत्रे तथा विशि ॥ अभोज्यान्नं

यथा फत्का स्वीश्रद्रो छिएमेंव वा। जग्धा मांसमभ-क्यन्तु सप्तरात्रं यवान् पिबेत् ॥ शुना चैव तु संस्पृष्टस्तस्य स्नान् विधीयते । त्दु छिएन्तु संयाश्य षण्मासान् रुच्छ-माचरेत् ॥ असंस्पृष्टेनं संस्पृष्टः स्नानं तेन विधीयते ।त स्य नोच्छिष्टमश्रीयात् षणमासान् रुच्छुमानरेत् ॥ अ ज्ञानात् प्रार्थ विण्यूने सुरासंस्पृष्टमेव न । पुनः संस्कृ रमहिन्ति त्रयो वर्णी दिजातयः ॥ वपनं मेरवला दण्डो भे सूच्यत्रितानि च । निवर्तन्ते दिजातीनां पुनः संस्कारफ-म्णि॥ गृहशुद्धि म्बस्यामि अन्तः स्यश्वद्षिनाम्। पा योज्यं मृण्मयं भाण्डं सिद्धमन्नं तथेय च ॥ गृहानिष्क्र-म्य तत्सर्वे गोमयेनोपलेप्येत् । गोमयेनोपलिप्याय छा गेनाघापयेत् पुनः ॥ ब्राह्मैर्मन्त्रेस्तु पूतन्तु हिरण्यकुश-गरिभिः । तेनैवाभ्युस्य तद्देशम शुद्धते नात्र संशयः ॥ श शान्येः श्वपचैर्धापि बहादिचाछितो हिजः । पुनः कृष्यी त संस्कारं पश्चात् रुच्छ्त्रयञ्चरेत् ॥ शुना चैव तु संस्पृ-एस्तस्य स्नानं विधीयते । तदु छिएन्तु संपाप्य यहोनं रुच्छ्माच्रेन् ॥ अतुःपरं मब्ह्यामि सूतकस्य विनिर्णय म्। भायश्चित्तं पुनश्चेव कथयिष्याम्यतः परम् ॥ एकाहा च्छुन्झते विशो योऽग्निवेदसमन्वितः । त्यहात् केवलवे दस्तु निर्गुणो दशिभिदिनीः ॥ व्यतिनः शास्त्रपूत्स्य आहि नागैस्तथैव च। राज्ञस्तु सूनकं नास्ति यस्य चेच्छति ब्रा हाणः ॥ ब्राह्मणो दशरात्रेण हादशाहेन भूमिपः । वैश्यः पञ्चदशाहेन श्रद्धो मासेन शुन्द्धति ॥ सपिण्डानान्तु स-शीचं तथानुगम् ॥ चतुर्थं दशरात्रं स्यात् षडहः पञ्चमे-

अभिसंहिता। तथा। षष्ठं चैव विरात्रं स्यात् सप्तमे त्र्यहमेव वा।। अष्टमे दिनमेकन्तु नवमे पहरद्यम् । दशमे स्नानमात्रेण स्त-के तु श्विभीवेत ॥ मृतस्तके तु दासीनां पत्नीनाञ्चानुको मिनाम् । स्वामिनुल्यं भवेच्छीचं मृते स्वामिनि योनिकम् ॥ शवस्पृष्यतीयस्त् स्चेषः स्नानमाचरेत् । चतुर्थे सप्तभी ध्यं स्यादेष शावविधिः समृतः ॥ एकत्र संस्कृतानान्तु मा नृणामेकभोजिनाम्। स्वामिनुल्यं भवेच्छीनं विभक्तानां पृथक् पृथक् ॥ उषुीक्षीरमवीक्षीरं यचान्नं मृतसूतके । पाचकान्नं नवश्राद्धं भुत्का चान्द्रायणऋरेन्।। स्तका नम्थम्मिय यस्तु प्रान्भाति मानवः । त्रिरात्रमुपवास्ः स्यादेकरात्रं जले वसेत् ॥ महायज्ञविधाननु न क्या न्मृतजन्मनि। होमं तथ यकुचीत शर्कानेन फलेन-वा ॥ बालस्त्वन्तर्रशाहे तु पञ्चत्वं यदि गच्छति । सद्य एव विशुद्धिः स्यान्न प्रतं नेव स्तकम् ॥ कृत् चूडस्तु क चीत उदकं पिण्डमेव च। स्वधोकारं प्रकुवीत् नामी-चारण मेव च ॥ ब्रह्मचारी यतिश्चेवं मन्त्रे पूर्वकते तथा यज्ञे विवाहकाले च सद्यः शोचं विधीयते ॥ विवाहोत्स-वयङ्गेष्वनन्तरामृतस्त्तके । पूर्व्यसङ्ख्यान्यस्य न दोष श्याविर बचीत्।। मृतसैजनना देहीं स्तिकादी विधीयते।
स्पर्शनाचमनाच्छाद्धः स्तिकाञ्चन्न संस्पृशेत्।। पुत्रमेऽ हिन विज्ञेयं संस्पर्श क्षियस्य नु । सप्तमे हिन वैश्यस्य विद्शेयं स्पर्शनं बुधीः ॥दशमेऽहान शूद्रस्य कर्त्तच्यं स्पर्शनं बुधैः। मासेनेवात्मशुद्धिः स्यान् सून्के मृतके तथा ॥ या धितस्य कदर्ध्यस्य वरणगस्तस्य सर्वेदा । कियाहीनस्य मूर्चस्य स्त्रीजितस्य विशेषतः ॥ व्यसनासक्तवित्तस्य पर

धीनस्य नित्यशः । स्वाध्यायव्रनहीनस्य सतत् सूतकं-भवेत् ॥ दे रुच्छे परिवित्तेस्त कन्यायाः रुच्छमेव च । रुच्छाति रुच्छंमातुः स्यादेत्ः सान्तपनं स्मृतम् ॥ कुज वामनस्वञ्जेषु गहिनेऽथ जडेषु च । जात्यन्धवधिरे मूके न दोषः परिवेदने ॥ क्रीबे देशान्तरस्ये च पतिते ब्रजितेंऽ पि वा। योगशास्त्राभियुक्ते च न दोषः परिवेदने ॥ पिता पितामहो यस्य अयजो वापि कस्यचित् । नाग्निहोत्राधि कारोऽस्ति न दोषः परिवेदने ॥ भार्ष्यामरणपक्षे वा देशा न्तरगतेश्पि वा । अधिकारी भवेत् पुत्रस्तथा पातकसंयु ते ॥ ज्येषो भाता यदा नष्टो नित्यं रोगसमन्वितः । अनु-ज्ञातस्तु कुर्व्वीत शङ्खस्य वचनं यथा ॥ नाग्न्यः परिवि न्देनि न वैदा न तपांसि च । न च श्रान्दं कनिषों वे विना वैवाभ्यनुज्ञया ॥ तस्माद्मां सदा कुर्याच्छ्रतिस्पृत्युदित अ यत्। नित्यं नैमितिकं काम्यं यच स्वर्गस्य साधनम्॥ एकैकं वर्दयेनित्यं शुक्ते कृष्णे च -हासयेत्। अमावास्यां न भुन्तीत एष चान्द्रायणीविधिः ॥ एकैकं यासम्भीया भ्यहाणि बीणि पूर्ववत् । त्यहं प्रञ्च नाभीयादतिक-च्यूनदुच्यते ॥ इत्येतत् कथितं पूर्वी महापातकनाशनम् ॥वैदाप्यासरतं क्षान्तं महायज्ञियापरम्। न स्पृश्नी ह पापानि महापातकजान्यपि ॥ वायुभक्षो दिवा तिखेदा त्रिञ्जैवाण्य स्ट्यहरू। जह्वा सहस्रं गायत्र्याः शुन्दिर्बह्म वधाहते ॥ पद्मोदुम्बर्बिल्वेश्व कुशाश्वत्थपलाशयोः । ए तेषापुदकं पाला पणिकुच्छ्नतदुच्यते ॥ पञ्चगच्यञ्च गो क्षीरद्धिमूत्रशकृहतम् । जग्ध्वा परेऽन्द्यपवसे देष सा न्तपनो विधिः ॥ पृथंक्सान्तपनैद्रेच्यैः षडहः सोपवासकः

सप्ताहेन तु कुच्छोऽयं महासान्तपनं स्मृतम् ॥ त्यहं सायं त्यहं पानरु मुङ्के त्वयाचितम् । त्र्यहं परञ्ज नाश्री यात् पाजापत्योविधिः स्मृतः ॥ सायं तु द्वादश यासाः मातः पञ्चदश स्मृताः । अयाचिते चतुर्विशः परेऽन्द्यन शनं स्पृतम् ॥ कुकुटाण्डप्रमाणं स्याद्यावद्यस्य मुखं वि शेत्। एतद्यासं विजानीयाच्छु सर्थे कायशोधनम् ॥ व्यहं मुणां पिवेदापरुयह मुणां पिवेत् पयः । त्यह मुणां -घृतं पीला वायुभक्षो दिनवयम् ॥ षट्पलानि पिबेदाप स्त्रिपलं तु पयः पिबेत्। पलमेकन्तु वे सिपिस्तप्तकृच्छं वि धीयते ॥ दभा च बि्दिनं भुङ्क्तं त्र्यहं भुङ्के च सिपेषा क्षीरेण तु त्यहं भुइन्ते वायुभेक्षो दिनत्रयम् ॥ विपलं द धिसीरेण पलमेक नु सर्पिषा। एतदेव व्रतं पुण्यं वैदिकं कृच्छम्च्यते ॥ एकभक्तेन नक्तेन तथैवाया वितेन् च। उ पवासेन चेकेन पाद्रुखः प्रकीतितः ॥ सच्छातिरुखः पयसा दिवसानेकविंशतिम्। द्वादशाहोपवासेन पराकः परिकीर्तितः ॥ पिण्याकद्धि सक्तूनां ग्रासश्च प्रतिवास रम्। एकैकमुपवासः स्यात् सौम्येक्टच्छः प्रकीतितः ॥ए षां त्रिरात्रमभ्यासादेकेकस्य यथाकम्म्। तुलापुरुषइ-त्येष ज्ञेयः पञ्चदशाहिकः॥ कपिलागोस्तु दुग्धाया धारो ष्णां यत्पयः पिबेत् । एष् व्यास्कृतः कृच्छः श्वपाकमपि शोधयेत् ॥ निशायां भोजनञ्जीव तज्ज्ञेयं नक्तमेव तु । अनादिश्व पापेषु चान्द्रायण मथोदितम् ॥ अग्निशोमा दिभिर्यद्वीरिष्टेरियुणद्क्षिणेः। यत्कलं समवामोति त था इन्ड्रेस्तपोधनः ॥ वैदाभ्यासरनः क्षान्तो धर्माशा-स्याण्यवेक्षयेत् । शीचाचार समायुक्तो गृहस्थोऽपि हि

मुच्यते ॥ उक्तम्तद्दिजातीनां मृहषे । श्र्यतामिति । अ तः परं मवस्यामि स्वीन्द्रपत्नानि च ॥ ज्यस्तपस्तीर्थया मा प्रवास मन्त्रसाधनम् । देवताराधनक्रीय स्त्रीश्रद्रप तनानि षर् ॥ जीवृद्धत्तिर या नारी उपोष्य व्रत्नारिणी। आयुष्यं हरते भर्तुः सा नारी नरकं ब्रजेत् ॥ तीर्थस्माना र्थिनी नारी पतिपादोदकं पिबेत् । शङ्करस्यापि विष्णो र्व्या प्रयाति परमं पदम् ॥ जीवद्रत्तिर वीमाङ्गी मृते वापि सुदक्षिणे। श्राहे यज्ञे विवाहे च पत्नी दक्षिणतः सदा॥ सोम् शोचं द्दी तासा गन्धव्यत्रि तथाद्गिराः। पावकः सर्वमेध्यं च मेध्यं वे योषितां सदा ॥ जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारे हिंज उच्यते । विद्यया याति विभत्वं शोनि यस्त्रिभिरेव च ॥ वेदशास्त्राण्यधीते यः शास्त्रार्थञ्च नि षेवते । तदासी वेद्वित् प्रोक्तो वचनुनस्य पावनम् ॥ ए कोऽपि वेदविद्धमी यं व्यवस्येद्दिजोत्तमः । स द्रीयः पर-मी धम्मी नाज्ञानामयुतायुतेः ॥ पावकाइव दीप्यन्ते जप होमेदिजीतमाः । प्रतियहेण नश्यन्ति बारिणा इव पावकाः ॥ तान् प्रतियहजान् दोषान् प्राणायामे हिजोत्तनाः । उत्सा दयन्ति विद्वांसी नायु भैघानिवाम्बरे ॥ भुत्काचम्य यदा-विम आईपाणिस्तु तिष्ठति । तस्मी बीतं यशस्तेज आयु भ्वेव पदीयते ॥ यस्तु भोजनशालायामासनस्थ उपस्पृश् त्। तस्यानं नैव भोक्तव्यं कत्का चान्द्रायणञ्चरेत्।। पात्रो परिस्थितं पात्रं यः संस्थाप्य उपस्पृशेत् । तस्यान्तं नैव भो क्तव्यं फत्का चान्द्रायणञ्चरेत् ॥ न देवास्तृ िमायानि दा बुर्ज्विति निष्फलम्। इस्तं प्रक्षाल्य यस्वापः पिबेद्फत्का दिजोत्तमः। तदन्नमस्तरेफीक निराशाः पितरो गताः ॥ना

स्ति वेदात् परंशास्यं नास्ति मातुः परो गुरुः । नास्ति दाना त् परं मित्रमिह लोके परत्र च ॥ अपात्रे ह्यपि यद्त्तं दह-त्यासप्तमं कुरुम् । हव्यं देवा न गृह्म-नि कव्यञ्च पिनरस्त था ॥ आयसेन तु पात्रेण यदन्न मुपदीयते । अन्नं विषा समं भोक्तरीता च नरकं वजेत् ॥ इतरेण तुपात्रेण दीय मानं विचक्षणः। न द्धाद्यामहस्तेनं आयसेन कदाचन॥ मृणम्येषु च पानेषु यः शाहे भोजयेत् पितृन्। अन्तराता च भोक्ता च तावेच नरकं ब्रेजेत् ॥ अभावे मृण्मये दद्या द्वज्ञातस्तु है दिजेः । तेषां वर्नः प्रमाणं स्यादतञ्ज्ञानृत मेच च ॥ सीवणियसताम्बेषु कांस्यरीप्यमयेषु च । भिक्षा दातु ने धम्मेडिस्ति भिक्षुभुङ्के तु किल्बिष्म् ॥ न च कां-स्येषु भञ्जीयादापद्यपि कदाचन । पलाशे यतयोऽश्वनि गृहस्यः कांस्यभाजने ॥ कांस्यकस्य च यत्पापं गृहस्यस्य तथैव च। कांस्यभोजी य्तिश्येव प्राप्त्यात् किल्ब्षं तयोः ॥ अत्राप्युदाहरनि॥ सीवर्णीयसनामेषु कांस्यरीप्यमये षु च । भाज्जन भिक्षुर्न दूष्येत दूष्येचेव पर्यहात्॥ यति हस्ते जलं दद्यादिसां दद्याते पुनर्जेलम् । तद्रेक्षं मेरुणा-नुल्यं तज्जलं सागरोपम्म ॥ चरेन्माधुकरी वित्तमपि म्ले खकुलाद्रि । एकान्नं नेव भाक्तव्यं बहस्पतिकुलाद्रि ॥ अना पिट चरेद्यस्तु सिद्धं भेक्षं गृहे वसन्। दशरात्रं पि बेद्यम्। पस्तु त्यहमेव च ॥ गोमूत्रेण तु संभित्रं यावकं-घ्तपाचितम् । एतद्वामिति पोक्तं भगवानिवरब्रवीत् ॥ ब्रह्मचारी युतिश्रीव विद्यार्थी गुरुपोषकः । अध्वगः सीण् वित्रम् षडेते पिक्षुकाः स्मृताः ॥ पण्मासान् कामयेन्मत्यी गर्तिणीमेव च स्वियम्। आदन्तजननाद्ईमेवं धर्मी वि-

धीयते ॥ ब्रह्महा प्रथमञ्जेष दिनीयं गुरुतल्प्गः । तृती्य न्तु सरापोऽयं चतुर्थं स्तेयमुच्यते ॥ पापानाञ्चेव संसर्गः पञ्चमं पातकं महत् । एषामेव विशु सर्थं चरेह्ष्णियनु कमात् ॥ त्रीणि कृच्छाण्यकामश्रेद्ब्रह्महत्यां व्यपोहिति । अर्दन्तु ब्रह्महत्याचाः क्षत्रियेषु विधीयते ॥षड्भागो हादशश्रीय विद्धूद्रयोस्तथा भवेत् । त्रीन मासान्नकः-मश्रीयाद्रमो शयनमेव च ॥ स्त्रीयातः शुरुद्धते ऽप्येवं च रेत् कृच्छाव्यमेव च । स्त्रिकः श्रीलुषश्रीव वेणुकम्पिजीः वनुः ॥ एतेषां यस्तु भुइक्ते वै दिजभान्द्रायणञ्चरेत्। स व्यन्यिजानां गमने भोजने सम्प्रवेशने ॥ पराकेण विश्व दिः स्याद्गावानिभरत्रवीत् । चाण्डालभाण्डे यत्तीयं पी त्वो चैव दिजोत्तमः ॥ गोमूत्रयावकाहारः सप्तिशिद-हान्यपि । संस्पृष्टं यस्तु पकान्नमन्यजेव्यप्युद्क्यया॥ अज्ञानाद्बाह्मणोऽश्रीयात् प्राजापत्याद्माचरेत्। ना ण्डालानं यदा भुङ्के चातुर्वर्णस्य निष्कृतिः ॥ चान्द्राय णं चरेद्दिमः क्षानः सान्तपनं चरेत् ॥ षड्रात्रमाचरेद्देश्यः पञ्चगव्यं तथेव च । भिरात्रमाचरेच्छ्द्री दानं दत्वो वि शन्हाति ॥ बाह्मणो रक्षमारूढम्बाण्डोठो मूलसंस्पृ -शः। फलान्यति स्थितं तत्र प्रायश्चित्तं कथं भवेत्।। ब्राह्मणान् सम्वज्ञाप्य सवासाः स्नानमाचरेत्। नक्त-भोजी भवेदिमो घृतं माश्य विशक्सिति ॥ एक वृक्षसमा स्दर्भाण्डाची ब्राह्मणस्तथा । फलान्यसि स्थितं तत्र -पायित्रतं कथं भवेत् ॥ श्राह्मणान् समनुज्ञाप्य सवा साः स्मानमाचरेत्। अहोरात्रीषितो भूता पञ्चगत्येन शुद्धति ॥ एकशासासमास्तदश्याण्डाठो ब्राह्मणो यदा।

फलान्यति स्थितं तत्र पायश्वितं कथं भवेत् ॥ तिरात्रो पोषितो भूत्वा पञ्चगच्येन शुन्झित ॥ स्त्रिया म्लेच्छस्य सम्पर्कान्छिद्धिः सान्तपने तथा। तप्तरुच्छं पुनः रुखा श्रुद्धिरेषाभिधीयते ॥ सम्बर्तत यथा भार्यो गला म्हे च्छस्य संगताम् । सचेलं स्नानमादाय घ्तस्य प्राशनेन च ॥ स्नात्वा नद्युद्केश्चेव घतं प्राश्य विश्वन्धति । संगृ हीतामपत्यार्थमन्येरपि तथा पुनः ॥ चाण्डालम्लेच्छभ्यप चकपालवतधारिणः । अकामतः स्त्रियो गत्वा पराकेण विश्वस्मित ॥ कामतरतु पसूती वा तत्समी नात्र संशयः। स एव पुरुष स्तत्र गभी भूला मजायते ॥ तेलाभ्यको ध ताभ्यको विण्मूत्रं कुरुते हिजः। तैलाभ्यको द्वाभ्यक् श्वाण्डालं स्पृथाते हिजः। अहोरात्रोषितो भूता पञ्चगये न शुद्यति ॥ केशकीटनखस्मायु अस्थिकण्टकमेव च । स्पृष्ट्या नद्यदके स्नात्वा घतं पात्र्य विशान्द्राति ॥ मत्स्या-स्थिजम्बुकांस्थानि नखगुक्तिकपदिकाः। स्यूखा स्नाला हेमनसद्यनं पीत्वा विशुन्द्यति ॥ गोकुले कन्द्रशालायां तै हचकेक्षुचकयोः । अमीमांस्यानि शीचानि स्त्रीणाञ्चः च्याधितस्य च ॥ न स्वी दूष्यति जारेण ब्राह्मणोऽवेदकम् णा। नापो मूत्रपुरीषाभ्यां नानिदेहित कर्माणा ॥ पूर्वे स्थियः सरेफिकाः सोमगन्ध्वीव क्रिभिः। फुज्जते मान-वाः पश्चान्नता दूष्यन्ति कहिंचित् ॥ असवणैस्ति योगर्फः स्वीणां योनी निर्विच्यते। अशुद्धा सा भवेन्नारी यावद्गर्भी न भुज्जिति ॥ विमुक्तेतु ततः शब्ये रजश्चापि प्रदश्यते। त दा सा शुस्त्रते नारी विमलं काञ्चनं यथा ॥ स्वयं विमति पन्नाः या यदिवा विमतारिता । बलानारी मभुक्ता वा बी

रफ़क्ता तथापि वा। न त्याज्या द्विता नारी न कामोऽस्या विधीयते ॥ अतुकाले उपासीत पुष्प्कालेन् शुद्धाति ॥ र जक्त्रमंकारका नटो बुरुड एव च। केव्तमेद मिलाका सप्तेते चान्यजाः स्मृताः ॥ एषां गला स्त्रियो मोहाङ्खा च प्रतिगृह्य च । रुच्छाब्दमांचरेज्ज्ञानादज्ञानादैन्दवद्य म्। स्टेड्का तुया नारी म्लेच्छेर्चा पापकम्मितः। भा जोपत्येन फेड्येत ऋतुमस्वयोन तु ॥ बहाइता स्वयं बा पि पर्मेरितया यदि । सहद्भुका तु या नारी प्राजापत्येन शुस्ति ॥ पारच्यदीर्घतपसां नारीणां यद्रजो भवेत् । न तेन तद्भतं तासां विनश्यति कदाचन् ॥ मध्संस्पृष्टेक मोषु यत्तीयं पिवति दिजः। छच्छ्पादेन शब्दोत पुनः संस्कारमहित ॥ अन्त्यजस्य तु ये वक्षा बहुपुष्पफछोप् गाः। उपभोग्या्स्तु ते सर्वे पुष्पेषु च फलेषु च ॥ चाण्डाले न तु संस्पृष्टं यत्तीय पिवति हिज्ः। कृच्छ्पादेन सुद्धोत आप्साम्बोधब्रवीन्सुनिः ॥ श्रेष्मीपानहविषमूत्रस्वीरजी मद्यमेव च। एपिः सन्दूषिते क्षे तोयं पीत्वी कथं वि-धिः॥ एकं द्यहं त्यहञ्जेव दिजातीनां विशोधनम्। प्रा यश्चितं पुनश्चीव नक्तं श्रद्रस्य दापयेत् ॥ सद्योवान्ते स वैछं तु विपस्तु स्नान्मावरेत् । पर्य्युषिते त्वहारात्रमति रिक्ते दिनत्रयम् ॥ शिरः कण्डो रुपादांश्व सुरया यस्तु हि प्यते। दशषद् त्रितयेकाहं चरेदेवमनुक्रमात्॥ अञापु दाहरनि॥ प्रमादान्मद्यपः करां सकृत्पीत्वा दिजोन्तमः। गोमूत्रयायकाहारी दशरात्रेण शब्सति ॥ मचपस्य नि-माद्स्य यक्त फड़के हिजोत्तमः। न देवा फज्जते तत्र न पिबन्ति हिबर्जलम्॥ चितिष्त्रष्टा तु या नारी ऋतुष्त्र-

षाच व्याधिता। प्राजापत्येन शुन्धेत ब्राह्मणान् भोजये इशा। येच प्यजिता विषाः प्रयज्याग्निजलावहाः । अ नाशकान्वियर्त्तने चिकीषीनि गृहस्थितिम् ॥ धारयेत्री णि रुच्छाणि चान्द्रायणमथापि वा। जातकममोदिक पो क्तं पुनः संस्कार महिति ॥ नाशीचं नोदकं नाश्च नोपवादा नुकम्पने। ब्रह्मदण्डहतानां तु न काच्ची कटधारणम् ॥ स्रेहं रुत्वा भयादिभ्यो यस्तेनानि समाच्रेन् । गोमूत्रयाव काहारः रुच्छुमेकं विशोधनम् ॥ वृद्धः शीचस्मृतेर्द्धाः प त्याख्यातभिषक् कियः। आत्मानं चातये चस्त भृग्गग्य नशनाम्बुभिः ॥ तस्य विरावमाशीचं दितीये त्वस्थिस ञ्चयम्। तृतीये तूद्कं कृत्वा चतुर्थे शाहमाचरेत्॥ य स्येकापि गृहे नास्ति धेनुवंत्सानुचारिणी। मङ्गलानि कृत स्तस्य कुतस्तस्य तमःक्षयः ॥ अतिदोहातिवाहाभया ना सिका भेंदनेन गा। नदीपर्वतसंरोधमृते पादोनमाचूरेत् ।। अशागवं धर्माहलं षड्गवं व्यावहारिकम् । चतुर्गवं नृ शंसानां दिगवं गववध्यकत् ॥ दिगवं वाहयेत् पादं म ध्याक्कं तु चतुरीवम् । षड्गवं तु त्रिपादोक्तं पूर्णोहस्त्वष् भिः स्मृतः ॥ काष्ठलोष्टशिलागोद्यः कुच्छं सोन्तपनञ्च रेत्। पाजापत्यं चूरेन्यृत्सा अतिस्च्छन्तु आयसेः ॥ पा यश्विते ततस्वीणीं कुर्याद्बाह्मणभीजनम्। अनुडुत्-सहितां गाञ्च दद्यादिमाय दक्षिणाम् ॥ शरभोष्ट्रहयाँना गाने सिंहशाद्विगर्दभान् । इत्वा च शूद्रहत्यायाः प्राय श्चित्तं विधीयते ॥ मार्जारगोधान्कुलमण्ड्कांश्च पति णः। हत्वा त्र्यहं पिवेत् सीरं रुच्कुं वा पादिकञ्चरेत्॥ चण्डालस्य च संस्पृष्टं विष्मूत्रस्पृष्टमेव वा । त्रिरात्रण

विशादिः स्याद्फातको ज्जिष्टं तथाच्रेत् ॥ वापीकूपृतडा गानां द्षितानोञ्च शोधनम्। उद्देद्घटशतं पूर्णे प ज्यगच्येन शुध्यति ॥ अस्थिच्मम्विसिकेषु खर्श्या-नादिद्धिते। उद्देरदुद्कं सर्व्य शोधनं परिमार्जनम्॥ गोदोइने चर्मापुटे च तोयं यन्लाकरे कारुकशिल्पिइस्ते, स्वीबालवदान्रितानि यान्यप्रत्यक्षदृष्टानि श्वनीनि ता नि॥ पाकाररोधे विषम्पदेशे सनानिवेशे भवनस्य -दाहै। आरब्धयज्ञेषु महोत्सवेषु तथेव दोषा न विक-त्यनीयाः ॥ भपास्वरणये झढकस्य कूपे द्रोण्यां जलं को शविन्गीतञ्च । श्वपाकचण्डालपरियहे तु पीत्वा जलं प भगव्येन शुद्धिः ॥ रेतोविण्मू संस्पृष्टं कीपं यदि जलं पि वेत् । त्रिरानेणीव शुद्धिः स्यात् कुम्भे सान्तपनं तथा ॥कि न्मिन्भावं यत् स्यादेज्ञानादुदकं पिवेत्। प्रायश्चितं वरेत् पीत्वा तम्रक्षच्छं दिजोत्तमः ॥ उष्ट्रीसारं खरीसी रं मानुषीसीरमेव च । प्रायित्रतं चरेत् पीत्वा तप्तकृञ्जं दिजोत्तमः ॥ वर्णवाह्येन संस्पृष्ट उच्छिष्ट्रसनु दिजोत्तमः। पश्चरात्रोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शुद्धाति ॥ शुविगोत् विकत्तोयं प्रकृतिस्थं महीगतम् । चर्मभाण्डेस्तु धाराभि स्तथा यन्त्रोन्हतं जलम् ॥ चण्डालेन तु संस्पृष्टः स्नानमेन्य विधीयते । अच्छिष्टस्तु च संस्पृष्टिस्त्ररात्रेणेव श्रन्द्विति ॥ आकराह्त्वस्तूिन नाश्रन्चीनि कदाचन । आकराः शत्यः सर्वे वर्जयित्वा स्तराकरम् ॥ श्वाष्ट्राध्यवा-श्वेव तथेव चणकाः स्मृताः । खर्जरञ्जेव कर्प्रमन्यद् श्वष्टतरंशकि ॥ अमीमास्यानि शोचानि स्वीभिराचिरि तानि च । अदुषाः सनतं धारा वातोन्द्रताश्वरणवः ॥

बहुनामेव लग्नानामेकश्चेदशतिभीवेत्। अशीचमेक मानस्य नेतरेषां कथञ्चन ॥ एकपङ्क्तये पविष्यानां भो जनेषु पृथक् पृथक् । यद्येको लभने नीलां सूर्व्य तेऽशु चयः स्मृताः ॥ यस्य पटे पृष्टसूत्रे नीली रक्तोहि दृश्यते। विराजं तस्य दात्व्यं शेषाश्चेवोपवासिनः॥ आदित्येऽस मिने रात्रावस्पृत्रयं स्पृशतं यदि। भगवन्। केन शादिः स्यात्तनो भूहि तपोधन । ॥ आदित्येऽस्तमिते रात्री स्पृशे न हीनं दिवा जलम् । तेनेव सर्वशंक्रदिः स्याच्छवस्पृष्टनु बुर्जियेन् ॥ देशकालं वयः शक्ति पापञ्चावेक्षयेत्ततः । पाय श्वितं प्रकल्यं स्याद्यस्य चोक्ता न निष्कृतिः ॥ देवयात्रा विवाहेषु यज्ञ प्रकरणेषु च । उत्सवेषु च सर्वेषु स्पृष्टासृ ष्टिर्न विद्यते ॥ आरनालं तथा सीरं कन्दुकं दाधसक्ताः। स्नेहपूक्तञ्ज् तकञ्ज श्रद्भयापि न द्व्यति ॥ आद्रीमांसं-धृतं तेलं सोहाश्व फलसम्भवाः । अन्त्यभाण्डस्थिता ए ते निष्क्रान्ताः अहिमाभुयुः ॥ अज्ञानात् पिवते तोयं-ब्राह्मणः शर्द्रजातिषु । अहारात्रोषितः स्वात्वा पञ्चगये न श्रद्धाति ॥ आहिताग्निस्तु यो विभो महापातकवान् भवेन्। अप्सुप्रक्षिप्य पात्राणि पश्चादिनं विनिर्दिशे त् ॥ यो गृहीत्वाऽविवाहागिं गृहस्थ इति मन्यते । अनं तस्य न भोक्तव्यं वृथापाको हि सः स्मृतः ॥ वृथापाकस्य भज्जानः प्रायश्वितं चरेद्दिजः । पाणानप्स विराचम्य धनं प्राथ्य विश्वन्द्वति ॥ वैदिके लोकिके वापि हुनोच्छिए जले क्षिती । वैश्वदेवं प्रकृषीत पुत्रुस्नापनुत्तये॥ कनी वान् गुणवान् श्रेषः श्रेष्ठश्रेनिम्गुणो भवेत् । पूर्व्य पाणि गृहीता च गृह्याग्नि धारयद्बुधः ॥ ज्येष्ठश्रेचदि निर्देषो

गृह्णीयादग्निमयतः । नित्यं नित्यं भवेत्तस्य ब्रह्महत्या न संशयः ॥ महापातकसंस्पृष्टः स्नानमेव विधीयते । संस्पृ ष्टस्य यदा भुड्के स्नानमेव विधीयते ॥ पतितैः सह सं सर्ग मासाई पासमेव वा । गोमूत्र्यावकाहारो मासाई-न विश्राद्धति ॥ कृच्छाई पतितस्येव सकद्भुत्का हिजा त्तमः। अधिज्ञानाच् तद्फत्का रुच्छं सान्तपनञ्चरेत्।। प्रितान्नं यदा भुक्तं फक्तं चाण्डाळ वेष्म्रिन । मासार्दन्तु पिवेदारि इति शातातपोऽ श्रवीत् ॥ गोबाह्मणहताना श्र पिततानों तथेव च । अग्निना नच संस्कारः शृङ्ख-स्य वचनं यथा ॥ यश्राण्डाहीं हिजो गच्छेत् कथञ्चित् -क्रममोहितः । विभिः कृच्छेविक्रस्येत पाजाप्त्यानुपू-र्व्याः ॥ पतिनाचान्यमादाय फत्का वा श्राह्मणी यदि । कत्वा न्स्यू समुत्सर्गम्ति कच्छं विनिद्शित् ॥ अन्यह-सान्छवे क्षिप्तं काष्ठलोष्ट्रतृणानि च । न स्पृथोत्तु तथोन्छि एमहोरात्रं समाचरेत् ॥ चाण्डालं पतितं म्हेन्छं मद्यभा-पडं रजस्लाम् । हिजः स्पृष्ट्या न भुज्जीन भुज्जानो य-दि संस्थित ॥ अतः परं न भुज्जीत त्यत्कान्तं स्नानमा-चरेत्। ब्राह्मणैः सम्बुज्ञात स्त्रिरात्रमुपवासयेत् । सघ तं यावकं पाश्य व्रतशेषं समापयेत् ॥ भुज्जानः संस्पृशेद् यस्तु वायसं कुकुटं तथा । विरात्रेणीव शुद्धिः स्यादथी-चिष्टस्त्रहेन तु ॥ आरूढो नैष्ठिके धर्मे यस्तु प्रच्यवते पुनः । चान्द्रायणं चरेणमासमिति शानानपोऽ व्रवीत् ॥ पश्चेश्याभिगमने प्राजापत्यं विधीयते । गवां गमने म नुभोक्तं वतं चान्द्रायणञ्चरेत् ॥ अमानुषीषु गोवर्जमुद-क्यायामयोनिषु । रेतः सित्का जले वैव सच्छ्रं सान्तपनं

चरेत्॥ उदक्यां स्तिकां वापि अन्त्यनां स्पृत्राते यदि। त्रिरात्रेणीव शक्तिः स्यादिधिरेष पुरातनः॥ संसग् यि गच्छेचेदुदक्याम्बा तथान्त्यनः। प्रायश्चिती स् विज्ञेयः पूर्व स्नानं समाचरेत् ॥ एकरात्रऋरेण्यूत्रं पुरीषे तु दिन त्रयम् । दिनत्रयं तथा पाने मैथुने पञ्च सप्त वा ॥ भी जने तु प्रसक्तानां प्राजापत्यं विधीयते । दन्तकाष्ठे त्य होरात्रमेष भोचिषिः स्मृतः ॥ रजस्वता यदा स्पृषा भवानचण्डाखवायसेः । निराहारा भवेतावत् स्मात्वा कालेन शुन्हाति ॥ रजस्वला यदा स्पृषा उष्ट्रजम्बुकश-म्बरेः। पञ्चरात्रं निराहारा पञ्चगव्येन श्रुद्धाति॥ स्यू षुं रजस्वलान्योन्यं ब्राह्मण्या ब्राह्मणी च या। एक्रात्रं निराहारा पञ्चगच्येन शुझित ॥स्पृषा रजस्वलान्योन्यं ब्राह्मण्या क्षत्रियी च या। त्रिरात्रेण विशुद्धिः स्याद्धास स्य वचनं यथा ॥ स्पृष्टा रजस्वलान्योन्यं ब्राह्मण्या वैश्य सम्भवा । चतूरात्रं निराहारा पञ्चगच्येन शुन्झित्॥सृ ष्ट्रा रज्ञस्वलान्योन्यं ब्राह्मण्या श्रद्धसम्भवा । पद्रानेण विशुद्धिः स्यादब्राह्मणीकामकारतः ॥ अकामतश्वरेद्दैवं ब्राह्मणी सर्वतः स्पृशेत् । चनुणीमपि वर्णानां शहिदेषा भ्कीर्तिता ॥ उच्छिषेन तु संस्पृषी ब्राह्मणी ब्राह्मणीन यः। भोजने मूत्रचारे च शङ्खस्य वचनं यथा ॥ स्नानं ब्राह्म णसंस्परी जपहोमी तु स्विये। वैष्ये नक्तव्य कुळीत श् दे चैव उपोषणं ॥ चर्माको रजको बैण्यो धीवरो नटकस्त था। एतान स्पृष्टा दिजो मोहादाचामेत् प्रयतोऽपि सन्। एतेः स्पृष्टो दिजो नित्यमेकराञं पयः पिवेत्। उच्छिष्टे-स्तिश्चिराञं स्याहृतं माश्य विशुद्धाति ॥ यस्तु छायां श्वः पाश्य विशुद्धित्। अभिशक्तो हिजोऽरण्ये ब्रह्महत्या-ब्रतं चरेत्। मासोपवासं कुचीत चान्द्रायणमथापि वा॥ वृथामिथ्योपयोगेन भूणहत्यावतञ्चरेत्। अब्मक्षो द्वाद शाहेन पराकेणीव शुद्धीत ॥ शुबन्त ब्राह्मणं हत्वा शूद्रह त्याव्रतं चरेत्। निर्गुणं सगुणो हत्या पराकव्रतमाचरेत्॥ उपपातकसंयुक्ती मानवी मियते यदि। तस्य संस्कार-कत्ती च पाजापत्यद्यञ्चरेत् ॥ प्रभुञ्जानो अतिसस्मेहं कदाचित् स्पृशते दिजः। विरावमाचरेन्नके निस्मेहमथ वाचरेत्।। विडालकाकाद्यच्छिष्टं जग्ध्या श्वनकुलस्यच केशकीटावपन्नञ्च पिवेद्बाह्यीं सुवर्चसूम् ॥ उष्ट्रयानं समारुद्ध खरयानव्य कामनः । स्मात्वा विभी जिनेयासः माणायामेन शुस्ति ॥ सय्याहतीं समणवां गायनीं शि रसा सह। तिःपठेद्दा यूनपाणः पाणायामः स उच्यते ॥ शकृद्दिगुणगोपूत्रं सिपदेद्याचनुर्गुणम् । शिरमष्गुणं-देयं पञ्चगव्ये तथा दिध् ॥ पंचगव्यं पिवेच्छ्द्रो ब्राह्मण-स्तु सुरां पिवेत् । उभी तो तुल्यदोषो च वसता नरके वि रम्॥ अजा गांवी महिष्यश्च अमेध्यं भक्षयनि याः। दु
ग्धं हव्ये च कव्ये च गोमयं न विलेपयेत् ॥ ऊनस्तनी मधि कां वा या चान्या स्तनपाधिनी। तासां दुग्धं न होतव्यं ह तं चैवाहुतं भवेत् ॥ ब्राह्मीदने च सोमे च सीमन्तोन्नय ने तथा। जात्यादे नवयादे फत्का चान्द्रायणं चरेत्॥ राजानं हरते तेजः श्रद्धानं ब्रह्मवर्चसम्। स्वस्तानन्त्रं यो भुङ्क्ते स भुङ्के पृथिवीमलम् ॥ स्वस्ता अवजाता म नाभीयात्तद्गृहे पिता। अन्नं भुइक्ते तु मायायां पूरं

सं नरकं ब्रजेत् ॥ अधीत्य चनुरो वेदान् सर्वशास्त्रार्थत त्वित् । नरेन्द्रभवने भुत्का विष्ठायां जायते कृमिः ॥न वश्राद्धे विषक्षे च् षणमास्रे मासिकेऽब्दिके । प्तन्ति पित् रस्तस्य यो भुङ्क्ते नापदि हिजः॥ चान्द्रायणं नवश्राद्धे पराको मासिक तथा । शिपक्षे चैव कृच्छुः स्यात् षणमा-से कुच्छ्रमेव च । आब्दिके पादकुच्छ्र स्यादेकाहः पुनरा ब्दिके ॥ ब्रह्मच्य्यमनाधाय मासश्रादेषु पर्वासु । द्वाद शाहे त्रिपक्षेऽब्दे यस्तु भुङ्क्ते दिजोत्तमः ॥ पतन्ति पि तरस्तस्य ब्रह्मलोके गता अपि ॥ एकादशाहेऽहोरामं भु त्का संचयने त्यहं। उपोष्य विधिवहियः कुष्माण्डी जुहुँ याद्ध्तं ॥ पक्षे वा यदि वा मासे यस्य नाझिनि वै हिं-जाः । भुत्का दुरात्मनस्तस्य द्विजभ्वान्द्रायणं चरेत् ॥यन वेदध्वनिधांतं नच गोभिरखड्न्ह्तम् । यन् वालेः परि वृतं १मशानिभव तद्गृहं ॥ हास्येऽपि बहवी यूत्र विनाऽ धर्मी वदित हि। विनापि धर्मिशास्त्रेण संधर्मः पावनः स्मृतः ॥ हीनवणे च यः कुर्योदज्ञानादिभवादनं । तम् स्ना नं प्रकृत्यीत एतं प्राप्त विशुन्द्यति ॥ समुत्यन्ने यदा स्ना ने भुड़ के वापि पिवेद्यदि। गायव्यष्ट सहस्तं तु जपेत् सालो समाहितः ॥ अङ्गुल्या दन्तका छन्न प्रत्यक्षं लेव णं तथा। मृतिका भक्षणे श्रीच तुल्यं गोमांसभक्षणम् ॥ दिवा कपित्यच्छायायां रामी दॅधिशमी इ । कापसिद न्तकाषुळ्य विद्यारिप हरे व्हियं ॥ सूच्येवातनस्वाधाम्बु स्नानवस्त्रघटोदकम् । मार्जनीरेणुकेशाम्बु हन्ति पुण्यं दिवाहनम् ॥ प्रार्जनीरजकेशाम्बु देवतायतनोद्शवस्। तेनावगुण्ठितं तेषु गङ्गांभः प्रुतएव सः ॥ सृतिका सप्त

न्याद्या व्लाकि मूषिकस्थले । अन्तर्जले १मशाना ने वृक्षमूले करालये। वृषभेश्व ततोत्रवाते श्रेयष्का मैः सदा बुधेः ॥ शुनो देश तु संश्राह्या शर्कराश्मिव वर्जिता ॥ पुराषे भेश्वने होमे प्रस्तावे दन्तधावने । स्नानभोजनज्ञयेषु सदा मोनं समाचरेत् ॥ यस्तु संव त्सरं पूर्ण भुड़क्ते मोनेन सर्वदा। युगकोटिसहस्रेषु स्वर्गलोके महायते ॥ स्नानं दानं जपं होमं भोजनं देव ताईनं। प्रोदिपादो न कुचिति स्वाध्यायं पितृतर्पणं॥ सर्वस्वमपि यो द्यान् पातथित्वा दिजोत्तमं । नाशिय-ता तु तत् सर्वे भ्रूणेहत्याफलं लभेत् ॥ यहणोद्दाहसं-कुन्ती स्त्रीणाञ्च यस्व तथा । दानं नैमितिकं ज्ञेयं रा त्रीचापि प्रशस्यते ॥ क्षीमजं वाथ कापसि पहुसूत्रमधा पि वा। यज्ञोपवीतं यो दद्याहरू द्वनफरं रुभेत्॥ कां स्यस्य भाजनं द्द्याद्घ्तपूर्ण संशोभनम्। तथा पत्त्या विधानन् अभिषोम्फलं लभेत्॥ श्राद्धकाले तु यो द्द्या च्छोभनी च उपान्ही। स गच्छत्यन्यमार्गेऽपि अन्तदा नफलं लभेत् ॥ तैलपात्रं तु यो दद्यात् संपूर्णन्तु समाहि तः । सगच्छिति ध्रवं स्वर्गे नरो नास्त्यत्र संशयः ॥दुर्भि क्षे अन्नदाना च संभिक्षे च हिरण्यदः । पानीयदस्त्व रण्ये च स्वर्गलोके महीयते ॥ यावदर्द प्रस्ता गीस्ताव त् सा पृथिवी स्मृता । पृथिवीं तेन दत्ता स्यादी हशीं गा न्ददाति यः ॥ तेनाग्नयो हुताः सम्यक् पित्रस्तेन तिर्पं ताः । देवाश्य पृजिताः सब्वी यो ददाति गवान्हिकसः । जन्मप्रभृति यत्पापं मातृकं पेतृकं तथा । तत् सब्वी नश्य ति क्षिपं वस्त्रदानान्न संशयः ॥ कृष्णाजिनव्य यो दद्यात्

यथा भान्राहमुन्भ चन्द्रमाः ॥ सर्वपापविनिर्मुतः सर्वपापं विलङ्घयेन् । सर्वसीरव्यं ख्यं याप्तः श्राह्र-दानान्न संशयः ॥ सर्वेषामेव दानानां श्राद्धदानं विशि ष्यते। मेरुतुल्यं कृतं पापं श्राह्दानं विशोधनम् ॥श्रा इंकल्या तु मन्यी वे स्वर्गलोके महीयत् ॥ अमृतं बा्-ह्मेणस्यान्नं क्षेत्रियान्नं पयः स्मृतम् । वैश्यस्य चान्नमे वान्नं शहान्नं रुधिरं भवेत् ॥ एतत् सर्व्वं मया ख्यातं श्राह्यकान्ते समुखिते । वैश्वदेवे च होमे च देवताभ्यर्चने जपे ॥ अमृतं तेन वियान्तम् म्यजः सामसंस्कृतम् ॥व्य यहारानुपूर्वण धम्भेण विशिष्तितम् । क्षियानं प् यस्तेन धृतानं यज्ञपालने ॥ देवो मुनिद्दिजो राजा व भयः भूद्रो निषादकः । पश्रम्किन्छोऽपि नाण्डालो विमा दशविधाः स्मृताः ॥ सन्धां स्नानं जपं होमं देवतानिस पूजनम्। अतिथि वैश्वदेवञ्च देवब्राह्मण उच्यते ॥शाके पत्रे फूले मूले बनवासे सदा रतः । निरतो इहरहः शा दे स विशो मुनिरुच्यते ॥ वेदान्तं पठते नित्यं सर्वसङ्गं परित्यजेत् । साइख्ययोग विचारस्थः स विशो हिज उ च्यते ॥ अस्त्राहताश्य धन्वानः संयामे स्वसंसुखे । आरम्भे निर्जिता येन सु विपः क्ष्य उच्यते ॥ रूषिक मिरतो यश्व गवाञ्च प्रतिपालकः । वाणिज्यव्यवसाय श्व स विप्रो वैश्य उच्यत ॥ लाक्षालवणसंभित्रं कुरू म्भं क्षीरस्पिषः। विकेता मधुमांसानां स विमः श्रद्ध उच्यते॥ चीरश्च तस्करश्चीव सूचका दंत्राकस्तथा। मत्य मांस सदालुच्धा विमा निषाद उच्यते॥ ब्रह्मतृत्वं न जानाति ब्रह्मसूत्रेण गवितः। तेनेच स च पापेन वि

यः पशुरुदाहृतः ॥ वापीक्षवतडागानामारामस्य सरः सुच। निःशङ्कं रोधकश्चेव स विघो म्लेच्छ उच्यते ॥ क्रियाहीन्श्च भूरवश्च सर्वधममिव्विक्तिः। निर्दयः स र्वभूतेषु विप्रश्राण्डाल उच्यते ॥ वेदैरिही नाश्य परन्त शास्त्रं शास्त्रेण हीनाश्च पुराणपाठाः । पुराणहीनाः कृ षिणो भवन्ति भाषास्त्ते। भागवता भवन्ति ॥ ज्योतिवि दो ह्यथ्यिणः कीराः पीराणपाठकाः । श्रान्हे युज्ञे महा दाने वरणीयाः कदाच न् ॥ श्राह्य पितरं घोरं दानं वेव तु निष्फछम् । यज्ञ च फलहानिः स्यात्तस्माता न् परिवर्जयेत् ॥ आविकश्चित्रकारश्च वैद्यो नक्षत्रपा उक्ः। चतुर्विपा न पूज्यन्ते बहस्पतिसमा यदि॥ मा गधी माधुरश्चेव कापटः कीटकानजी । पञ्च विधा न पूज्यन्ते बृहस्पतिसमा यदि ॥ कयकीतां च्या कृन्या पुली सा न विधीयते । तस्यां जाताः सुतास्तेषां पितृ-पिण्डं न विद्यते ॥ अध्याल्यागतो नीरं पाणिना पिब ते दिजः । सुरापानेन तत्तुल्यं तुल्यं गोमांसभक्षणम् ॥ ऊर्द्वजङ्घेषु विपेषु प्रक्षाल्य चरणद्दयम् । तावचाण्डा सर्ह्यण् यावद्रद्वां न मज्जति ॥ दीपश्य्यासनच्छाया कार्पासं दन्तधावनम् । अजारेणुस्पृशं चैव शकस्यापि भियं हरेत् ॥ गृहाद्रशगुणं कूपं कूपाद्रशगुणं तटम् । तटाद्रशगुणं नद्यां गङ्गासंख्या न विद्यते ॥ स्वद्यद्वा ह्मणं तोयं रहस्यं समियं तथा । वापीकूपे तु वेश्य-स्य शीद्रं भाण्डोदकं तथा ॥ तीर्थस्नानं महादानं य चान्यतिलतपणम् । अब्दमेकं न कुब्बीत महागुरुनि पाततः ॥ गङ्गा गयात्वमावास्या चिद्रश्राहे क्षयेऽ ह वि । मघापिण्ड प्रदानं स्यादन्यत्र परिवर्ज्ञयेत् ॥ इतं वा यदि वा तेलं पयोवा यदि वा दिध । चत्वारो ह्या ज्यसंस्थानं हुतं नेव तु वर्जयेत् ॥ शुत्वेतानृषयो धम्मिन् भाषितानिश्रणा स्वयम् । इदम्चुमहात्मानं सर्वे ते धम्मिनिश्रिताः ॥ य इदं धारियध्येन्ति धम्मिशा स्त्रमतिद्रताः । इह लोके यशः प्राप्य ते यास्यिनि श्रि पिष्टपम् ॥ विद्यार्थी लभते विद्यां धनकामो धनानि च आयुष्कामस्तर्थेवायुः श्रीकामो महतीं श्रियम् ॥ ॥ इति श्रीअविमहिष्स्मृतिः समाप्ता ।

अथ रुद्धारेयस्मृतिपारमाः॥

श्रीरामचन्द्राय नमः॥

अज्ञानितिमिरान्धस्य इतेनानेन केशव!। प्रसीद सुमुस्वोनाथ! ज्ञानदृष्टिप्रदो भव ॥ हुताग्निहोत्रमासीन म
तिं श्वतवतां वरम् । उपगम्य प्रपुच्छन्ति त्रस्पयः शं
सितव्रताः ॥ भगवन् ! केन दानेन जप्येन नियमेन
च । शम्यन्ति पातकेर्युक्ता स्तद्भिहः त्वं महामुने!॥ अ
पि स्व्यापितदोषाणां पापानां महतां तथा । सर्वेषां
चोपपातानां शुद्धिं वस्यामि तत्वतः ॥ प्राणायामेः प
वित्रेश्य दानेहामेर्जपेस्तथा । शुद्धिकामाः प्रमुच्यन्ते
पापेभ्यश्य दिजर्षभाः ॥ प्राणायामान् पवित्रांश्य व्याद्धतिं प्रणवं तथा । पवित्रपाणिरासीनो ह्यभ्यसेद्
ब्रह्म नेत्यकम् ॥ आवर्तयेत्सदा विप्रः प्राणायामान्
पुनः पुनः । आकेशादानस्वायान् तपस्तप्यतउन्नमम्॥

निरोधाज्जायते वायु वियोरिनिहिं जायते । अग्नेरापो अभिजायन्ते ततो इन्तः शाध्यते विभिः ॥ त्यक्चमीमांस रुधिर मेदोमज्जास्थिभिः कृताः । तथेन्द्रियकृता दोषाः द्यन्ते प्राणनियहात् ॥ प्राणायामे दहेदोषान् धारणा भिश्च किल्बिषान्। प्रत्याहारेण विषयान् ध्यानेनानीश्व रान् गुणान् ॥ नच तीब्रेण तपसा न स्वाध्यायेनचेज्यया। गतिं गन्तं दिजाः शक्ता योगात्सं प्राप्तवन्ति याम् ॥ योगा-तंपायते स्नानं योगाद्दर्मस्य उक्षणम् । योगः परं तपो नित्यं तस्माद्यक्तः सदा भवेत् ॥ यणवाद्या स्तथा देवाः मणवे पर्यपस्थिताः । बाङ्मयः प्रणवं सर्वे तस्मात्प्रणव-मभ्यसेत्।। पणवे नित्ययुक्तस्य व्याहतीषु च सप्तसु । भिपदायां च गायत्र्यां न् भयं विद्यते क्वित्। एकाद्तरं पर ब्रह्म प्राणायामः परंतपः ॥ गायत्री ब्राह्मणी प्रोक्ता पावनं परमं त्रयम् । सच्याहित सपणवां गायत्रीं शि-रसा सह ॥ त्रिःपुर्वेदायतः प्राणः प्राणायामः स उच्यते। इति एडानेयसमृती मथमोऽध्यायः॥ माणायामांस्तु यः कुर्याद्यथाविधि समाहितः । अहोरा यहेनः कुरुते निशा। उतिष्ठन पूर्वसन्ध्यायां याणायामे स्तु शब्यति । माणायामेः स्वमात्मानं संयम्यास्ते पु नः पुनः ॥ दश् हादशिभविषि चतुविशात्परं तपः ।का लां जस्वाप इत्येन हासिष्ठंच त्रिचं मिति ॥ कूष्माण्डं पाव मान्च क्तरापोऽपि हि शाध्यति । सक्रज्नस्वास्य वामी-यं शिवसङ्ख्यमेवच ॥ स्तवर्ण मपहत्यापि क्षणाद्भवति निर्मलः ॥ हिविष्मांस्तु यमभ्यस्य न तमम्भ इतीतिच।

रुदाभिं संहितायाम्। 35 स्कं तु पीरुषं जाला मुच्यते गुरुतल्पगः॥ सच्याहति-काः सप्रणवाः पाणायामास्तु षोडश । अपि भूणह-नं मासात् पुन्ल्यहरहः कृताः । अथवाप्सु निमज्जेनां स्विः प्रदेदधमेषणम् ॥ यथा श्वमेधः ऋत्राह्ता हशं म नुरब्रवीत् । आरम्भयज्ञः क्षत्रस्य हवियज्ञो विशाम-पि ॥ पाकयज्ञस्तु श्रद्राणां जपयज्ञी द्विजोत्तमे। आ रम्भयज्ञाज्जपयज्ञो विशिष्टो दशामिर्गुणैः ॥ उपांक्र स्याच्छतगुणः सहस्रो मानसः स्मृतः । उपांक्षस्त च लिज्जिह्यादशनच्छद इरितः ॥ निविक्रिरेण वक्रणं म नसा मानसः स्मृतः । सहस्रं परमां देवीं शतमध्याद शावराम्।। गायनीं यः पठेहिमः न स पापेन छिप्यते। क्षियो बाहुबीर्येण त्रेदापदमात्मनः ॥ वित्तेन वैश्य शूद्री तु जूपहोमें दिंजोत्तमः । यथाश्वा स्थहीनास्त र थों बार्वेर्यथा विना ॥ एवं तपोऽप्यविद्यस्य विद्या वा प्यनपस्तिनः । यथानां मधुसंयुक्तं मधु वान्नेन संयुत म्। एवं तपश्च विद्याच संयुक्तं भीषजं महत्। विद्या त्पोभ्यां संयुक्तं ब्राह्मणं जपतत्परम् ॥ कुत्सितैरिष् वर्त न्ते एनो न प्रतियुक्तते ॥ ॥ इति चुन्दानेयस्मृती हि तीयोऽध्यायः॥ अथाकार्यशतूं सायं कृतं वेदश्व साध्यते । सर्वे हिन-स्ति वेदाग्नि र्दहत्यग्नि रिवेन्धनम् ॥ यथा जातबलो वहि देहत्याद्रीनिप दुमान् । तथा दहन्ति वेदज्ञाः कर्मजं दो षमात्मनः ॥ यथा महान्ददे ठोषं क्षिप्रमप्सु विनश्यति । एवमात्मकृतं पापं नयी दहति देहिनः ॥ न वेदब्रुमा-श्रित्य पापकर्मरतो भवेन् । अज्ञानाञ्च प्रमादाञ्च दहेळ-

र्म च नेनरत्॥ तपस्तपित योऽरण्ये मुनिर्मूलफलाशनः। अन्वमेकां च योऽधीते तच्छनानि च तत्कलम्॥ वेदाभ्या सोऽन्वहं शक्तया महायज्ञित्रयाक्षमाः। नाशयन्याशुण पानि महापातकजान्यपि॥ इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समु
पहंहयेत्। विभेत्यल्पकृतादेदो मामयं यतरिष्यति॥ याजनाध्यापनाद्दानात्तथेवाहुः प्रतियहात्। विषेषु न भवेदोषो ज्वलनार्कसमा दिजाः॥ शङ्कास्थाने समुत्पन्ने मध्यभोज्यप्रतियहे। आहार्श्वादं वक्ष्यामि तन्मे नि गदतः भूणा ॥ सर्वचेदपवित्राणि वक्ष्याम्यहमतः परम् एषां जपेश्च होमेश्च शुध्यित मिलना जनाः ॥ अधम षणं देवव्रतं शुद्धवत्यः शरत्समाः । कृष्पाण्डाः पाव-मानाश्च दुर्गासावित्र्ययापि च ॥ शतरुद्रम्थविशिरसं विस्तपूर्णमहाव्रतम् । अतिष्ठन् गाः पदस्तामाः सामनि व्याहितस्तथा ॥ गारुडानि च सामानि गायनीरैवनन्तथा पुरुषवतञ्च भावञ्च तथा वेदकतानि च ॥ अब्हिङ्गा -बाहेंस्पत्यञ्च वाक्स्कञ्च ब्रुवंस्तथा ॥ गोस्कञ्चाश्वंसू क्तञ्च इन्द्रशास्त्रेश्च सामनि । त्रीण्याज्यदोहानि रथनारंचे अनेत्रीतं वामदेव्यं रह्य ॥ एतानि जप्यानि पुनाति पा-पाजातिसमरत्वं लभूते यदिन्छेत्। अग्नेरपत्यं प्रथमं सु वर्णः भूबेष्णवी सूर्यसुताश्व गावः॥ लोकास्त्रयस्तेन भ वित्त दत्ता यः काञ्चनं गाञ्च महीञ्च दद्यात् ॥ सर्वेषा-मेव दानानामेकजन्मानुगं फलम् ॥ हाटकिसितिधेनूनां सप्तजन्मानुगं फलम् । सर्वकामफला वृक्षा नद्यः पाय सकर्दमाः ॥ काञ्चना यत्र यासादा स्तत्र गच्छन्ति गोप दाः । वैशाख्यां पीणीगास्यान्तु ब्राह्मणान् सप्त पञ्चवा॥

ब्दात्रिसंहितायाम्। तिहान् सीद्रेण संयुक्तां स्तूपीयत्वा यथाविधि। पीयतं धर्मराजेति तद्रमनि स बहूते ॥ यावज्जीवकृतं पापन्तत् क्षणादेव नश्यति । सुवर्णानि तु यो दद्यात् समुखं ह-नमङ्गलम् ॥ तिलेदिद्यान् यो भूमिन्तस्य पुण्यफलं शृणु सक्तवणीं धरा धेनुः सङ्गीलवनकानना ॥ यातु सागर पर्यन्ता भवेद्ता न संशयः। तिलान् कृष्णानिने कृत्वा क्तवणीमधुसर्पिषः ॥ ददाति यस्तु विपाय सर्वन्तरित दुष्कृतम्। इति वृद्धियसमृती तृतीयोऽध्यायः॥ अथाती रहस्यप्रायश्चितानि व्याख्यास्यामः सामान्य म गम्यागमनन्दुरन्नभोजनान्ती रहस्यी रहस्यं मकाशम्बा वनमनुतिष्ठेत् । अथवाप्सः निमज्जन् स मन्दोऽयं भिरा चत्य राध्येत । गावेश्यव्धेकन्याद्षेणे इन्द्रशस्द इत्य पः पीत्वा मुच्यते ॥ वेदस्येव गुणंजिस्वा सद्यः शोधन मु च्यते। एकादशागुणान्वापि रुद्रानाचृत्य शर्ध्यति॥ म हापानकोपपानके भयो मिलनीकरणे भयो सुच्येत । हिप-दा नाम गायत्रा वेदेवाजसनेयके किः कृत्वोऽन्तर्जले पो स्य विमुच्येत महैनसः ॥ श्राह्मणीगमने स्नात्वोदकुम्भा न श्राह्मणाय दद्यात् क्षियावेश्यागमने तापसांस्त्रिरा वृत्य शुध्यति ॥ श्रद्रोगमने अघमर्षणं त्रिरावृत्य कथ्य ति । गुरुदारान् गत्वा वृषमहादशाच्त्या शस्यति अपे-यं पीत्वा अधमर्षणेनापः पीत्वा विश्वस्थति ॥ अशक्तः मायश्विते सर्वरात्रमनुशोच्यं शब्येत ॥ अग्निसोम इन्द्र सोम इति जिपत्वा कन्याद्वी विसुच्यते ॥ सोमं राजान मिति जिपता विषदा अमिदाश्च विमुच्यन्ते ॥ सर्वेषामे व पावानां सङ्करे समुपस्थिते ॥ दशसाहस्रमभयस्ता गा

यत्री शोधनी परा । ब्रह्महा गुरुतल्पी बाडगम्यागामी न थैव च ॥ स्वर्णस्तेयी च गोम्य तथा विस्वम्भघातकः। शरणागतधाती च कूटसासी त्वकार्यकृत् ॥ एवमाध्य नान्येषु पापेष्वभिरतिश्वरम्। पाणायामास्तु यः कुर्या नु सूर्यस्योदयनं प्रति ॥ सूर्यस्योदयनं प्राप्य निर्मेला-धौतकल्मषाः । भवन्ति भास्कराकारा विधूमा इव पाव-काः ॥ न हि ध्यानेन सुदशं पवित्रमिह विद्यते । श्वपाके ष्पि भुज्जानो ध्यानेनैयात्र छिप्यते ॥ ध्यानमेव परो ध मीं ध्यानमेव परन्तपः । ध्यानमेव परंशीचं तस्मान्धा-नपरो भवेत् ॥ सर्वपापमसक्तोऽपि ध्यायन् निमिषमुच्य ते । पुनस्तप्स्वी भवति पङ्क्तिपावन पावनः ॥ इति रदात्रेयस्मृती चनुर्धोऽध्यायः। चतुरसं ब्राह्मणस्य त्रिकोणं क्षत्रियस्य च ॥ वर्तुछं चैव वैश्यस्य शूद्रास्यापयुक्तणं स्मृतम् । ब्रह्मा विष्णुश्च रु द्रश्च श्रीहिताशन एवं च ॥ मण्डलान्युपक्तञ्जनते तस्मा त् कुवं नि मण्डलम् । यातुधानाः पिशाचाश्व कूराश्री व तथा सूराः ॥ हरन्ति रस्मन्नस्य मण्डलेन विवेर्जित म्। गोमयैर्मण्डलं कला भोक्तव्यमिति निश्वितम्॥ य म क पृति तस्यान्नं फल्का चान्द्रायणं चरेत्। यतिश्व ब्रह्मचारी च पद्मान्मस्वामिना बुभौ ॥ तयोरेन्न्मदत्वात भत्का चान्द्रायणं चरेत् । यतिहस्ते जलं द्याद्वेशं द्या त् पुनर्जलम् ॥ त्देशं मेरुणा तुल्यं तज्जलं सागरोपम-म्। वामहस्तेन यो फिड़के पयः पिबति यो हिजः॥ सं रापानेन तत्तुच्यमित्येवं मनुरब्रवीत् । हस्तदत्तास्तु ये सिहास्वणं व्यञ्जनानि च । दातारं नोपतिष्ठन्ति भोका भुइन्तेच किल्बिषम् ॥ अमोज्यं ब्राह्मणस्यान्नं वृष्हेन निमन्तितम् । ब्राह्मणान्नं ददच्छ्दः शूद्रान्नं ब्राह्मणो द दत् ॥ उभावतावभोज्यान्ते फत्का चान्द्रायणं चूरेत्। अमृतं ब्राह्मणस्यानं क्षत्रियस्य पयः स्मृतम् ॥ वैश्ये-स्य बाल्मेवालं श्रद्धालं रुधिरं स्मृतम् । श्रद्धालेनोद रस्थेन योऽधिगच्छ्ति मेथुनम् ॥ यस्यान्नं तस्य ते पुत्रा अन्नाच्छुकः प्रवर्तते । श्रद्धान्नेरसपुष्टाङ्गोऽधीयानोऽपि च नित्यशः॥ जुङ्कचापि जपंश्वापि ग्रातिमृद्धां न विन्दिनि यश्विवेदमधीयानः श्रद्धान्नमुपभुज्जते॥ श्रद्धो वेदफ-लं याति श्रद्धत्वं चाधिगच्छिनि । मृतस्त्रकपुषाङ्को हिजः शुद्धान्मभोजी च॥ अहमेवं न जानामि कां कां योनिं ग-मिष्यति । श्वानस्तु सप्त जन्मानि नव जन्मानि श्वरः॥ गृधोः शद्श जन्मानि इत्येवं मनुरब्वीत् । परपाक्षु पासनी ये दिजा गृहमेधिनः ॥ ते वे खरलं गृधलं भ ह्यं बानुभवित हि । श्राइं दत्वाच फत्का्च मेथुनं योऽ धिगच्छति ॥ भवन्ति पितरस्तस्य तन्यासे रेतसी भुजः। उच्छिप्टेन तु संस्पृष्टो द्रव्यहस्तः कथञ्चन ॥ भूमी नि-धाय तुद्वयमाचान्तः शतवितासियात् । स्पृशानि विन वः पादी यु आचामयतः परान् ॥ भूमिगेस्त समाज्ञात न तैरपयतोभवेत् । आचान्तोऽप्यश्तेविस्तावद्याय मनुहतम् ॥ उहते ऽप्यक्रिक्तावद्यावन् मण्डलशोधनम् आसने पादमाराप्य बाह्मणी यस्त फज्जते ॥ मुखन व मितं चान्नं तुल्यं गोमांसभूक्षणम् । उपृदंशान्तशेषं धा भोजने मुखनिःसृतम् ॥ दिजातीनामभोज्यं तत् फत्का चन्द्रायणं चरेत् । पीतशेषंतु यत्तीयं ब्राह्मणः विवते पु

नः॥ अपेयं तद्भवेदमाः पीत्वा चान्द्रायणं चरेत्। आईपा दस्तु भज्जीत नार्द्रपादस्तु संविशेत् ॥ आर्द्रपादस्तु भ शियमगाप्रयात् ॥ आयुष्यं पाङ्युखो भुङ्के यशस्यं द क्षिणामुखः। श्रियः प्रत्यङ्मुखो भुङ्के अतंभुङ्के उ दङ्गुर्वः ॥ शावे शवगृहं गृत्वा शमशाने वान्तरेऽपि वा। आतुरं व्यञ्जनं कृत्वा दूरस्थोऽप्यशाचि भवित् ॥ अतिका ने दुशाहे तु विराव मशाचिभवित् । संवत्सरेऽप्यतीते तु स्रिवापी विश्राद्धाति ॥ अश्रान्डः स्वयमपान्यानशुःहा स्त्रुयदि स्पृत्रोत्। स क्रध्यत्युपवासेन फड़के क्रच्यूँण सं हिजः ॥ स्त्रकं स्तके स्पृष्ट्या स्नानं शावे च स्तके। भत्को पीत्वा तद्त्रीना दुपवासी त्यहं भवेत् ॥ मृण्मया नां च पात्राणां दाहे शर्द्ध रिहेष्यते । स्नानादिषु प्रयु कानां त्यागएव विधीयते ॥ सूतके मृतके चैव मृतकेच मसूतके । तस्मानु संहताशीचे मृताशाचे न शस्यित॥ स्तकाद हिगुणं शावं शावाद हिगुणमार्तवम् । आर्तवा दहिगुणं स्ति स्ततोऽधिशवदाहकः ॥ अनुगम्येच्छ-या पेत मज्ञातोबन्धुमेव च । स्नात्वा सचेलं स्पृध्वागिनं एतं पाश्य विशाध्यति ॥ रजसा शाध्यते नारी नदी बे-गैन शब्यित । भरमना शुध्यते कांस्यं पुनः पाकेन मृ णमयं ॥ उदन्वदम्भसा स्नानं क्षुरकर्म तथेव च । अन्त र्यत्याः रतीकुर्वन्नप्रजा भवति ध्रवम् ॥ दम्पत्योः शि-शुना साई स्तके द्यामेऽ हिन । स्त्रोनं क्षोरं पिता कु यदि भवे हानादियोग्यता ॥ केशादि द्षिते तीरे न कु यितिलत्पणम् । जलमध्ये जलं देयं पितृणां जलिमच्छ

चूदाशिसहितायाम्। 88 ताम् ॥ राभिं कुर्यात् भिभागन्तु ह्रीं भागी पूर्वएव्तु । उ त्तरांशः मभातेन युज्यते ऋतुसूत्के ॥ यदि पश्येद्वं पूर्व कूर्वारे मृतिः स्मृता । स्मात्वेन्द्रं व्रतमादाय देव-नोफ्यों निवेदयेत् । अपूप् उवणं मुद्रं गुडमिश्रं तथा ह विः ॥ दत्ता ब्राह्मणपत्निभ्यो निशि भोजन मेव च । नतु थैं इनि क्रिया अतुशान्तिश्व यल्तः ॥ पुण्याहं वाच-यित्वा तु होतव्यं युद्धिमिन्छता । विचाहे वितते तन्त्रे -होम्काल उपस्थिते ॥ कन्यामृतुमतीं दृष्ट्या कथं कुवेनि याज्ञिकाः । हविषात्या स्नापयित्या त्वन्यवस्थेरलङ्गकृता म्। युक्ताना माहृतिं कत्वा ततः कर्म पवर्तते ॥ प्रथमेः हिन चण्डाली दितीये ब्रह्मघातकी । तृतीये रजकी मी क्ता चतुर्थे इति शर्धाते ॥ आर्त्तवापियुतां नारीं चण्डा हम्पृतित् शुनम् । भोज्यान्तरे तु सम्पृश्यन् स्मात्वा वाच-स्पतिं जपेत् ॥ आर्त्तवाभिष्ठतां नारीं दृष्या भुंड्न्क्रे तु काम तः ॥ तदन्तं छर्दियत्वा तु कुश्वारि पिबेदपः । ये तां दह्या तु यो भड़के प्राजाप्त्यं विशोधन्म ॥ आर्तवाभिप्ततां नारी मार्त्तवाभिध्रुताभिधः। भाषते यदि संमोहादुपवास स्तयोभीवेत् ॥ उद्वयायाः करेणाथ फत्का चान्द्रायणं च रेत्। याजापत्य मसत्याचेत् विरावं स्पृष्भोजने ॥ तदः स्त भोजने चेव् विगुणं सह भोजने । चतुर्गुणं तदुन्छिषे पानीयेऽत्याईमेवच् ॥ उद्क्यायाः समीपस्थ मन्नं भुका लकामृतः । उपवासेन शुद्धिः स्यातिवेद् ब्रह्म स्ववसम् ॥आर्त्तवा यदि चण्डाल सुच्छिषानु मपश्यति । आस्नान कालान्नाश्वीयादासीना वाग्यता बहिः ॥ पादकृच्छ ततः कुर्याद् ब्रह्म कूर्च पिबेत् पुनः। ब्राह्मणान् भोजयेलेश्राहिः

पाणा मनुशासनान् ॥ आर्त्तवाभिष्ठुनां नारी मार्तवाभिष्ठ ता सृशेत् । स्नात्वोपवासं कुर्यातां पञ्चगव्येन शब्यतः ॥क्रन्छूमेकञ्चरेत्सा तु तदंई चान्तरीकृते । आतुरा या ऋतुर्फीत्वा स्वानकर्म कथं भवेत् ॥ स्वात्वा स्वात्वा पुनः स्वयं दशकूद्वस्त्वनातुराः । वृस्त्रापनयनं कृत्वा भस्म-ना परिमार्जनम् ॥ दलात् शक्तितो दानं पुण्याहेन विशत ध्यति। ब्राह्मणानां करेमुक्तं तोयं शिरसि धारयेत्। स र्वतीर्थनदासुण्यादिशिष्टनरमुच्यते । रजस्वलायाः पेता-याः संस्कारे नाचरेहिजः ॥ ऊर्ध्व भिराभात् रुनातायाःशा वधमेण दाहयेत्। रजस्वले च हे स्पृष्टे चातुर्वणस्य याः स्थियः॥ अतिकृच्छं चरेत् पूर्व कृच्छ्मेकं अमेण तु। रजस्वलायाः स्नातायाः पुनरेव रजस्वला ॥ विंशतिदिवसाद्धं विरावमकिर्वते । पस्तिका तु या नारी स्नानतो विंशतेः परम् ॥ रजस्वला तु सा प्रोक्ता प्राकृत निमित्तिकं रजः । शब्दा नारी शब्द्वासाः पुनरातवदर्शने ॥ व खंतु मूलिनं त्यत्का तिलमापुत्य शाध्यति । आतुर स्ना त्यतु मालन त्यत्का ।तलमापुत्य राज्यात । आतुर तमा नसंप्राप्ती दशकत्व स्त्वनातुरः ॥ स्नात्वा स्नात्वा स्पृत्री-देनं तनः शाद्दा भविष्यति । चन्द्रसूर्ययहे नाद्यात् स्नात्वा परेऽ हिने । यस्य स्वजन्मनक्षत्रे गृह्यते शाशिभास्करी ॥ व्याधिः प्रवाहे मृत्युश्च दारिद्यञ्च महद्भयम् । तस्मा-दानं च होमञ्च देवताभ्यचेनं जपम् ॥ कुर्यात्तस्मिन् -दिने युक्ते तस्य शान्तिभविष्यति । सर्वे गङ्गासमं तोयं राहुयस्ते दिवाकरे ॥ यो नरः स्नाति तनीर्थे समुद्रे से तुवन्यने । उपोष्य रजनी मेकां राहुयस्ते दिवाकरे ॥ यो नरः स्नाति तनीर्थे समुद्रे से तुवन्यने । उपोष्य रजनी मेकां राहुयस्ते दिवाकरे ॥ यो नरः स्नाति तनीर्थे समुद्रे से तुवन्यने । उपोष्य रजनी मेकां राहुयस्ते दिवाकरे ॥ यो नरः स्नाति तनीर्थे समुद्रे से तुवन्यने । उपोष्य रजनी मेकां राहुयस्ते दिवाकरे ॥ यो नरः स्नाति तनीर्थे समुद्रे से तुवन्यने । उपोष्य रजनी मेकां राहुयस्ते दिवाकरे ॥ यो नरः स्नाति तनीर्थे समुद्रे से तुवन्यने । उपोष्य रजनी मेकां राहुयस्ते दिवाकरे ॥ यो नरः स्वान्ते । स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं राह्यस्ते । राह्यस्ते । स्वयं स्वयं स्वयं । स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं । स्वयं स्वयं स्वयं । स्वयं स्वयं स्वयं । स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं स्वयं । स्वयं स्य ४६ विष्णुस्मृतिः।

मजनम कृतं पापं तस्मणादेव नश्यति । सोमेऽप्येवं स्-र्यतुल्यं तस्पात् सर्वे समाचरेत् ॥ ॥इति वृद्धानेयस्मृ तो पञ्चमोऽध्यायः॥

इति श्री रहावेय योक्तं धर्मशास्त्रं संपूर्णम्॥

विष्णुस्मृतिः॥

मूहामते! महायाज्ञ! सर्वशास्य विशारद्!॥ असीण्क मैबन्धस्तु पुरुषो हिजसत्तम!। सततं किं जपन् जप्यं विबुधः किमनुस्परन् ॥ मरणे यज्जपं जव्यं यञ्चे भाव मनुस्मरन् । यञ्चध्यात्वा हिजश्रेष्ठ ! पुरुषो मृत्यु मागतः ॥ परम्पद मचाशीति तन्मे बद महासुने । शीनक उ-वाच॥ इदमेव महाराज! पृष्वांस्ते पितामहः ॥भीषां धर्मभृतां श्रेष्ठं धर्मपुची सुधिष्ठिरः ॥ सुधिष्ठिर उवाच॥ ॥पिनामहु! महाप्राज्ञ! सर्वशास्त्र विशारद्। ॥ प्रयाण काले यिबन्यं ह्यरिभि स्तत्विननकेः । किन्तु स्मरन् कुरुश्रेष्ठ् । मर्णे पर्यपस्थिते ॥ मासुयात् परमां सिद्धि शोतु मिच्छामि तहर् ॥ भीष्म उवाच ॥ अद्भुतं च हितं सूक्ष्मं उक्तं प्रभां त्वयानघ । शृणुष्वावहितो राज्न। नारदेन पुरा श्रुतम् ॥ श्रीवृत्साङ्कं जगहीज मननं होतं साक्षिणम् । पुरा नारायणं देवं नारदः परिषृष्ट्यान् ॥ ॥ नारद्ववाच ॥ त्वमक्षरं परं ब्रह्म निर्मुणं तमसः परम्। आहुर्वेदां परं धाम ब्रह्मादि कमहोद्रवम् ॥ भगवन् । भूतभव्येश ! श्रद्धाने जितन्द्रियेः । कथं भक्तेविचिन् त्योक्षसि योगिभिदेहमोक्षिभिः ॥ किंच जप्यं जपेनित्यं क

ल्यमुत्याय मानवः । कथं युज्जन् सदा ध्यायन् ब्रह्ति-्रभीष्म उपाच्॥ श्रत्या तस्यतु देवू लंसनातनम्॥ र्षेर्वाक्यं वाचेस्पतिः स्वयम् । पोवाच भगवान् विष्णुनी रदं वरदः प्रभुः ॥ श्रीभंगवानुवाच ॥-थिष्यामि इमां दिच्यामनुस्मृतिम्। मरणे मामनुस्मृ त्य प्रामोति प्रमां गतिम् ॥ यामधीत्य प्रयाणे तु मद् भाषायोपपद्यते । ओङ्गार मयतः कृत्वा मां नमस्कृत्य नारद्! ॥ एकायः प्रयतो भूत्वा इदं मृन्त्र मुदीरयेत् । अव्यानापि यन्नाम्नि द्यतिते सर्व पातकः । पुमान् विसु चते सद्यः सिंहनस्ते मृंगेरिव ॥ ओिम्ट्येव परं ब्रह्म शा भातं परमव्ययम् । एतद्वारयनमृत्ये बह्मभूयायं के स्पते ॥ ब्रह्मा विष्णुश्वं रुद्रश्व सर्वमो मिति बोच्यते । सम्पने इसरसंयान नम्यते च मुमुह्माभिः ॥ मोहाश्च ज्ञानिनां पोक्तो मोहश्चाज्ञानिनां स्मृतः । यस्य याद विधो भाव स्त्स्य नादिविधो हरिः ॥ भवे भवनिव-श्वातमा भूतानां हितकाम्यया । सृजते आत्मनात्मान मात्मन्येव स्वमायया । हरिरेव सतां नित्यं शर्णयः श रणार्थिनाम् ॥ निह नारायणादन्य स्त्रिषु छोकेषु वि

होते । वसत्यमृतमक्षय्यं यस्मिन् छोकाः सस्गिग्राः॥ नएव सजते ठोकान सृष्टिकाले जेगत्यभुः । तेजांसि ये न दिन्यन्ते महोत्पन्तेन तेजसा ॥ वास्कदेवात्मकं सर्व तत्तेजोऽपि हि नान्यथा। वासनाचा स्तु ये भावाः सं-भवित युगे युगे॥ लोकत्रयहिताथिय स्वोपकारायने हरिः। यतश्रीत्पद्यते विश्वं यस्मिन्तव प्रतिप्यते॥ ध्व रास्तरविसृष्ट्रस्त सोडच्युतः पुरुषोत्तमः । अच्यक्तं शाख

४८ विष्णुसमृतिः। तं देवं प्रभवं पुरुषोत्तमम् ॥ प्रपद्ये

तं देवं प्रभवं पुरुषोत्तमम् ॥ प्रपद्ये पाज्जि विष्णु मक्षयं भक्तवत्सलम् । पुराणं पुरुषं दिच्य मद्भतं लोकपावनम्॥ मपद्ये पुण्डरीकार्सं देवं नारायणं हरिम् । छोकना्थं स हस्राक्ष मक्षरं परमं पदम् ॥ भगवन्तं पपन्तो असि भू त्मव्ययभं विभुम्। स्रष्टारं सर्व छोकाना मननं विश्वे तो मुखम् ॥ पद्मनाभं हृष्किशं पपद्ये सत्यमच्युतम्। हिरण्यगर्भे मृमृतं भूगर्भे परतः परम् ॥ प्रभुं विभुम नाद्यन्तं भपद्येतं रविभम्म् । सहस्रशीर्षे पुरुषं मह षि सत्यभावनम् ॥ पपद्ये सूक्ष्ममचलं वरेण्य मभय यदम् । नारायणां पुराणेशां यौगात्मानं सनातनम् ॥ संज्ञानां सर्वसत्वानां पपद्ये ध्रावमी स्वरम्। यः प्रफः सर्वलोकानां येन सर्वमिदं ततम् ॥ चराचर गुरुर्देवः स में विष्णुः मसीदत् । यस्मादुराधते ब्रह्मा पद्मयोतिः पितामहः ॥ ब्रह्मयोति हि विश्वस्य समे विष्णुः मसी दत्। चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्राभ्यां पत्रभिरेवच ॥ हय-ते च पुनद्रीभ्यां सूमे विष्णुः प्रसीदतु । पर्जन्यः पृथिगी सस्यं कालो धर्मः कियाकिये ॥ गुणाकरः स मे विष्णु वी स्रदेवः पसीदतु । अग्निसोमार्कताराणां ब्रह्मरुद्रेन्द्र योगिनाम् ॥ यस्तेजयति तेजांसि स मे विष्णुः मसीदत् ॥ कार्यं कियान कर्णं कर्ता हेतुः प्रयोजनम् । अकि-या करणी कार्य स मे विष्णुः प्रसीदतु ॥ शमीगर्भस्य यो गर्भः स में विष्णुः प्रसीदतु। अवली येन वालेन कंसमली म हावलः ॥ चाणूरो निह्तो रक्ने स में विष्णुः प्रसीदतु। श इंखः करवरे यस्य स मे विष्णुः असीद्तु ॥ येन आन्ता-

रुयो लोका दानवाश्च वशीकृताः ॥ शरणं सर्वे भूतानां समे विष्णुः मसीदतु । योगावास! नम्स्तुभ्यं सर्वावास! वरपद्! ॥ सर्वादि वासनाद्यादि वासदेव । प्रधानसन् । य ज्ञामी। दिरण्याङः ! पञ्चयज्ञ ! नमोऽस्तु ते ॥ चतुर्म्तिः प रन्धाम हसानन्देवरार्चित । । अजस्त्वमगमः पन्धा ह्य मूर्तिविश्वमूर्तिध्क ॥ श्रीकर्तः । पञ्चकालज्ञ । नमस्ते ज्ञानसागर!। अव्यक्ता सक्त मुत्यन्मम्यक्ताद्यः परोऽक्ष रः॥ यस्मात्परतरन्नास्ति तमस्मि शरणं गतः । न प्रधा-नो नच महान् पुरुषस्त्रेतनो ह्युजः ॥ अनुयोग्यः परतरस्त मिस भरण गृतः । चिन्त्यन्तो ७पि यनित्यं ब्रह्मेशानाद यः प्रभुम् ॥ निश्वयं नाधिगच्छन्ति तमस्मि शरेणं गतः। जितेन्द्रिया जितात्मानो ज्ञानध्यानपरायणाः ॥ यं प्राप्य न निवर्त्तन्ते तमस्मि शरणं गतः। एकांश्रोन जगत् कला मुक्तिय विकः स्थितः॥ अयास्यो निर्युणो नित्यस्तम् सि शरणं गतः । सोमार्कामिगतन्तेजो याच तारामयी स्तिः ॥ दिवि संजायते यो यः स महात्मा मसीदतु ।स् यमध्यस्थितः सोमस्तस्य मृध्येच यास्थिता ॥ भूतबाह्य वरा दीतिः स महात्मा प्रसीदतु । सगुणे निर्गुणश्रासी उस्मीवान वेतना ह्यजः ॥ सूरमः सर्वग्तो देही स महा ला मसीदत्। साइन्ख्ययोगाभ्य ये चान्ये सिद्धाभ्य पर-मर्पयः ॥ यं विदित्वो विमुच्यन्ते स महात्मा प्रसीदतु ।अ व्यक्तः सम्धिष्ठाता ह्यचिन्यः सदसत्परः ॥ आस्थितः प कृतिं भुड़क्ते स महात्मा प्रसीदतु । क्षेत्रज्ञः पञ्चधा भुड़् के महति पञ्चिभिर्मुखेः ॥ निविकार! नम्स्तेऽस्तु साक्षि सेनिफवंस्थितः। अतीन्द्रिय! नमस्तुभ्यं विद्गेर्च्यक्तेने

५० विष्णुस्मृतिः।

मीयसे ॥ येच त्यां नाभिजाननि संसारे सन्तरनि ते।का मकोधविनिर्मुक्ता भक्तास्तां प्रविशन्ति च ॥ अव्यक्तम-त्यहङ्कारा मनोभूतेन्द्रियाणि च। त्विय तानि चलेषु त्वंग तेषुत्व नते त्वयि ॥ एकत्वान्यत्वनानात्वं ये विदुर्यानि ते परम् । समोहं सर्वभातेषु न मे हेष्योऽस्ति न प्रयः ॥स मत्वमिकाङ्क-तम्मत्त्या वै नान्यचेत्सः । च्राचरिषदं -सर्वे भूतयामैळातुर्विधम्॥ त्वया त्वय्येव तत्योतं सूत्रे म णिगणाइच । स्रषा! भोकासि क्रटस्थो ह्यतत्वस्तत्वसं-तितः ॥ अकर्ता हेतुरचरः पृथगातमन्यवस्थितः । नमे भू तेषु संयोगो न भूतत्वगुणाधिकः ॥ अहङ्कारेण बुद्धा-वा न मे योगास्विभिर्गुणोः । न मे धर्मी धर्मा ग्ना मंभीजन्मवा पुनः ॥ जरामरणमोक्षार्थं त्वां मंपन्नोऽ स्मि सर्वगः । विषयेरिन्द्रियेर्वापि न मे भूयः समागतः॥ इविवरोऽसि जगन्नाथ। किमतः परमुच्यते। भक्तानां यदि तं देव! तदेहि त्रिदशेश्वरा ॥ पृथिवीं यातु मे प्राणं या तु मे रसनञ्जलम् । रूपं हुताशानं यातु स्पेशी यातुच-मारुतम् ॥ श्रोत्रमाकाशमप्येतु मनो वैकारिकं पुनः । इ न्द्रियाणि गुणान् यातु स्वासु स्वासु व योनिषु ॥ पृथिवी यातु सिललमापोऽग्नि मनलाऽनिलम्। वासुराकाशम-प्येतु मनश्वाकाशमेवच ॥ अहङ्कारं मनो यातु मोहनं सर्वदेहिनाम् । अहङ्कारस्तया ब्रेंद्विं बृद्धिरव्यक्तं मेवच॥ मधाने प्रकृतिं याते गुणसाम्ये व्यवस्थिते । वियोगः -सर्वकरणे गुणे भूतेश्व मेड भवत्।। सत्वं रजस्तमश्रीवम कृतिं प्रविशन्तु मे। निष्केवत्यं पदं देवकांक्षितं परमं-तपः॥ एकी भावस्त्यया मेडस्तु न मे जन्म भवेत्पुनः॥न

मो भगवते तसी विष्णवे ममविष्णवे । त्वहुदिस्तद्रतमा णस्वद्रक्तस्वत्परायणः ॥ त्वामेवाहं स्मरिष्यामि मरणे पर्यपस्थिते । पूर्वदेहं कता ये मे व्याधयः मविषान्तु - माम् ॥ आदयन्तु च दुःस्वानि ऋणं मे न भवेदिति । उ परिष्ठन्तु मे सर्वे व्याधयः पूर्विचिन्तताः ॥ अनृणो गन्तु मिच्छामि तदिष्णोः परमम्पदेम् । अहं भगवतस्तस्य मे म वासः सनातृनः ॥ तस्याहं न मणभ्यामि सच मे न प्रणश्यति। कर्मन्द्रियाणि संयम्य पञ्च बुद्धीन्द्रियाणि-च॥ दशोन्द्रियाणि मनसो अहङ्गरेण वा पुनः। अह ङ्गरं तथा बुद्धी बुद्धिमात्मनि योजयेत्॥ आत्मबुद्धान्द्र यंपूश्येद्बुद्धी बुद्धः परायणम्। ममायमपि तस्याह येन सर्वमिदन्तित्मे ॥ आत्मनात्मिन संयोज्य ममात्मन्यनु संसम् रेत्। एवं बुद्धः परंबुद्धा ठभते न पुनर्भवम् ॥ ओ न्मो भ ग्वते तसी देहिनां परमात्मने । नारायणाय भक्तानामेक-निषाय शाश्वते ॥ हिदिस्यायच भूतानां सवैषां च महास ने। इमामनुस्मृतिन्दिच्यां वैष्ण्वीं पापनाशनीम्॥ स्वय मिवुदेश्व पढेचेत्र तत्र समक्यसेत् । मरणे समनुपासे यस्विमामनुसंस्मरेत् ॥ अपि पापसमाचारः स याति परमाङ्गतिम् । यद्यहङ्कारमाश्चित्य यज्ञदानतपः क्रियाः ॥कुर्वस्तत्फलमामोति पुनरावर्तते नतु । अभ्यर्चयन् पितृन्देवान् पठन् जुह्नन् बिहन्दद्न् ॥ ज्वलद्गिं स्म रेघोँ मां लुन्ते परमाङ्गितिम्। यज्ञीदानं तपः कर्मा पा-वनानि म्नीषिणाम् ॥ यज्ञौदानं तपस्तस्मासुयदा शाविवर्जितः । पौर्णमास्याममावास्यां दाद्य्यां च वि शेषतः ॥ श्रावयेन्छ्द्धानांश्चमद्रकांश्व विशेषतः ।

नम् इत्येव यो ब्यान्मद्रकः श्रद्धयान्वितः ॥ तस्याक्षयो भवेद्योकः भवपाकस्यापि नारद!। कि पुनये यजन्ते-मां साधकाविधिपूर्वकम् ॥ श्रद्धावन्तो यतात्मान स्ते मां यान्ति मदाशितोः । कर्माण्याद्यन्तवन्तीह मद्रक्तोऽ नन्तमश्चते ॥ मामेव तस्माद्देवर्षे ! ध्याहि नित्यमतिद तः । अवाप्स्यसि तपः सिद्धिं सभ्यसेच पदं मम । अ ज्ञानामिच्छ्या ज्ञानं द्याद्मीपदेशनम् ॥ कल्मां वा पृ थिवीं दद्यात्तेन तुल्यं न तत्फेंडम् । अस्पोत् पदेयं साधुं भयो जन्मबन्धभयाप्हम् ॥ अञ्चूमेधसहस्राणां सहस् यः समाचरेत् । नासी फंड मवामोति म्इंकेर्यद्वाप्यते ॥भीष्म उवाच ॥ एवं पृषः पुरा तेन नारदेन सर्विणा । यद्वाच तथा शंशुस्तदुक्तं तव सन्नत!॥ त्वमप्येकमना भूला ध्येयं ज्ञेयं गुणाधिकम् । भूज सर्वेण भावेन परम् त्मान मन्ययम् ॥ श्रुत्वेतत् नारदी वाक्यं दिव्यं नारायणे रितम् । अत्यन्तभाक्तमान् देवे एकान्तित्वं मुपेयिवान्॥ नारायेण मुषीम् देवं दशवंषिणयनन्यभाक् । इदं जपून् प्रामोति नहिष्णोः परमम्पदम् ॥ किं तस्य बहुभिर्मन्तेः किं तस्य बहुभिर्मन्तेः । नमो नारायणायति मन्तः सूर्वी र्थसाधकः ॥ नारायणाय नम ओ मिति वेदमन्तं यो नि त्यमेव मनसापि समभ्यसेच् । पापैः मृसुच्य प्रमे मु पयाति विष्णोः स्थानं हि सर्वं मिति वेदविदो वदन्ति ॥ हि तस्य दानेः किं तीर्थैः किं तपोपिः किमध्वरैः । यो नित्यं ध्यायते देवं ! नारायण मनन्यधीः ॥ चीरवासा जपी वापी बिदण्डी मुण्ड एववा । भूषितो वा हिज्ञेष्ट ! न छिड्नं ध-मेकारणम् ॥ ये नृशंसा दुरात्मानः पापधमविवर्जिताः ।

तेऽपि यान्ति परं स्थानं नारायणपरायणाः ॥ अन्यथा म न्दबुद्दीनां प्रतिभाति दुरात्मनाम् । कुत्कैज्ञानदृषीनां विश्वा श्वतम्। अन्तकारे जपन्नेति तिह्याोः पर्मं प्रम् ॥आ चार्हीनोऽपि मुनियवीर ! भक्त्याविहीनोऽपित निन्दिनोऽपि कीत्यहिनारायणशब्दमात्रं विमुक्तपापो विशते उच्यतां द्वाति-म् ॥ कान्तारवनदुर्गेषु कुरुकेष्वापुरुक्त संयुर्गे । दस्युंभिः संभिरोधेच नामभि मी मकीर्तयेत् ॥ न दिव्यपुरुषी धी मानू येषु स्थान्षु मां स्मरेत् । चीरव्याघ्र महासंपे कू रेरपि न बाध्यते ॥ जन्मान्तरेसहस्त्रेषु तपोध्यानसमाधि भिः । नराणां सीणपापानां कृष्णभाकः प्रजायते ॥ ना म्नोत्ति यावतिशक्तिः पाप निर्हरणे हरेः । श्वपचोऽपिन रः कर्ते समस्तावन्न किल्बिषम् ॥ न नावन् पापमस्ती ह -यावन्तामहतं हरेः । अतिरेकं भयादाहः पायश्वितान्त रंबुधाः ॥ गत्वा गत्वा निवर्तन्ते चन्द्रसूर्याद्योयहाः । अधापि न निवर्तनी द्वादशाक्षरचिन्तकाः ॥ न वासदेवा त्यरमित प्रवृद्धं न वासदेवात्यरमित पावन्म् । न वास्र देवात्परमित देवतं न वास्तदेवं प्रणिपत्य सीद्ति ॥ इन्मां रहस्यां परमामनुस्मृतिं हाधीत्य बुद्धं लमतेच निष्ठि कीम्। विहास दुःस्वानि विमुच्य सङ्ग्रात् स वीतरागी विचरेन्मही मिमाम्॥ गङ्गामा मरणंचेव हदा मिकिन्य केशवे। ब्रह्मविद्याप्रबोधन्य नाल्पस्य तपसः फलम्॥॥ इति विष्णुस्मृतिः समाप्ता॥

श्रीगणेशाय नमः।

ब्रह्मरात्र्यां व्यतीतायां पबुद्धे पद्मसम्भवे । विष्णुः सिसृक्षुर्भू तानि ज्ञाला भूमिं जलानुगाम्॥ जलकी डारुचि क्रभं क ल्पादिषु यथा पुरा । वाराहमास्थितो रूप मुज्जहार वसु न्धराम् ॥ वेदपादो यपदंष्ट्ः कतुवकश्चिता मुखः । अ ग्निजिह्नो दर्भरोमा ब्रह्मश्रीषी महातपाः ॥ अहोरात्रेक्ष णो दियो वेदाङ्गश्रतिभूषणः। आज्यनासः श्रवस्तुण्डः सामघोषमहास्वनः ॥ धर्मसत्यमयः श्रीमान् कमविकम् सत्कृतः । प्रायश्चित्तम्यो वीरः प्राधुजानुम्हाच्यः ॥ उ द्रायन्त्रो होमलिङ्गो बीजीष्धि महाफलः । वेद्यन्त्रात्मा मन्त्रस्फिग्विकृतः सोमभोणितः ॥ वेदस्कन्धो हविर्ग न्धो हव्यकव्यादिवेगवान् । प्राग्वंशकायो धुतिमान् ना नादीक्षाभिरन्वितः॥ दक्षिणाहृद्यो योगमहामन्त्रमयो महान् । उपाकम्मोष्ठरुचिरः प्रवग्यीवर्त्तभूषणाः ॥ नान्। छन्दोगतिपथो गुद्धोपनिषदासनः । छायापतीसहायो उसी मणिशृङ्गद्वीदितः ॥ महीं सागरपर्यनां स्त्रीलवन काननाम्। एकाणवजलभूषामकाणवगतः प्रभः॥दंष्ट्रा मेण समुद्धत्यं छोकानां हितकाम्यया । आदिदेवो मही योगी चुकार जगती पुनः ॥ एवं यज्ञवराहेण भूलाभू तहिताथिना । उद्दृता पृथिवी सवी रसात्रगता पुरा ॥ उद्द्य निश्वले स्थाने स्थापिता च तथा खके। यथास्था नं विभज्यापस्तद्रता मधुसूदनः ॥ सामुद्यश्च समुद्रेषु नादेयाश्च नदीषु च। पत्व लेषु च पाल्यल्यः सरः स च स-रोबराः ॥ पातालसप्तक चके लोकानां सप्तकं तथा । द्दीपा

नामुद्धीना्त्र स्थानानि विविधानि च॥ स्थानपालां होक पालान्नदीशेलवनस्पतीन्। अर्षीश्र सप्त धर्माज्ञान् वे-दान् साद्गान् सरासरान्॥ पिशाचारगगन्धवीयसूर् क्षसमानुषान् । पशरपक्षिमृगाद्यांश्व भूतयामं चतुर्वि-धम् ॥ मेघेन्द्रचापसम्पातान् यज्ञांश्व विविधांस्तथा ॥ ए वं वराहो भगवान् कृत्वेदं सेचराचरम्। जगज्जगाम् छो कानामविज्ञातां तदा गतिम् ॥ अविज्ञानां गतिं याते देव देवे जनाईने। वस्तथा चिन्तयामास का धृतिम्मे भविष्य ति ॥ पृच्छामि कश्यपं गत्वा स मे वस्यत्यसंशयम्।म दीयां वहते चिन्तां नित्यमेव महासुनिः ॥ एवं सानिन्न यं कृत्वा देवी स्वीरूपधारिणी । जगाम कश्यपं द्रष्टुं ह ष्टवास्ताच्च कश्यपः ॥ नीलपङ्गजपत्राक्षीं शारदेन्द्रं नि भाननाम् । अलिसङ्घालकां शुक्तां बन्धुजीवाधरा शु भाम्॥ केकिन्स्पृष्ट्यानां चारुनासां नतन्त्वम् कम्बुकण्ठी संहतीरू पीन्रेजचन्स्थलीम्। विरेजत स्तती यस्याः समी पीनी निरन्तरी । मतेभकुम्भसङ्ग्रा शी शातकुम्भसमद्यती ॥ मृणाउकोमठी बाहू करी कि-श्लयोपमी। रुक्मस्तम्भानभावस् गृढं श्लिप्टे च जानु नी ॥ जङ्घे विरोमे सम्बंभ पादाव्तिमनोरमी। जघन ऋ घनं मध्यं यथा केशरिणः शिशोः ॥ प्रभायता न-खास्तामा रूपं सर्वमनोहरम् । कुर्वाणां वीक्षितिनित्यं नीड़ोत्पल्युता दिशः ॥ कुर्जाणां प्रभयादेवां तथा वि तिमिरा दिशः । सत्त्रहम्भक्तक्रवसनां रहोत्तम्विम् विना म् ॥ पदन्यासे व्यक्तमतीं सपद्मामिव कुर्व्यतीम् । रूपयी वनसम्पन्नां विनीतवदुपस्थिताम् ॥ समीपमागतां इ

ह्या पूजयामास् कश्यपः। उवाच् तां वरारोहे! विज्ञातं ह द्रतं मेया ॥ धरे! तुव विशालाक्षी । गच्छ देवि । जनाईने म्। स ते वस्यत्यशेषेण भाविनी ते यथा स्थितिः ॥ सीरी दे वसतिस्तस्य मया ज्ञाता शहभानने।। ध्यानयोगेन चा वीं दि! तज्ज्ञानं तत्पसादतः ॥ इत्येवमुक्ता सम्पूज्य कश्य पं वस्त्रधा ततः । प्रययो केशवं द्रष्टुं क्षिरोदमथ सागरम्॥ सा ददशीमृतनिधि चन्द्रश्यमनीहरम्। पवनक्षोभसं-नातवीची रातसमाकुरुम् ॥ हिम्बच्छतसङ्गरां भूमण्ड रुमिवापरम् । वीचाहस्तेधविहितेराद्धयानमिव सितिम्॥ तैरेव शुभता चन्द्रे विद्धानिमवानिशम्। अन्तरस्थेन इरिणा विगताश्रेषकल्मषम् ॥ यस्मात्तस्मातु विभन्तं संस्थानां तनुमूर्जिताम्। पाण्डरं खग्माग्म्यमधोक्तवन-वर्तिनम् ॥ इन्द्रनीलकडाराढ्यं विपरीतम्बाम्बरम्। फला वही समुद्रत वन सङ्घरमाचितम् ।। निम्मेकिमिव शेषाहै विस्तीण तैमतीव हि । तं दृष्ट्या तत्र मध्यस्यं दृद्दशे केश वाख्यम् ॥ अनिद्देश्यपरामाप्यमनिद्देश्यद्विसंयुतम् । शे षपर्यादेशं तस्मिन् ददर्श मधुस्रदनम् ॥ शेषाहिफणर-युत्समप्रम्मू ॥ पीतवासस्माक्षोभयं सर्वरत्विभूषितम् मुंक्टेनाकेवणेन कुण्ड्राफ्यां विराजितम् ॥ स्वाह्यमाना क्रियुगं उक्स्या करते है: शुभी: । शरीरधारिभि: शस्त्री: सेंच्यमानं समन्ततः ॥ तं दृष्ट्या पुण्डरीकार्ध्व ववन्दे मधु-सूदनम्। जानुभ्यामवनीं गला विज्ञापयति चाप्यथ्॥ उद्देनाहं त्वया देव। रसातलतल दुन्ता। स्वे स्थाने स्थापि ता विष्णो। लोकानां हितकाम्यया ॥ तत्राधुना मे देवेश।

का धतिवे भविष्यति। एवमुक्तस्त्दा देखा देवो वचनम-ब्रवीत् ॥ वर्णात्रमानाररताः शास्त्रीकतत्परायणाः । लां ध रे! धारियष्यन्ति तेषां तद्भार आहितः ॥ एवमुक्ता वस्त मती देवदेवमभाषत्। वणीनामात्रमाणाञ्च धर्मीन् व-द सनातनान् ॥ त्वत्तोऽहं श्रोतुमिच्छामि त्वं हि मे परमा गतिः। नमस्ते देव! देवेश! देवारिबलसूदन!। नारायण। जगनाथ। शङ्खचकगदाधर। ॥ पद्मनाभा हषीके भा। महाबलपराक्रमे। । अतीन्द्रियः सदुष्पारः देव। शाई ध-रण्यकेश । विश्वास । यज्ञ मूर्ती । निरंक्जन । ॥ क्षेत्र । क्षेत्र । ज्ञ। लोकेश। सलिलान्तर्शायक। । यन्त्रमन्त्रवहाचिन्य। वैद्वेदाङ्गवियह।॥ जगतोऽस्य सम्यस्य सृष्टिसंहारका रकः! ॥ सर्वधमीतः। धमाद्भिः। धमीयोने। वरप्रदः। वि-णाजैय। सर्वे । सर्वाभयपद्। । वरेण्यानघ ! जीमूताच्य य। निर्व्याणकारक। ॥ आप्यायन। अपांस्थान। चैत-न्याधार! निष्क्रिय! । सप्तशीर्षाध्वरगुरो ! पुराण! पुरु षोत्तम। ॥ भ्रवास्तर। सम्बद्धीश। भक्तवत्सलपाचन।। त्वंगतिः सर्वदेवानां त्वं गतिक्रीह्मवादिनाम् ॥ तथा विदि नवैद्यानां गृतिस्त्वं पुरुषोत्तमः। । प्रपन्नास्मि जगन्नायः। धु वं वाचस्पति प्रभुम् ॥ स्क्रह्मण्यमनाध्ययः व्यस्तरवेलं व समदम्। महायोगंबलोपेतं प्रश्चिगर्भ ध्तार्शिषम्॥वा सदेवं महात्मानं पुण्डरीकाक्षमच्युतम् । सरासरेगुरुं देवं विभुं भूतमहेष्वरम् ॥ एकच्यू इं चेतुर्वक्रं जगत्कार णकारणम् । ब्रूहि मे भगवन् । धम्मंक्वितुर्वण्यस्य शा

45

श्वतान् ॥ आश्रमाचारसयुक्तान् सरहस्यान् ससंयहा-न्। एवमकस्तु देवेशः पुनः क्षोणीममाषत्॥ शृणु दे वि! धरे। धम्मंश्वातुर्वण्यस्य शाख्तान्। आश्वमाना र्संयुक्तान् सरहस्यान् ससंयहान् ॥ ये तु त्वां धारियष्य न्ति सन्तस्तेषां परायणान् । निषणणा भव वामोरः का अने इस्मिन् वरासन् ॥ सरवासीना निबोध तं धर्मानि गदतो मम्। शुरुष वैष्णवान् धर्मान् सरवासीना धरा तदा ॥ ॥इति वैष्णवे धर्माशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ॥ बाह्मणाः सिवियो वैशयाः श्रद्भवित वर्णान्वत्वारः । तेषा ग द्या दिजातयः । तेषां निषेकोद्यः शमशानान्तो मन्त्रवत् कि-यासमूहः । तेषाञ्च धर्माः ब्राह्मणस्याध्यपयनं क्षात्रय-स्य शस्य निष्ठता वैश्यस्य पश्रहपाँछनं शूद्रस्य दिजातिशः श्रूषा। दिजानां यज्नाध्ययने। अथैतेषां इत्तयः ब्राह्म ास्य याजनप्रतियही क्षत्रियस्य क्षितित्राणं कृषिगोरक्षग णिज्यकुसीदयोनिपोषणानि वैश्यस्य, श्रद्भस्य सर्वशिल्पा-नि। आपद्यनन्तरा इतिः। क्षमा सत्यं दमः शीचं दानमि न्द्रियूसंयमः । अहिंसा गुरुक्षस्यूषा तीर्थानुसरणं दया॥ आर्जीवत्वमलोभश्च देवब्राह्मणपूजनम्। अनभ्यस्या
ब् तथा ध्रमीः सामान्यउच्यते ॥ इति वैष्णवे धर्मशा-स्त्रे हितीयोऽध्यायः॥ अथ राजधर्माः॥ ॥ भजापरिपाढनं वर्णाश्रमाणां स्रे स्वे धर्मी व्यवस्थाप्नम्। राजा च जाङ्गरं पशच्यं शस्यो पेतं देशमाश्रयेत् वेशयश्रद्रपादञ्च त्यं धन्यन्महीवारिष्ट क्षिगिरिदुर्गाणामन्यतमं दुर्गमाश्रयेत्। तत्रं यामाध्य-क्षानिप कुर्यात् । दशाध्यक्षान् । शताध्यक्षान् । देशाध्य

क्षांत्र्य। ग्रामदोषाणां ग्रामाध्यक्षः परीहारं कुर्य्यात्। अ शक्तो दशयामाध्यक्षाय निवेदयेत् । सोऽप्यशक्तः शना-ध्यक्षाय । सोऽप्यशक्तो देशाध्यक्षाय । देशाध्यक्षीऽपि स र्वात्मना दोषपुञ्चिन्द्यात् । आकरश्रुक्तरनागवनेष्यास्य नियुज्जीत । धर्मिषान् धर्माकार्य्येषु । निपुणानर्थकार्य षु। शूरान् संयामकर्मासः। उयान्येषु षण्डान् स्त्रीषु ॥ यजात्र्यो बल्यर्थं सम्बल्सरेण धान्यतः षष्ठमंशमादद्याः त्। सर्वशस्येभ्यश्च हिकं श्नम्। पश्कहिरण्येभ्यो वस्ते-भ्यश्च। मांसमधुद्तीषधिगन्धमूलफलरसदारु पत्राजि नमृद्राण्डाश्मभाण्डवेदलेभ्यः षष्ठभागम्। ब्राह्मणेभ्यः करादानं न कुर्यात् ते हि राज्ञी धम्मीकरदाः । राजा च प् जापयः सरुत दुष्कृत षष्ठांशभाक्। स्वदेशपण्याच शुल्कां शं दशममादद्यात् परदेशपण्याच विंशतिनमम् । शत्क स्यानमपकामन् सर्वापृहारित्वमाध्यात् । शिल्पिनः क मिजीविन्श्व श्रद्राश्व मासेनैकं राज्ञः कर्माकुर्युः । स्वाम्य मात्यदुर्गकोशदण्डराष्ट्रमित्राणि प्रकृतयः । तद्वकांश्च ह-न्यात् । स्वराष्ट्रपरराष्ट्रयोश्च चारचक्षुः स्थात् । साधूनां-पूजनं कुर्यात् । दुषांश्च हन्यात् । शत्रुमित्रोदासीन मध्यमे षु साम्भेददानदण्डान् यथाहे यथाकालं प्रयुक्तीत । सिन्धिवियहयानासनस्त्रयहेधीभावांत्र्य यथाकालमा भयेत्। चेत्रे मार्गशीर्षे वा यात्रां यायात् । परस्य व्य सने वा। परदेशावाप्ती तहेशधर्म्मान्त्री व्छन्द्यात्। प रेणाभियुक्तत्र्य सर्वात्मना राष्ट्रं गोपायेत्। नास्ति राज्ञां समरे तनुत्यागसद्दशो धर्माः। गोब्राह्मणनृपतिभित्रध नदारजीवितरक्षणाद्ये हतास्ते स्वर्गभाजः। वर्णसङ्कर विष्णुस्मृती।

Éo

रसणार्थं च। राजा पुरावाप्ती तु तत्र तकुरीनमभिषिज्ञे-त्।। न राजकुलुमुच्छिन्धात्। अन्यत्राकुलीनराजकुला-त्। मृगयास्तिपानेष्वभिरतिं न कृष्यीत्। वाक्षणस् ष्यदण्डपारुष्ये च नार्थद्षणां कृष्यीत्। आद्यदाराणि नोच्छिन्द्यात्। नापात्रवषीस्यात्। आकरेभ्यः सर्वमा द्यात्॥ निधिं लब्बातदर्दे बाह्मणेभ्यो द्यात् दितीय मद्दे काशे प्रवेशयेत्। निधिं बाह्मणो लब्बा सर्वमाद्द्या त्। क्षियञ्जूर्थमेशं राज्ञे द्यात् चतुर्थमंशं ब्राह्मणेष्यो उद्माद्दात्। वैश्यऋतुर्थमंशं राज्ञे दद्यात् चतुर्थमंशं ब्राह्मणे-भयोऽ ईमंशमादद्यात्। श्रद्धश्चावासं द्वाद्शवा विभज्य पञ्चां-शान् राज्ञे द्धात् पञ्चोंशान् बाह्मणे पयों अशह्यमाद्या त्। अनिवेदित विज्ञानस्य सर्वमपहरेत्। स्वनिहिताद्रा ज्ञेबाह्मणवर्जे द्वादशमंशं द्युः। परनिहितं स्वनिहित-मिति खुवंस्तत्समं दण्डमाव्हेत् ॥ बाढानाथस्त्रीधूनानि चु राजा परिपालयेत् । चीरहतं धनम्बाप्य सर्वमेव स र्ववर्णिक्यो दद्यात्। अनवाप्ये च स्वकीशादेव द्यात्। शान्तिस्वस्त्ययनेदेवोपघातान् अशामयेत्। परचक्रोप घातांश्व शस्त्रनित्यतया। वेदेतिहास धर्माशास्त्रार्थक शहं कुढीनमध्यक्तं तपस्विनं पुरोहितव्ह वरयेत्। शुनी नखब्धान्वहिताञ्छिक्तिसम्पन्नान् संव्यिषु च सहाया न स्वयमेव व्यवहारान् पृथ्येदिद्दिक्रिक्रीहाणेः सार्दिम्। य वहारदर्शने बाह्मणं वो नियुद्ध्योत्। जन्मक्म्मिब्रतीपे-ताम्य राज्ञा सभासदः कार्य्यारिपो मित्रे च य समाः का-मूक्रोधूलोभादिभिः कार्याधिभिरन्। हार्याः । राजा चस वंकाय्येषु सम्बत्सराधीनः स्यात्। देवब्राह्मणान् सतत-

मेव पूजयेत्। रुद्रसेवी भूवेत्। यज्ञयाजी च्। न्वास्य विषये ब्राह्मणः क्ष्मधार्तोऽवसीदेत् । नचान्योऽपि सतः मिनिरतः । ब्राह्मणेभ्यश्य फवं प्रतिपादयेत् । येषाञ्च प्रतिपादयेतेषां स्ववंश्यानन्तरप्रमाणं दानच्छेदोपवर्णन् ञ्च परे ताम्यपत्रे वा छिखितं स्वमुद्राङ्कितञ्चागामिन्पवि ज्ञापनार्थे दद्यात् । परदत्ताञ्च फर्व नीपहरेत् । ब्राह्मणे भयः सर्वदायान् प्रयुच्छेत् । सर्वतस्त्वात्मानं गोपायेत् स दर्शनश्च स्यात्। विषद्मागदमन्त्रधारी च। नापरीक्षि-तमुपयुज्यात्। स्मितपूर्व्वािमभाषी स्यात्। वध्येष्व-पि न भुकुटीमाचरेत्। अपराधानुरूपत्र दण्डं दण्ड्येषु दापयेत्। सम्यग्दण्ड्मणयनं कुर्य्यात्। दितीयमप्-राधं न कस्यचित् क्षमेत । स्वध्ममिपोलयन्ना दण्ड्यो नामास्ति राज्ञः । यत्र श्यामो लोहिताक्षो दण्डश्चरति निर्भरः । प्रजास्तव विवर्दन्ते नेता वेत् साधु पश्यित्। स्वराष्ट्रे न्यायदण्डः स्याद्भादण्डश्च शत्रुषु । संहत्स्विति ह्यः स्मिर्धेषु ब्राह्मणेषु क्षमान्यितः । एवं इतस्य नृप-तुः शिडोञ्छेनापि जीवतः । विस्तीर्थाते यशोडोके तैलविन्दरिवाम्मसि । प्रजासुखे संखी राजा तुद्दःखे य श्र दुःखितः । स कीर्तियुक्ता होकेऽस्मिन् प्रत्य स्वर्गे महीयते ॥ ॥इति वैष्णवे धर्माशास्त्रो तृतीयोऽध्यायः॥ जालस्थार्कमरीचिंगतं रजस्त्रसरेणुसंज्ञकम्। तद्षकं ितरव्या। तत्रयं राजसर्षपः। तत्रयं गीरसर्षपः। तत्र्ष इकं यवः। तन्नयं राजसर्षपः। तत्र्यं गीरसर्षपः। तत्र्ष शकमक्षार्द्धम्। अक्षार्द्धमेवं सचतुर्माषकं क्रवणीः। चेतुः क्षवणीको निष्कः। दे छुष्णाठे समधते क्रव्यमाषकः। तत् विष्णुसमृती।

षोडशकं ध्रणम्। तामकािषकः काषीपणः। पणानां हे भाते सार्हे मध्यमः साहसः स्मृतः । मध्यमः पञ्च वि होयः सहस्रं त्वेच चोत्तमः ॥ ॥ इति वैष्णवे धर्मन शास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः॥ अथ महापातिकनो ब्राह्मणवर्ज्ज सर्वे बध्याः । न शारी रो ब्राह्मणस्य दण्डः। स्वदेशाद्वाह्मणं कृताडुं विवास-येत्। तस्य च ब्रह्महत्यायाम्। शिरस्कं पुरुषे छलाटे कुर्यात्। स्कराध्यजं स्करापाने । प्रवपदं स्तेये । भगं ग्रह तलगम्ने । अन्यत्रापि बध्यकर्माणि तिष्ठन्तं समयध-नमस्ततं विवासयेत्। क्रूटशासनकर्तृश्य राजा हन्यात्।

कूटलेख्यकारांश्व । गरदागिद्यसस्यतस्कराम् स्वीबा-लेपुरुष घातिनश्च । ये च धान्यं दशक्यः कुम्मेक्यो ६ धि कमपहरेयुः । धरिममेयानां शताद्रष्यधिकं । ये नाकु छीना राज्यमिकामयेयुः। सेतुभेदकांऋ पसद्धत स्कराणाम्बाचकाशासक्तमदाश्व । अन्यव राजाशकः

सियमश्क्रभतेकां नद्तिकम्णाञ्च । हीनवणीं अधिक वर्णस्य येनाङ्गेनापराधं कुर्यात्तदेवास्य शातयेत्। ए कासनीपवेशी कट्यां कताहुने निर्वास्यः। निषीच्योष इय्विहीनः कार्यः अवशुब्दीयता च गुदहीनः । आको शियता च विजिद्धः । दर्पेण धम्मीपदेशकारिणो राजा

तसमासेचयेतेलमास्ये। दोहेण च नामजातियहणे दशा गुलोऽस्य शङ्कुर्छिखेयः। अतदेशजातिकर्मणामः

न्यथावादी कार्षापण्यातद्यं दण्ड्यः। काणस्वजादी नां तथाबाद्यपि कार्षापणद्यम्। गुरूनाक्षिपन् काषा पणशतं । परस्य पतनीयास्तेषे द्वेते तूत्तमसाहसं । उप-

पातक्युके मध्यमम् श्रैविद्यहन्दाक्षेपे जातिपूगानाञ्च । यामदेशयोः प्रथमसाहसम् । याङ्गृतायुक्ताक्षेपे कार्षाः पणशतम् । मातृयुक्ते त्त्तम् सवणिकोशने द्वादशपणा न दण्डयः । हीनवणिक्रोशने षड्दण्ड्यः । यथाकालम् त्तंपसवणिसीपे तत्प्रमाणोदण्डः । तयोकी कार्षापणान्त्रं यः शब्कवाक्याभिधाने खेवमेव। पारजायी सवणांग म्ने व्त्मसाइसं दण्डाः। हीनवणींगमने मध्यमम् गोगमने च। अन्त्यागमने बध्यः पश्रुगमने कार्वापण शतं दण्डाः ॥ दोषमनाख्याय कन्यां मयच्छंश्व ता-स्त्र विभ्यात्। अदुष्रं दुष्टामिति ब्रुवन्तुत्तमस्राहसम्। गजाश्वीष्ट्रगोघाती त्वेककरपादः कार्य्यः । विमांसवि क्यी कार्षापणशतम् ग्राम्यपशुघाती च। पशुस्वा-मिने तन्म्ल्यं दद्यात् । आरण्यपञ्चाती पञ्चादातं-कार्षापणान्। पृक्षिघाती मल्यघाती च कार्षापणान्। फल्रोपगमद्रमच्छ्दी कोटोपघाती त्त्तमसाहसं दण्ड्यः। पुष्पोपगमद्भमच्छेरी मध्यम्म्। वह्यागुल्मलनाच्छेरी काषिणशॅन्म्। तृण्छो येकं सर्वी च तत्स्वामिन्। तदु त्यतिम् ॥ इस्त्नोवगीरियता दशकाषिपणा्न्। पादेन-विंशतिं। कान्नेन प्रथमसाहसम् । पाषाणीन मध्यम-म्। शस्त्रेणोत्मम्। पादकेशांश्वकंकरलुण्डने दश्पणान् देण्डचः। शोणितेन् विना दुःख्युसाद्यिता हाब्भिन् पणान्। सह शोणितेन चतुः षृष्टि । करपाददन्त्भक्के क णीनासाविकत्तीने मध्यमम्। चेषाभोज्नवायोधे प्रहार दाने च। नेत्रकन्धराबाहुसक्ष्यंसभक्के चीत्तमम्। उभ यनेत्रभोदिनं राजा यावज्ञीवं बन्धनान्नं विमुक्तेत्। ता

विष्णुस्मृती।

68

दशमेव वा क्रस्यीत्। एकं बहूनां निघतां मत्येक्षुका दण्डाद्विगुणः। ऋोशन्तमिभधावतां तत्समीपवर्तिनां संसरतीच्च । सर्वी च पुरुषपीडाक्रास्तदुत्यानव्ययं द द्युः ॥ याम्यप्रकृपीडाकराश्च । गोश्वीष्ट्रगजापहार्य्यक पाद्करः कार्यः अजाच्यपहार्य्येककर्श्व। धान्याप्-हाय्यैकादश्गुणं दण्ड्यः । शस्यापहारी च ॥ स्तवणी-रजतवस्त्राणां पञ्चाशतस्त्रपयधिकम्पहरन् विकरः त द्नमेकाद्रागुणं दण्ड्यः । सूत्रकापीसगोम्यगुडद्धि सीरतक्तृणखबणमृद्गस्मपक्षिमतस्य घृतते छम्।सम् ध्वेद लचेणु मृणमय छ। हदण्डाना मपहत्ती मूल्या चिगुणं दॅण्ड्यः । प्रकान्नानाञ्च पुष्पहरित गुल्मवही लतापणी नामप्हरणे पञ्चकृष्णास्तान् । शाकमूलफलानाञ्च रता पहार्युत्तमसाहसूम्। अनुक्तंद्रव्याणां मपहर्ता मूल्यस मम्। स्तेनाः सर्वमपहतं धनिकस्य दाप्याः । ततसीषा म्भिहित्दण्डपयोगः। येषां देयः पन्यास्तेषा्मपथदा-यी कार्षीपणानां पञ्चिविंशति दण्डयः आसनाईस्यासन मदद्य। पूजाईमपूजयंश्व। शातिवेश्यब्राह्मणे निम-न्त्रणातिकमे च । निमन्त्रियत्वा भोजनादायिनश्च । निम्नितस्तथेत्युक्तवानफञ्जानः स्तवणीमाषकं निम न्त्रियतुश्व दिगुणमन्नम् । अमस्येण ब्राह्मणद्षियता षोडशास्त्रवणीन् । जात्यपृहारिणा शतं सरया बध्यः । क्षित्रयं दूषियतुस्तदद्धे । वश्यं दूषियृतुस्तदद्धेमिप । श्रू द्रं दूषितुः प्रथमसाहसम्। कामेकारेणास्पृत्यस्त्रीवणि कं स्पृतान् बध्यः। रजस्वलां त्रीफाभिस्ताडयेत्। पण्युद्या नोदकसमीपे अभिकारी पणशतं। तचापास्यात्। यह

भूकुड्यासुपमेता मध्यमसाइसं दण्डयः। तच योजयेत्। गृहेपीडाकरंद्रव्यं अक्षिपन् पणशतं ॥ साधारण्या
पलापी च। पोषितस्याभदाता च। पितृषुत्राचार्य्ययाज्य
तिजामन्योन्यापितत्त्यागी च। नच तान् जह्यात्। शद्द
भव्रजितानां देवे पित्र्ये मोजकश्च। अयोग्यकम्पीकारी च।
समुद्रगृहभेदकः। अनियुक्तः शपथकारी पश्चनां पुंस्त्वोपघातकारी च। पितापुत्रविरोधे तु साक्षिणं दशपणो द
ण्डः। यस्तयोश्यान्तरः स्यात्तस्योत्तमसाइसम्। तुलामा
नकदकमीकर्तृश्च।

तदक्रदे क्रद्यादिनम्ब द्र्याणां प्रतिरूपविक्यिकस्य न। सम्भूयवणिजां पण्यमनवैणावरुन्धतां । पत्येकं वि
भीणताञ्च । गृहीतमूल्यं पण्यन्तु केतुनैव द्यात्तस्यासी सोदयं दाप्यः। राज्ञां च पणशतं दण्डयः । कीत्मकीण तो या हानिः सा केतुरेव स्यात्। राजविनिषिदं विकी णतस्तदपहारः। तारिकः स्थलजं करुकं गृह्णन् द्वापणा न् दण्ड्यः। ब्रह्मचारियानमस्थामिकः गुर्विणीतीर्थानुसा-रिणां नाविकः शील्किकः शल्कमाददानश्च । तच्च तेषां द्यात्। यूते क्टासद्विनां करच्छेदः। उप्धिदेविना -सन्दशच्छेदः । येन्यिभेदकानां करच्छेदः । दिवा पश्रतां एकां घुपघाने पाने त्वनापदि पालदोषः। विनष्पक्षम्-ल्पन्न सामिने द्यात् । अननुज्ञातां दुहन् पञ्चिषिशति-काषीपणान् दण्ड्यः । महिषी चेच्छस्यनाशं कुर्यात्तत्पा तकस्तरी माषकान् दण्डयः। अपालायाः स्वामी अभव-स्तरीगर्दभो वा। गौत्र्येत्तदःई तदःईमजाविकं। प्रक्षिय-सीपविष्ठेषु हिगुणं। सर्व्य स्वामिने विनष्यास्य मूल्य र्६ विष्णुस्मृती।

स्त्र। पथियामसीमान्ते न दोषः अनावृते च अत्यकानां-उत्सृष्ट्वषमस्तिकानाञ्च । यस्तूत्तमवर्णान् दास्ये नियो-जयेतस्योत्तमसाहसद्ण्डः । त्यक्तंपत्रज्यो राज्ञोदास्यं कु च्यति । भृतकश्वापूर्णकाले भृतिं त्यजन् सकलमेव मू-ल्यं दद्यात् । राज्ञे च पण्यातं दद्यात् तद्येषेण यदिनश्ये त्तत् स्वामिने । अन्यत्र देवोपघातात् । स्वामी चेद्रतक मपूर्णे काले जहात्तस्य सर्वे मूल्यं दद्यात्। प्राथातंत्र्यः राजेनि अन्यन भृतकदोषात् । यः कन्यां पूर्व्यदत्तामन्य सी दद्यात् स् चीरवच्छास्यः । वरदीषं विना निद्धिषां प् रित्यजन पत्नीव्य अजानन पकाशं यः परद्रव्यं कीणी यात्त्र तस्यादोषः । स्वामी द्रव्यमाभुयात् । यद्यमकाशं हीन मूल्यञ्च कीणी यात्तदा केता विकेताच चीरवच्छा-स्यो। गणद्रव्यापहर्ता विवास्यः तत्सिमिदं यश्व लङ्क येत्। निम्नेपापहार्च्यर्थचिद्धसिहतं धनं धनिकस्य दा-प्यः। राज्ञा चीरवच्छास्यः यश्वानिक्षिप्तं निक्षिप्तमिति-श्यात्। सीमाभेतारमुत्तमसाइसं दण्डियत्वा पुनः सीमा लिंदुग्नितां कारयेत्। जातिभांशकरस्याभक्ष्यस्य भक्षयि ता विवास्यः। अभास्यस्याविकेयस्य च विकयीदेवम-तिमाभेदकश्र्वोत्तमसाहसं दण्डनीयः। भिषद्गिध्याचर नुत्तमेषु पुरुषेषु । मध्यमेषु मध्यमं तिर्यसु प्रथमम्। भ निकातस्यापदाची नदापित्वा प्रथमसाहसं दण्डयः। क्रटसाक्षिणां सूर्वस्वापहारः कार्यः। उत्कोचोपजीविनां संभ्यानाञ्च। गोचर्मामात्राधिकां ऋवमन्यस्याधीकृतां तस्मादानिम्मीच्यान्यस्य यः पयच्छेत् स बध्यः । उनाष्ट्र न् षोडशक्तवर्णान् दण्ड्यः। एकोऽश्रीयाद्यदुलन्नं नरः

सम्बत्सरं फलम्। गोचम्ममात्रा सा सीणा स्तोका वा यरि वा बहुः॥ ययोर्निक्षिप्तआधिस्ती विवदेनां यदा नरी।य स्य फ्रांकिः फलं तस्य बलात्कारं विना कता ॥ सागमेन च भोगेन् फक्तं सम्यग्यदा भवेत्। आहर्ता लभते तत्र नापहार्यन्तु तन् कविन् ॥ पित्रा फक्तन्तु यद्वयं भुक्तया बारेण धर्मातः। तस्मिन् येते न बाच्योऽसी भुत्का प्राप्तं हि तस्य तत् ॥ शिभिरेव च या फक्ता पुरुषे भू यथाविधि। छेख्यामारेऽपि तां तत्र यतुर्थः समवाभ्यात् ॥ नस्विनां दं ष्टिणाञ्चेव शृङ्गिणामाततायिनाम् । हस्त्यश्वानां तथान्ये षों वर्ध हन्ता ने दोषभाक् ॥ गुरुं वा बालच्ही वा ब्राह्म णं वा बहुऋतम् । आत्तायिन मायान्तं हन्यादेवाविचारय न् ॥ नातनाथिवधे दोषो हन्तुर्भवति कन्त्रन । प्रकाशं वा अपकाशं वा मन्युस्तन्मन्यु मुच्छति ॥ उद्यतासि विषािन्-ञ्च शापोधनकरं तथा। आधुर्वणेन हन्तारं पिकनञ्चे व राजसः॥ भार्यातिकामणञ्जीव विद्यात् सप्तातताथि नः । यशोवित्तहरानन्यानाद्वधीमार्थिहारकान् ॥ उद्देशतः स्ते कथितो धरे ! दण्डविधिमाया । सर्वेषामपराधानां -विस्तरादितिविस्तरः ॥ अपराधेषु चान्येषु ज्ञात्वा जाति धनं वयः । दण्डं प्रकल्पयेद्राजा सम्मन्त्य ब्राह्मणैः सह ॥ दण्डयं पमीनयन् दण्ड्याद् हिगुणं दण्डमावहेत्। नियु क्तश्राप्यदण्ड्यानां दण्डकारी नराधमः ॥ यस्य चीरः पु रे नास्ति नान्यस्त्रीगों न दुष्टवाक् । न साहसिकदण्डं मा स्राजा शक्छोकभाक् ॥ ॥ इति वैष्णवे धर्मीशा स्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ॥ अयोत्तमणोऽ धमणीययादत्तमर्थं गृहीयात्। हिकं शि- विष्णुसमृती।

EC कं चूतुष्कं पञ्चकञ्च शतं वर्णोनुक्रमेण प्रतिमासम् सर्वे वर्णा या स्वयतिपन्नां रिद्धं दद्यः । अकृतामि वत्स्रातिक मेण यथा्विहिताम् । आध्युप्भोगेच्छाभावः । देवराजो प्घाताहते विनष्टमाधिमुत्तमणी द्यात्। अन्तर्द्धी प विषायामपि । न स्थावरमाधिमृते वचनात् गृहीतधनप-वेशार्थमेव यत् स्थावरं दत्तं तद्गृहीतधन भवेशे दद्यात्। दीयमानं प्रयुक्तमर्थमुक्तमर्णस्योगृह्णतस्ततः परंनवर्दते। हिरण्यस्य परा सहिद्विगुणा । धान्यस्य त्रिगुणा । वस्त्र-स्य चुतुर्युणा । सन्ततिः स्वीपशूनाम् । किण्वकार्णससूत्र चम्मिधुर्भेषकाङ्गराणामसया । अनुकानां दिगुणा। प युक्तमर्थे यथाकथित्रित् साध्यन् राज्ञी वाच्यः स्यात् । साध्यमानश्चेद्राजानमाभिगच्छेत्ततूस्मं द्रण्डयः। उत्तमणी श्रेद्राजान्मियात्ति स्मावितोऽ ध्मणी राज्ञे धनदशभागस मितं दण्डं दद्यात् । पाधार्थन्योत्तमणी विद्रातितममंश-म्। सपीपलाप्येकदेश विभावितो धि सर्वे दद्यात्। त स्य च भावनास्तिस्रो भवनि हिस्वितं साक्षिणः समय किया च। संसाधिकमाप्तं संसाधिकमेव द्द्यात्। हि खितार्थभविशो छिखितं पाटयेत्। असमग्रदाने छेख्या सिन्धाने चोत्तमणी छिखितं देद्यात्। धन्याहिणि पेते प्रविते हिदशस्माः भवसिते वा तत्पुत्रपीत्रेधनं देयम् नातः परमनीप्सुपिः। सपुत्रस्य वाऽपुत्रस्य वा अरक्थ याही अरणं दद्यात् । निर्धनस्य स्वीयाही । नस्वी प-तिपुत्रकृतम्। नस्त्रीकृतं पतिपुत्री न पिता पुत्रकृतम्। अविभक्तेः कृतमृणं यस्तिष्ठेत् स द्द्यात् । पैतृकमृणम-विभक्तानां भातृणाञ्च । विभक्ताश्च दायानुरूपमंशम् ।

गोपशोण्डिक शेलूपरजक्या धस्त्रीणां पतिदेदात् । वा-क्र प्रतिपन्नं नादेयं कस्यचित्। कुदुम्बार्थे कृते ऋ। यो गृ हीत्वा ऋणं सर्वे श्वोदास्यामीति सामकम्। न दद्याक्षीभ तः पश्चात्तथा वृद्धिमवाभुयात्।। दशेने प्रत्यये दाने प्राति भाव्यं विधीयत्। आद्यो तु वितथे दाप्यावितरस्य स्कृता अपि ॥ बह्वश्रेत् प्रतिक्तवा दद्यस्ते ऽर्ध यथा सत्म् । अ र्थेऽ विशेषिते तेषु धनिकच्छन्दतः किया ॥ यम्धं प्रतिभू र्द्धान्तिनोपपाडितः । अर्णिकस्तं यतिभूवे हिगुणे दातुम्हीते ॥ ॥इति बैष्णवे धर्माशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः॥ अयं हेर्यं त्रिविधं राज्साक्षिकं ससाक्षिकमसाक्षिक-ञ्च। राजाधिकरणे तनियुक्तकायस्थ्कतं तद्ध्यक्षक रिक्तितं राजसाक्षिकम्। यत्र कचन येन केनिबिह्नि रिवतं साक्षिपिः स्वहस्तविह्नितं संसाधिकम् । स्वहस्ति शित मसाक्षिकम् । तद्दलात्कारितमप्रमाणम् । उपधिकृताश्च सर्वएव । द्षितकमा दुष्साध्यं तत्ससाक्षिकमपि । ताद्यिधेन हिस्तिन्त्र । स्त्रीबाह्य स्वतन्त्र मत्तीन्मतभी तताडितकतञ्ज । देशाचाराविरुद्दं व्यक्ताधिकत्वसण् मलुप्तकमाक्षरं प्रमाणम् । वणेश्व तत्कतेश्विन्हेः पत्रे रेष्च युक्तिभिः । सन्द्रिधं साधयेष्ठरव्यं तद्युक्तिप्रतिरू पितैः ॥ यत्रणी धनिको वापि साक्षी वा छेरवको इपि वा भियते तत्र तल्लेख्यं तत्स्वहस्तीः प्रसाधयेत् ॥ ॥ इति वैष्णवे धुमीशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः॥ अथ साक्षिणः न राजश्रोतियप्रव्रजितकितवतस्करपरा धीनस्त्रीबालसाइसिकातिच्छमत्तोनमत्ताभिशस्तपित धुत्तृष्णात्त्र्यसिन्रागान्धाः । रिपुमित्रार्थसम्बन्धिविक-

मिंद्र एदोषसद्दायाश्च । अभिदिष्ट साक्षित्वे यश्चोपे-त्य श्र्यात् । एक स्वासासी । स्तेय साइसवाग्दण्डपारुष्य संयहणेषु साक्षिणो न परीक्याः । अथ साक्षिणः कुलजा रत्तिसम्पन्नायज्वन्स्तपस्विनः पुत्रिणोधम्मेज्ञाअ-धीयानाः सत्यवन्तस्त्रीविद्यच्दाश्व । अभिहितगुणस् म्पन्नजभयानुमतएकोऽपि। इयोविवद्मानयोर्यस्य पूर्व बादस्तस्य साक्षिणः पष्याः । आध्यं कार्यवशाद्य व पूर्वपक्षस्यभवेतव प्रतिवादिनोऽपि । उद्दिश्साक्षि-णि मृते देशान्तरगते वा तदिभिहितज्ञातारः प्रमाणम्। समस्दर्शनात् साक्षी अवणादा । साक्षिणश्च सत्येन पूयन्ते। विण्नां युत्र वधस्तत्रानृतेन। तत्पावनाय कु-ष्पाण्डी भिद्धिनोऽग्निं जुड़यात् । भूद्रएकाहिकं गोद्श कस्य यासं दद्यात् । स्वभावविक्तती मुखवर्णविनाशैः सम्बद्ध प्ररापे च कूटसाक्षिणं विद्यात् । साक्षिणश्राह-यादित्योदये कृतेशपथान् पृच्छेत् । ब्रुहीति ब्राह्मणं पृ च्छेत्। सत्यं ब्रहीति राजन्यम् । गोबीजेकाञ्चनेवे र्यम्। सर्वमहापान्केरेक शूद्रम्। साक्षिणः श्रावयेत्। ये महा पानिकनो छोका ये चौपपानिकनस्ते कूटसाक्षिणामपि। जननमर्णान्तरे कृतहानिश्च। स्त्येनादित्यस्तप्ति स त्येन भाति चन्द्रमाः । सत्येन वाति पवनः । सत्येन भू धरियति । सत्येनापस्तिष्ठनि । सत्येनानिस्तिष्ठति । सं ज्य सत्येन। सत्येन देवाः। सत्येन यज्ञाः॥ अश्व्मेध सहस्रञ्ज स्त्यञ्च तुल्या धतम् । अश्वमेधसहस्रादि सत्यमेव विशिष्यते ॥ जानन्तोऽपि हि ये साध्ये तषी-म्मूबा उपासते । ते क्र्रसाक्षिणां पापेस्तुल्या दण्डेन ग

प्यथ ॥ एवं हि साक्षिणः पृच्छेद्दणीचुकम्तो नृपः । यस्यो नुः साक्षिणः सत्यां मितज्ञां स जयी भवेत् ॥ अन्यथा गदिनो यस्य ध्रवस्तस्य पराजयः । ब्हुत्वं मितगृह्धीया त् साक्षिद्वेधे नराधिपः ॥ समेषु च गुणो्त्रुषान् गुणिद्वे धे दिज़ोत्तमान् । यस्मिन् यस्मिन् विवादे तु कूटसास्य-नृतं व्देत् । तत्तत्कार्यं निवर्त्ततं कृतं वाप्यकृतं भवेत्॥ ॥ इति वैष्णवे धम्मिशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः॥ अ्थ समयिक्या। राजदोह्साहसेषु यथाकामम्। नि-क्षेपस्तेयेष्वर्धप्रमाणम् । सर्वेष्वेवार्थेषु मृत्यं कनकं क लप्येत् । तत्र कृष्णलोने शूद्रं द्रिवृकिरं शापयेत् । दिक ष्णलोने निउक्रम् । त्रिकृष्णलोने रजनकरम् । चतुः कृ षालोने स्व्पक्रिम्। पञ्चरुष्णलोने शीतोद्तमहोकर म्। स्वणिद्धे कोशो देयः शूदस्य। ततः प्रं यथा है घ राग्न्युदकविशेषाणामन्यतमम् । द्विगुणेड र्थे यथाभिहि-ना सुमयिकया वैश्यस्य । विगुणी राजन्यस्य । कोशवर्ज्ञी चतुर्यणे ब्राह्मणस्य । न ब्राह्मणस्य कोशं दद्यात् । अन्यना ग्मिकालसमय्निबन्धन कियातः । कीश्रस्थाने बाह्मण् शी तोद्देतमहीकरमेव शापयेत्। प्रागृद्दष्दोषमल्पेऽप्यर्थे दि व्यानामन्यतम मेव कारयेत्। सत्स विदितसचरित्रं न म-इत्यर्थेऽपि। अभियोक्ता वर्त्तयेच्छीर्षे। अभियुक्त्त्र्य दि व्यं कुर्यात् । राजद्रोहसाहसेषु विनापि शीषिनतेनात्। स्त्री ब्राह्मणविकलासमधीरोगिणां तुला देया। सा च न गाति ग्यौ। न कुषुसमर्थछोइकाराणामिनदेयः। शरद् यीष्मयोश्य न कृष्टिपेतिक ब्राह्मणानां विषं देयं पार्षि च न श्लेष्मव्याध्यहितानां भीरुणां श्वासकासिनामम्बुजी

विष्णुस्मृती। विनाञ्चोद्कृम्। हेमन्तिशिषिर्योश्व नास्तिकेप्यः कोशो देयः न देशे व्याधिमयकोपसृष्टे च। सचैछ स्नातमाइ-य स्योदयउपोषितम् । कारयेत् सर्विद्यानि देवब्रो-स्रणसन्निधी ॥ ॥ इति वैष्णवे धर्माशास्त्रे नवमोऽध्यायः॥ अथ धटः। चतुईस्तोच्छितो दिइस्तायतः। तत्र सारयू क्षोद्रवपञ्चहस्तायतोभयतः शिक्या तुला। ताञ्च संवर्ण कारकांस्यकाराणाम्न्यतमा विध्यात् । तत्र चेकस्मिन्-शिक्यं प्रुषमारोपयद्वितीयं प्रतिमानं शिलादि। प्रतिमा नपुरुषी समधती सिचिक्किती कुला पुरुषमवतार्येत्।ध टब्र्समयेन गृहीयात् तुँछाघारक्रा। श्रह्मा ये स् ता होका ये होकोः क्रसाक्षिणः । तुहाधारस्य ते होको स्तुहां धारयतोम् षा ॥ धम्मपय्यायव्यने धेर इत्याभिधी यते। त्यमेव धट! जानीषे न विदुर्यानि मानुषाः ॥ व्यव हाराभिशस्तोऽयं मानुष स्तुल्यते त्विय । तदेनं संशयाद स्मान्दर्मतस्त्रातुमहीते ॥ ततस्त्वारोपयेन्छिक्ये भूय एवा थ तं नरम् । तुलितो यदि वर्देत तनः स धर्मातः धुनिः ॥ शिक्यच्छेदेऽ क्षमङ्गेषु भूयस्त्वारोपयेन्नरम् । एवं निः संशयं ज्ञानं यतो भवति निर्णयः॥ ॥ इति वैष्णवे धरमिशास्त्रे दशमोऽध्यायः॥ अथागिः। षोडशाङ्गुछं ताबद्न्तरं मण्डलं सप्तकं कु-य्यत्। ततः पाडनुरवस्य पसारित मुजद्दयस्य सप्तारव-त्थ पत्राणि करयोर्द्धात्। तानि च करहयसहितानि स्-त्रेण वेष्टयेत्। ततस्तत्राग्निवर्ण लोहपिण्डं पञ्चापात्प लिकं संन्यसेत्। तमादाय नातिद्रुतं नाविलम्बितं मण्डले षु पदन्यासं कुर्वन् व्रजेत्। ततः सप्तमण्डलमतीत्य प्र

मी पिण्डं जुहुयात् । यद्यन्य विक्तित्र रस्तम फर्डं विनिर्दे शेत् । नद्रभः सर्वथा यस्तु स वै श्रन्हो भवेन्तरः ॥ भया-हा पानयेद्यस्तु द्रभो वा न विभाज्यते । पुनस्तं धारयेत् पिण्डं समयस्याविशोधनात् ॥ करो विमृद्तित्रविहेस्तस्या-दादेव छक्तयेत् । अभिमन्त्यास करयो छोहिपिण्डं तनो न्यसेत् ॥ त्यमग्ने ! सर्वभूतानामन्त स्वरसि साक्षिवत्। त्यमेवाग्ने ! विजानीवे न विदुर्यानि मानवाः ॥ व्यवहारा भिशस्तोऽयं मानुषः शर्मिच्छिति । तदेनं संशायादस्मा द्रमिन्स्यातुम्हिसि ॥ ॥ इति वेष्णावे धम्मिशास्त्रे ए काद्शोऽध्यायः ॥

अधौदकम्। पङ्गभैवालदुष्याहमस्यज्ञलीकादिवर्जितेऽ
सासि। तम नार्भिमग्नस्यारागदेषिणः पुरुषस्यान्यस्य जातुनी गृहीत्वासिमन्त्रितस्तम्भः प्रविशेत्। तत्समकालञ्च
नातिक्र्रमृदुना धनुषा पुरुषोऽपरः शरक्षेपं कृष्यात्। त
न्वापरत्र्य पुरुषो जर्वन शरमानयेत्। तन्मध्ये यो न दृश्ये
तस्रभुदः परिकीतितः ॥ अन्यथा त्विशुद्धः स्यादेकाङ्ग
स्यापि दर्शने। त्वमम्भः! सर्व्यभूतानामन्त श्चरसि सा
सिवत्॥ त्वमेवाम्भो! विजानीषे न विदुर्यानि मानुषाः।
व्यवहाराभिशस्तोऽयं मानुषस्त्विय मज्जति। तदेनं संश
यादस्माद्दम्पतस्यानुम्हसि॥ ॥ इति चेष्णाचे धर्माशास्त्रे द्वादशोऽध्यायः॥
अथ विषम् । विष्णायदेशादि सर्वादि क्यूने दिगान्योत

अथ विषम् । विषाण्यदेयानि सर्वानि ऋते हिमाचलोद्ध बान्छाङ्गीत् । तस्य च यवसप्तकं धृतप्तुतमिश्वशस्तायद-धात् । विषं वेगक्रमापेतं सुखेन यदि जीर्ध्यते । विशुद्धं तिमिति ज्ञात्वा दिवसान्ते विसर्जयेत् ॥ विषत्वाहिषमत्वा- च कर! त्वं सर्व्वदेहिनाम्। त्वमेव विष! जानीषे न विदुर्या नि मानुषाः॥ व्यवहाराभिशस्तोऽ यं मानुषः श्रुहिमिच्छ-ति। तदेनं संश्यादस्मान्हम्मितस्त्रातुमहीस॥ ॥ शति वै ष्णवे धम्मिशास्त्रो नयोदशोऽध्यायः॥ अथ कोशः। उयान् देवान् समभ्यच्ये तन्स्नानोदकान् प्रस्तित्रयं पिबेत्। इदं मया न कृतमिति व्याहरन् देवतापि मुखः। यस्य पश्येत्हिसप्ताहान्निसप्ताहादथापि वा॥ रो गाऽनिज्ञीतिमरणं राजातङ्कम्यापि वा। तमशुद्धं विजानी यात्रथा शुद्धं विपर्यये। दिच्ये च शुद्धं पुरुषं सकुर्याद्धा मिको नृपः॥ ॥ इति वैष्णवे धम्मिशास्त्रे चतुर्दशोऽ

ध्यायः ॥ अथ द्वादश पुत्रा भवन्ति । स्वे क्षेत्रे संस्कृताया मुत्यादितः स्वयमीरस्: प्रथमः । नियुक्तायां सिपण्डे नोत्तमवर्णेन वो त्पादितः क्षेत्रजो दितीयः। युक्रिकायुत्रस्तृतीयः। यस्त-स्याः पुनः स मे पुनोभवेदिति या पित्रा दत्ता सा पुनिका पुनिकाविधिना मतिपादिता पितृभातृविहीना पुनिकैव। पोनर्भवश्वतुर्थः असता भूयः संस्कृता पुनर्भः। भूयस्वसं स्कृतापि परपूर्वी। कानीनः पञ्चमः। पितृगृहेऽ संस्कृत येवोत्पादितः । स च पाणियाहस्य गृहे च गूढोत्पूनः ष ष्ठः। यस्य तल्पजस्तस्यासी सहोदः सप्तमः । गर्भिणी ग संस्क्रियते तस्याः पुत्रः स च पाणियाहस्य दत्तकश्वाष्टमः। सच मातापितृभ्यां यस्य दत्तः कीतक्य नवमः। सच ये न कीतः स्वयमुपगतो दशमः। सच यस्योपगृतः अपि दुस्तेकाद्शः । पित्रा मात्रा च परित्यक्तः सूच येन गृहीतः यंत्र क्रचनोत्पादिनश्च हादशः। एतेषां पूर्वः पूर्वः श्रेयान्।

स एव दायहारः । स चान्यान्विभृयात् । अन्दानां स्ववि तानुरूपेण संस्कारं कृष्यत् । पतितक्षीवाचि कित्सरोगवि कला स्वभागहारिणः । अरुक्थयाहिभिस्ते भत्तिच्याः । ने षाञ्चीरसाः पुत्रा भागहारिणः । नतु पतितस्य पतनीये कमीण कृते त्वनन्तरोत्पन्ताः । मृतिलोमासु स्त्रीषु चोत्प-नाम्बाभागिनः तत्पुनाः पैतामहेऽ प्यथे अंश्राचाहिभिस्ते भरणीयाः । यभ्वार्थहरः सः विघ्छदायी । एको ढानामप्ये कस्याः प्रशः सव्यक्ति पुत्रएव च । भान्णामेकजाताना-अ। पुत्रः पितृवित्तालाभेऽपि पिण्डं दद्यात् । पुन्नाम्नो नरकाद्यस्मान् पिनरं त्रायते सुतः। तस्मान् पुत्रइति मोक्तः स्वमेव स्वममुवा ॥ ऋणमस्मिन् स्नयति अमृतत्बन्न गच्छति । पिता पुत्रस्य जातस्य पश्येचेळ्जीवतो मुख्यम् ॥ पुत्रेण लोकान जयित पीत्रेणानन्यम् सुते । अथ पूत्र-स्य पीत्रेण बभस्याभोति विष्पम् ॥ पीत्रदीहित्रयोदीके विशेषो नोपपद्यते । दीहित्रोऽपि ह्यपुत्रं तं सन्तारयति पौ ववत् ॥ ॥इति वैष्णवे धम्मिशास्त्रे पञ्चदशोऽध्यायः॥

समानवर्णास पुत्राः सवर्णा भवन्ति । अनुलोमास्त मातृवर्णाः । प्रतिलोमास्वार्ध्य विगहिताः । तम वैश्यापुन् मः श्रद्रेणायोगवः । पुक्तसमागधी क्षत्रियापुनी वेश्यश्व-द्राभ्यां । चाण्डालवेदेहकस्तताश्च ब्राह्मणीपुनाः श्रद्रविट् क्षत्रियेः । सङ्गरसङ्ग्राश्चासंख्येयाः । रङ्गावतरणमायोग वानां । व्याधता पुक्तसानां । स्त्रुतिकिया मागधानां । ब ध्यधातित्वं चाण्डालानाम् । स्त्रीरक्षा तज्जीवनञ्च वेदेहका नाम् । अश्वसारथ्यं स्तानां । चाण्डालानां बहिर्यामनिवस नं मृतवेलधारणिति विशेषः । सर्वेषाक्च समानजाति भि विहाराः स्वपितृवित्तानुहरणञ्च । सङ्गरे जातयस्तेताः पि त्मातृ पदिशिताः । पञ्छना वा पकाशा वा वेदितव्याः स्व कम्मिभिः ॥ ब्राह्मणार्थे गवार्थे वा देहत्यागोऽ नुपस्कृतः। स्त्री बालाप्युपपत्ती च बाह्यानां सिद्धिकारणम् ॥ ॥ ॥ इति वैष्णचे धम्मिशास्त्रे षोडशोऽध्यायः॥ पिता चेत् पुत्रान् विभन्नेत्तस्य स्वेच्छा स्वयमुपाते ७ थे । पैतामहे लथे पितृपुत्रयोठास्यं स्वामित्वम्। पितृविभक्ता-विभागानन्तरोत्पत्नस्य भाग दद्यः । अपुत्रस्य धनं पत्य-भिगामि । तद्भावे दुहित्गामि । तद्भावे पित्गामि । तद भावे मातृगामि । तद्भावे भातृगामि । तद्भावे भातृपुत्र-गामि। तदभावे बन्धुगामि। तदभावे सकुल्यगामि। तद भावे सहाध्यायिगामि। तदभावे बाह्मणधनवर्जी राज-गामि। ब्राह्मणार्थे ब्राह्मणानाम् । वानप्रस्थधनमाचार्यो गृहीयात् शिष्योवा। संसृष्टिनस्तु संसृष्टी सोदरस्यतु सोदरः । दद्यादपहरेचांशं जातस्य च मृतस्य च ॥ पित-मातृसुतभातृद्त्तमध्यम्युपागतम्। आधिवेदनिकं बन्ध दूतं खुँक मन्बाधेयक मिति स्वीधन्म्। श्राह्मादिषु चतुर्षु विवाहेब्बमजायामतीतायां तद्भतुः। शेषेषु च पिता हरेत्। सर्वेष्वेव मस्तायां यहनं तहुहितृगामि। पत्यो जीव
ति यः स्वीभिरलङ्गरो धृतो भवेत्। न तं भजेरन् दाया
दा भजमानाः पतान्ते ते।। अनेकपितृकाणाञ्च पितृतो
भागकल्पना। यस्य यत् पेतिकं रिक्यं स तद्दुहीत नतरः॥ ॥इति वैष्णावे धर्माशास्त्रे सप्तद्शोऽध्यायः॥ बाह्मणस्य चतुर्षु वणीषु चेत् पुत्रा भवेयुस्ते पैत्कमृरुथं दशधा विभजेयुः। तत्र बाह्मणीपुत्रश्चतुरोऽशानादद्यात्।

क्षत्रियापुत्रस्त्रीन् । दावंशी वैश्यापुत्रः । श्द्रापुत्रस्त्वेकं अ-थचेच्छ्रद्राप्त्रवर्जी ब्राह्मणस्य पुत्रवयं भवेत्तदा तद्दनं न वधा विभन्नेयुः । वर्णानुक्रमेण चतुस्त्रिहिभागकृतानंशा-नाद्युः । वैष्यवर्ज्जमप्धाकृतं चतुरस्त्रीनेकज्ञाद्यः । ध वियवर्को सप्तधारुतं चतुरो दावेकञ्च । ब्राह्मणवर्क्को पड्-धारुतं नीन् दावेकन्त्र । सन्नियस्य सन्नियावैत्यासूद्रापुने ष्यमेव विभागः। अथ बाह्मणस्यबाह्मण्हात्रियी पुत्री स्यातां नदा सप्तधाकृतान्द्रनाद् बाह्मणश्चत्रों ऽशानाद्या श्रीन राजन्यः । अथ ब्राह्मणस्य ब्राह्मणवैश्यो तदा षड्-धाविभक्तस्य चतुरोंऽशान् ब्राह्मण् आदद्याद्वावंशी वैश्यः। अय ब्राह्मणस्य ब्राह्मणश्रद्री प्रत्री स्यानां तदा तद्दनं प-व्यथा विभन्नेयानां चतुरोंऽशान् ब्राह्मण्स्यादद्यादेकं श्रद्रः अथ बाह्मणस्य सनियस्य वा सनियवेश्यो स्थातां तदा-नद्नं पञ्चधा विभजेयानां श्रीनंशांन् क्षियस्त्वाद्याद् हावंशी वैश्यः। अथ ब्राह्मणस्य सिवयस्य वा सिवय-भूदी पुत्री स्यानां नद्गं नद्दनं चतुन्दी विभजेयानां त्रीनं शान क्षत्रियस्तादद्यादेकं शुद्रः। अथ ब्राह्मणस्य क्ष-वियस्य वैश्यस्य वा वेश्यभूदी प्रती स्यातां तदा तद्दनं शिधा विभजेयातां दावंशी वैश्यस्त्वादद्यादेकं शूदः। अ धैक्षमा बाह्मणस्य ब्राह्मण्यवियवैषयाः सर्वहराः । क्षित्रयस्य राजन्यवैश्यौ । वैश्यस्य वैश्यः । शरदः शरदः स्य। दिजातीनां श्रद्भस्त्वेकः पुत्रोऽईहरः। अपुत्रवर-क्थस्य या गतिः सात्राईस्य दितीयस्य। मानरः पुत्र भागानुसारेण भागहारिण्यः । अन्दाश्च दुहितरः । स मवणीः पुत्राः समानंशानादद्यः । ज्येषाय श्रष्ठमुद्धारं द

युः। यदि हो बाह्मणीपुत्री स्यानामेकः श्द्रापुत्र स्तदा - ब्राह्मणपुत्राविशे भागानादद्यानामेकं श्द्रापुत्रः । अथ श्द्रापुत्रावुभी स्यानामेकोबाह्मणीपुत्रस्तदा षड्विभ-कस्यार्थस्य चतुरोंऽशान् ब्राह्मणास्त्वादद्याद्वावंशी श्रुद्रापुत्री । अनेन कमेणान्यत्राप्यंशकल्पना भवति । विभक्ताः सहजीवन्तो विभजेरन् पुनर्यदि । समस्तत्र विभाग स्यज्येष्ठं तत्र न विद्यते ॥ अनुपन्नन् पितृद्र्यं भ मेण यद्पार्जितम् । स्वयमीहितरुकं तन्नाकामो दातुम् हिति ॥ पेतृकन्तु यदा द्र्यमनवाप्य यदाभुयात् । न तत् पुत्रेभजेत् सार्द्रमकामः स्वयमज्ञितम् ॥ वस्त्रं मात्र मर्र्यक्र स्तरः । योगक्षेमं प्रचारम्य न विभाज्यञ्च पुस्तकम् ॥ ॥ इति वेष्णावे धर्माशास्त्रेऽ ष्टाद्रशोऽध्यायः ॥ सतं हिन्नं न श्रद्रेण निहरियेत । न श्रदंहिनेन । पितरं

मृतं हिजं न श्रद्रेण निहरियेत् । न श्र्द्रं हिजेन । पितरं मातरञ्ज पुत्रा निहरियुः । न हिजं पितरमपि श्रद्राः ब्राह्म णमनाथं ये ब्राह्मणा निहरित्त ते स्वर्गलोकपाजः । निर्हे त्य च बान्धवं मेतं सत्कत्या मदिस्णोन चितामिषणम्याप्स सवाससो निमज्जनं कुर्युः । मेतस्योदकनिर्वपणं कृत्वेकिष एडं कुशेषु दद्यः । परिवर्तितवाससन्ध निम्बप्नाणि विदश्य हाय्यप्रमान पदन्यासं कृत्वा गृहं मिवशेयुः । अक्षतांश्वान्नो क्षिपेयुः चतुर्थे दिवसेऽस्थिसञ्जयं कुर्युः । तेषाञ्च गङ्गामास मक्षेपः । यावत्सङ्ख्यमस्थि पुरुषस्य गङ्गामास प्रकेषः । यावत्सङ्ख्यमस्थि पुरुषस्य गङ्गामास तिष्ठित तावहर्षसहस्राणि स्वर्गलोकमधितिष्ठति । यावदाशीचं तावत् प्रतस्योदकं पिपडमेकञ्च द्युः । कीत रुख्याशनाश्च भवेयुः । अमांसाथनाश्च । स्थंडिस्शायिन-

श्रा पृथक्शायिनश्रा । यामानिष्क्रम्याशीचान्ते कृतश्म-श्रक्मणि सिलकल्केः सर्वपकल्केव्य स्थाताः परिवर्तित वाससो गृहं प्रविशेषुः । त्र्य शान्तिं कृत्वा ब्राह्मणानाञ्च पूजनं कुर्युः । देवाः परोक्षदेवाः प्रत्यक्षदेवा ब्राह्मणाः । ब्राह्मणीलीका धार्यन्ते । ब्राह्मणानां प्रसादेन दिवि ति श्रितं देवताः । ब्राह्मणापिहितं वाक्यं न मिथ्या जायते किन्त् ॥ यद्राह्मणास्तुष्टतमा वदन्ति तद्देवताः प्रत्यपिन न्त्यन्ति । तुष्टेषु तुषाः सततं भवन्ति प्रत्यक्षदेवेषु परोक्ष देवाः ॥ दुःखान्यतानां मृत्वान्यवानामाश्चासनं कुर्य्यु-रदीनसत्त्याः । वाक्येस्त यप्तिमि तवाभिधास्ये वाक्यान्य हं तानि मनोऽभिरामे ॥ ॥ इति वैष्णावे धम्मिशास्त्रे एकोनविंशोऽध्यायः ॥

यद्तरायणं तदहदेवानाम् । दक्षिणायणं रात्रिः । सम्बत्सरोऽहोरात्रः तिश्रंगता मासः मासा द्वादशवर्षम् । द्वादशवर्षः
शतानि दिव्यानि कित्युगम् । द्विगुणानि द्वापरम् । त्रिगुणानि केत्रेता चतुर्गुणानि कृतसुगम् । द्वादशवर्षसहस्राणि दिव्या
नि चतुर्युगम् । चतुर्युगानामेकसप्तितिर्मन्वन्तरम् । चतुर्युगसहस्रव्यक्त्यः । स च पितामद्दस्यादः । तावनी चास्य रा
तिः । एवं विधेनाहोरात्रेण मासवर्षगणनया सर्व्यस्यैव ब्र
ह्मणो वर्षशतमासुः । ब्रह्मायुषा च परिच्छिन्नः पीरुषो दिगसः । तस्यान्ते महाकत्यः । तावत्येवास्य निशा । पीरुषा
णामहोरात्राणामतीतानां संख्येव नास्ति । नच भविष्याणाम् । अनाद्यन्तता कालस्य ॥ एयमस्मिन्निरालम्वे
काले सनतयायिनि । न तद्भूतं प्रपश्यामि स्थितियस्य
भवेद्भुवा ॥ गङ्गायाः सिकताधारास्तथा वर्षति गसवे।

शक्या गणियतुं लोके न व्यतीताः पिताम्हाः ॥ चतुर्दश-विनश्यन्ति कृत्ये कल्पे सुरेश्वराः । सर्व्यलोकप्रधानाश्च म नवश्च चतुर्दश ॥ बहूनीन्द्रसहस्नाणि देखेन्द्रनियुतानि च विनष्टानीह कालेन मनुजेब्ब्रथ का कथा ॥ राजर्षयश्च ब हवः सर्व्य समुदिता गुणेः । देवा ब्रह्मर्षयश्चेव कालेन निध नं गताः ॥ ये समर्था जगत्यस्मिन् सृष्टिसंहारकारिणः । नेऽपि कालेन जीयन्ते कालोहि दुरितक्मः ॥ आकम्य-सर्वाः कालेन् परलोकन्त्र नीयते । कुर्म्मपाश्वशोजन्तः का तत्र परिदेवना ॥ जातस्य हि धुवी मृत्युर्धवं जन्म मृ तस्य च। अधे दुष्पिहार्योऽसिन्नास्ति छोंके सहायता ॥ शीचन्तो नोपकुर्वन्ति मृत्स्येह जना यतः । अतो न रोदितव्यं हि कियाः कार्याः स्वशक्तितः ॥ सकतं दुष्कः त्ञ्रीभी सहायी यस्य गच्छतः । बान्धवैक्तस्य किं कार्य शोचदिर्यवा न वा ॥ बान्धवानाम्शीचे त स्थितिं मेतो न विन्दित । अतस्त्वभयेति तानेव पिण्डतोयपदायिनः ॥ अर्चाक् सपिण्डीकरणात् येतो भवति यो मृतः । येतलो कग्तस्यान् सोदकुम्मं प्रयच्छत् ॥ पितृलोकगतश्चान्नं शाहे भुड़क्ते स्वधामयम् । पितृहोकगतस्यास्य तस्माञ्जा इ अथच्छत् ॥ देवत्वे यातनास्थाने तिर्ध्यग्योनी तथेव च । मानुष्ये च तथामोति शाह दत्तं स्वबान्धवेः ॥ मेतस्य श्राहकतीश्र पृष्टिः श्रान्हे रुते ध्रुवम् । तस्माच्छान्हं सदा कार्य्य शोक त्यत्का निरर्थकम् ॥ एताबदेव कर्त्तव्यं सदा प्रेतस्य बन्धुभिः । नोपकुर्य्यान्तरः शोकात् प्रेतस्यात्मन-एव वा ॥ दृष्ट्या होकमनाऋन्दं भियमाणांश्र्य बान्धवान्। धर्ममेकं सहायार्थं वरयध्यं सदा नराः। ॥ मृतोऽपि बान्धरः

भक्तो नानु गन्तुं नरं मृतम् । जायावर्ज्ने हि सर्वस्य याम्यः पन्था विरुध्यत् ॥ ध्रम्पएकोऽ नुयात्येनं यञ छचन गामि नम्। नन्वसारं नृडोकेऽस्मिन् धर्मो कुरुत मा विरम्॥ श्वःकार्य्यमद्य कुर्वीत पूर्वाह्वे चापराहिकम्। न हि प तीक्षते मृत्युः कृतं वास्य न वाऽकृतम्॥ क्षेत्रापणगृहास क्तमन्यत्र गतमानसम्। ह्कीवोरणमासाद्य मृत्युरादा य गच्छति॥ न कालुस्य त्रियः कश्चिद्देष्यश्चास्य निव यते। आयुष्ये कर्माणि क्षीणे प्रसद्य हरते जनम्॥ ना पाप्तकालो प्रियते विद्यः शरशतेरिप । कुशायेणापि सं-सृषः प्राप्तकालो न जीवति ॥ नौषधानि न मन्ताश्व न : होमा न पुनर्जपाः । त्रायन्ते मृत्युनोपेतं जरया वापि मानवम् ॥ आगामिनमनथं हि प्रविधानभातेरपि। न निवारियतुं शक्तस्तत्र का परिदेवना ॥ यथा धेनुसहस्तेषु वस्तो विन्दति मातरम् । तथा पूर्वकृतं कम्म कृत्तीरं विन्द ते ध्रम् ॥ अव्यक्तादीनि भ्रतानि व्यक्तम्ध्यानि चाप्यथ अव्यक्तिभनान्येव तत्र का परिदेवना ॥ देहिनोऽस्मिन् यथा देहे कीमारं योवनं जरा। तथा देहान्तरपाप्तिधीरस्त न मुहाति ॥ गृहातीह यथा वस्त्रं त्यत्का पूर्वधृताम्ब भ न मुह्मात ॥ रह्णाताह जना तत्त्र ज्यका हर स्तान्त्र रम् । गृह्णात्येवं नवं देहं देही कम्मीनिबन्धनम् ॥ नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहित पावकः । नचैनं केद्यन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥ अच्छेद्योऽयमदाद्योऽयमहिद्योऽयोऽयोऽशोष्य एव च । नित्यः सतत्रगः स्थाणु रचलोऽयं सनातनः ॥ अच्यक्तोऽयमचिन्त्योऽ यमविकाच्योऽ यमुच्य ते । तस्मादेवं विदित्वेनं नानुशोचितुमह्थ ॥ ॥ इति वे णावे धर्माशास्त्रे विशोऽध्यायः ॥

अथाशीच व्यपगमे सस्मातः सम्मक्षाछितपाणिपाद आ चान्तस्तेवंविधान् बाह्मणान् यथाशक्तयुदङ्गुरवान् गन्ध माल्यव्स्वालङ्का्रादिभिः प्रजितान् भोज्येत्। एकव्नम-न्तान् हेतेको हिं है। उच्छि एस निधा वेक् मेव त्नामगोत्रा भयां पिण्डं निर्वेपेत्। भुक्तवत्स ब्राह्मणेषु दक्षिणयाभि-पूजितेषु पेतनामगोत्राभ्यां दत्ताक्षय्योदकत्र्यतुरङ्गुलपृ-थ्वीस्तावदन्तरास्तावद्धः खाता नितस्त्यायता सिस्यः कर्षुः कुर्यात्। कष्री समीपे चानित्रयमुपस्माधाय परिस्तियी तंत्रेकैकस्मिन्गुंइतित्रयं जुह्यात्। सोमाय पितृमते स्था नमः। अग्नये कञ्चवाहराय स्वधा नमः। यमायादिस्ते स्वधा नमः। स्थानवये च प्राग्वत् पिण्डन्त्रिपणं कुर्यात्। अन्नद्धि छत् मधुमां सेः कुर्व त्रयं पूरिय खैत्दिति जपेत्। एवंमृताहे प्रतिमासं कुर्यात्। सम्बत्सरान्ते पेताय नसिवे नत्पितामहाय नत्पपितामहाय च ब्राह्मणान् देवप्यीन् भोजयेत्। अत्राग्नीकरणमाचाहुनं पाचन्त्र कृष्यत्। संस् जतु त्वा पृथिवी समानीवृहति च पेतुपाँ वपाने पित पाद्यपात्रत्रये योजयेत्। उच्छिष्टसन्निधौ पिण्डचतुष्य कुर्यात्। ब्राह्मणांश्र्य स्वाचान्तान् दत्तदक्षिणांश्रानुब्रज्य विसर्ज्ञयेत्। ततः भेनिष्ण्डं पाद्यपात्रोदक्षत् पिण्डव्रये नि द्ध्यात्। कर्षत्रयसन्निकषेऽप्येवमेव। सपिण्डीकरणं मा-सिकार्थवद्दादशाइं श्राद्ध क्ला वयोदशेउद्धि वा कुर्यात्। मन्लवर्ज हि श्रद्राणां दाद्शेडह्नि। सम्बत्स्राभ्यन्तरे यद्धि मासो भवेत्तदा मासिकार्थे दिनमेकञ्च वर्द्धत्। सपिण्डी कर्णं स्वीणां कार्य्यमेवं तथा भवेत्। यावज्जीवं तथा कु-म्यांच्छान्तु मतिवत्सरम्॥ अविक् सपिण्डीकरणं यस्य

सम्बत्सरात् रुतम् । तस्याप्यन्नं सोदकुम्भं दद्याद्दं हिजन्मने ॥ ॥ इति वैष्णवे धम्मिशास्त्रे एक्विशोऽध्या्यः

बाह्मणस्य सपिण्डानां जननमरण्योर्दशाहमशो-चम्। द्वादशाहं राजन्यस्य । पञ्चदशाहं वैश्यस्य । मासं श्रद्रस्य। सपिण्डता च पुरुषे सप्तमे विनिचर्तते । अशीचे होमदान् प्रतियहस्याध्याया निवर्तन्ते । नाशीचे कस्यचि दन्नमंत्रीयात्। ब्राह्मणादीनामशीचे यः सरुदेवान्नम-यिनं कुर्यात् । सवर्णस्याशीचे दिजी फत्का सव-नीमासाद्य तन्तिमग्नस्थीर्घमर्षणं जस्वोत्तीय्ये गायस्य एसइसं जपूत्। सात्रियाशीचे बाह्मणस्तेतदेवोपोषितः कृत्वा कृद्धति । वैश्याशीचे राजन्यश्र्व । वेश्याशीचे -बाह्मणस्त्रिरात्रोपोषितश्च। बाह्मणाशोचे राजन्यः क्षिन-याशीचे वैश्यः स्वयुन्ती मासाद्य गायत्रीशतपञ्चकं जप्तू ॥ वैश्यम्य श्राह्मणाशीचे गायन्यष्ट्यातं जपेत्। श्रद्धाशीचे दिजो फत्का माजापत्यवतु ज्ञरेत्। शद्भ दिजाशीचे स्ना नमाचरेत् । श्रद्रः श्रुद्राशीचे स्नातः पञ्चगच्यं पिवेत् । प्-लीनां दोसानामानुछोम्येन स्वामिनस्तुल्यमशीचम्। मृते स्वामिन्यात्मीयम्। इीन्वर्णानामधिकवर्णेषु त्दपग्मे कः-दिः । बाह्मणस्य क्षत्रविद्शुद्रेषु षड्रात्रविरात्रेकरात्रेः । क्ष त्रियस्य विद्यद्रयोः षड्रान्तिरात्राभ्याम् । वैश्यस्य श्रदेषु षड्रात्रेण । मासतुल्येरहोरात्रे गर्भस्याचे । जात्मृते मृतजाते वा कुछस्य सद्धः शीच्म । अदन्तजाते बाहे मेते सद्युव । नास्याग्निसंस्कारो नोदक्रिया । दन्तजाने लक्कतचूडे त्वहो रात्रेण। रुतचूडे त्वसंस्कृते त्रिरात्रेण। ततः परं यथोक्तका-

छेन। स्त्रीणां विवाहः संस्कारः। संस्कृतासः स्त्रीषु नाशी चं भवति पितृपक्षे। तत् प्रसवमरणे चेत् पितृगृहे स्थातां तदेकरात्रं विरात्रद्धः। जननाशीचमध्ये यद्यपरं जननाशी चं स्थात्तदा पूर्व्वाशीचव्यपगमे शब्दिः। रात्रिशेषे दिन-द्येन। प्रभाते दिनन्रयेण। मरणाशीचमध्ये ज्ञातिमरणे ऽप्येवम्। ऋत्वा देशान्तरस्थजननमरणे शेषेण शुक्तेत्। व्यतीतेऽशीचे सम्बत्स्रान्तरत्वेकरात्रेण। ततः परं स्नाने-न। आन्।य्ये मात्।महे च व्यतीते विरान्नेण।।

अनोरसेषु पुनेषु जातेषु च मृतेषु च। पर्पूर्वीसु भा च्यसि पस्तास मृतास न । आचार्च्यपत्नीपुत्रोपाध्याय मातु छ १व १० १ वव १० वर्ष सहाध्यायि शिष्ये व्यती तेष्येकरानेण। स्वदेशराजिन च। असपिण्डे स्ववेशमिन मृते च। भृग्य-ग्न्यनाशकाम्बुसंयाम विद्युन्नृपहतानां नाशीचम्। न रा-ज्ञां राजकम्मीण । न ब्रतिनां ब्रते । न सित्रणां सत्रे । न क् रूणां स्वकृम्मणि। न राजाज्ञाकारिणां तदिच्छया। न दे वेपतिषाविवाहयोः पूर्वसंभृतयोः । न देशविप्रवे । आ-पद्यपि च कषायाम् । आत्मत्यागिनः पतिताश्च नाशीचा दक्षाजः । पतितस्य दासी मृतेऽह्मि पादाश्यां घटमपवः क्रियेत्। उद्दन्धनमृतस्य यः पात्रां खिन्द्यात् स तप्तरुखे ण शुस्ति,। आत्मधातिनां संस्कृतीच । तद्क्रपातकारीन सर्वस्येव पेतस्य बान्ध्वेः सहाक्षपातं रुत्वा स्नानेन। अ कृते तस्थिसञ्जये सचैछस्नानेन । हिजः श्रू प्रेतानुगमनं कृता स्वन्तीयासाद्य तिनमग्निस्य प्रमर्षणं जो खती-र्घ्य गायत्र्य एसहस्त्रं जपेत् । हिज्येतस्या एधातम् । श्रूहः येतानुगमनं कृत्वा स्नानमाचरेत् । चिताधूमसेवने सवैष- र्णाः स्मानमाचरेयुः । मेथुने दुःस्वमे रुधिरोपगतकण्ठे ब-मन, विरेकयोश्य । शमक्रकम्मणि छते च । शबस्पृशञ्च स्पृष्ट्या रजस्वलाचाण्डालयूणांश्च भक्ष्यवर्क्को पञ्चनस्वश वं तदस्यि सर्कोइञ्च। सर्वेष्येतेषु स्नानेषु पूर्व वस्त्रं ना प्राक्षातितं विभूयात्। रजस्वला चतुर्थेऽद्गि स्नानाच्युन्ध-ति। रजस्वला हीनवर्णो रजस्वलां स्पृष्ट्या न तावदश्रीया द्यावन्त भुद्धा । सवर्णामधिकरणां वा स्पृष्ट्या स्नातान्त्री-यात्। धुत्वां सत्वा भोजनाध्ययने पीत्वा स्नात्वा निषी-व्य वासः प्रिधाय रथ्यामाकम्य मूत्रपुरीषे कत्वा पञ्चन रवस्य सस्तेहास्थि स्पृष्ट्या नानामेत्। नाण्डालम्लेन्छ्स स्माषणो न । नाभरधस्तात् प्रवाहेषु न काधिकेमिलेः स्करिन्चीपहतो मृत्तोयस्तदङ्गं प्रक्षाल्य शुद्धात । अन्य-त्रोपहतो मृत्तोयस्तदङ्गं प्रक्षाल्य स्नानेन । वक्रीपहतस्तू पोष्य स्मात्वा पञ्चगव्येन । दशनन्छदोपहत्स्य ॥ वसा श्वकमसुडकजा मूचविद्रकणविद्रनस्याः। श्लेष्माश्कद्षिः जन्म त्रिकार समाध्या में स्वां में स्वां में स्वां में स्वां स्वा आचार्य्ये स्वमुपाध्यायं पितरं मातरं गुरुम् । निर्द्धत्य तु व्रती प्रेतान्न व्रतेन वियुज्यते ॥ आदिष्टी नोदकं कुर्याः दाव्रतस्य समापनात् । समाप्ते तूदकं रुत्वा विरावण

विष्णुसमृती। विश्वस्ति॥ ज्ञान्त्पोधिन्राहारो मृणम्नोबार्ध्यपाञ्जन-म्। वायुः कम्मिकिकाछी च शुद्धिकर्वणि देहिनाम्॥ स वैषामेव शोचानामन्नशीचं परं स्मृतम्। योऽन्ने शत-चिहिं संधानिन महारिश्वविः श्वविः ॥ क्षान्त्या श्रद्धा-नि विदासी दानेनाकार्थकारिणः। यच्छन्नपापा ज प्येन तपसा वेदवित्तमाः ॥ मृत्तोयोः शुद्धाते शोध्यं नदी वेगेन शुद्धाति । रजसा स्त्री मनोदुषा संन्यासेन दिजी त्तमाः ॥ अद्भिगित्राणि शुन्धान्ति मनः सत्येन शब्दाति। विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिन्तिनेन शब्दाति॥ एष शी-चस्य ते मोक्तः शारीरस्य विनिर्णयः। नानाविधानां द्रव्या णां श्रद्धः शृणु विनिर्णयम्॥ ॥ इति वैष्णवे धर्मा-शास्त्रे दाविंशोंड ध्यायः ॥ शारिरेमें छै: सराभिमें होर्चा यदुपहृतं नदत्यन्तो पहृतम्। अत्यन्तो पहृतं सर्व्य छोहभाण्डमग्नी प्रक्षिप्तं शुद्धोत्। म णिम्यमश्ममयम् छाञ्च सप्तरात्रं मही निरवनेन । शृङ्गदं-ष्ट्रास्थिमयं तक्षणेन । दारवं मृण्मयञ्च ज्ह्यात् । अत्य-न्तीपहतस्य वस्त्रस्य यत्त्रक्षाहितं विरुज्येत तिन्छन्धाः त्। सीवर्णराजताज्जमणिमयानां निर्वेपानामद्भिः श्रद्धिः। अश्ममयानात्रमसानां यहाणात्र । चरुसुक्सुवाणामुषो नाम्भसा। यज्ञकर्माणि यज्ञपात्राणां पाणिना संमार्जीने-न । स्पयशूर्पशकरमुषलोलूखलानां प्रोक्षणेन । शयून-यानासनानाञ्च । बहुनाञ्च धान्याजिनरज्जुतान्तववैदल स्त्रकापीसवाससाञ्च । शाक्मूलफलपुष्पाणाञ्च । तृण कोष्ठशुष्कप्रांशानां च। एतेषां मसालनेन। अल्पाना इत। अषेः कोशेशाविकयोः। अरिष्ठकेः कुतपानाम्। श्री

फलेरंशनपदानाम्। गीरसर्षपेः शीमाणाम् शृङ्गस्थिद-न्तमयानाञ्च। पद्मास्त्रेम्गलीमिकानाम्। तास्रीत्-भपुसीसमयानामम्होद्देन। भरमना कांस्यछोहयोः। तुसणेन दारवाणाम्। गोबाठैः फलसम्भवानाम्। प्रोक्ष णेन संहतानाम् । उत्पवनन द्रव्याणाम् । गुडादीनामि-स्कृतिकाराणां प्रभातानां गृहिनिहितानां वार्धिनिदानेन। सर्वे ज्वानाच्य । पुनः पाकेन मृणमयानाम् । द्रव्यवृत्-क्तिशीचानां देवताचानां भूयः प्रतिषापनेन । असि-इस्यान्नस्य यावन्मात्रमुप्हतं त्नात्रं प्रित्यज्य शष-स्य कण्डनप्रसालने कुर्यात् । द्रोणाद्यधिकं सिन्दमन्त मुप्हतं न द्रष्यति । तस्योपहतमात्रमपास्य गायुत्र्याभि मिलितं सुवणिताः मिसपेत् वस्तस्य च मुद्रश्येदग्नेः। पक्षिजग्धं ग्वाद्यातमवधूतमवस्तिम् । द्षितं केशकी टैश्च मृदः क्षेपेण शक्तकाते ॥ यावन्नापत्ये मध्याक्ताद्र न्थो रेपश्च तत्कृतः । तावन्मृद्दार् देयं स्यातू सविक्त द्रव्यश्रुहिषु ॥ अजारव मुखती मेध्यं न गीनिन्रजा म छाः। पन्थानश्र् विश्वद्यान्ते सोमस्य्याश्रमारुतेः ॥ र थ्याकर्मनीयानि स्पृष्टान्यन्यश्ववायसेः । मारुतेनेव शुन्दान्ति पद्मेष्टकचितानि च ॥ प्राणिनामध् सर्वेषां मृ दिरदिश्च कारयेत्। अत्यन्तोपहतानाञ्च शीचं नित्यम-तन्द्रितः ॥ भूमिष्ठमुदकं पुण्यं चेतृष्णयं यत्र गोभिचेत्। अव्यासञ्जेदमध्येन तह्रदेव शिलागतम् ॥ विह्निप्रन्वालनं कुर्यात् कृपे पकेषकाचिते । पञ्चगव्यं न्यसेत् पश्चान्नव तोयसमुद्रवे ॥ जलाशयेष्यथाल्पेषु स्थावरेषु वस्तन्धरेः। कृपवत् कथिता शुद्धिमहत्सु च न दूषणम् ॥ वीणि देवाः पवित्राणि ब्राह्मणानामकल्प्यन् । अद्दश्मद्भिनिणिकं य च वाचा मशस्यते ॥ नित्यं शुद्धः कारुहस्तः पण्यं यच प्रसारितम् । ब्राह्मणान्तरितं भोध्यमाकराः सर्वपुव न ॥ नित्यमास्यं श्रुचि स्त्रीणां शकुनिः फलपातने । प्रस्रवे च श्रुचिवत्सः १वा मृगयहणे श्रुचिः ॥ श्विभिद्देतस्य य-न्मांसं कार्च तत् परिकीर्तितम् । कच्यादिश्व हतस्यान्ये श्राण्डाला दोश्य देखाभिः ॥ ऊर्द्ध नाभेयानि खानि तानि मेध्यानि निर्दिशेन् । यान्यधस्तान्यमेध्यानि देहाचैव मल् श्युताः ॥ मिसका विश्वषश्खाया गौर्गजाश्वमरीचयः रजीभू व्यायुरिनिश्च मार्जीरश्च सदा श्रुचिः ॥ नोच्छिष्टं कुवते मुख्या विश्वषां कुवते मुख्या विश्वषां कुवते मार्चा । न श्मश्रूणि ग तान्यास्यं न दन्तान्तरवेषितम् ॥ स्पृशान्ति बिन्दवेः पा-दी य आचामयतः परान् । भीमिकेस्ते समाज्ञेयां न तै रमयता भवेतु ॥ उच्छिष्टेन तु संस्पृष्टी द्रव्यहस्तः कथञ्च न्। अनिध्येषु तद्र्यमाचान्तः श्वितांमियात्॥ मा-जीनोपाञ्जनेविषम प्रीक्षणीन च पुस्तकम् । समाजीनेना ज्जनन सेकेनो हेरवनेन च ॥ दाहेन च भुवः शहिवासे-नाष्यथवा गवाम् । गावः पवित्रं मङ्गल्यं गोषु छोकाः प्र तिषिताः । गावो वितन्त्रते यज्ञं गावः सव्योधसूदनाः ॥ गोमूनं गोमयं सपिः क्षीरं दधि च रोचना । षड्डु मेतल् रमं मङ्गल्यं सर्वेदा गवाम् ॥ शृङ्गोदकं गवां पुण्यं सर्वा घविनिस्दनम् । गवां कण्ड्यन्ञ्रवेव सर्वकल्मषनाशन म्। गवां यासमदानेन् स्वर्गलोके महीयते ॥ गवां हि तीर्थे वसतीह गङ्गा पुष्टिस्तथा सा रजिस प्रचन्दा। ल-क्मी: करीषे प्रणती च धर्मिस्तासां प्रणामं सततन्त्र कुर्या

॥ इति वैषावे धर्माशास्त्रे नयोविशोऽध्यायः॥ अथ ब्राह्मणस्य वर्णानुक्रमेण चतस्त्रो भार्या भः त्॥ वन्ति। तिस्तः क्षत्रियस्य। द्वे वेश्यस्य। एका श्रद्भय।ता सां सवण्णविदने पाणियाद्यः। असवण्णविदने शरः क्ष वियकन्यया । मतोदो वैश्यकन्यया । वसनद्शान्तः भू द्रकन्यया । न सगोवां न समानार्षप्रवरां भार्थां विन्देत् मातृतस्वा पञ्चमात् पुरुषात् पितृतश्वासप्तमात् । ना कुलीनाम् न्च व्याधिताम्। नाधिकाङ्गीम्। न हीनाङ्गी म्। नातिकपिछाम्। न वाचाराम्। अथाधी विवाहा भ वन्ति। ब्राह्मो देव आर्षः याजापत्यो गान्धर्व आसरी रा क्षसः पेशाच्त्रवेति । आहूय गुणवते कन्यादानं ब्राह्मः। यज्ञस्य अर लिजे दैवः। गों मिथुनयहण्नार्षः। पार्थिता-भूदानेन भाजापत्यः। इयोः सकामयोम्मीतापितृरहितो योगो गान्धर्यः। ऋयेणां स्तरः। युद्धहरणेन राह्मसः । स्तप्तमताभिगमूनात् पेशाचः। एतेष्वाद्याश्चतारो धर्म्याः । गान्धव्वेिष्टि राजन्यानाम् । ब्राह्मीपुत्रः पुरुषा नेकविंशति प्रनीते। दैवीपुत्रश्चतुद्देश। आषीपुत्रश्च सप्त । माजापत्यश्चतुरः । बाह्मेण विवाहेन कन्या ददह्र-हालोकं गमयति,। देवेन स्वरीम्। याजापत्येन देवलोकम् गान्धर्वेण गन्धर्वलोकं गच्छ्ति । पिता पितामहो भाता सकुल्यो मातामहो माता चेति कन्यापदाः । पूर्विभावे पर्वतिस्थः परः परः । अरतुत्रयमुपास्येव केन्या कु य्यति स्वयम्बरम् । अरतुत्रये व्यतीते तु प्रभवत्यातमनः सदा ॥ पितृवेशमानि या कन्या रजः पश्यत्यसंस्कृता । सा कन्या रूपढी ज्ञेया हरस्तां न विदुष्यति॥ ॥ इति

वैष्णवे धर्माशास्त्रे चतुर्विशोऽध्यायः ॥ येषावे धर्माशास्त्रे चतुर्विशोऽध्यायः ॥ विष्णुस्पती। अथ स्त्रीणां धर्माः। भर्तुः समानव्रतचारित्वम्।श्वश्च श्वश्वरगुरुदेवतातिथिपूजनम् । ससंस्कृतोपस्करता। अमुक्तहस्तता । सगुप्तभाण्डता । मूल्कियास्वनिष्ठिः मङ्गुजानारतत्परता। भर्त्तरि प्रवासिते । प्रतिकर्माकिया। परगृहेष्यूनिभूगमनम् । दारदेशगवाद्मकेषु नावस्थान म्। सर्वकर्मास्वस्वतन्त्रता। बाल्ययोवनवार्द्दकेष्विप् पितृभर्तृपुत्राधीनता। मृते भर्तिर ब्रह्मचर्य्य तद्न्वारो हणंच वा। नास्तिस्त्रीणां पृथक्यज्ञो न व्रतंनाप्युपोषण म्। पितं शुश्रूषते यत्तु तेन स्वर्गे महीयते॥ पत्यो जीव ति या योषिदुपवासव्वत्त्र्वरेत्। आयुः सा हरते भर्तु, नरकञ्चेव गच्छति॥ मृते भर्त्तीर साध्वी स्त्री ब्रह्मचर्ये ज्यवस्थिता। स्वर्गगच्छत्यपुत्रापि यथा ते ब्रह्मचारिणः ॥ ॥ इति वैष्णाचे धर्माशास्त्रे पञ्चिषिशोऽध्यायः॥ सवणीस्त बहुभार्य्यास्त विद्यमानासः ज्येष्ठया सह ध-म्मूकार्य्य कुर्यात्। मिश्रासः च कन्षियापि समान्व-र्णया। समानवण्णिभावे त्वनन्तरयेवापदि च। नत्वेव द्विजः श्रद्भया। दिज्रस्य भार्थ्या श्रद्भा तु धर्मार्थे न भूवेत् कवित्। रत्यर्थमेव सा तस्य रागान्धस्य प्रकी-तिता ॥ हीनजातिस्त्रियं मोहादुद्दहन्तो दिजातयः । कु न्येव नयन्याश्रु ससन्तानानि श्रुद्रताम् ॥ देवपित्र्या तिथेयानि तत्प्रधानानि यस्य तु । नादन्ति पितृदेवास्तु न्य स्वर्ग् स् गच्छति ॥ ॥ इति वैष्णावे धम्मिशा-स्त्रे पड्विंशोऽध्यायः ॥ गर्भस्य स्पष्ताज्ञाने निषेककर्मा । स्पन्दनान् पुरा पुंस-

वनम् षष्ठे ष्टमे वा सीमन्तोन्नयमं । जाते च दारके जात-कर्मा। अशीचव्यपगमने नाम्धेयं। मङ्गल्यं ब्राह्मणस्य। बलवत् क्षियस्य । धनोपेतं वैश्यस्य । जुगुप्सितं श्रद्ध-स्य। चतुर्थे मास्यादित्यदर्शनम्। षष्ठे इन्प्राशनम्। नृती येऽब्दे चूडाकरणम् । एताएव क्रियाः स्त्रीणाममन्त्रकाः। तासां समन्त्रको विवाहः । गर्भाष्टमेऽब्दे ब्राह्मणस्योपन यनं। गर्भकादश्रे राज्ञः । गर्भद्वादशे विशः। तेषां सु ञ्जज्याब ल्वज् मय्यो मौज्यः । कार्पासश्णाविकान्यपवी-तानि वासांसि च। मार्गवैयाघ्रवास्तानि चर्माणि।पा काशासादिशेदुम्बरा दण्डाः । केशान्तळलाटानासादेश तूत्याः सर्व ऍव वा । भवदाद्यं भवन्मध्यं भवदन्तव्य मेक्स्यूचरणम्। आषोडशाद्वाह्मणस्य सावित्री ना-निवत्तते। आदाविशान् क्षत्रबन्धोराचनुविशतिविशः॥ अतऊद्धे त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः । सावित्री प तिता बात्या भवन्त्यार्थ्यविगहिताः ॥ यद्यस्य विहितं च ममें यत्स्त्रं या च मेरवला। यो दण्डो यच वसनं तत्तद-स्य अतेष्वपि ॥ मेरवलामजिनं दण्डमुपरीतं कमण्डलु-म्। अप्स प्रास्य विन्छानि गृहीतान्यानि मन्त्रवत्॥ ॥ इति वैष्णवे धर्माशास्त्रे सप्तविशोऽध्यायः॥ अथ ब्रह्मचारिणां गुरुकुठे वासः । सन्ध्यादयोपासनम्। पूर्वो सन्ध्यां जपेतिष्ठन् पश्चिमामासीनः । कालदयमि षेकाग्निकर्मकरणम्। अप्स दण्डवन्युज्जनम्। आहृता ध्ययनम् । गुरोः पियहिताच्रणम् । मेरव्लादण्डाजिनो प्वीतधारणम्। गुरुकुरुवर्जं गुणवत्सः भेक्ष्याचरणम्। गर्वनुज्ञातो भेक्ष्याभ्यवहरणम्। श्रान्द्कृतरुवणश्रक्तप-

विष्णुसमृती। र्युषितनृत्यगीतस्त्रीमधुमासाञ्जनो छिषु पाणि हिंसापील परिवर्जनम्। अधः शय्या। गुरोः पूर्वोत्यानं चरमं सं-वेशानम्। कृतसन्ध्योपासनश्च गुर्व्वाभिवादनं कुर्यात्। तस्य च व्यत्यस्तकरः पादावुपस्पृत्रोत् । दक्षिणं दक्षिणे-नेतरमितरेण। स्वञ्च नामास्याभिवादनान्ते भीः शब्दा न्तं निवेदयेत्। तिष्ठनासीनः शयानी फञ्जानः पराङनु सम्ब नास्याभिभाषणं कुर्यात् । आसीनस्योपस्थितः कुर्यातिषतो अभिगच्छन्। गच्छतः पत्यु द्रम्य पश्चान्द्रावन् धावतः । पराङ्मुखस्याभिमुखः दूर्स्यस्यानिकमुपेत्य । शयानस्य प्रणम्य । तस्य च चक्षु विषये न यथेष्रासनः स्यात्। नचास्य केवं नाम ब्रुयात्। गतिचेशाभाषितादि कं नास्य कुर्यात्। तत्रास्य निन्दापरीवादी स्यातां न त त्र तिषेत्। नास्येकासनो भवेत्। त्रूते शिलाफलूक्नीया नेभ्यः। गुरोगुरी सन्निहिते गुरुवहर्त्तेन । अनिर्दिशे गुरुणा स्वान् गुरुन्नाभिवाद्येत् । बाठे सम्।नवयसि वा-ध्यापके गुरुपुत्रे गुरुवह्तीत । नास्य पादी मक्षालयेत् नोच्छिष्टमसीयान्। एवं वेदं वेदो वेदान् वा स्वीकृय्यीत्। न्तो वेदाङ्गानि। यस्त्वन्धीतवेदोऽन्यत्र श्रमं कृय्योद-सी ससन्तानः श्रदत्वमेति । मातुरये विजन्नं दितीयं मोज्जिबन्धन्म् । तत्रास्य माना सावित्री भवति पिता खा चार्यः । एतेनेव तेषां हिजत्वम् । पाडनोज्जीबन्धनाहि-जः श्रद्भमो भवति । ब्रह्मचारिणा मुण्डेन् जिटलेन वा भो व्यम् । वेदस्वीकरणाद्दे गुर्वानुज्ञातस्तरमे वरं दत्वा स्ना यात् । ततो गुरुकुरुएव जन्मनः शेषः नयेत् । तशचा-य्ये येते गुरुवदुरुपुत्रे वसेत । गुरुदारेषु सवणेषु वा ।

तद्भावेऽ निक्रिश्रषु नैष्ठिको ब्रह्मचारी स्यात्।। एवञ्च-रित यो विशो ब्रह्मेंचर्य्यमतिद्भतः। स गृच्छ्रत्युत्तमं स्था नं न चेहा जायते पुनः ॥ कामतौ रेतसः सेको ब्रतस्थस्य हिजन्मनः । अतिकमं व्रतस्याहुर्बह्मज्ञा ब्रह्मवादिनः ॥ए निस्मन्त्रेनिस प्राप्ते वसित्वा गर्हभाजिनम् । सप्तागारं च रेद्रेस्यं स्वकम्म परिकीर्तयन् ॥ तेभ्यो उब्धेन भेस्येण वर्त्यन्नेककालिकम् । उपस्पृशंस्त्रिषवणमब्देन स विश्व न्द्राति ॥ स्वमे सित्को ब्रह्मचारी दिजः शुक्रमकामतः । स्ना त्वार्कमर्श्वीयता भिः पुनम्मामित्रयुचं जपेत् ॥ अकृत्वा भी क्यच्रणमसमिध्य च पावकम् । अनातुरः सप्तरावमव कीणी वतञ्चरेत् ॥ तञ्चेदपयुदियात् सूर्यः शयानं का-मकातरः । निम्होचेद्दाप्यविज्ञानाज्जपन्नुपवसेदिनम् ॥ ॥ इति वैष्णवे धर्माशास्त्रेऽ एविंशोऽध्यायुः ॥ यस्त्पनीय बतादेशं कत्वा वेद्मध्यापयेत्तमाचार्य्यं वि-यात्। यस्त्वेनं मल्येनाध्याप्येत्तमुपाध्यायमेकदशं गा। यो यस्य यूज्ञे कम्माणि कुर्य्यात्तमृत्विजं विद्यात्। नापरी क्षितं याजयेत् नाध्यापयेत् नोपनयेत्॥ अधर्मेण च यः भाइ यश्व धम्मेण पुच्छति । तयोरन्यतरः श्रीत विद्वे षंगधिगच्छति ॥ धर्माथी यत्र नस्याता क्रसूषा गापि तिहुंधा। तत्र विद्या न व्राच्या श्वर्भं बीजिमिवोषरे ॥ विद्या इ ये ब्राह्मणमाजगाम गोपाय मा भोवधिस्तेहमस्मि। अ स्यकायानुजवे अस्ताय न मां बुधा वीर्ध्यवती तथा स्या
म् ॥ यमेव विद्याः श्रविमप्रमतं मेधाविनं ब्रह्मचर्यीप् पन्नम्। यस्तेन दुह्येत् कतमांश्र्य नाह तस्मे मां श्रुया वि धिपाय ब्रह्मन्। ॥ ॥ इति वैष्णाचे धर्माशास्त्रे -

68 एकोनिविशोऽध्यायः ॥ श्रावण्यां भीषपद्यां वा च्छन्दांस्युपाकृत्याई पञ्चमान् मा सानधीयीत। ततस्तेषामुत्सर्गे बहिः कुर्य्यान्नानुपाकृता-नां। उत्स्गीपाकर्माणोर्मध्ये वेदाङ्गाध्ययूनं कुर्यात्। नाधीयीताहोरात्रं चतुर्दश्यष्टमीषु च । नर्लन्तर्यहसूतके। नेन्द्रियमयाणे। न वाति चण्डपवने । नाकालवर्षविद्युत्स् नितेषु । न भूकम्पोल्कापानदिग्दाहेषु । नान्तः शवे यामे। न शस्त्रसंपाते । न श्वस्याल्गाह्मिनिह्नीदे । न वादिन शब्दे। न श्द्रपतिनयोः समीपे। न देपतायतनश्मशान चतुष्पथर्थ्यासु । नौदकानाः । न पीठीपहितपादः । न इस्त्यत्वीष्ट्रनीगीयानेषु । न बान्तः । न विरिक्तः । ना-जीणी । न पञ्चनस्यान्तराग्मने । न राजश्रोतियगोबाह्मण व्यसने। नोपाकर्मणि। नोत्सर्गे न सामध्यनाच्ययस्वी। नापररात्रम्धीत्य शयीत । अभियुक्तोऽप्यनध्यायेष्यध्य यनं परिदरेत्। यस्मादनध्ययनाधीतं नेहनासुन फल दम्। तदध्ययनेनायुषः क्षयो गुरुशिष्ययोश्य। तस्मा द्न्ध्यायवर्ज गुरुणा ब्रह्मछोककामेन विद्या स्चिष्य क्षेत्रेषु वसच्या । विष्येण ब्रह्मारम्भावसानयोग्रीरोः पा दोपसंयहणं कार्यम् । पणवन्य व्याहर्त्तव्यः । तत्र च य ह्चोऽधीते तेनास्याज्येन प्रितृणां तृप्तिभीवति। यद्यज्रं-

षि तेन मधुना । यत्सामानि तेन पयसा । यचाथर्वे-णन्तेन मासेन । यत्पुराणेतिहासचेदाङ्गधर्माशास्त्राण्य धीते तेनास्यान्नेन यँश्व विद्यामासाद्यां सिंहीके तया

जीवेन्न सा तस्य परलोके फलमदा भवेत्। यश्व विद्यया यशः परेषां हन्ति । अनुज्ञातश्वान्यस्मादधीयानान्न वि-

द्यामादद्यात् । तदादानमस्य ब्रह्मणः स्तेयं नरकाय भ वति। लोकिकं वैदिकं वापि तथाध्यात्मिकमेव वा। आ द्रीत यतो ज्ञानं न नं दुह्येन् कदाचन ॥ उत्पादक ब्रह्मदा वागरीयान् ब्रह्मदः पिता । ब्रह्म जन्म हि विषस्य पृत्य ने हंच शास्त्रतम् ॥ कामान्माता पिता चैनं यदुत्पादयती मि-चार्यस्तस्य यां जातिं विधिवद्देदपारगः। उत्पादयति सान विच्या सा सत्या साजरामरा ॥ य आर्णोत्यविनयेन क णीवदः रवं कुर्वन्तमृतं संभयच्छन्। तं वै मन्येत् पितरं मातर्ज्य तस्मी न दुह्येत् छतमस्ये जानन्॥ वैष्णावे धम्मीशास्त्रे भिशोऽध्यायः॥ ॥ इति नयः पुरुषस्यातिगुरवी भवन्ति । माता पिता आन्वार्ध्य श्व। तेषां नित्यमेव शुश्रूषुणा भवितच्यम्। यते ब्र्यु-स्तकुर्यात्। तेषां भियहितमाचरेत्। न तैरननुज्ञातः किञ्चिदपि कुर्यात्। एतएव त्रयी वेदा एतएव त्रयः -सुराः। एनएव अयो छोका एतएव अयोध्यस्यः॥ पिता-गाईपत्योंअमिर्दिक्षिणाग्निमीता गुरुराइवनीयः। सर्वे त् स्यादता धम्मा यस्येते त्रय आहताः ॥ अनादतास्तु यस्ये ते सर्वाक्तस्याफ्ठाः कियाः। इमं होकं मातृप्रक्या पि तृपत्या तु मध्यमम् ॥ गुरुक्तश्रूषया त्वेवं ब्रह्मलोकं स मभुते। ॥ इति वैष्णव धम्मिशास्त्रे एकविशोऽध्यायः॥ राजलिक्योभियाधर्मापतिषेध्युपाध्यायपित्व्य-

मातामहमानुरुश्वरहरज्येषु भातृसम्बन्धिनश्वाचार्य्यवत्। पत्य एतेषां सवर्णाः । मानृष्यसा पितृष्यसा ज्येषा स्वसा च। श्वशुरपितृव्यमानुरुत्विजां कनीयसां भत्युत्यानमेवा

विष्णुस्मृती । 98 भिवादनम् । इीनवणीनां युरुप्लीनां दूरादिभवादनं न पादोपसंस्पर्शनम् । युरुप्लीनां गानोत्सोद्नाञ्जनकेशसं यमन्पादपक्षालनं न कुर्यात्। असंस्तुतापि परप्ली भू-गिनीति बाच्या पुत्रीति मातेति वा । न च् गुरूणां त्विमिति ब्यात् । तदतिकमे निराहारो दिवसान्ते तं प्रसाद्याश्मी योत्। नच गुरुणा सह विगृह्य कथां कुर्यात्। नेव चा स्यूपरीवादम्। न चानिभ्रतम्। गुरुपती तु युवति न्मिमाद्येह पादयोः। पूर्णे विशानवर्षे च गुणदोषी वि जानता ॥ कामन्तु गुरुपह्योनां युवतीनां युवा फवि। अ भिवादनकं कुर्योदसावहमिति बुव्न ॥ वियोष्य पादय-हणमन्बहञ्जाभिवादनम्। गुरुदारेषु कुर्वित सतां धर्म मनुस्मरन्। वित्तं बन्धुर्वयः कर्मा विद्या भवति पञ्चमी एतानि मानस्थानानि गरीयो यद्यदुत्तरम् ॥ ब्राह्मणं दश वर्षञ्च शतव्षञ्च भूमिपम् । पिता पुत्री विज्ञानीयाद्भा-ह्मणस्तु तयोः पितो ॥ विमाणां ज्ञानतो ज्येष्ट्यं क्षत्रिया णान्तु वीर्च्यतः । वेष्यानां धान्यधनतः शूद्राणामेव ज न्मनः॥ ॥ इति वैष्णवे धर्माशास्त्रे हात्रिशोऽध्यायः॥ अथ पुरुषस्य कामकोध्छोभारव्यं रिपुनयं सुधो रं भवति । परियह पसङ्गद्विशेषेण गृहाश्रमिनः । तेना-यमाकान्तोऽतिपानकमहापानकानुपानकोपपानकेषु म वर्तते । जातिफांशकरेषु सङ्गरीकरणेष्वपात्रीकरणेषु च। मलाबहेषु प्रकीणीकेषु च। निविधं नरकस्येदं हारं ना श्रानमात्मनः । कामकोधस्तथा लोभस्तस्मादेतन्त्रेयं त्य जेत् ॥ ॥इति वैष्णवे धर्माशास्त्रे त्रयस्त्रिशोऽध्यायः॥ मातृगमनं दुहितृगमनं सुषागमनमित्यतिपात-

कानि। अतिपातिकनस्त्वेते पविशेयुईताशनम्। न सन्या निष्कृतिस्तेषां विद्यते हि कथञ्चन॥ ॥इति वैष्णवे धर्मशास्त्रे नृतुस्त्रिंशोऽध्यायुः॥

वणाव धम्मशास्त्र न्तुस्तिशाऽध्यायः ॥ ब्रह्महत्या स्तरापानं ब्राह्मणस्त्वणहरणं गुरुदारगम् निमित महापातकानि । तत्संयोगश्व । सम्बत्सरेण पति पतितेन सहाचरन् । एकयानभोजनाशानशयनैः योनस्रोवमीरवसम्बन्धात् सद्यएव । अश्वमधेन शुद्धे युर्महःपातिकनस्त्वमे । पृथिच्यां सर्वतीर्थानां तथानुस रूणेन वा ॥ ॥ इति वैष्णावे धर्मशास्त्रे पञ्च-

भिंशोऽध्यायः ॥ यागस्यस्य क्षत्रियस्य वैश्यस्य च रजस्वलायाश्चान्तर्व ल्यान्त्रात्रिगोत्रायान्त्राविज्ञातस्य गुर्भस्य शुरणागतस्य न घातनं ब्रह्महत्यासमानीति । कीटसाक्यं सहद्वध एती सरापान्समी । ब्राह्मणस्य भूम्यपहरणं निक्षेपा पहरणं सुवर्णस्तेयस्मम् । पितृव्यमातामहमातुरुश्व-श्वर नृपपल्यिभिगमनं गुरुदारगमन्समम् । पितृष्वस् मातृष्वस्त्वस्गमनञ्ज्ञ । श्रोत्रिय विगुपाध्याय मित्रप-ल्याभगमनञ्ज । स्वर्कः सख्याः सगोजाया उत्तमवर्णा-याः कुमार्या अन्त्यजाया रजस्वलायाः शरणाग्तायाः पन्नजिताया निक्षिप्तायास्य । अनुपात्किन्स्वेते महा-पातिकनो यथा। अश्वमधेन शुन्मिन्त तीर्थानुसरेणे न या॥ ॥ इति वैष्णावे धम्मिशास्त्रे षट्त्रिंशो ऽध्या यः॥ अन्तवचनमुक्षे । राजगामि च पेशुन्यम् । गुरोश्वाठी कर्निवन्धः । वदनिन्दा । अधीतस्य च त्यागः । अग्निमा-

विष्णु समृती। 65 तृपितृस्ततदाराणाञ्च । अभोज्यान्नामस्यभक्षणम्। प रस्वापहरणम् । परदाराभिगमनम् । अयाज्ययाजनम्। विकर्मणा जीवनस्य । असत्यतियहस्य । क्षत्रविद्रसूद गोवधः । अविकेयविकयः । परिवित्तितानुजेन ज्येष्ठस्य परिवेदनम् । तस्य च कन्यादानम् । याजनम्ब । बात्यता। भूतकाध्यापनम् । भृताच्याध्ययनादानम् । सर्व्याकरेष्य-धिकारः। महायन्लपवर्त्तनम्। दुमगुल्मवही छतीषधीः नां हिंसा। स्वीजीवनम्। अभिनारबिक्रमास प्रशतिः। आत्मार्थं कियारभः । अनाहितानिना । देविषिपितृक्र-णानामनपाकिया। असन्छात्राभिगमनम्। नास्तिकताः कुशीलवृता। मृद्यपत्रीनिषेषणम्। इत्युपपातकानि । उपपातिकन स्वेते कुर्य्युश्वान्द्रायणं नराः । पराकञ्च तथा कुर्य्युर्यजेयुग्मिरनेन वा ॥ ॥ इति वैष्णवे धर्मशा-स्त्रे सप्तर्विशोऽध्यायः॥ बाह्मण्स्य रुजः क्रणम् । अपेयमचयो द्यातिः जेह्यम्। पशुषु मैथुनाचरणं पुंसि च। इति जातिकांशकराणि । जातिभांशकरं कम्म कलान्यतमिन्छया । कुर्यात् सा ॥इति वैष्णवे ध न्तपनं कृच्यं पाजाप्त्यमनिच्छया॥ म्मिशास्त्रे अष्टातिशोऽध्यायः ॥ याम्यारण्यानां पश्चनां हिंसा सङ्गरीकरणम्। सङ् रीकरणं कृद्धा मासमभीत योवकम् । कृच्छ्रातिकृच्छ्रं मथवा भाराश्वितन्तु कारयेत्॥ ॥ इति वैष्णवे धमिशास्त्रे एकोनचलारिशत्तमोऽध्यायः। निन्दितेभयो धनादानं वाणिज्यं कुसीदजीवनम्सत्यभा-षणं श्रद्धसेवन मित्यपात्रीकरणम् अपात्रीकरणं कत्वा न

प्तरुच्छेण शुद्धाति । शीतरुच्छेण वा भूयो महासान्त पनेन वा ॥ ॥ इति वैष्णवे धम्मेशास्त्रे चलारि शत्तमोऽध्यायः ॥

पिसणां जलकराणां जलजानाञ्च घातनम्। कृपिकीटानाञ्च। मद्यानुगतभोजनम्। इति मलावहानि। म
लिनीकरणीयेषु तप्तकृच्छ्रं विशोधनम्। कृच्छ्रातिकृच्छ्र
मथवा प्रायिभत्तं विशोधनम्॥ ॥ इति वैष्णवे ध
मर्पशास्त्रे एकचत्वारिशत्तमोऽध्यायः॥
यद्तुकं तत्पकीणिकम्। पकीणीपात्के ज्ञात्वा गुकत्व-

मर्थं ठाघवमे । प्रायश्वितं बुधः कुच्योद् बाह्मणानुमतः सदा॥ इति वेष्णवे धर्माशास्त्रे दिचत्वारिशतमो ऽ -ध्यायः॥

अथं नरकाः । तामिस्नम् । अन्धतामिस्नम् । रोरवम् । म हारीरवम् । कांहस्त्रम् । महानरकम् । संजीवनम् । अवीति । तापनम् । सम्प्रतापनम् । संघातकम् । काको हम् । कण्ड्लम् । कुट्टानम् । प्रतिमृत्तिकम् । लोह्शङ्कुः । कर्नीसम् । विषमपन्थानम् । कण्टकशाल्महिः । दीपन दी । असिपत्रवनम् । लोहचारकमिति । एनेष्वकृतपाय श्विता अतिपानिकनः पर्ध्यायेण कल्पं पच्यन्ते । महाणा तिकनो मन्वन्तरम् । अनुपातिकनश्चानुर्युगम् । कृत सङ्गीकरणाश्च सम्वत्सरसहस्त्रम् । कृतजातिश्वश्चाकर णाश्च । कृतापात्रीकरणाश्च । कृतमिहिनीकरणाश्च । म कीर्णकपातिकनश्च बहून् वर्षयुगान् । कृतपातिकनः -सर्वे पाणत्यागादनन्तरम् । याम्यं पन्थानमासाद्य दुः -रयमश्चित्त द्रिणम् ॥ यमस्य पुरुषेधीरे कृष्यमाणार् विष्णुसमृती।

900

न्सतः । सुरु-छ्रेणानुकारेण नीयमानास्य ते यथा॥ श्व भिः स्गार्थैः क्रव्यार्देः काककडुः बकादिभिः। अग्नितुण्डे भिस्यमाणा भज्जे देश्निके स्तथा ॥ अग्निना द ह्मानाश्च नुद्यमानाश्च कैण्टकैः। ककनैः पाट्यमानाश्च पीड्यमानाश्व तृष्णया ॥ सुधया व्यथमानाश्च घोरे-व्याधिगणिस्तथा । पूचशोणितगन्धेन मूर्च्छमानाः परे पदे ॥ परान्नपानं लिप्संतस्ताडचमानाश्चे किंद्वरेः । काककडू ब्रकादीनां भीमानां सहपाननेः ॥ केवित् -कार्यान्तं तैरेन ताड्यन्ते मुष्टेः कवित्। आयसीषु च विध्यन्ते शिलास च तथा किचित् ॥ किचिदान्तमयास-नि इचित् प्यमसूक् कचित्। केचिहिष्ठां किचिन्मांसं पू यगन्धि सदारणम् ॥ अन्धकारेषु तिष्ठान्ति दारुणेषु त था इनित्। रुमिभिभिध्यमाणास्य विद्वातुण्टेश्य दारुणेः ॥ क्रिच्छोतेन बाध्यन्ते क्रिचेद्दा मध्यमध्यगाः। परस्प रमयामान्त कवित् पेताः सदारुणाः ॥ क्विद्भुतेन ता ड्यन्ते लम्बमानास्तथा कवित्। कवित् क्षिप्यान्ति ग-णोधेरुत्हत्यने तथा क्षित्।। कण्ठेषु दत्त्पादाश्र भ जङ्गाभोग्वेषिताः। पीड्यमानास्तथा यन्तेः रूष्यमाना श्य जानुभिः ॥ भगनपृष्ठिभारोग्रीवाः सूचीक्ण्ठाः सदार णाः। कूटागारप्रमाणेश्व शरीरेचितनोक्ष्मेः ॥ एवं पा त्किनः पापमनुभूय सन्दः खिताः । तिर्यग्योनी मपद्य-न्ते दुःखानि विविधानि न॥ ॥ इति वैष्णावे धर्माशा स्त्रे निचतारिश्तमोऽध्यायः॥ अथ पापात्मनां नरकेष्वनुभूतदुः खानां तिर्यग्योनयो भवन्ति । अतिपातिकनां पर्यायेण सर्वाः स्थावरयोन

यः। महापातिकनाञ्च कृषियोनयः। उपपातिकनां जल जयोनयः। कृतजातिकांशकराणां जलचरयोनयः। कृ तसङ्गरीकरणक्रमीणां मृगयोनयः। कृतापात्रीकरण क्मीणां पशुयोनयः। कृतम् िनीकरण्कमीणां मनु ष्येष्यस्पृथययोनयः। प्रकीणीषु प्रकीणी हिस्ताः क्या दा भवान्त । अभोज्यान्नाभस्याशी कृमिः । स्तेनः श्येन्नः । मकुष्वत्मिपहारी बिढेशयः । आखुर्धान्यहारी । हंसः कांस्यापहारी । जहं हत्वाभिष्रवः । मधुदंशः । पयः काकः । रसं श्वा । घतं नकुछः । मांसं गृधः । व सां मदुः । तेष्ठं तेष्ठपायिकः । ठवणं वीचिवाक् । द्धि बढाका । कीशेयं हत्वा भूवति तित्तिरिः । स्रीमं दर्दुरः। कापसितान्त्वं कीञ्चः। गोधा गाम्। वान्तुडी गुड्मै। खुच्खुन्दरिर्गन्थान् । पत्रशाकं बही । कृतान्नं श्वावित्। अकृतानं शहकः। अग्निं बकः। गृहकार्यपस्करम्। रक्तवासांसि जविञ्जविकः। गुजंकूर्माः। अश्वं व्याघः। फलं पुष् वा मर्कटः। अत्रः स्त्रियम्। यानमुष्टः। पश् नजः। मेतः पारजायी॥ यदा तदा परद्रव्यम्पहः त्य बतान्नरः । अवश्यं याति तिर्यकृत्वं जग्ध्वा चैवाहुः तं हिवः ॥ स्त्रियोऽप्यतेन कल्पेन हत्वा दोषमवामुयुः । एतेषामेव जन्त्ननां भार्य्यात्ममुपयान्ति ताः॥ ॥ इति वैष्णवे धर्माशास्त्रे चतुत्र्यतारिशत्तमोऽध्यायः॥ अथ नर्कानुभूतं दुःखानां तिर्ध्यत्क मुत्तीणीनां मनु

ष्येषु उक्षणानि भवन्ति । कृष्ट्यतिपातकी । ब्रह्महा यह्मी सरापः श्यावदन्तकः । सत्वण्णीहारः कुनरवः । गुरुतस्य गो दुश्चम्मी । पूतिनासः पिश्चनः । पूतिवन्नः सूचकः ।

विष्णुसमृतो। 907 धान्यचीरोऽङ्गहीनः मिश्रचीरोऽतिरिक्ताङ्गः। अन्नाप हारकस्त्वामयावी । वागपहारको मूकः । वस्ताप्हा रकः शिवत्री । अभ्यापहारकः पद्धः । देवब्राह्मणकोश को मूकः । छोल्जिन्हो गरदः । उन्मन्तोङिन्नदः । गुरुम तिकूलोऽपस्मारी। गोझस्त्वन्धः। दीपापहारकश्च। ब्रा णश्चे दीपनिचिपकः । नपुचामरसीसकविकयी रज-कः। एकश्राफविक्रयी मृग्याघः। कुण्डाशी भगास्यः घाण्टिकः स्तेनः। वार्ड्षिको भगमरी। मिशाश्येका-की वातगुल्मी। समये भेना खल्वाटः। श्रीपद्यकी णी। पर्वतिझो दरिद्रः। परपीडाकरी दीर्घरोगी । एवं कर्मिविशेषेण जायन्ते छक्षणान्विताः । रोगान्विता स्तथान्धाश्य कुछारवञ्जीक छोचनाः ॥ वामना बधिरा मू का दुर्बलाभ्य तथापरे। तस्मात् सर्वः प्रयूलेन पायभि त्तं समाचरेत्।। ॥ इति वेष्णवे धर्माशास्त्रे पञ्चनः त्वारिशतमोऽध्यायः॥ अथ कुच्छाणि भवनि । त्यहं नासीयात् मत्यह्ज्य त्रिष वणं स्नानमाचरे थिः प्रिस्नानम्पसु मज्जनं मुग्नस्थिरः घ्मर्षणं जपेत् दिवास्थित सिष्ठेत् रात्रावासीनः कम्मी णोऽन्ते पयस्विनीं द्दादित्यघमधैणम्। त्यहं सायं-न्यहं मातस्यहमुणां घतं त्यहमुणां पेयस्यहेन्त्र ना-श्रीयादेष तप्तकच्छः। एष एवं शीतेः शीतकच्छः। र च्यातिरुच्यः पयसा दिवसेक विशातिस्पणम् । उद्क सक्तनां मासाभ्यवहारेणोदकहृद्धः। विसाभ्यवहारे ण मूलकृद्धः। विल्वाभ्यवहारेण श्रीफलकृद्धः पद्मा-क्षेत्री। निराहारस्य दादशाहनेच पराकः। गामूनगोम

यसीर दिधसिर्धः कुशोदकान्येकदिवसमश्रीयाद् दिनीय मुपवसे देतत्सान्तपनम्। गोमूत्रादिशिः प्रत्यहाभ्यस्ते में हासान्तपनम्। त्यहाभ्यस्ते श्वातिसान्तपनम्। पिण्या काचमतकोदकसक्त नामुपवासान्तरितो अभ्यवहारस्तु-हापुरुषः। कुशापलाशोदुम्बरपद्मशङ्खपुष्पीवदब्रह्म-सुवर्चलानां पत्रेः क्षितस्याम्भसः प्रत्येकं पानेन पर्ण कृच्छः॥ कृच्छाण्येतानि सर्व्वाणि कुर्व्वति कृतपावनः। नित्यं विषवणस्त्रायी अधःशायी जितेन्दियः॥ स्वीश्रद्ध पतितानाञ्च वर्ज्ञयेचाभिमाषणम्। पवित्राणि जपेनि-त्यं जुहुयाचेव शक्तितः॥ ॥ इति वेष्णवे धर्म्पशास्त्रे षट्चत्वारिशत्तमोऽध्यायः॥

अथ चान्द्रायणम्।

यासानविकारानश्रीयात्तांश्वन्द्रकलाभिवृद्धी क्रमेण वर्ष् येदानी हासयेदमावास्यां नाश्मीयादेष चान्द्रायणी यव मध्यः। पिपीठिकामध्योवा। यस्यामावास्या मध्ये भवति स पिपीठिकामध्यः। यस्य पौर्णमासी स यवम् ध्यः। अष्टी यासान् प्रतिद्वसं गासमश्रीयात् स यत् चान्द्रायणः। सायं पातश्वतुरश्वतुरः स शिश्चचान्द्राय णः यथा कयञ्चित् षद्कोना त्रिशतीं गासेनाश्रीयात् स सामान्यचान्द्रायणः॥ वतमेतत् पुरा भूमीहृत्वा सम् षयो वरम्। पासवन्तः परं स्थानं ब्रह्मा रुद्दस्तथेव च॥ ॥इति वैष्णवे धर्मशास्त्रे स्मचलारिशत्तमोऽध्यायः॥ अथ कर्माभिरात्मकृतेर्गुरुग्तमानं मन्येतात्मार्थे

अथ कर्माभिरात्मकृतेर्गुरुमात्मानं मन्येतात्मार्थे अस्तियावक अपयेत् । न ततोऽग्नी जुह्यात् । न नात्र बिरुकर्म । अस्तं श्रप्यमाणं स्तञ्जाभिमन्त्रयेत् । श्र- विष्णुस्मृती।

808

प्यमाणे रक्षां कुर्यात्। ब्रह्मा देवानां पदवी कवीनां ऋ षिविभाणां १येनो गृधाणां महिषो मृगाणां स्वधितिर्व नानां सोमः पविश्रमभ्येति रेभन्निति द्भीन् बृधाति। शतुञ्च तमसीयात् पात्रे निषिच्य । ये देवा मनोजाता मनोजुषः करका दक्षपितरः। तेनः पान्त तेनो धवन्त तेभ्योनमस्तेभ्यः स्वाहेत्यात्माने जुहुयात् । अथाचानी नाभिमालभेत । स्नाताः पीता भवन्तो यूयमापोऽस्मा कसुदरे युवाः । ता अम्म मनमी वा अपस्या अनाग-सा सन्तु देवीरमृता ऋता रुद्ध इति । विरावं मेधावी। षड्रावं पापकृत्। सप्तरावं पीत्वो महापानिकनामन्यत मः पुनाति। द्वादशरावेण पूर्वपुरुषकृतमपि पापं नि-दहति। मासं पीत्वा सर्वपापानि। गोनिहरिमुक्तानां य वानामेकविंशतिरात्रच्य। यदोऽसि धान्यराजोऽसि वा रुणो मधुसंयुतः । निर्णोदः सर्वपापानां पवित्र मृषि-भिः स्मृतम् ॥ धनमेव मधु यवा आपो वा अमृतं य वाः । सर्वे पुनीत मे पापं यन्मे किञ्चन दुष्कृतम् ॥ ग चा रुतं कर्मरुतं मनसा च विचिन्तितम् । अलक्ष्मीं का लक्णीञ्च नाशयध्यं यवा! मम्॥ श्वश्वकरावलीढञ्च उच्छिषोपहतन्त्र यत्। मातापित्रोरशुश्रूषां पुनीध्य-श्रयवा ! मेम् ॥ गणानं गणिकान्त्र्त्रं श्रदानं श्राद्ध-स्तकम्। चीरस्यानां न्यश्राद्धं पुनीध्यञ्च य्या। मम॥ ॥ इति वैषावे धर्माशास्त्रे अश्चलारिशतमोऽध्यायः॥ मार्गशिषिशुक्रैकादश्यामुपोषितो हादश्यां भग्वं-तं वारकदेवमऋयित्। पुष्पधूपातुरुपनदीपनेवेदीब्रह्मि णतपिणेश्व। वतमेतत् सम्बत्सरं रुत्वा पापेश्यः पूतो

पञ्चाशत्तमोऽध्यायः। भवति । याव्कीवं रुत्वा श्वेतद्वीपमाभोति । उभयद्वाद शीष्वेकं स्वर्गिकं यामोति यावजीवं कृत्वा विष्णोलेकिम्। मोति। एवमेव पञ्चदशीष्वपि। ब्रह्मभूत ममावास्यां पी णीमास्यान्तथैव च । योगभूतं परिचरन् केशवं महदाधु यात् ॥ दृश्येत सहित्री यस्यां दिवि चन्द्र बृहस्पती । पी णीमोसी व महती घोका सम्बत्सरे तु सा ॥ तस्यां दा नोपवासाद्यमस्ततं परिकीर्तितम् । तथैव द्वादशी श्रु क्राया स्याच्छवणसंयुत्। ॥ इति वैष्णवे धर्मा शास्त्रे एकोनपेच्चाशत्मोऽध्यायः॥ वने पर्णाकुटी कत्वा वसेत् त्रिष्वणं स्नायात् स्वकर्म चा चसाणो यामे यामे भेस्यमाचरेत् तृणशायी च स्यात्। एतन्महाबतं ब्राह्मणं हत्वा दादशसम्बत्सरं कुर्यात्। यागस्यं क्षत्रियं वा। गुर्विणीं रज्ञखं वा। अतिगो मां वा नारीम्। मिनं वा। नृपतिवधे महाव्रतमेव दिशु-णुं कुर्यात् । पादोनं क्षत्रियवधे । अर्दे वैत्यवधे । तद ई शूद्रवधे। सर्वेषु श्वशिरोधजी स्यात्। सर्वेषु जीवे षु क्षमी स्यात्। मासमेकं रुतपावनी गवानुगमनं कुर्या ने आसीनास्वासीन स्थितास स्थितः स्यान् अवसन्ना श्रीदरेत् भयेष्यश्र्य रहोत् तासां भीतादिवाणम्कत्वा नातमनः कुर्यात् गोमूत्रैण स्नायात् गोरसेश्च वर्तत । ए नदोवतं गोवधे कुर्यात् । गजं इत्वा पञ्च नीलान् चष भान द्यात्। तुरगं वासः। एकहायनमन्डाहं खरव-धे। मेषाजवधे च। क्तवणकृष्णलमुष्यधे। ध्वानं हता विरात्रमुपवसेत्। हता मूषकमार्जारनकुलमण्डकडुण्डु भाजगराणामन्यतममुपोषितः क्रसरानं भोजयिला हा-

विष्णुसमृती। 308

हदण्डं दक्षिणां दद्यात् । गौधीलूककाक झषवधे त्रिरात्र मुपवसेत्। इंसबकबलाकमद्भवानरश्येनभासचकवाकः। नामन्यतमं हत्वा बाह्मणाय गां दद्यात् । सपं हत्वाभीं काष्णीयसीम्। खङ्गं हत्वा पलालभारकम्। वराहं ह त्याधनकुम्भम्। तितिरिं तिलद्रोणम्। क्षेकं दिहायनं श्रतम्। कीञ्चं बिहायणम्। कत्यादमृगवधे पयस्वि-नीं गांद्यात्। अक्रव्याद्मगवधे वत्संत्रीम्। अनुक्तम् गवधे विरावं पयसा वर्तत । पक्षिवधे नकाशीस्यात रूपमापकं वा दद्यात्। हत्वा जलचरमुपवसेत्। अ स्थिमताञ्च सत्वानां सहस्रस्य प्रमापण । पूर्णे चान-स्यनस्थान्तु भूद्रहत्याव्रतन्त्ररेत् ॥ किन्त्रिदेव तु विभा य द्द्यादस्थिमतों वधे। अनस्थ्रां चैव हिंसायां प्राणा-यामेण अध्यति॥ फलदानान्तु रक्षाणां छेदने जप्यमृ क्शतम्। गुलगवहीलनामाञ्च पुष्पितानाञ्च वीरुधाम् ॥ अन्नजानान्त्र सत्वानां रसजानान्त्र सर्वशः। फलपु ष्पोद्रवानाञ्च ध्तपाशो विशोधनम् ॥ रूपजानाम्।ष धीनां जातानाञ्च स्वयं वने। यथालम्भे तु गच्छेद्रां दिन मंकं पयोवनम्।। ।। इति वैष्णाचे धर्माशास्त्रे पन्ना शत्तमोऽध्यायः॥ क्तरापः सर्वकर्मवर्जितः कणान् वर्षमश्रीयात्। महाना मद्यानां चान्यत्मस्य प्राप्ताने चान्द्रायणं कुर्योत्। ल्श नपलाण्ड् गुञ्जनेतद्भिविद्वराह्याम्यकुकुट्वानर्गो-मांसभक्षणे च । सर्वेष्वेतेषु दिजानां प्रायिशतान्ते भ यः संस्कारं कुर्यात् । वपनम्स्वलादण्डभीक्यचय्यावता नि पुनः संस्कारकमीणि वर्जनीयानि । शशकशाहकगी

धारवज्ञकूर्मवर्ज् पञ्चनस्वमांसाशने सप्तरात्रमुपवसेन्। गणगणिकास्तेनगायनानानि भुत्का सप्तरात्रे पयसा वर्तत । तूसकान्नं चर्मकत्त्रिय । वार्डुषिककृदर्य्यूदी-क्षितबद्धनिगडाभिश्स्त्षण्डानाञ्च । पुंश्वलीदाम्भिक चिकित्सकलुब्धककूरोयोच्छिएभोजिनाञ्च। अचीरा-स्त्रीसन्वर्णकारसपेल्पितनानाञ्च । पिश्वनानृतवादि सत्धमित्मरसविकयिणाञ्च। दीलूषतन्तुवायकतम्रर-जकानाञ्च। कर्मकार्निषाद्रदुन्वतारिवृणशस्यविक यिणाळा। भवजी विभोणिडकते िक चेल निण्जिका नाळा। रजस्वलासहोपपतिवेशमनाञ्च। भूणघावेक्षितमुद्या संस्पृष्टं पनिवाणावलीढं श्वना संस्पृष्टं गवाघातव्य । का मृतो यदा संस्पृष्टमवस्तुतम्। मत्तेकुदात्राणाञ्च। ना बितं र्यामांसं च। पाँठी नरोहितराँ जीव सिंहतुण्डशकुरु वर्जी सर्वमत्स्यमांसात्राने त्रिरात्र मुपवसेत्। सर्वजलज मांसाधानेषु च। आपः क्रराभाण्डस्थाः पीत्वा सप्तरात्रं शङ्खपुष्पाँ भृतम्पयः पिबेत्। मद्यभाण्डस्थाश्च पञ्चरा वम्। सोमपः करापस्याघ्रोयास्यगन्धपुद्कमग्नस्थिर घ्मेषणं जस्वा घृत्पाशानो भवेत् । खरीषुकाकमांसाश् ने चान्द्रायणं कुर्यात् । प्राश्याज्ञातं शुनास्यं शुष्कमां सञ्च। कव्यादमृगपाक्षिमां साशने तप्तकुच्छुम्। कलवि इ. ध्रवचक्रवाक इसरज्जुदालसारसदात्य ह प्रकेसारिका बक्बलाकाकोकिलखञ्जरीटाशाने तिरात्रमुपवसेत्। एक शफोस्यदन्ताशने च। तितिरिकापिज्जललावकवर्तिकाम यूरवर्जी सर्वपिक्षमांसाशने चाहीरात्रम् । कीटाशने दिन मैकं ब्रह्मसुवर्चेडां पिवेत् । शुनां मांसाशने च । च्छत्राक

करकाशने सान्तपन्म्। यवगोधूमपयोविकाएं स्नेहाकं शक्तं खाण्डवञ्च वर्जियेला पर्य्युषिनं तृत्याश्योपवसेत्। वश्वनामेध्यपभवाँ हो हितांश्व रुस्नियोसान् । शालूक-र्थारुसरसंयावपायसापूपपाकुरीदेवानानि हविषि च। गोऽ नामहिषीचर्ज्ज सर्वपयां सिंच। अनिर्दशाहानि ना-न्यपि। स्यन्दिनी सन्धिनी विवत्साक्षीरञ्च। अमेध्यभुज श्च। द्धिवर्क्ने केवलानि च शुक्तानि । ब्रह्मचय्योश्यमी शा इभोजने विरावमुपवसेत् दिनमेकं चोदके वसेत्। मधु मांसाशने पाजापत्यम्। बिडालकाकनकुलाख् छिएभूस णे ब्रह्मस्वचितां पिवेत्। स्वोच्छिषाशने दिनमेकमुपो-षितः पञ्चगच्यं पिबेत्। पञ्चनस्वविण्मूत्राशने सप्तराभ-म्। आमश्रादाशने विरानं प्यसा वतित्। ब्राह्मणः श्र द्रोच्छिषाराने सप्तरात्रम् । वैश्योच्छिषाराने पञ्चरात्रम्। राजन्योच्छिषाशने त्रिरात्रम् । ब्राह्मणोच्छिषाशने त्रु-काहम् । राजन्यः शूरद्रोन्छिष्ण्शी पञ्चरात्रम् । वैश्योन्छि ष्टाशी निरानम् । वैषयः श्रदोच्छिष्टाशी च । चाण्डाला नं फत्का विरावसुप्वसेन्। सिद्धं फत्का प्राकः। अ संस्कृतान् पशूनमन्त्रेनिद्याद्दिशः कथञ्चन । मन्त्रेस्त् संस्कृ नानद्याच्छा १वतं विधिमास्थितः ॥ यावन्ति पशुरीमाणि तावत् रुत्वेह मारणम् । वृथा पश्तमः मामोति मेत्यचे ह च निष्कृतिम् ॥ यज्ञार्थं पृशवः सृषाः स्वयम्व स्वय म्फ्रा । यज्ञोहि भूत्ये सर्वस्य तस्माद्यज्ञे वधोऽवधः ॥ न त्राहशं भवत्येनो मृगं हन्तुर्धनार्थिनः । याहशं भ-वति मेत्य राथामांसानि खादतः ॥ औषध्यः पशाबी र-सास्तिर्यञ्चः पक्षिणस्तथा । यज्ञार्थे निधनं माप्ताः माप्तु-

एकपञ्चाभान्तमोऽध्यायः। वन्युसितीः पुनः ॥ मधुपर्के च यज्ञे च पितृदेवतकर्मा-णि। अनेव पशवो हिंस्या नान्यत्रेति कथन्त्रन ॥ यज्ञार्थे षु पद्मन् हिंसन् वेदतत्त्वार्थविद्द्विजः। आत्मानञ्च प-भूभीव गमयत्त्युत्तमां गतिम् ॥ गृहे गुरावरण्ये वा नि वसन्तात्मवान् द्विजः। नावेदविहितां हिंसामापद्यपि स मानरेत्।। या वेदंविहिता हिंसा नियतासिंश्वराचरे अहिंसामेच तां विद्याद्देशन्द्रम्मी हि निर्वभी ॥ योऽहिंस कानि भूतानि हिनस्यातम् सुरवेच्छया । स जीवंश्व मृत णिनां न निकीषीत । स सर्वस्य हितयेप्सः स्रेखमत्यन्त मश्चते ॥ यद्यायति यक्करते रतिंबभाति यत्र च । तद्वा मोति यहोन यो हिनस्ति न किञ्चन ॥ नाहत्वा पाणिनां हिंसां मांसमुत्रद्यते कवित्। नच माणिबधः स्वर्य स्तस्मा न्मांसं विवर्जयेत् ॥ समुत्पतिन्त्र मांसस्य वधवन्धी च देहि नाम्। यसमीक्यं निवर्तित सर्चमांसस्य भक्षणात्॥ भस्यति यो मांसं विधि हिला पिशाचवत्। स होके पि यतां याति व्याधिभिश्व न पीड्यते ॥ अनुमन्ता विधा-सिता निहन्ता ऋयविकयी। संस्कृती चोपहृत्ती च खाद क्रिकेति घातकाः ॥ स्वमांसं पर्मासेन् यो क्रियनुमिच्छ ति। अन्पर्यस्य पितृन् देशांस्ततो । नास्त्यपुण्यकृत्।। वर्षे वर्षे १ १ वर्षे १ वर्षे १ १ वर्षे १ १ वर्षे १ वर्षे १ १ वर्षे सादेयसास्य पुण्यफलं समम्॥ फ्लम्लाशने दिन्ये मुन्य नानाञ्च भोजेंनेः। न तरफरमवाभोति यनमांसपरिवर्ज नान् ॥ मां स भक्षयिता इ मुत्र यस्य मांसमिहा स्यहम् । एतन्मांसस्य मांसलं पवदिन मनीषिणः ॥

विष्णुस्मृती। 990 वैष्णवे धर्मिशास्त्रे एकपञ्चाशत्तमोऽध्यायः ॥ स्वष्णिस्तयक्रद्राज्ञे करमाचक्षाणा मुषलमपयेत्। य-धात्यागाद्दा भ्यतो भवति । महात्रतं द्दादशाब्दानि वा कुर्यात् । निक्षेपापद्दारी च । धान्यधनापहारी च कृच्छ्म ब्दम् । मनुष्यस्वीकूपक्षेत्रवापीनामपहरणे चान्द्रायणे-म्। द्रव्याणामत्यसाराणां सान्तपनम्। भस्यभोज्य पाः नशस्यासनपुष्पमूलफलानां पञ्चगव्यपानम्। तृणकाषद् मशब्कान्तगुडवस्त्रचम्मीभिषाणां त्रिरात्रमुपवसेत् । मणि युक्ताभवाल्ताम्बरजतायः कांस्यानां द्वादशाहं कणानश्री-यात्। कापीसकीरजोणधिपहरणे विरावं पयसा वर्ति। दिश्केकशफहरणे विरावमुपवसेत् । पिसग्न्धीषधिर-ज्जु वैदलानामपहरणे दिनमुपवसेत् ॥ दत्त्वैवाप्द्रतं द व्य धनिकस्याप्युपायतः। प्रायश्चितं ततः कुर्यात् क ल्मषस्यापनुत्तये ॥ यद्यत्परेभ्य आद्यान् पुरुषस्तु निर इकुशः। तेन तेन विहीनः स्याद्य यत्राभिजायते॥ जी वितं धर्मीकामी च धर्ने यस्मात् प्रतिष्ठिती । तस्मात् स-वैषयुत्नेन धनहिंसा विवर्जयेत्॥ प्राणिहिंसापरो यस्तु धनहिंसापरस्तथा । महादः खे मवामोति धनहिंसापर स्तयोः ॥ इति वैष्णवे धर्मिशास्त्रे द्विपञ्चाशत्तमोऽध्या 118311 अधागम्यागमने महाव्रतिधानेनाब्दं चीरवासा वने मा जापत्यं कुर्यात् । परंदार्गमने च । गोव्रतं गोगमने च । पुर्ययोनावाकाशे ४ प्यु दिवा गोयाने च सवासाः स्नानमा चरेत्। चाण्डाडीगयम् तत्साम्यमवासुयात्। अज्ञानत-श्वान्द्रायणह्यं कुर्यात्। पश्ववेश्यागमने भाजापत्यम्।

सरुद्धा स्त्री यत् पुरुषस्य परदारे नद्भतं कुर्यात्॥ य करोत्येकरात्रेण वृष्ठीसेचनाद्द्भिः। नद्भस्यफ्रग् ज पन्नित्यं निभिवविर्ध्यपोहति॥ ॥ इति वेष्णवे धर्मा शास्त्रे निपञ्जाशत्त्रगोऽ ध्यायः॥

शास्त्रे त्रिपञ्जाशत्तमोऽ ध्यायः ॥ यः पापात्मा येन सह संयुज्यते स तस्येव पायिन्तं कुर्यात्। मृतपञ्चनरगात् कृपादत्यन्तोपहताचोदकं पी त्वा ब्राह्मणाश्चिरात्रमुपवसूत् । झहं राजन्यः । एकाहं वैश्यः। श्रुद्रो नक्तम्। सर्वे नान्ते व्रतस्य पञ्चग्र्यं पिबे युः ॥ पन्नगच्यं पिवेच्छ्द्रो ब्राह्मणस्तु सरां पिवेत् । उभी ती नरकं याती महारीरवसंज्ञित्म् । पर्वानारीग्य वर्जमृतावगच्छन् पत्नीं त्रिरात्रमुपवसेत् । कूटसाुसी ब्र सहत्यावतञ्चरेत् । अन्दकम्त्रपुरीषकरेणे सचैलस्ता ने महाव्याहति ही मश्च । स्योभ्युदितनिम्मुक्तः सर्वे अस्तातः साविव्यष्टशतमाव्त्रीयेत् । श्वश्रुगाठविड्वर् इखरवानरवायसपुंश्वलीभिर्दशः स्वन्तीमासाद्ये षो उश प्राणायामान् कृष्यति । वेद्युन्युत्सादी विषवण-स्नाय्यधः शायी सम्बत्स्रं सकृद्भैस्येण वर्नेत । समुक षीनते गुरोश्वाहीक निबन्धे तदा सेपणे च मासं पर्यसा वर्तत । नास्तिको नास्तिक यतिः कृतद्यः कृटच्यवहा विसि: परिवेत्ता या च परिविद्यते दाता याजकुम्बं चा न्द्रायणं क्रय्यति । प्राणिभूपुण्यछोमविकयी तसः च्यं कृष्यति । आद्रीषधिगन्धपुष्पफछमूलचम्मिवेत्रवेद ठतुषकपाठकेशभस्मास्थिगोरसपिण्याकतिछतेछविक ऋयी माजापत्यम्। श्लेष्मजतु मधूच्छिष्ट्रशाङ्ख अपुराकि-

सीसकृष्णलोहो दुम्बर खड्गेपात्र विक्यी चान्द्रायणं कुर्या त्। रक्तवस्त्ररङ्गरहागन्धगुडमधुरसोणां विकयी विराव मुप्बसेत्। मासलपणलासाक्षीरिविकयी चान्द्रायणं कु च्यति । तञ्च भूयश्चीपनयेत् । उप्रेण खरेण वा गत्वा नग्नः स्नाता सहवा भत्का माणायोमत्रयं कुय्यति॥ जिपत्वा त्रीणि सावित्याः सहस्राणि समाहितः । मासं गोषे पयः पीला मुच्यते इसस्प्रतियहात् ॥ अयाज्यया जनं छत्वा परेषामन्यकर्मा च। अभिचारमहीनञ्च वि भिः कुच्चेयपोहति ॥ येषां दिजानां सावित्री नानूच्येत यथाविधि । तांश्वारियतात्रीनं कच्छान् यथाविध्युपना पयेत् ॥ भायश्चितं चिकीर्षन्ति विकर्मीस्थास्तु ये हिजाः ब्राह्मण्याच परित्यकास्तेषामप्येतदादिशेत् ॥ यद्रहिते-नार्जधन्ति कर्मणाबाह्मणा धन्म्। तस्योत्सर्गण शुद्ध नि जप्येन तपसा तथा ॥ वेदोदितानां नित्यानां कर्मी-णां समितिकमे। स्नातक व्रत छोपे च पायश्चित्तम भोजन म् ॥ अवगूर्य्य चरेत् कृच्छ्मितिकृच्छं निपातने । कृच्छा तिकृद्धं कुद्धीत विपस्योत्याद्य शोणितम्। एनसिशिरे निणिक्तैनिधि किन्नित् समाचरेत्। इतनिणीजनाश्चेताल जुगुप्सेत धर्मावत्। बालघांश्व कत्रघांश्व विशुद्धानिष धम्मितः । शरणागतहन्तृश्च स्त्रीहन्तृश्च न संबसेत् ॥ अशीतिर्यस्य वर्षाणि बालो वाप्यूनषाडशः । प्रायश्चिता इंमहिन सियो रोगिण एव च्। अनुक्ति कृतीनाञ्च पापानामपनुत्तये। शक्तित्रावेस्य पापत्र पायितं मकल्पयेत्।। ॥ इति वैष्णचे धर्माशास्त्रे चतुःप ञ्जाशत्तमोऽध्यायः॥

अय रहस्यप्रायश्चितानि भवन्ति । स्ववन्तीमासाद्य स्ना तः मत्यहं षोडश प्राणायामान् कृत्वेककालं हविष्याशी - मासेन पूरोब्रह्महा भूव्ति। कम्मणोऽन्ते पयस्विनीं गां द्द्यात् । व्रतेनाघमर्पणेन च स्तरापः पूतो भवति । गा-यत्रीदशसाहस्रजपेन स्तवर्णस्तयक्रत् विरात्रीपोषितः पु रुषस्क्रजपहोमाभ्यां गुरुतत्यगः॥ यथाश्वमधः ऋतु
ग्रह सर्वपापापनोदनः । तथाधमर्षणं स्क्रं सर्वपापापनोदनम् ॥ शाणायामं हिजः कृष्यात् सर्वपापापनुत्तये ।
दस्यन्ते सर्वपापानि शाणायामेहिजस्य तु ॥ सच्याहतिं
समणवां गायत्रीं शिरसा सह । बिः पठेदायतशाणः शा णायामः सरस्यते ॥ अकारत्राप्युकारत्र मकारत्र प-जापतिः । वेदनयान्निरदुहद्रभूभं वः स्वरितीति च ॥ नि भ्यपुर च वेदेभ्यः पादं पादमद्दुहत् । तदित्यूचोऽस्याः सावित्राः परमेषी प्रजापतिः ॥ एतदक्षरमेताञ्च जपन् साहितप्रविकाम् । सन्ध्ययोवीद्विद्वा वेदपुण्येन युज्य ते ॥ सहस्रहत्वस्त्वभयस्य बहिरेतिचिकं दिजः । महतोऽ प्येन्सो मासान्वचेवाहिविमुच्यते ॥ एतयाऽपरिस्युका काले व कियया स्वया। विश्वस्विय विङ्जातिर्गहीण या ति साधुषु ॥ ओङ्कारपूर्विकास्तिस्रो महोच्याहतयोऽच्य याः। त्रिपदा चैव गायत्री विज्ञेयं ब्रह्मणोमुरवम् ॥ यो अधितेऽ हन्यहन्येतां त्रीणि वषाण्यतन्द्रितः । स ब्रह्म प रमभ्येति वायुभूतः खम्तिमान् ॥ एकाक्षरं परं ब्रह्म मा णायामः परन्तपः। सावित्र्यास्तु परं नास्ति मीनात् सद्यं विशिष्यते ॥ क्षरिन सर्वविदिक्या जुहोति यजति कियाः। अक्षरं तक्षरं त्रेयं ब्रह्मा चेव प्रजापतिः॥ विधियज्ञाज्जप

विष्णुस्मृती । 998 यज्ञों विशिष्टो दशिभिगुणिः । उपांकः स्याच्छन्गुणः सह स्रो मानसः स्मृतः ॥ ये पाकयज्ञाश्चलारो विधियज्ञसमे निवृताः । सर्वे ते जपयज्ञस्य कलां नाईन्ति षोडशीम् ॥ज प्येनेवतु संसिन्धे द्वाह्मणो नात्र संशयः । कृष्यीदन्यन-वा कुर्यान्मेत्रो ब्राह्मण्उच्यते॥ ॥इति वैष्णवे धर्म शास्त्रे पञ्चप्त्राशन्तेमोऽध्यायः ॥ अधातः सर्ववेदपवित्राणि भवनि । येषां जपेश्व होमैश्व दिजातयः पापेभ्यः प्रयन्ते । अधमर्षणं देवकृतं युद्धवराः तरत्सम्मदीयं कुष्मोण्डयः पावमान्यः दुर्गासावित्री अ नीषङ्गाः पदस्तोमाः सामानि ब्याहृतयः भारुण्डानि च न्द्रसामपुरुषव्रते भासं बार्ह्स्पत्यं गोसूक्तं अभवसूक्तं सा मनीचन्द्रस्के च शतरुद्रियं अथविशिरः विस्तपणीं महा न्तरञ्ज अग्निव्रतं वामदेच्यं बहच । एतानि गीतानि पुन नि, जन्तून, जातिसारतं उभते य इच्छेत्।। ष्णावे धम्मेशास्त्रे षद्पञ्चाशत्त्रमोऽध्यायः॥ अध त्याज्याः । बात्याः पतिनास्त्रिपुरुषं मानृनः पितृतश्रा भरुदाः सर्वएवाभोज्यास्वाप्रतियाद्याः । अपतियाहीभ्य श्च प्रतियहपसङ्गं वर्जयेत् । प्रतियहेण ब्राह्मणानां ब्रा हां तेजः प्रणाश्यित् । द्रव्याणा बाडिब्याय प्रतियहविधिं यः पतियहं कुर्यात् स दात्रा सह निम्जाति । पतियहस मर्थभ्य यः मतियहं वर्जयेत् सदातृ होकमामोति। एधा द्रम्लफलामयामिषमधुशय्यासनगृहपुष्पद्धिशाकां-श्वाप्युद्यतान्न निर्णुदेत ॥ आह्याप्युद्यताभिक्षां पु रस्तादनुचोदिहाम्। याद्यां प्रजापितिमेने अपि दुष्कृतक

म्मणः ॥ नाभन्ति पितरस्तस्य दशवषाणि पञ्च च । नच ह्यां वहत्यग्नियस्तामभ्यचमन्यते ॥ गुरून् भृत्यान् जि होर्षुरिक्चिष्यन् पितृदेवताः । सर्वतः मितगृहीयान्तन् तृ प्येत् स्वयं ततः ॥ एतेष्विप च कार्य्येषु समर्थस्तत्मित्य हे । नादद्यात् कुठटाषण्डपतितेभ्यस्तथा हिषः ॥ गुरु षुत्वभ्यतीतेषु विना वा तेगृहे वसन् । आत्मनोद्यतिम-न्विन्छन् गृहीयात् साधुतः सदा ॥ अदिकः कुठिमित्र ज्व दासगोपाठनापिताः । एते श्रदेषु भोज्यान्ना यश्या त्मानं निवेदयत् ॥ ॥ इति विष्णवे धर्माशास्त्रे सप्त पञ्चाशत्तमोऽ ध्यायः ॥

अश्रास्तिमाउ व्यापः ॥
अथ गृहात्रिमिणास्त्रिविधोऽथी भवति । शुल्कः शबलोऽ
सितत्र्वार्थः । शुल्केनार्थेन यदेहिकं करोति तद्वमासाद
यति । यच्छबलेन तन्मानुष्यम् । यत्हृष्णोन तिर्द्यिकः
म् । स्ववृत्युपानितं संव्ये सर्व्येषां शुल्कम् । अनन्तरवृत्युपान्तं शबलम् । अन्तरितवृत्युपान्तं कृष्णाम् । क्रमा
गतं प्रीतिदायं पाप्तज्ञ सह भार्यया । अविशेषण स
वैषां धनं शुल्कं प्रकार्तितम् ॥ उत्कोचशुल्कसंप्राप्तमवि
केयस्य विकये । कृतोपकारादाप्तज्ञ शबलं समुदाहत
म् ॥ पात्रिकच्तचोय्याप्तं प्रतिस्तपकसाहसी । व्यानेनोपानितं यच तत्कृष्णं समुदाहतम् ॥ यथाविधेन द्वयेण
यक्तिज्ञित् कुरुतं नरः । तथाविधमवाभोति स फलं पेत्य
चेह च ॥ ॥ इति वैष्णवे धम्मिशास्त्रे अष्टपञ्चाशन
मोऽध्यायः ॥

गृहाश्रमी वैवाहिकामी पाकयज्ञान् कुर्यात्। सायं पा तश्रामिहात्रम्। देवताभ्यो जुहुयात्। चन्द्राकेसन्तिकर्ष

विष्णुसमृती। 99E विमकषियो द्रिश्पिमासाभ्यां यजेत्। मत्य्यन् पश्ना । शरद्यीष्मयोश्वायहायणेन । ब्रीहियवयोगी पाके। बै वार्षिका प्यधिकान्नः घत्यव्दं सोमेन । वित्ताभावे इस्रा वे श्वानच्यी । शरद्रान्नं यागे परिहरेन् । यज्ञार्थे भिक्षित-मवासमर्थ सकलमेव वितरेत्। सायं प्रातवेशवदेवं जुह यात्। भिक्षां च्रिक्षवे दद्यात्। अर्चित्भिक्षादानेन गोदानफलम्बामोति। भिस्वभावे तन्मात्रं ग्वां द्घात्। बह्नी वा प्रक्षिपेत्। फ्रांच्यां विद्यमाने न भिक्षुके मत्याचसीत। कण्डनी पेषणी चूही कुम्भूउपस्कर्इति प ऋस्ना गृहस्थस्य। तन्निष्कत्य यञ्च ब्रह्मद्वप्रतृत्पितृनर युनान् कुर्यात्। स्वाध्यायो ब्रह्मयज्ञः। होमो दैवः। विरि भीतिः। पितृतर्पणं पित्र्यः। नृयज्ञश्वातिथिपूजन्म्।देव-तानिथिभृत्यानां पितृणामात्मनस्तथा। न् निर्वपृति पृत्रा ना मुच्छुसन्न स जीवति ॥ ब्रह्मचारी यति भिक्क जीवन्येते गृहाश्रमात्। तस्माद्भ्यागतानेतान् गृहस्थो नावमान्ये त्।। गृहस्यएव यज्ते गृहस्थस्तप्यते तपः। ददाति व गृहस्थस्तु तस्माज्येषो गृहाश्रमी ॥ अरुपयः पितरो दे वा भूतान्यतिथयस्तथा । आशासते कुटुम्बिभ्यस्तस्मा-च्छेषो गृहाश्रमी ॥ त्रिवर्गसेवां सततान्तदानं स्तराचीनं ब्राह्मणपूजनञ्ज । स्वाध्यायसेवां पितृतपणञ्ज कृता गृही शक्रपद् मयाति॥ ॥ इति वैष्णवे धम्मिशास्त्रे एकान षषितमोऽध्यायः॥ बाह्मे महूर्ते उत्थाय मूत्रपुरीषोत्सर्गे कुर्यात् । दक्षिणापि मुखो रात्री दिवा चोदङनुखः सन्ध्ययाश्च । नापच्छादिता यां भूमो । न फालकृषायाम् । न च्छायायाम् । नचोषरे । नशाहरे। नससते। नगती। नवल्मीके। नपि। न रथ्यायाम्। नपराक्षत्वे। नोद्याने। नोद्यानोदकसमीप योः। नाइनरे। नभस्मिनि। नगोमये। नगोप्रजे। नाका भो। नोदके। नपत्यिनिछानछेन्द्रकिस्त्रीगुरुष्राह्मणानास्त्रः नैवावगुण्डितिशराः। छोष्टेष्ठकाभिः परिमृज्य गुदं गृहीः तिशिक्षस्रोत्यायादिमृदिश्लोन्द्रताभिगन्धलपह्मयकरं भी चं कुर्यात्॥ एका छिद्गे गुदे तिस्तस्त्रयेकत्र करेदश। उभयोः सप्त दात्या मृदस्तिस्तस्तु पादयोः॥ एतन्छीचं गृहस्थानां दिगुणं ब्रह्मचारिणाम्। त्रिगुणन्त्र वनस्थानां यतीनान्त्र चतुर्गुणम्॥ ॥ इति वैष्णावे धर्माशास्त्रे षितमोऽध्यायः॥

भारतमार व्यायः ॥
अय पालाशं दन्तधावनं नाद्यात् । नैव श्लेष्मातकारिष्ठिव
भीतकधववधन्वनजम् । नच बन्धूकनिर्गुण्डीशिमुतिल्य
तिन्दुकजम् । नच कोविदारशमीपीलुपिप्पलेङ्ग्युद्गुग्यु
लुजम् । न पारिभद्रकाम्लिकामोचकशाल्मलीशणजम् ।
न मधुरम् । नाम्लम् । नोर्द्रशुष्कम् । नस श्रिशिस् । न पु
तिगान्ध । न पिन्छिलम् । न दक्षिणापराभिमुखः । अ
द्याचोदङ्गुखः माङ्गुखावा । वटासनार्करवदिरकरञ्जव
दरसञ्जीनम्बारिमेदापामार्गमालतीककुभिबल्यानामन्य
तमम् । कषायं तिकं कदुकञ्च ॥ कनीन्ययसमस्थीलयं सक्चं द्यादशाङ्गुलम् । मातभूत्वा च यतवाक् भ
स्यदेन्तधावनम् ॥ मसाल्य फरका तज्जह्यान्छुनो देशो
मयल्यः । अमावास्यां ननाभीयादन्तकाषुं कदान्न ॥
॥ इति वैष्णवे धम्मिशास्त्रे एकषष्टितमोऽध्यायः॥

अथ हिजातीनां कनीनिकामूले प्राजापत्यं नाम तीथी

विष्णुसमृती।

995

म्। अङ्गुष्ठम् हे ब्राह्मम्। अङ्गुल्यचे देवम्। तर्ज्ञीमूले पित्र्यम्। अनग्न्युष्णाभिरफेनिलाभिनित्र्यदेककरा
वर्जिताभिरक्षराभिरद्भिः शत्नो देशे स्वासीनोऽन्तर्जानुः
पाङ्गुरवन्त्रोदङ्गुरवोवा तन्मनाः स्कमनान्त्राचामेत्। ब्रा
होण तीर्थन विराचामेत्। दिः प्रमृज्यात्। खान्यद्रिम्दिनि
हृदयं स्पृशेत्। हृत्कण्ठतालुगाभिन्तु यथासंख्यं दिजात
यः। शुन्होरन् स्वी च श्द्रश्य स्कृतस्पृष्टाभिरन्ततः॥
॥इति वैष्णवे ध्रमिशास्त्रे दिष्ठितमोऽध्यायः॥

अथ योगूक्ष्मार्थम्। श्वरमुपगच्छेत् । नेकोऽध्वानं प प्दोत। नाधामिकैः साईम्। न रूपछैः। न दिषद्भः। ना तिप्रत्यूषित । नातिसायम् । न सन्ध्ययोः । न मध्याद्धे न सिनिहितपानीयम्। नातित्रणम्। न् रात्रो। न सन्तरं व्याल व्याधितानीर्याहनेः । न होनाङ्गः न रोगितिः। न दीनै:। न गोभि:। नादानी:। यवस्रोदकेवहिनानामद्-त्वात्मनः क्षुत्वणापनोदने न कुर्यात्। न चेतुष्यभमध तिषेत्। न रात्री वक्षमूलम्। न पर्न्यालयं न तृणम्। न पश्रनांबन्धनागारम् । न केशनुषक्पालास्थिभस्माङ्गरा न्। न कापितास्थि। चतुष्पथं पॅदिशणीक्य्यित् देवत्।-ऋ प्रज्ञातांत्र्य वनस्पतीन्। अग्निब्राह्मणगणिका पूर्णक म्भादशन्छत्रधनपताकात्रीवृक्षवर्दमाननन्दावृत्तीश्चे ता उदन्तचामराभवग्जाजगोदधिक्षीर्मध्सिद्धार्थकांश्र वी णाचन्दनायुधार्द्रगोमयपुष्पशाकगोरीचनाद्व्यिप्रोहांश्र उष्णीषालुङ्कारमणिकनकरजतव्स्त्रासनयानीमिषांश्रे भू क्रारोन्हतो व्वरारज्जुबन्दपसुकुमारी मीनांश्च दृष्ट्या प्रायादिति अथ मनोन्मत्तव्यक्रान् दृष्ट्या निवर्तते । वान्तविकिमुण्ड

मिलन्यसनजिट्छवामनांश्र्य। कषायिप्रयजितमिलिनांश्र्य।
तेछगुडफ्कगोमयेन्धनतृणकुश्पलाश्रमस्माङ्गरांश्र्य।
लवणक्षीवासवनपुंसककार्पासरज्ज्ञानगडमुक्तकेशांश्र्य।
वीणाचन्दनार्द्रशाकोष्णीषालङ्करणकुमारीः प्रस्थानकाले
ऽभिनन्दयेदिति। देवबाह्मणगुरुवश्रुदीह्मितानां च्छायां
नाकामेत्। निष्नवान्तरुधिर्विण्मूत्रस्नानोदकानिवा।
न वत्सतन्त्रीं लङ्कयेत्। प्रवर्षति न धावन्। न वथा नदीं
तरेत्। न देवताभ्यः पितृभ्यश्रोदकामं प्रदाय। न बाहुभ्याम्। न भिन्नया नावा। न कच्छमिधितिष्ठेत। न क् पमवलोकयेत् न लङ्कयेत्॥ च्ह्यारिनृपस्नातस्त्रीरोगि वरचिकणाम्। पन्था देयो नृपस्त्वेषां मान्यः स्नातश्र्य भू पतेः॥ ॥ इति वेषणवे धर्माशास्त्रे श्रिष्ठितमोऽध्यायः॥

परिनेपानेषु न स्नानमाचरेन्। आचरेन् पञ्चिपण्डानुद्द्र त्यापिद् । नाजीणे । नचातुरः । न नग्नः । न रात्री राहु दर्शनवर्जम् । न सन्ध्ययोः । प्रातः स्नाय्यरुण किरणय-स्तां पाचीमवलोक्य स्नायात् । स्नातः शिरो नावधुनेन्। नाङ्गेभ्यस्तोयसुद्धरेन् । न नैलवस्तु स्पृशेत् । नाप्रक्षा लितं पूर्वधृतं वसनं बिभृयात् । स्नातः सोष्णीषो धो तवाससी बिभृयात् । न म्लेंच्छान्त्यजपिततेः सह सम्भाषणं कुर्यात् । स्नायात् प्रस्रवणदेवस्वातसरोवरेषु । उ हताद्भिष्ठसुदकं पुण्यं स्थावरात् प्रस्रवणं तस्मान्नादेयं नस्मादिष साधुपरिगृहीतं सर्वत् एव गाङ्गम्। मृत्तोयैः - रुत्तमलापकषीऽप्कः निमज्यापोहिष्ठति तिस्विभिहिरण्य वर्णोद्दिन्तस्विभिरिदमापः प्रयहतद्दि चतुर्थमिनमन्त्र

विष्णुस्मृती। 920 येत्। ततो ५ एक निमग्न स्विरंघमर्षणं जपेत्। तिहिष्णोः परमं पदमिति वा। द्वपदां सावित्रीं वा। युञ्जते मनइत्य नुगकं गा। पुरुषसूक्तं गा। स्नातन्त्राद्वेंगसा देवपितृतपे-णमभास्य एव कुर्यात् । परिवर्तितवासाश्चेतीर्थमुत्ती-य्ये। अरुत्वा देवपितृतपेण स्नानवस्तादि न पीडयेत्। सात्वाचम्य विधिवदुपस्पृशेत्। पुरुषसूक्तेन मत्यृचं पुरु षाय पुष्पाणि दद्यान् । उदकाञ्ज्ञितिं पश्चान् । आद्योव दिय्येन तीर्थेन देव्तानां कुर्यात् । तदनन्तरं पित्र्येण पितृणाम् । तत्रादी स्ववंश्यानां तर्पणं कुर्यात् । ततः सम्बन्धिबान्धवानाम्। ततः सहदाम्। एवं नित्यस्ना-यी स्यात्। स्नातश्च पवित्राणि यथाशक्ति जपेत्। वि-शेषतः सावित्रीं त्वचश्यं जपेत् पुरुषसूक्तञ्च । नैताभ्या मधिकमिता। स्नातोऽधिकारी भवति देवे पित्री च क म्मीण । पवित्राणां तथा जप्ये दाने च विधिनोदिते ॥ अ लक्ष्मीः कालकणीं च दः स्वमं दुविचिन्तितम्। स्नातस्यज लमानेण नश्यते इतिधारणा॥ याम्यं हि यात्नादः संनित्यस्मायी न पश्यति। नित्यस्मानेन प्रयन्ते येऽपि पाप-कृतो नराः ॥ ॥ इति बैष्णाचे धर्म्मशास्त्रे चतुःषष्टित मोऽध्यायः॥ अधातः सुस्नातः मक्षािितपाणिपादः स्वाचान्तो देवता सीयां स्थले वा भगवन्तमनादिनिधनं वास्तदेवमभयचिये त्। अधिनैः प्राणेस्त्वेते इति कीचकीयमन्त्रेणाष्ट्य जी-वस्य भगवतो जीवादानं दत्वा युञ्जते मनइत्यनुवाकेनावा

इनं कुला जानुष्यां पाणिष्यां शिरसा च नमस्कारं कृष्यित्। आपोहिष्ठेति तिस्भिरध्यं निवेदयेत्। हिरण्यवणोइति चतस्भिः पाद्यम्। शन्न आपो धन्वन्या इत्याचमनीयम्। इ दमापः प्रवहत इति स्नानीयम्। रथे स्वक्षेषु च्यभराजा इ-त्यनुरुपना लङ्गारी। युवा स्नवासा इति वासः। पुष्पवनी रितिपुष्पम्। धूरसि धूपमितिधूपम्। तेजोऽसि क्षिक्रमिति दीपम्। दिधिकाच्या इतिमधुपर्कः। हिरण्यगर्भ इत्यष्टा भिनीवद्यम्। चामरं व्यजनं मात्रां छत्रं पानासने तथा। सावित्रेणेव तत् सर्व्य देवाय विनिवेदयेत्॥ एवमभ्यव्य च जपेत् सूक्तं व पोरुषं ततः। तेनेव जुहुयादाज्यं य इ-च्छेत्शान्वतं पदम्॥ ॥ इति वेष्णवे धर्माशास्त्रे पत्रपितमोऽध्यायः॥

न नक्तं गृहीतेनोद्येन देवपितृकमी कृष्यति । चन्दनमृग-मदागुरुकप्रेकुङ्कुमजातीफलवर्जमनुलेपनं न दद्यात् । न वासो नीलीरक्तम् । न मणिस्तवर्णयोः मतिस्त्पमलङ्ग् रणम् । नागन्धि । नोयगन्धि । न कण्टिकिजम् । कण्टिकि जमपि क्षकुं सीगन्धिकं दद्यात् । रक्तमपि कुङ्कुमं जलज्ञ इत्र द्यात् । न धूपार्थजीवजातम् । न घततेलं विना कि-इत्र दिपार्थे । नामस्यं नेवेद्यार्थ । न प्रस्ये अप्यजाम हिषीस्तिरे । पञ्चनस्य मत्स्य वराहमांसानि च । प्रयतश्व श्विभूत्वा सर्व्यमेव निवेद्येत् । तन्मनाः समना भूत्वा त्वराकोधविवितिः ॥ ॥ इति वैष्णवे धर्माशास्त्रे षट् षष्टितमोऽध्यायः ॥

अथानि परिसम्हा पर्युक्ष्य परिस्तीर्घ्य परिषिच्य सर्व-तः पाकादयमुद्धत्य जुहुयात् । वास्तदेवाय सङ्घिणाय मधुन्नायानिरुद्धाय पुरुषाय सत्यायाच्युताय वास्तदेवा-य। अथाग्नये सोमाय मित्राय वरुणाय इन्द्रायेन्द्रानि

विष्णुस्मृती। 922 भयां विश्वेषयो देवेषयः प्रजापतये अनुमन्ये धन्वन्तरये-वास्तोष्पतये अग्नये स्विष्टिकृतेच। ततोऽन्नशेषेण बिस् पहरेत्। भक्ष्योपभक्ष्याभ्याम्भितः पूर्वणाग्नेः। अवा-नामासीति खलानामासीति नितन्तीनोमासीति क्षिपणि कानामासीति सव्यसाम्। नन्दिनि सभगे समद्रि भ द्रकालीतिस्वस्थिष्वभिषदंक्षिणाम् । स्थूणायां भ्रवायां श्रि ये। हिरण्यकेश्ये वनस्पतिभ्यः । धम्मोधर्मायोद्दीरे मृत्य वे च। उदपाने वरुणाय। विष्णव इत्युलूरवरे। मरुखंइ ति द्वादि । उपरिशारणे वैश्ववणाय राँझे भूतेभ्यश्च । इ न्द्रायेन्द्रपुरुषेभय इति पूर्वान्दे। यमाय यमपुरुषेभय इतिद क्षिणार्दे। व्रुणाय वरुणपुरुषेभ्य इतिपश्चार्दे। सोमा य सोमपुरुषेभ्य इत्युत्तराई । ब्रह्मणे ब्रह्मपुरुषेभ्य इति मध्ये। ऊर्द्वमाकाशाय। दिवाचरेश्यो भूतेभ्य इतिस्थू-ण्डिले। नक्तञ्चरेभ्य इतिनक्तम् । ततो दक्षिणायेषु दभी षु पिने पितामहाय पपितामहाय माने पितामही पपि-तामही स्वनामगोत्राभ्याञ्च पिण्डनिर्चपणं कुर्यात्। पि ण्डानाञ्चानुलेपनपुष्पधूपनेवेद्यादि दद्यात्। उद्ककलेशमु पनिधाय स्वस्त्ययनं वाचयेत्। श्वकाकश्वप्चानां भवि निर्विपेत्। भिक्षाञ्च द्द्यात्। अतिथिपूजनं च परं फल-म्धितिष्ठेत्। सायमतिथि पाप्तं पयलेनाचियेत्। अना-शित्मतिथिं गृहेन बासयेत्। यथा वर्णानां बाह्मणः म भर्यथा स्वीणों भर्ता तथा गृहस्थस्यातिथिः। नत्पूजा यां स्वर्गमामीति ॥ अतिथिर्यस्य भग्नाशो गृहात् मिति निवर्तते । तस्मान् सुकृतमादाय दुष्कृतन्तु पर्यच्छति ॥ एकरात्रं हि निवसन्नितिथिब्रिह्मणः स्मृतः। अनित्या हि

स्थितिर्यस्मात्तस्मादतिथिरुच्यते ॥ नैकयामीणम्तिथिं -विष् साङ्गतिकं तथा। उपस्थितं गृहे विद्याद्रार्थ्या यत्रा ग्नयोऽपिवा ॥ यदि त्वनिधिधर्मेण क्षेत्रियो गृहमागतः । भुक्तवत्सु च विषेषु कामं तमिष्ण्ययेत् ॥ वैश्यश्रद्राचिष्
पाप्ती कुदुम्बेऽतिथिधर्मिणी । भाजयेत् सह भृत्यस्तावा नृशंस्यं प्रयोजयन् ॥ इतराण्यपि स्रय्योदीन् संपीत्या गृ हमागतान् । परुतान्नं यथाशकि भोजयेत् सह भार्यया ॥ सवासिनी कुमारीक्र रोगिणीं गुर्विणीं तथा। अतिथि भ्योऽय एवेतान् भोज्येद्विचारयन् ॥ अद्त्वा यस्तु ए नेभ्यः पूर्वे फुड़क्ते अविचक्षणः। सं फञ्जानी न जाना ति श्रुग् भेजिषिमात्मनः ॥ भुक्तवत्क च विमेषु भृत्येषु स्येषु चैवं हि। भुञ्जीयातां ततः पश्चादवशिष्ट्नुं दम्पती ॥देवान् पितृन् मनुष्यांश्व भृत्यान् गृह्याश्व देवताः। पू जियत्वा तत्ः पेश्वाद्गृहस्यः शेषं फेग्भवेत् ॥ अघं स केवलं भाइन्के यः पचत्यात्मकारणात्। यूज्ञं शिष्टाशानं ह्येतत् सतामन्नं विधीयते ॥ स्वाध्यायेनाग्निहोत्रेण यज्ञे न तपसा तथा । नचामोनि गृही छोकान् यथा त्वतिथि पूजनात्॥ सायं मातस्वितथये मदद्यादासनोदकम्।अ ने श्रेष यथा शक्त्या सत्कृत्य विधि पूर्वक्रम् ॥ प्रतिश्रयं त था शय्यां पादाभ्यङ्गं सदीपक्रम्। प्रत्येकदानेनामोति गोपदानसम् फलम् ॥ ॥ इति वैष्णाचे धर्माशास्त्रे -गोपदानसम् फलम् ॥ सप्तषष्टितमोऽध्यायः॥ चन्द्राकीपरागे नाश्मीयात्। स्मात्वा मुक्तयोरश्मीयात्।अ मुक्तयोरस्तंगतयोर्देस्वा स्मात्वा चापरेऽक्कि। न गोब्राह्म-णोपरागेऽश्मीयात्। न राजव्यसने। प्रवसिताग्निहोबी य

. विष्णुसमृती। 428 दाग्निहोत्रं कृतं मन्येत तदाश्रीयात्। यदा कृतं मन्येत वे श्वदेवम्पि। पर्वणि च यदा रुतं मन्येत पर्व। नाश्मीयाचाजी णै। नार्दरात्रे। न मध्याह्ने। न सन्ध्ययोः। नार्द्रवासाः । नैकवासाः। न नग्नः। नजलस्थः। नोत्कृदुकः। न भिन्ना सनगतः। नच श्यनगतः। न भिन्नभाजने। नोत्सङ्गे। न भवि। न पाणी। उवण्य यत्र द्यात् नवाश्रीयांत्। न बालकान्तिर्भात्रियेत्। नेको मिष्टम्। नोद्धतस्तेहम्। न दिवा धानाः। न रात्री तिलसंयुक्तम्। न द्धिं सकून्। न कोविदार बटपिप्पलभाणभाकम्। नादला। नाइला। ना नाद्रेपादः । नानाद्रीक्रमुख्यां नीच्छिष्टश्च घतमादद्या त् न चन्द्रार्कतारका निरीक्षेत्। न मूर्द्धानं सृशेत्। न बहा कीर्तयेत्। पाङ्युखोऽश्रीयात् दक्षिणामुखो वा। अभिपू ज्यान्मम्। सुमनाः सुग्यसुछिप्तः। न निःशेषकत् स्यात्। अन्यत्र दिधिमधुसर्पिः पयः सक्तुप्रमोदकेभ्यः । नाश्नी-याद्रार्थ्या सार्द्ध नाकाशे न तथोस्थितः। बहुनां भेक्षमा णानां नैकस्मिन् बहबस्तथा ॥ श्रून्यागारे वह्निगृहे देवा-गारे कथञ्चन। पिबेन्नाञ्जिलिना तीयं नातिसीहित्यमाच रेत्॥ न तृतीयमथाश्रीयान्नचापथ्यं कथञ्चन । नातिम गे नातिसायं न सायं पातराशितः ॥ न भावदुष्मश्रीया-न भाण्डे भावद्षिते । शयानः भीढपादश्च हत्वा चैवाव ॥ इति वैष्णाचे धर्माभास्त्रे अष्टषष्टि सक्थिकाम्॥ तमोडध्यायः॥ नाष्ट्रमीचतुर्द्शीपञ्चदशीषु स्थियपुपेयात्। नश्चादं भुत्का नश्चादं दत्ता। नोपनिमन्तितः श्वादे। नस्ताता। न हु-त्वा। नव्नी। नोपोष्य फत्का वा। न दीक्षितः। नदेशय

त्नशमशान्य्रन्यालयेषु । न दक्षम्लेषु । न दिवा । न सन्ध्य योः। न महिनाम्। न महिनः। नाभ्यक्ताम्। नाभ्यक्तः। नरोगार्ताम्। न रोगार्तः। न हीनाङ्गीं नाधिकाङ्गीं तथैव च वयोधिकाम्। नोपेयादुर्विणीं नारीं दीर्घमायु-र्जिजीविषुः॥ ॥ इति वैष्णावे धर्म्मशास्त्रे एकोनस प्ततितमोऽध्यायः ॥ गुर्दुपादः स्वय्यात् । नोत्तरापरावाक् शिराः । न नम्नः । ना र्द्वंशे। नाकाशे। नपलाश शयने। न पञ्चदारुकते। न गजमान्हते। न विद्यद्यक्ते न भिन्ने। नामिन्युषे। न घटासिक्तद्रुमजे। न शमशानशून्यालयदेवतायतनेषु। न चपलम्ध्ये। न नारीम्ध्ये। न धान्यगोगुरुहुताश्नसु राणामुपरि। नोच्छिष्टो न दिवा स्वप्यात् सन्ध्ययोर्न-न भूस्मिन्। देशे नचाशुची नाद्रे न च पर्वतमस्तके॥ ॥ इति वैष्णावे धर्माशास्त्रे सप्ततितमो ६ ध्यायः ॥ अथ न कञ्चनाव्मन्येत् । न च हीनाङ्गाधिकाङ्गान्मूरवी-न् धनहीनानवहसेत् । न हीनान् सेवेत् । स्वाध्यायविशे धि कम्मीनाचरेत् । वयोऽनुह्नपं वेशां कुर्यात् श्रुतस्या-भिजनस्य धनस्य देशस्य च । नोद्धतः । नित्यं शास्त्राद्यवे सी स्यात्। सति विभवे न जीणमिलवहासाः स्यात्। न नास्तीत्यिभिभाषेत । न निर्गन्धोयगन्धिरक्त्त्र माल्ये वि-भ्यात्। विभ्याञ्चलजं रक्तमपि। यष्टिन्न वैष्णवीम्। कम ण्डलुका सोदकम्। कार्पासमुपवीतम्। रीक्म च कुण्डले । नादित्यमुद्यन्तमीक्षेत । नास्तं यान्तम् । न वाससा निरोहि तम्। नचाद्रभी जलमध्यगतम् । न मध्याद्गे । न कुद्धस्य यरोर्मुखम् । न नैहोद्कयोः स्वच्छायाम् । न महवत्याद्शे

विष्णुसमृती। १२६ न पत्नीं भोजनसमये। न स्थियं नग्नाम्। न कञ्चन मेह-मानम्। न चालानश्वषुञ्जरम्। न च विषमस्यो वृषादि युद्भः। न मत्तम्। ना मध्यमग्नी पक्षिपेत्। नास्कः। न विषम् । नाप्रचिप । नाग्निं छङ्घयेत् । ने पादी प्रताप-येत् । न कुशैस्तेषु वा परिमृज्यात् । न कांस्यभाजने चा-पयेत्। न पादं पादेन। न भुवमाछिखेत्। न छोष्टमहीं स्यात्। न तृणच्छेदी स्यात्। न दन्तेनिखछामानि च्छिन्धात् द्युतं वर्जयेत् बाह्यातपसेवाञ्च । वस्त्रीपानहमाल्योपवीता-न्येन्यधतानि न धारयेत्। नश्द्राय मृति दद्यात् नोच्छिष्ट हिविषी न तिलान्। न चास्योपदिशेद्धमं न बतम्। न संह नाभ्यां पाणिभ्यां शिरउदरञ्च कण्ड्येत् । न देधिसुमन् सी पत्याच्क्षीत । नात्मनः सजम्पकष्येत् । सुप्तं न प्रबो धयेत्। नोद्ययामिभाषेत न म्हेच्छान्यजान्। अग्निदे वबाह्मणसनिधी मद्क्षिणं पाणिसुन्दरेत । ने परक्षेत्रे च रन्तीं गामाचक्षीत न पिबन्तं बत्सक्यू। नोद्धतानू महर्ष येत्। न श्रद्धराज्ये निवसेत् नाधार्मिक्जनाकीणी। न सं-वस्देधहीने । नोपसृषे । ने चिरं पर्वते । न रथाचेषां क च्यति। न नृत्यगीते। नास्फोटनं कार्ध्यम्। नाश्ठीलं की र्तयेत्। नानृतम्। नाप्रियम्। न किञ्चिन्ममिणि स्पृशेत्। नात्मानमयजानीयादीर्घमायुर्जिजीविषुः। चिरं सन्ध्योपा सनं कुर्यात्। न् सपेशस्त्रेः कीडेत्। अनिमित्ततः स्या नि खॉनि न स्पृत्रोत्। परस्य दण्डं नो द्यच्छेत्। शास्यं शा सनार्धे नाडयेत्। नन्वा वेणुद्रेन् रज्या वा पृष्टे । देव्ब्रा ह्मणशास्त्रमहात्मनां परीवादं परिहरेत् । धर्मिविरुद्दी ना धकामी । ठोकविद्दिषञ्च धर्मामपि । पर्वसु शान्तिहोमं

कुर्यात्। न तृणमपि च्छिन्द्यात्। अलङ्कृतस्य तिष्ठेत्। एवमाचारसेवी स्यात्॥ श्वतिसमृत्युदितं सम्यक्साधुभि श्व निषेवितम्। तमाचारं निषेवित धर्मिकामो जितेन्द्रि यः॥ आचारालुभते चायुराचारादीप्सितां गतिम्। आ-चारान्द्वनमक्षय्यमाचारान्द्वन्यलक्षणम् ॥ सर्वलक्षणही-नोऽपि यः सदाचारवान्नरः। श्रद्धधानाऽनसूयश्व धातं वर्षाणि जीवति॥ ॥ इति वेष्णावे धर्माशास्त्रे एकस् सतितमोऽध्यायः॥

दमयमेन तिष्ठेत्। दमश्चेन्द्रियाणां प्रकीर्त्तिः दान्तस्यालं लोकः परश्व। नादान्तस्य क्रिया काचित् समृध्यति॥॥ दमः पिवतं परमं मङ्गल्यं परमं दमः। दमेन सर्वमाप्तोति पिति श्चिन्मनसेच्छति॥ दशाई युक्तेन रथेन याति मनोव शेनाय्यपथानुवर्तिना। तत्त्रद्रेयं नापहरन्ति वाजिनस्तथा गतं नावजयन्ति शत्रवः॥ आपुर्य्यमाणमचल प्रतिष्ठं समु-द्रमापः प्रविशन्ति यद्दत्। तद्दत् कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्तोति न कामकामी॥॥ ॥ इति वैष्णावे धः मर्गशास्त्रे दिसप्ततिनमोऽध्यायः॥

अथ भादेष्सः पूर्वेद्युद्धिहाणानामन्त्रयेत् । हितीयेऽह्मि शुक्रपक्षस्य पूर्वाह्ये कृष्णपक्षस्यापराह्मे विभान सुस्नातान् स्वानान्त्रयो विद्याक्रमेण कृशोत्तरेष्वासनेष्-प्रवेशयेत् । हो देवे प्राङ्युरवो त्रीश्चि पित्र्ये उदङ्गुरवान् ए कैक्मुभयत्र वेति । आमश्चादेषु काम्येषु च प्रथम पञ्चकेन् नामि हत्वा । पश्चश्चादेषु मध्यमपञ्चकेन । अमावास्यासू त्रमपञ्चकेन । आयहायण्या ऊर्द्ध् कृष्णाष्ट्रकासु च क्रमेणेव प्रथममध्यमोत्तमपञ्चकेः । अन्वष्टकासु च । तनात्राह्मणानु- १३० विष्णुस्मृती।

तेषां कुर्यात् । पितिर पितामहे च जीवित येषां पितामहः -कुर्यात्तेषां कुर्यात् । श्रिषु जीवत्स नेव कुर्यात् । यस्य पि ता मेतः स्यात् सपित्रे पिण्डं निधाय प्रापेतामहात् परं हा भ्यां द्यात् । यस्य पिता पितामहम्य पेतो स्यातां स तामां पिण्डो दत्त्वा पितामहपितामहाय द्यात् । यस्य पितामहः प्रेतः स्यात् स तस्मे । पण्डं निधाय प्रपितामहात्परं हाभ्यां द् द्यात् । यस्य पिता प्रपितामहम्य पेतो स्यातां स पित्रे पि-ण्डं निधाय पितामहात् परं हाभ्यां द्यात् । मातामहा नामप्येचं श्रान्हं कुर्य्याहित्तस्णः । मन्त्रोहण यथान्यायं शेषाणां मन्त्रवर्जितम्॥ ॥ इति वेष्णाचे धर्माशास्त्रे पन्त्रसप्ततितमोऽ ध्यायः॥

अमावास्यास्तिस्रोऽषकास्तिस्रोऽन्वष्टका माघी प्रोष्ठपद् दे कृष्णत्रयोदशी ब्रीहियवपाकी चेति। एतांस्तु श्राद्ध-कालान् वे नित्यानाह पजापतिः। श्राद्धमेतेष्वकुर्वाणी नरकं प्रतिपद्यते॥ ॥ इति वैष्णवे धम्मिशास्त्रे षट्स सतित्रमोऽ ध्यायः॥

आदित्यसं क्रमणं विषुवद्दयं विशेषेणायनद्दयं व्यतीपाती जन्मस्मिभ्युदयश्च । एतांस्तु श्राद्दकालान् वे काम्यानाह म जापतिः । श्राद्दमेतेषु यद्दतं नदान्त्याय कल्पते ॥ सन्या राज्याने कर्त्तव्यं श्राद्द खलु विचक्षणोः । तयोरिप च कर्त्तव्यं यदि स्याद्राहुदर्शनम् ॥ राहुदर्शनदत्तं हि श्राद्दमाचन्द्रता रकम् । गुणवन् सर्व्य कामीयं पितृणासुपतिष्ठते ॥ ॥ इति वैष्णवे धम्मिशास्त्रे सप्तस्मातृतमोऽध्यायः॥

सतनमादित्येऽह्मि श्राह्मं कुर्वन्नारोग्यमाप्नोति । सीभाग्यं चान्द्रे । समरविजयं कीजं । सर्व्वान् कामान् बीध । विद्याम

। वन्यविश्वासम्त्रीतानकुर 9879 न्धीत्यगन्धीनि क्षण्डंक्रिजान्तिम् रक्तांनि के पुष्पाणिस शुक्रा निहंस्की स्थानि किएट कि जाना स्थापि इस स्कृति है र स्कान्य पिह नश्रीत्यंदेन ज्याणी द्रियान् हस्तेन निर्णितन्य ज्याना दिशानी जेसां विनेत्या नाणि द्रांत्रात्याचे भोषनी स्राजना लिशा स्वद्र कुत्या हुन ष्णाजिनसिल्सिर्इधिकार्द्यतानि न्यत्पवित्राणि हरासीद्यानित नेतिद्यात् ः प्रिप्तिकी मुक्तन्द के मुक्त एति श्रम स्प्रीक रंसाह सर्जिक स्वर्के से स्कू क्या एडा सा विवास सिमिक्ट हा क्यों मो दक्तिन ण्डलीसक केसूम्भू पिण्डालुकाम हिषी स्वीराणि वर्जियेल्। शंक माष्मस्त्रप्रश्रीषित्रकृतल्वणानिश्चा क्रीप्रप्रिहरेत् । नाश्च पान्येत्रानं त्वरां कुर्यात् ग्राह्मताद्विकाने त्वत्सान प्राह्म णित्सईपात्राणिः फेल्ग्रेपात्राणि व्रामधास्तानि किन्न विक्षेत्र की भविति । सीवर्णराजनाष्ट्रयाञ्च अवद्वेतनी दुम्बरेण्या द्ज्ञामसस्यतां स्माकि। फ़ल्यमाङ्ग्रिण इत्प्यया । विष्न षण्येनधर्मिशास्त्रेनएकोजाश्चितितमोऽध्याति।। एति। तिलेलिहिस्तिभीकेरिद्धिस्लेक्षेत्रकेनशासे असामासे भिय इत्युक्तिनीक्षित्रस्र गोधुमेक्ष्य मासंभीक्षेत्रके हिल्मासी ए लें मां होना नी तहारियो ने नित्तर होरियने पालपत्र ने पालपत्र ने न अष्ट्रां निवास सारीरिकेणी निक्षिणे पार्ष तीन व सम्भवसे न। दश माहिषेण। एकादश कीमीण। सम्बद्धारं अख्येकि । सूर्याति हिना रेज्योविकाम भिन्नि निर्माशिक्ष मर्गतिना कर्ड स्त्रीक्रमहाँ बालकामांसा कामिणा सस्य जान विषणियन्त्रीर ये स्वत्रात्नी स्त्रास्त्र मक्षास्त्रहे हस्यागण कृष्णिकारी वेषण्यो भूम्मीर

सशीतित्वाध्यायः।

প্ৰই शास्त्रेऽशीतिनमोऽध्यायः वाष्ट्रं विकितीहिष्ट किराहिष्य ्चान्निगतम् विश्वस्याशास्त्रभाष्ट्रात्रम् । जिन्द्रभेषणं भूमिगतम् विश्वस्याशास्त्रभाष्ट्रात्रम् वर्गस्य निस्य निस वित्तेषं आखांत्रतेल्लातः परः ॥ तित्मोडाध्यात्यही॥॥

देवे कर्माण बाह्मणं न पश्चिमी व्यवान पिन्ये । प-रीक्षेत्रव्हीनाधिकाङ्गान् विवर्जयोत्। विवर्जेमेरियां स्व डार्ड्जिनिकान् मध्या लिखिनो जिस्त्र जीविनी देवलका स्व विकित्सकान्द्रभन्ति । महिनान् बहुयाजिनी याम यां जिती विश्वसा जिनो असाज्य माजिनी ब्रांस्ति हा जिनः पर्वकाराम् रस्त्रक्ति भातका ध्यापकाम् भरतका ध्यापिता न् श्रद्धिसम्प्रान् प्रितितस्सगान् अन्धियानान् सन्धाः पासनामञ्जूषां मान्यसम्बद्धान् विकास्य प्रतिकार्यान्य विकासित्य विक निस्ताध्यायन्त्यागिनेत्येतिशाः क्रोह्मणापसेद्वा हैं से कृथि निष्य पड कि द्वकाई रिजाना पत्रिवर्जी से च्छे प च्छि क्यमें पि प्रणित तेरोक (अग्रणा)। इति इवेष्ण वे अधिमा शास्त्र स्वासी तित भ्य सङ्ग्रस भीपूर्वने काख्येदके उत्तरमानस । इम्हास्थ हिम अर्थ पड्निसपार्वनाः गिर्विणानिकेत्र पुञ्जीमिन्येषु सामगो वेदपारगों बिद्राजुर्स्याप्येसस्य पारणाः एत्राणे तहासच्या करण परिगो विस्मित्रात्विस्याप्येकस्य परिगस्ति स्यूनो व्य शप्त स्तपः प्तार्भित्यप्तोरमन्त्रपृत्तो गाय्यीजपाने रेतो ह ब्रह्मदेयानुसन्तानाहित्रकपूर्णी जिपाताह्योहिनक्येति। वि शेषेणां न सोगिनर। अने पित्रेगीता गाया अनिति। असे स् स्यान् कुलेइस्माकं श्रोजर्गे द्यालायोगिनम् । नवप्र श्रार के प्रयत्नेन मेन निष्णामक विष्णाचे

विष्णुसमृती। 338 धर्माशास्त्रे त्युशीतितमो इध्यायः ॥ न म्लेन्छविषये शाहं कुर्यात् । न गच्छेम्लेन्छविषयम् । परनिपानेष्वपः पीत्वा तत्साम्य मुपग्च्छतीति ॥ चातु वैण्येव्यवस्थान् यस्मिन् देशे न विद्यते । स म्हेच्छदेशों विज्ञेय आर्थ्यावर्त्तस्तनः परः ॥ ॥ इति वैष्णावे धर्मा शास्त्रे चतुरशीतितमोऽध्यायः॥ अथ पुष्करेषु श्राद्म । ज्यहोमतपांसि च । पुष्करे स्ना-नमात्रतः सर्वपापेपयः पूत्रो भवति । एवमेव गयाशीर्षे अ क्षयब्दे अमरकण्टकपर्वते वराहपर्वते यत्र क्रचन नर्मा दोतीरे यमुनातीरे गङ्गायां विशेषतः कुशावती बिल्बके नीलपर्वते कनरवले कुंजामे भृगुतुङ्गे केदारे महालये नडिन्तकायां कगन्धायां शाकम्भय्यी फ्ल्युतीय महा-गङ्गायां विह्रिकाश्रमे कुमारधारायां प्रभासे यत्र कचन स रस्वत्यां विशेषतः। गङ्गाद्वारे प्रचागे च गङ्गासागरसङ्ग्र श्रमे कण्वाश्रमे क्रीशिक्यां स्रयूतीरे शोण्स्य ज्योतिषाया श्र्व सङ्गमे श्रीपर्वते कालोदके उत्तरमानसे बडवायां मत-र्या वेत्रवत्यां विपाशायां विनस्तायां शतद्वीरे चन्द्रभा गाया इरावत्यां सिन्धोस्तीरे दक्षिणे पञ्चनदे ओजसे ।ए वमादिष्यथान्येषु तीर्थेषु सरिद्दरासः सर्वेष्वपि स्वभावेषु पुरिनेषु पस्तवणेषु पर्वतेषु निकुन्तेषु वनेषूपवनेषु गोम-यापितिसेषु मनोझेषु। अत्र च पितृगीता गाथा भवन्ति ॥ कुछेऽस्माकं सजन्तुः स्याद्यो नो दद्याज्जलाञ्जलीन्। नदी-ष्रवहनोयास शीतलाक विशेषतः ॥ अपि जायेत साऽस्मा

कं कुछे किन्निन्तरोत्तमः । गयाशीर्षे वरे श्रान्दं यो नः कुर्या-त् समाहितः ॥ एष्ट्या बृहवः पुत्रा यद्येकोऽपि गया व्रजे त्। यजेत् वाश्वमधेन नीलं वा चषमुत्स्जेत्॥ ॥ इति वैष्णवे धुर्माशास्ये पञ्चाशीतितमोऽध्यायः॥ अथ रुषोत्सर्गः कार्तिक्यामाभ्ययुज्यां वा । तत्रादावेव र ष्मं परीक्षेत । जीवद्दलायाः पयस्विन्याः पुत्रं सर्वस्य णोपेतं नीलं लोहितं वो मुखपुच्छपाद मुङ्ग शुह्नं यू पस्या-च्छादक्म् । ततो गवां मध्य कसमिद्दम्मिं परिस्तीर्घ्यं पी ष्णं चरुं पेयसा श्रपित्वा पूषा गा अन्वेतु न इइ रितृरि-ति च हत्वा चषमयस्कारस्त्वद्वःयेत् । एकस्मिन् पार्श्वे च कृणापरस्मिन् पार्श्वे श्लोन । अद्भिनञ्ज हिरण्यवणी इति चतस्रिः शन्नोदेवीति च स्नाप्येत् । स्नातमछङ्कतं स्नातालड्- कृताभिश्चत्स् भिर्वत्सत्रीभिः सार्द्रमानीय रेद्रा-न् पुरुषसूक्तं कुष्माण्डीश्र्व जपेत्। पिता वस्तेतिचूषभस्य रक्षिणे कर्णी परेत् इमञ्च। ख्षोहि भगवान् धर्मञ्चतुष्मा दः मकीर्तितः । रूणोमि तमहं मत्त्या समे रक्षतु सर्व-तः॥ एनं युवानं पतिं वो ददाम्यनेन कीडन्तीश्वरंथ पि येण। महामहित्रज्या मातनुष्तिमरिधाम दिवते सोम! राजन्। ॥ वृषं वत्सरीयुक्तमेशान्यां कारये हिशि । होतुर्व-ख्युगं द्वात् सवर्णं कांस्यमेव च ॥ अयुस्कारस्य दात-व्यं वेतन् मनसेप्सितम्। भोजनं बहुसर्पिष्कं ब्राह्मणां-श्वात्र भोजयेत् ॥ उत्सृषो वृषभो याँसान् प्रिवत्यथ जला श्ये। जलाश्यं तत्सकलं प्रितृस्तस्योपतिष्ठति ॥ शृहेणी क्षिरवते भूमि यम क्षेत्रन दर्पिनः। पितृणामन्त्रपानं तन् मभूत मुपतिष्ठति॥ ॥ इति वैष्णवे धर्मिशास्ये पड

ाविष्णस्मिति। 73.69 शीमिलमोड ध्यायर । कि विहिष्टि । इसर्गिन्सिक विद्रक अथ वैशाख्यां पोणिमास्यां कृष्णमृगानिनं सवणिशृद्धं री प्यरवरं मोक्तिकलाङ्गूलभूषितं केला आविक वस्त्री व सारयेत्। ततस्तिछैः यन्छादयेत्। सत्वर्णनाभिन्न कृष्यित्। आइतेन वासोयुगेन अच्छादयेत्। सर्वेगन्यरहे आलड्न रुतं कुर्यात्। वनसृषु दिक्त बच्चारि तेजसपात्राणि सी रद्धिमधु घृतपूर्णानि निधायाहिताग्नये आह्मणायालङ् कृताय वासी सुगैन अञ्चादिनाय द्यात । अञ्च च गामा भ विति। यस्तु हणाजिनं देवात् संख्र शृद्धसंयुतम् । तिले प्रच्छाद् वासोभिः सर्वरहे र छङ् कृतम् ॥ ससमुद्र गुहा तेन सरीलवनकानमा । बतुरना भवेदता पृथिवी ना न संपायः ।। कृष्णाजिने तिरान् कता हिर्णयं मधुसर्षिष ददाति यस्तु विभाय सर्वे तरित दुष्कृतम् । वैष्णवे धर्माशास्त्रे सत्ताशीतितमोडध्यायः।। ्रिअथ मस्यमाना गीः पृथिवी भवति तामर्ड्स्तां ब्रा स्णाय दत्ता पृथिवीदानफलमामीति अन च गाया भ वति। सबत्सी रोमतुल्यानि युगान्युभयतो पुरवीम् दिन्ता स्वर्गम्बामीति श्रद्धानः समाहितः। हिन्दा दिने वैष्ण वे ध्रमिशास्त्रे इष्टिशिति तमोड ध्यायः ॥ १००० मह । १००० मासः कार्तिकोङ्गिनदेवत्यः मध्यामित्व सर्वदेवानां मुख्यम्। नस्पात्त कार्तिकं मासं बहिःस्वायी गायत्रीजपनिर्तिः सं रुदेव हविष्याभी संबद्धरहतान् पापान् पूर्तो भवति।का र्तिकं सक्छं मासं नित्यस्मायी जिनेन्द्रियः । जपन् इविष्य भुग्दाता सर्वपापेः मधुच्यते॥ आइति वैष्णवे धर्मी शास्त्री एकोनमचित्तमाँ ध्यायः॥ । १९८० ।

निर्गित्रीपि मुद्धपञ्चदेश्यां मृगाशिरः संयुक्तायां चूर्णित तेवण स्य संवर्णनाभा मस्यमेकं चन्द्रीद्ये ब्राह्मणाय पद्राप्येत्। अनेन् कर्माणां क्ष्यसीभाग्यवानभिज्ञात्रिते प्रीषीर्चन् पुष्य युक्तास्यात्तस्या गीर्सूष्पकल्कोद्दर्तित्शारीर् ज्यूव्यद्यतपूर्ण कृष्णे माफ्रिबिक्तः स्वोधिधिपिश्रसर्वेगन्धेः सर्विजेश्व स्वाती धनेन भगवन्तं वास्तदेवं स्नाप्यित्वा गन्धपुष्पं धूपदीप नेवेदा दिभिश्वापयन्त्री वेषावेः शाके बहिस्पत्येश्व अन्तेः पावके हत्ता संसंग्रेणीन धतेन ब्राह्मणान् स्वस्ति वृचियेत् । वासोयुगे कर्ने दुष्ति । अनेन क्रम्मणा पुष्यते । माधी स्वायुना नेतस्या -तिले: श्राहं कृत्वा पूर्तो भवति। फाल्युनी फल्युनी युता चेत् स्यातस्यो बाह्मणायं सुसंस्कृतं स्वास्तीर्ण शायनं विवेदां भा व्यो प्रनोज्ञां रूपवती द्रविणवतीञ्चाभोतित नार्थ्यप् भन्तरि म् विश्वायुता स्यात्स्यां विश्ववस्य पदानेन सीपांग्यमा मोति विशासी विशास्त्रीयुना चैत्तस्यां ब्राह्मणसूमकं क्षीद्र-युक्तेसितेः सन्तर्प्य धुम्पराजानं श्रीणयित्वा पापेष्ट्यः पूर्ताः भवति । ज्येष्ठी ज्येष्ठी खता नेत्स्यां छत्रोपानह प्रदोनेन गवा ध्रियसं याप्रोति । आषाद्यामाषादायुक्तायामन्नपान्दानेन तरेवांसय्यमामोति। श्रावण्यां श्रवणयुक्तायां जलधेनं सा ना वासीयुगाच्छादितां दत्वा स्वर्गमाभोति । मीछपद्यां मीष पदायुक्तायां गोदानेन सर्वपापविनिर्मुक्तोभविन् आस्युन ज्यामिश्वनीगते चन्द्रम्सि धतपूर्ण भाजनं सवणियुतं विमा यदला दीप्तामिन् भीवति । कार्तिकी कृतिकायुना चेत्स्यां सि तमुक्षाणमन्यवर्णीवा श्राशाङ्कोदये सर्वशस्य रह्मगन्थोपेनं दी पमध्ये ब्राह्मणाय दत्ता कान्तारपायं नश्यति । वेशाख्युक्क नृतीयायामुपाषितो ७ क्षतेवीक्तदेवमभ्यत्त्वी तानेव हुत्वा दत्ता

विष्णुस्मृती । 936 च सर्व पापेभ्यः पूतो भवति । यच तस्मिन्नहिन पयच्छति तदस्यमाभोति । पीष्यां समतीनायां कृष्णपस् हादश्यां सो पवासिसिलेः स्नातिसिलोदकं दत्त्वा तिलेविसिदेवमभ्यर्च्य ता नेव इत्वा दत्वा फत्का न पापेभ्यः पूरो भवति। मार्घ्या सम तीतायां रूष्णद्वादश्यां सोपवासः श्रवणं पाष्य वास्तदेवायतोम हावर्तिद्येन दीपद्यं दद्यात्। दक्षिणपार्थे महारजन्रकेन समयेण वाससा धनतुला मेशाधिकां दला वामपाश्वें निलते **लतुलां साष्टां दत्ता श्वेंतेन समयेण वाससा। एतत्**रुत्वा रू नक्त्यो यस्मिन् राष्ट्रेऽभिजायते यस्मिन् देशे यस्मिन् कुरु स त्रवोज्वलो भवति । आश्विनं सकलं मासं ब्राह्मणेश्यः भत्यहं घृतं प्रद्यादिनो पीणियता ऋप भाग्मवति । तस्मिन्नेवमा सि प्रत्यहं गोरसे ब्राह्मणान् भोज्यित्वा राज्यभाग्भवति। पति मासं रेवतीयुते चन्द्रमसि मधुद्यतयुतं रेवतीयीत्ये परमान्नं ब्राह्मणान् भोजियत्वा रेवतीं पीणियत्वा स्पभागभवति। मा घे मासे नि पत्यहं निलेई ला सघनं कुल्मापं ब्राह्मणान् भो ज्यिता दीप्ताग्निभीवति । सर्ची चतुईशीं नदीजले स्नात्वा ध् मिराजानं प्रजयित्वा सूर्चिपापेभ्यः पूतो भवति । यदीच्छेहि पुरान् भोगान् चन्द्रसूर्ययहापगान् । पातः स्वायी भवेनिसं ही मासी माघफाल्युनी ॥ ॥ इति वैष्णवे धर्मिशास्त्रे न वतितमोऽध्यायः॥ अथ कूपकर्तुस्तत्प्रवृत्ते पानीये दुष्कृतस्यार्दे विनश्यित्। तडा गरुनित्यत्स्वी वारुणं होकमभुते। जहपदः सदा तृप्तो भव-ति। वृक्षारोपयितुर्वसाः प्रहोके युना भवन्ति। वृक्षपदो वृक्ष मस्नैद्वान् मीणयति फरुंश्चानियीन् छायया नाभ्यागनान् देवे वर्षत्युदकेन पितृन् । सेतुकृत् स्वर्गमामोति देवायतनक!-

स्वस्य देवायतनं क्रोति तस्येव लोकमाभोति । सुधासिकंक् सा यशसा विराजते । विविक्तं कृत्वा गन्धवेलोकमाभोति । पुष्पप्रदानेन श्रीमान् भवति । अनुलेपनप्रदानेन कीर्तिमान् भवति । दीपप्रदानेन चसुष्मान् सर्वतोज्वल्यः । अन्नप्रदाने न बलवान् । धूपप्रदानेनोद्धं गच्छति । देवनिम्माल्यापनयना दोप्रदानफलमाभोति । देवायतनमार्जनात्तदुपलेपनाद्बाह्म णोच्छिष्टमार्जनात् पादादिशोचोदकल्पपरिचरणाच्च॥ क् पारामतडागेषु देवतायतनेषु च । पुनःसंस्कारकर्ता चलम ते मोलिकं फलम् ॥ ॥ इति विष्णावे धम्मिशास्त्रे एक-नवतितमोऽध्यायः ॥

सुर्वेदानाधिकमभयप्रदानम् । तत्यदानेनाभीप्सितं लोकमा मोति भूमियदानेन च । गोचर्मामात्रमपि भुवं पदाय सर्वे पा पेभ्यः पूर्वो भवति। गोयदानेन् स्वर्गहोकमाप्तोति। द्रशधे नुपरो गोलोकान्। शतधेनुपदो ब्रह्मलोकान्। सवण्णिशृङ्गी रीप्यसुरां मुकालाङ्गुलां कांस्योपदोहां वस्योत्तरीयां दत्वा धुंचरीमसंख्यानि चर्षाणि स्वर्गछोकमाञ्चोति । विशेषतः क पिलाम्। दान्तं धुरन्धरं दत्त्वा दशाधेनुपदो भवति। अश्वदः स्यमानोति। वासोदश्चन्द्रसालोक्यम्। सन्वण्ण दानेनाग्नि सालोक्यम् । ऋष्यप्रदानेन ऋष्यम् । तेजसानां-पात्राणां पदानेन पात्रं भवेत् सर्वकामानामे षधप्रदानेन र । लगणपदानेन च लागणयम् । धान्यपदानेन तृप्तिं शस्य म्दान्न च। अन्नदः सर्वम्। धान्यमदानेन सीभाग्यम्।अ कीर्तितानामन्येषां दानात् स्वर्गमवाघ्ययादिति । तिलपदः मजामिष्यां इन्धनपदानेन् दीप्ताग्निभवति । आसन्पदाने न स्थानम्। शय्यापदानेन भार्याम्। उपानत्प्रदानेनाश्व-

ानिष्णुस्मृतिः।गन्ही d.8.0. तरीयुक्तर्थम् ि छत्रप्रदानेन स्वर्गम् । तारुवन्तचामरप्रदीने नाध्वसंखित्वम् । बारतु पदानेन निगराधिपत्यम् ॥ हियदा दिश्तमा लोके संचास्ति द्यितं गृहै । तन्त दुण्यते देशं तदेवा क्ष्यमिच्छत्।॥ विवास द्रिति वैष्णुवे धर्मिशास्त्रे।दिनवति तमोअध्यायः ॥ हे. माः मेखना द्वीतिनाः हाम् हार्मित अबाह्मणे दत्तं तत्सममेव पारले किकम् हिर्गणं बाह्मणा ह्य वे। सहस्रगुणं माधीते अअनस्य वेदपारगे । पुरोहितस्वात्म न एव पानम्। स्वसा दृहिता जामातरत्र्व पानम्। न बार्या पि ययच्छेत वैडालब्रिके दिने। न बक्ब्रिके पापे नाविद विदि धम्मेवित् ॥ धम्मेध्वजी सदालुब्धः श्वाद्मिको लोकंदाः मिकः। वेडाउँ ब्रितिकी ज्ञेयो। हिस्तः सर्वा प्रिसन्धिकः ॥। अधोद्दश्चिनिक तिक स्वार्यसाधन वृद्धारः । शवो भिष्ट्याविनीः तस्य वकवत्परोद्दिजः॥ ये वक्वतिनो लोके ये न माजी रिल्डिज्ञानः । ले प्रतत्यन्धतामिस्नेन्तेन पापेन कर्माणा ॥ न धम्मेस्यापदेशोन पाषं कत्वा ब्रतं वरेत्। ब्रतेन पापं अच्छाद्य क्वर्पन् स्वित्रद्रद्रमानम् गांत्रेत्येह् वेदशो विमोत्यृत्यदें बहाँ बादिभिः । छिदानाचरितं यज्ञ तद्दे रक्षांसि गल्छति ॥ अहिं की छिड़िचेशोन यो इतिमुपनीवति। साविके नाहरत्येन सि र्यग्योनी प्रजायते ॥ नदानं युश्से द्यान्त्रभयान्नोपका रिणें हुन्त्रस्यगीतशी छेज्योः धुम्में शिमिति निश्चितम् ॥ हिना इति वैद्याचे धर्मिशास्त्रे विनवतित्मोऽध्यायः।।१८७० ह ं गृही बहीपहितद्वीने बन् श्रुपे भवेत् अपत्यस्य ब्राप् त्यद्शनिन वा अधुनेषु भार्यो निक्षिप्य तयानुगम्यमानी वा। त्रमाप्यम्भी सुपचरेत्। अफालकृष्णोनः पञ्चयज्ञानः हापयेत्। स्वाध्यायं च न जहात्। ब्रह्मचर्यः पाछयेत्। चम्मचीरवासः

स्यात् ग्रिनटारम्श्रुंछोम्नरवांश्च्याविभ्यात् । भिन्नष्रवणस्मायीः स्यात्। त्यपोन् वृत्तिंभीतानित्ययः सम्बत्सरनित्यो वाग्यसः म्बल्सर्विचयी पूर्वनिचितमात्रवयुज्यां ज्ह्यान् ॥ यामादाह स्यानाश्चीयादश्चीत्यासान् वनो वसन् एटने वन् पठाशेन पा शिनाशकरेन वानाना नाइति विष्णवे धर्मशास्त्रे वतुर्न व्यक्तिमोङ्ख्यायन॥एकी व्यक्तिमा । एकिए किछिनियक्त वान्यस्थात्वापसा कारीस्थावित् । यीषोः पञ्चतपाः स्यात्। भाकाशभाष्यीत्यादृषित भदिवासाहिमन्ते । जन्ताशिस्याह ति। एकान्तरद्वान्तरं स्थन्तराधीः वा स्यात्। खुष्पाशी किर्प्तः ल्यामी । शास्त्रामा मणिया। मुल्यामी स्वानने पक्षान्त भोसिक्तिस्टर्सीयात्। नान्द्रायशेषि मन्तित्। अत्रमकुं हुः । दन्तील्युविकोवाताम् निपोस्लमिदं सर्वे देवमासुष्रेनानी गुर्वचा तेपीमध्यं तपोऽन्तक्तात्वसा स नथारतम् ॥।यदुन् रं युद्शां। यहूरं यच दुष्करम् । सर्च तत्त्वसा साध्यं तपेहि तुर्तिकम्म महाभिष्यहा। इति हवैष्णावे धर्मीशास्त्रे पञ्चेनवितत वात्रातासम्बर्गन या मण्डुःस्वाम्। शारीरं नेतुं ॥हम्बाम्बर्णाम भूभा भिष्या असेषु पद्मक्षप्राया आजा प्रत्या भिष्या कृत्वा संबंध वेद्दे दक्षिणां देल्याः प्रभेज्यां अभी क्यां तृष्णभात्मन्यग्नी नारोप्य मिसीर्थे वामिस्ति । संसाम्बिके भेद्रेसम्बद्धान् । अस भे सन्स्थेत् असिक्षिकं भिक्षेत्राक्षकक्तम् सिक्ने अति पा संसम्माते भिष्ट्यमाहित्यान् भिष्मामसे द्रीरुपाने इलाच्याने बार नेपान्त्री तस्याद्भित्याक् । अनुभि प्रजित्तका प्राहित्याच न् । स्त्रामार्निकेल्च इसान्। स्राध्यास्य सिकेन निवास्त्रीः मामेश्रहितीयां त्रिक्षां नसित्व अन्मीपिति च्छादनसम् स्रोत्व वर सन्मा कृषात् । व्हिष्टि प्तं त्रस्मोत् वर्षे द्रम् । वस्त्रे पूर्तं । जल्माः

विष्णुस्मती। दद्यान् । सत्यपूनं वदेत । मनः पूनं समाचरेन् । मरणं नाभि काम्येत जीविनञ्च। अतिवादौंस्तितिक्षेत । नकञ्चनाव-मन्येत । निराधीः स्थान् । निर्नेमस्कारः ॥ वास्यैकं तक्ष तो बाह्रं चन्दनेनेकमुक्षतः । नाकल्याणं च कल्याणं तयोरिप च चिन्तयेत् ॥ भाणायामधारणाध्याननित्यः स्यात्। संसा रस्यानित्यता पश्येत्। शरीरस्याश्चिभावम्। जरया ह्य विषय्येयम्। शारीरमानसागन्त्कव्याधिभिश्वोपतापम्।स हजेश्व। नित्यान्धकारे गर्भी वस्ति मूत्रपुरीषमध्ये च । तत्र्व शीतीषादुः खानुभवनम्। जन्मसमयै योनिसङ्गटनिर्गम न्महद्वः खानुभवनम् । बाल्ये मोहं गुरुपरवश्यतीम् ।अध्य यनादनेक के शम्। यीवने च विषय्या सावमारीण तदवासी विषयसेवनान्नरके पतनम्। अभियेवसिति वियेश्व विप-योगम्। नरकेषु च् समहदुः खम्। संसारसंस्ती निर्ध्यम् योनिषु च। एवमस्मिन् सत्तपापिनि संसारे न किञ्चित्। यदपि किञ्चिद्वः खापेक्षया करवसंत्रं तदप्यनित्यम्। तत्से वाशक्तावलभने वा महद्वःखम्। शरीरं चेदं साप्तधातुक् पश्येत् वसारुधिरमासास्थिमेदीम्ज्जाश्वकात्मकं चम्मवि नदं दुर्गन्धि च मलायतनं क्रखशतेरिप वृत्तं विकारि प्रय-लाइतमपि विनाशि कामकोधलोभमोहमदमालस्यस्या

983

न पृथिव्यमेजोवाय्वाकाशात्मक अस्थिशिराधम्निस्नायु युनं रजस्वतं षट्त्वक् पेशि अस्त्रां त्रिभिः शतीः षष्ट्याधिकेधीर्यमा णम्। नेषां विभागः। सूक्ष्मैः सह चतुःषष्ट्रिदेशनाः , विश्वित नेरवाः, पाणिपादशलाकाश्व,षष्ट्रिंड्युडीनां प्रचाणि, दे पाष्पयीः, चतुष्यं गुल्फ्षु, चलाय्धरिल्योः, चलारि जङ्ग्योः, है है, जानुक्रपोलयो: हे हैं अक्षतालूषक योणिफलकेषु, भैगा-

स्योकं, पृष्ठास्य पञ्चनलारिशद्भागं, पञ्चद्शास्यीनि यीवा, जान्वेकं, तथा हतुः, तन्मूले च दे, देललाटाक्षिगण्डे, नासा -घनास्थिका, अर्बुदैः स्थान्केश्च सार्द्धे दासप्ततिः पार्श्वकाः, उरः सप्तद्वा, दी शङ्खकी, च्लारि कपाछानि शिर्श्वति। शरीरेऽस्मिन् सप्तिशिराशतानि । नव स्नायुश्तानि । धमनी श्ते दे। पञ्चपेशीशतानि । सुद्रधमनीनामैकोन विश्वस्था णि नवशतानि षर्पञ्चाशन्यः। लक्षत्रयं शमश्रकेशक्-पानाम्। सप्तीत्तरं मर्म्भाशतम्। सन्धिशते है। चतुःपञ्चाश द्रोमकोटयः सप्तषष्टिश्व उसाणि। नाभिरोजी गुदं शुक्रंशी णितं शङ्खको मुद्दी कण्डोहृद्यञ्चेति प्राणायतनानि।बा हुद्यं जङ्घाद्यं मध्यं शीर्षमिति षडद्गानि । वसा व्या अवहननं नाभिः क्षोमो यकृत् प्रीहा शुद्रान्तं वुकी वस्तिः पुरीषाधानमामाश्रीयोहृदयं स्थूलान्लं युद्मुद्रं गुदकीषु-म्। कनीनिके अक्षिक्टे शब्कली कणी कणियकी गण्डी भुगी शङ्खकी दन्तवेषायोषी ककुन्दरे वंक्षणी वृषणी वृक्षी भेडेष्मसङ्घातकी स्तनी उपजिह्ना सिक्नी बाह् जड्डे ऊर्ह्णिष्डि के तालूदरं वस्तिशीषी चिबुक् गलगुण्डिके अवर्श्वत्यस्मिन श्रीरके स्थानानि। शब्दस्पर्शरसरूपगन्धाश्च विषयाः।ना सिकालोचन लग्जिहायोत्रमिति बुदी दियाणि। इस्ती पा दी पायूपस्यं जिह्नेतिं कमेन्द्रियाणि । मन्तेबुद्धिरात्मा चाव्य क्तमितीन्द्रियातीताः॥ इदं शरीरं वस्तधे। क्षेत्रमित्यभि-धीयते । एतधो वेति तं माहः क्षेत्रज्ञमिति तहिदः ॥ क्षेत्रज्ञ मेव मां विहि सर्वक्षेत्रेषु भाविति । । क्षेत्रं क्षेत्रज्ञविज्ञानं ज्ञे पं नित्यं मुमुक्षुणा ॥ ॥ इति वेष्णावे धर्माशास्त्रे षण्ण वितमोऽध्यायः॥

ाइनिष्णुस्मिनो । वाका 1882 उत्स्योत्तान्त्ररणः सच्ये करे कर्मिनरं न्यस्य ताबुस्थाचल-जिह्नोदन्ते देन्तान संस्थान स्वनासिकाय प्रयन् दिशाश्रा न्वलीक्यन् विभीः प्रशान्तात्मा ततु विशात्या तत्त्वेव्यतीत विन्तयेत्। नित्यमती न्द्रियमगुण शब्दस्प्शरसन्द्रपगन्धा तीतं सर्वेज्ञम् तिर्धूलं सर्वेग्मृतिस्स्मं सर्वतःपाणिपादं स वितोऽसिधिरोसुरवं सर्वतः सर्वेद्रियशक्तिम् । एवं ध्यायेत्। ध्यानिरतस्य न संवत्सरेण योगाविभवि भवति। अथ निराकारे उसवन्धं कर्त्ते न शक्नोति तदा पृथिव्यमेजोबान्य स्वाकाशमनोबुद्धारमाव्यक्तपुरुषाणां पूर्व पूर्व ध्यात्वा तत्र त्च उक्तन्तन् परित्यज्यापर्मपर्ध्यायेन् । ऐवं पुरुषध्याः नमारभेत्। अवाप्यसम्रथः स्वहृद्यप्रसम्यावाङ्गुरवस्य मध्ये दीप्रवत् पुरुषं ध्यायेत् । तनाप्यसमधीभगवनां वा-सिद्देव किरीटिन कुण्डलिनमङ्ग्रिन श्रीवत्साङ्ग्र बनमाल विभूषितीरस्कं सोम्यरूप चतुर्फनं शङ्खनकरोद्राप्रस्थ रं चरणमध्यग्तकवं ध्यायेन्। यद्यायति त्दामीतिध्या निस्सम् । नुस्मान् स्विमेव स्र त्यत्कां अक्षरमेव ध्यायत्। न्त पुरुष विना किञ्चिद्ध्यक्षरमस्ति । तं शाष्ट्र पुन्तो भव ति ॥ अपुमाक्रम्य सक्त अति यस्मान्महाप्रभुः तस्मात् पुरुषः इत्येव प्रोच्यते तत्विन्तकेः ॥ प्रायामापररात्रेष्ठः मा गी नित्यमतिन्द्रतः । ध्यायेत-पुरुषं विष्णं निर्गणं पञ्चिषे शक्य-॥ तत्वात्मानमगम्यञ्च-सर्वतत्त्वविविजितम् ॥ अस तं सर्वभूत्वेव निर्गणं गुणभोक्तं व ॥ बहिरन्तश्च भूतानाः मचरं वरमेव व । सहस्मत्वात्तद्विज्ञेयः दूरस्थञ्चानिके न तत्। अविभक्ति भेतेन विभक्तिम् ने स्थितम्। भूतभ यभवदूपं यसिष्णु भभविष्णु च॥ ज्योतिषामणि त्र्ल्योति

स्तमसः परमुच्यते । ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्पस्य धि ष्ठितम् ॥ इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयञ्चोक्तं समासतः । म इक्तएतिह्जाय मद्रावायोपपद्यते ॥ ॥ इति वैष्णावे ध मिशास्त्रे सप्तनवतितमोऽध्यायः ॥

मिशास्त्रे सप्तनवतितमो ध्यायः॥ इत्येवसुक्ता वस्तमती जानुभ्यां शिरसा च नमस्कारं छत्वो-वाच । भगवंस्वत्समीपे सततमेवं चत्वारि महाभूतालया न्याकाशः शङ्ख्स्पी वायुश्वकरूपी तेजश्व गदोरूप्य-भोऽभोकहरूपि अहमप्यनेनेव रूपेण् भगवत्पाद्मध्य परिवर्त्तिनी भवितुमिन्छामि । इत्येवमुक्तोभगवांस्तथेत्यु-बाच। व्रक्षापि लब्धकामा नथा चके देवदेवञ्च तुष्टाव। ओं नमस्ते देवदेव वास्त्रदेव आदिदेव कामदेव महीपाछ-अनादिमध्यनिधन प्रजापते सप्रजापते महाप्रजापते ऊ-र्ज्यस्पते वाचस्पते जगत्पते दिवस्पते वनस्पते पर्यस्पते पृ थिबीपते सिळपूर्त दिक्पते महत्पते मरुत्पते उस्मीपते ब्रह्मरूप ब्राह्मणिय सर्वेग अविन्त्य ज्ञानगम्य पुरुहूत पु रुषुन ब्रह्मण्य ब्रह्मपिय ब्रह्मकायिक महाकायिक महोरा-जिंकनतुर्माहाराजिक भारतर महाभारतर सप्त महाभागस्व र तुषित महातुषित मतर्दन् परिनिम्मित अपरिनिमित वृत्रा व्तिन् यज्ञ महायज्ञ यज्ञ्योग यज्ञगम्य यज्ञनिधन अजिन वैकुण्डे अपार पर पुराण हेरच्य मजाधर चित्राशारवण्डधर य ज्ञभागहर पुरोडाशहर विश्वक विश्वधर श्वविश्ववः अच्यु-तार्चन एता चिः खण्डपरशो पद्मनाभ पद्मधर पद्मधाराध र हषीकेश एकशृद्ध महावराह द्रुहिण अच्युत अनन्त पुरु ष महापुरुष कृषिल सां यानार्ये विष्कृसेन धर्माधर्म द धर्मांड्र- धर्मवसम्पद वरपद विष्णो जिष्णो सहिष्णो ह

विष्णुसमृती । 386 ष्ण पुण्इरीकाक्ष नारायण परायण जगत्परायण नमोनम इति ॥ स्तुत्वा लेवं पसन्नेन मनसा पृथिवी तदा । उवाच सम्प्रखं देवं खब्धकामा वसन्धरा ॥ ॥ इति वैष्णवे धर्मा शास्त्र अष्टनवतितमोऽध्यायः॥ हस्वा श्रियं देवदेवस्य विष्णो गृहीत पादां तपसा ज्वलन्ती-म्। सन्तमनाम्बनद्चारुवणी पप्रच्छ देवीं वस्रधापहणा। उनिद्रकोकनद्चोरुकरे वरेण्ये उनिद्रकोकनद्नाभि गृहीतपा दे। उनिद्रकोकनदसद्यसदास्थितीते अनिद्रकोकनदम-ध्यसमानवणे ॥ नीलाञ्जनेत्रे तपनीयवणे भिक्काम्बरे रहा-विभूषिताङ्गि । चन्द्रानने सूर्घ्यसमानभासे महाप्रभावेज गतः प्रधाने ॥ त्यमेव निद्राजगतः प्रधाना उक्ष्मी धितिः श्री विरितर्जया च। कान्तिः प्रभा कीर्तिरथो विभूतिः सरस्वती वागय पावनी च । स्वधा तितिसा वुस्तधा प्रतिष्ठा स्थितिःसु दीक्षा च तथा सनीतिः। ख्यातिविशाला च तथानसूया सा हाच मेधाच तथेव बुद्धिः॥ आकम्य सर्वान्त यथा बिहो-कीं तिष्ठत्ययं देववरो असिताद्गे । तथा स्थिता त्वं वरदे तथा-पि पृच्छाम्यहं ते वसतिं विभूत्याः ॥ इत्येवमुक्तां वक्तधां व भाषे उद्मीस्तदा देव वरायतस्या । सदा स्थिताहं मधुसूद नस्य देवस्य पाववे तपनीयवण्णे ॥ अस्याज्ञया्यं मनसा स्मरामि श्रियायुतं तं प्रवदन्ति सन्तः । संस्मारणे गप्यथय त्र चाहं स्थिता सदा त्च्छृणु हो कथा वि ॥ वसाम्यथा के चिन शाकरे न तारागणाद्ये गुगने विमधे। मेधे तथा उम्बपयो धरे च शकायुधाद्ये च तडित्यकाशे ॥ तथा सवण्णे विमले न रूप्ये रलेषु वस्त्रेष्वमछेषु भूमे । प्रासादमाठास् च पा णुरासः देवालयेषु ध्वनभूषितेषु ॥ सद्यः कृते चाप्यथ गीम

ये च मत्ते गजेन्द्रे तुरगे पहछे। इधे तथा द्र्यसमन्विते चि ये तथैवाध्यय्नपपने । सिंहासने चाम्छके च चिले च्छने चशङ्खे च तथेव पद्मे। दीसे हुनाशे विमले च खड़े आद शिबम्बे च तथास्थिताहम्॥ पूर्णोदकुम्भेषु सचामरेषु स तालचन्तेषु विभूषितेषु। मृङ्गारपात्रेषु मनोहरेषु मृदिस्थि-ताहन्त्र नवोन्द्रतायाम् ॥ क्षारे तथा सर्पिषि शादल च क्षीद्रेत था दक्षि पुरान्ध्रगाने । देहें कुमायित्र तथा कराणां तपस्वि नां यज्ञभृताञ्च देहे ॥ श्रेच संयामिवनिर्गतेच स्थितामते स्वर्गसदः प्रयाते । वैदध्वनी वाष्यथ शङ्ख्यशब्दे स्वाह्यस्व-धायामथ वाद्यशब्दे ॥ राजाभिषेके च तथा विवाहे यही वरे स्नातशिरस्यथापि । पुष्पेषु भमक्केषु च पर्वतेषु फछेषु रम्येषु सरिद्रास ॥ सरःसु पूर्णेषु तथा जलेषु सशाद्वलाया भाषि पद्मार्पेषे । वने च वत्से च शिशी मह हे साधी नरे धम्मिप रायणे च ॥ आचारसे विन्यथ शास्त्र नित्ये विनीत्वेशोच त था सक्तेश । सक्तद्दान्ते मुख्यर्जिते च मिष्टाशने चातिथि पूज्केच ॥ स्वदारतुष्टे निरतेच ध्मी धमोत्किटे चात्यशानाहि रसे। सदा सपुष्येच सगन्धिगाने सगन्धि हो च विभूषि नेच ॥सत्ये स्थिते भूतहिते निविधे क्षमाचिते कोधविवार्जी ते च । स्वकार्यद्दे परकार्यद्दे कल्याण वित्ते च सदाविनी ते ॥ नारीषु नित्यं स्विभूषिनासः पनिव्रतासः प्रियवादिनी षु। अमुक्त हस्ताक कतान्विताक क्रयम्भाण्डाक बिटिय याक ॥ सम्मृष्ट्वेशमाक जितेन्द्रियाक क्रियपेताक विटी लुपासः। धर्माव्यपेक्षासः दयान्वितासः स्थिता सदाहं मधुस् दने तु॥ ॥ इति वैष्णवे धर्माशास्त्रे नवनवितन मोऽ ध्यायः॥

विष्णुसमृतः।
धर्माशास्यिमदं श्रेष्ठं स्वयं देवेन भाषितम्। ये हिनाधार यिष्यन्ति तेषां स्वर्गे गितिः परा॥ दं पिविश्रं मङ्गल्यं स्वर्गः मायुष्यमेव च। ज्ञानञ्जेव यशस्यं च धनसीभाग्यवर्द्धनम्॥ अध्येतव्यं धारणीयं श्राव्यं श्रोतव्यमेव च। श्राद्धेषु श्रावणीयं च भूतिकामेनिरेः सदा। इदं रहस्यं परमं कथितं वस्त धे! तव॥ मया प्रसन्तेन जगिद्धतार्थं सीभाग्यमेतत् परमं रहस्यम्। दुःस्वप्ननाशं बहुपुण्ययुक्तं शिवालयं शाश्वतधर्मशास्त्रम्॥ ॥ इति वैष्णावे धर्माशास्त्रे शततमोऽध्यायः॥ समाप्ता चेयं श्रीभगविद्धण्यसंहिता॥

लघुहारीतस्मृतिः।

ये वर्णाश्रमधर्मास्थास्ते भक्ताः केशवं प्रति। इतिपूर्वं त्वया प्रोक्तं भूर्भवः स्विद्वजोत्तमाः ॥ वर्णानामाश्रमाणात्र्य धर्मान्नो श्रूहं सत्तम !। येन सन्तुष्यते देवो नारसिंहः सनातनः ॥ अवाहं कथयिष्यामि पुरावृत्तमनुत्तमम् । अद्यिभिः सह संवादं हारीतस्य महात्मनः ॥ हारीतं सर्वधर्माज्ञमासीनिम व पावकम् । प्रणिपत्यात्रुवन् सर्वे मुनयोधर्मकाङ्किणः॥ भगवन् । सर्वधर्मज्ञ । सर्वधर्मज्ञ । वर्णानामाश्रमाणात्र्य धर्मान्नो ब्रुहि भागव । ॥ समासाधोगशास्त्रव्य विष्णुभक्तिकरं परम् । एतच्चान्यच भगवन् । ब्रूहि नः परमो गुरुः ॥ हारीतस्तानुवाचाथ तेरेवं चोदितो मुनिः । शृण्वन्तु - मुनयः । सर्वे । धर्मान् वस्यामि शाश्वतान् ॥ वर्णानामाश्रमाणात्र्य योगशास्त्रव्य सत्तमाः । सन्धार्य्य मुच्यते मर्त्याः जन्मसंसारबन्धनात् ॥ पुरा देवो जगत्स्त्रष्टा परमात्मा जलोप

रि। सब्बाप भोगिपर्यों शयने तु श्रिया सह। तस्य स तस्य नाभी तु महत् पद्ममभूत् किल । पद्ममध्ये अभवद् ब्रह्मा वेदवेदाङ्ग भूषणः ॥ स चौक्तो देवदेवेन जगत् सृज पु नः पुनः । सो अपि सृष्ट्या जगत् सर्वे सदेवास्तरमानुषम् ॥ यज्ञसिन्धर्यमन् धान् बाह्मणान्मुखतो असृजत् । असृजत् क्षत्रियान बाह्नो वैश्यानप्युरुदेशतः ॥श्रद्भाश्च पादयोः स्था नेषाञ्चेषानुपूर्वशः। यथा पोवाच भगवान् ब्रह्मयो निं पितामहः॥ तद्द्यः संप्रवृक्ष्यामि शृणुत दिजसत्तमाः।। धन्यं यशस्यमायुष्यं स्वर्गे मोक्षफरुमदम् ॥ ब्राह्मण्यां ब्रा हाण्नेवसुरानो ब्राह्मणः समृतः। तस्य धर्मा पवक्षामि त्योग्यं देशमेव च ॥ रूष्णसारो मृगो यत्र स्वभावेन पव र्मते। तस्मिन्देशे वसे दर्मः सिन्धति दिजसत्त्माः।॥ षट् कर्माणि निजान्याहुब्रह्मिणस्य महात्मनः। तैरेव सततंय स्तु वर्त्तयेत् सरवमेंधते ॥ अध्यापनं वाध्ययनं याज्नं यज नं तथा। दानं प्रतियह्रभ्वेति षद् कर्माणीति चोच्यते॥ अ ध्यापनन्त्र त्रिविधं धर्मार्थिमृक्यकारणात् । क्रश्रूषाकरण अविनि विविधं परिकी सितम् ॥ एषामन्यतेमाभाषे व्याचा रो भवेद्विजः। तत्र विद्या न्दातच्या पुरुषेण हितेषिणा ॥ योग्यानध्यापये च्छिष्यानयोग्यान्पि वर्जयेत्। विदितान् म निगृहीयाद्गृहे धर्मप्रसिद्धये ॥ वेदञ्जीवाभ्यसेनित्यं शुर्वी देशे समाहितः। धर्मशास्त्रं तथा पाठ्यं ब्राह्मणेः शुद्धमान सैं: ॥ वेद्वित् पित्व्यञ्च श्रोतव्यञ्च दिवा निशि । स्मृति-हीनाय विपाय श्वितिहीने तथेव च । दानं भोजन्मन्य च द नं कुलविनाशनम् ॥ तस्मान् सर्वपयलेन् धर्माशास्य प-देहिंजः। श्रातिसमृती च वियोणां चक्ष्मवी देवनिमिते ।का-

उघुहारीनस्पृती। 940 णस्तत्रेकया हीनो द्वापयामन्यः प्रकीतितः ॥ गुरुपासूष्ण श्रीव यथान्यायमतन्द्रितः । सायं पातरुपासीत विवाहानिं हिजोत्तमः।॥ सरनातस्तु पकुर्वित वैश्वदेवं दिने दिने। अ तिथीनागताञ्छत्तया पूज्येदिवचारतः॥ अन्यानभ्यागता न् विमाः ! पूजयेच्छिकितो गृही । स्वदार निरतो नित्यं पर-दार विवर्जितः ॥ कतहोमस्त भञ्जीत सायं पातरुदार्धीः। सत्यवादी जितकोधो नाध्मे वर्त्तयेनमतिम् ॥ स्वकर्मणिच संपाप्ते प्रमादान्न निवर्त्तने । सत्यां हितां वदे द्वाचं परहोक हितेषिणीम् ॥ एष धर्मः समुद्दिशे ब्राह्मणस्य समासतः। धर्ममेव हि यः कुंच्यति स याति ब्रह्मणः पदम् ॥ इत्येष ध र्मः कथितो मयायं पृष्टी भवदिस्विखाघहारी। वृदामि राज्ञामपि चैव धर्मान् पृथक् पृथग्बोधत विप्रवर्ध्याः॥॥ इति हारीते धर्मशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः॥ क्षत्रादीनां प्रवस्यामि यथावदनुपूर्वशः। येषु प्रस्ता विधिना सर्वे यान्ति परां गतिम् ॥ राज्यस्यः क्षित्रयश्चापि प जाधमीण पालयन्। कुर्यादध्ययनं सम्यग्यजेद्यज्ञान् यथाविधि ॥ द्दाहानं हिजातिभयो धर्मबुहिसमान्वितः। स्वभायानिरतो नित्यं षड्भागाही सदा नूपः ॥ नीतिशा-स्त्रार्थक्यालः सन्धिवियहतत्त्वित्। देवब्राह्मणभक्त्र्यप तृकार्य्यपरस्तथा॥ धर्मण यजनं कार्यमधर्मपरिवर्जनम्। उत्तमां गतिमामोति क्षत्रियोऽप्येवमाचरन् ॥ गौरक्षां कृषि वाणिज्यं कुर्याद्वेशयो यथाविधि। दानं दैयं यथाशत्त्या ब्राह्मणानाञ्च भोजनम् ॥ दम्भमोह विनिर्मुक्तस्या वाग नसूयकः। स्वदारिनरतो दान्तः परदारिववितिः॥ धनी विपान् भोनियता यज्ञकाले तु याजकान्। अपभूतव्य

वर्तत धर्मेष्वादेहणाननात्॥ यज्ञाध्ययनदानानि कुर्घ्यानि त्यमतिन्तः। पिनृकार्घ्यपरश्चेव नरसिंहार्चनापरः॥ एत देश्यस्य धर्मोऽयं स्वधर्मममनुतिष्ठति । एतदाचरते योहि स स्वर्गी नात्र संशयः॥ वर्णत्रयस्य श्रुश्च्यां कुर्घ्यान्छ्द्रः प्रयत्नतः। दासवद्बाह्मणानाञ्च विशेषण समाचरेत्॥ अयाचितपदाता च कष्टं वृत्यर्थमाचरेत् । पाकयज्ञविधा नेन यजेद्देवमतिन्द्रतः॥ श्रूद्राणामधिकं कुर्घ्यादर्चनं न्याय वर्तिनाम्। धारणं जीर्णवस्त्रस्य विपस्योच्छिष्ठभोजनम् । स्वदारेषु रितश्चेव परदारविवर्जनम् ॥ इत्यं कुर्घ्यात् सदाश्च्रद्रो मनोवाकायकर्मिभिः। स्थानभेन्द्रमवाद्रोति नष्टपापः सपुण्यकृत्॥ वर्णेषु धर्मा विविधा मयोक्ता यथानथा ब्रह्मसुरविरताः पुरा। शृणुष्वमनाश्चमधर्मामाद्यं मयोच्यमानं क्रमशो सुनीन्द्राः॥ ॥ इति हारीते धर्माशास्त्रे हि तीयोऽध्यायः॥

उपनीतों मानवको वसेद्गुरुकुछेषु च। गुरोः कुछे पि यं कुर्य्यात् कर्मणा मनसा गिरा ॥ ब्रह्मचर्य्यमधः श्रय्या तथा वन्हेरुपासना । उद्कुम्भान् गुरोर्द्धा द्रोयासञ्चन्ध-नानि च॥ कुर्याद्ध्ययनञ्चेष ब्रह्मचारी यथाविधि । विधि त्यत्का पकुर्व्याणों न स्वाध्यायफळं ठभेत् ॥ यः कश्चित् कु रुते धर्म विधिं हित्वा दुरात्मवान् । न तत्फळमवाप्नोति-कुर्वाणोऽपि विधिच्युतः ॥ तस्माद्देदवतानीह चरेत् स्वाध्या यसिद्ये । शोचाचारमशेषं तु शिक्षयेद्गुरुसानिधी ॥ अ जिनं दण्डकाषञ्च पेखळाञ्चोपवीतकम् । धारयेद्यमस् भ ब्रह्मचारी समाहितः ॥ सायं पातश्चरेद्रैक्षं भोज्याथे संयतेन्द्रियः । आचम्य प्रयतो नित्यं न कुर्याद्दन्तधावन

म्।। छत्रञ्चीपानहञ्चेष गन्धमाल्यादि वर्जयेत्। नृत्यगी तमथालापं मैथुनञ्च विवर्जयेतु ॥ हस्त्यश्वारोहणञ्जीव संत्यजेत् संयतेन्द्रियः । सन्ध्योपास्तिं प्रकृळीत् ब्रह्मचा री व्रतस्थितः ॥ अभिवाद्य गुरोः पादी सन्ध्याकर्मावसान तः। तथा योगं पकुर्वीत् मातापित्रोश्च भक्तितः॥ एतेष त्रिषु नष्टेषु नष्टाः स्युः सर्वदेवताः । एतेषां शासने तिष्ठेद्व ह्मचारी विमत्सरः ॥ अधीत्य च गुरों वेदान् वेदी वा वेदमे व वा । गुरवे दक्षिणां दद्यात् संयमी याममावसेत् ॥ यस्यैः तानि सगुप्तानि जिह्नोपस्थोदरं करः। संन्याससमयं छला ब्राह्मणो ब्रह्मचर्यया ॥ तस्मिन्नेव नयेत् कालमाचार्ये या वदायुषम्। तदभावे च नतपुत्रे तिन्छिष्ये वाथवा कुले॥ न विवाहो न संन्यासो नेष्ठिकस्य विधीयते ॥ इमं योविधिमा स्थाय त्यजेदेहमतन्द्रितः। नेह भूयोऽपि जायेत ब्रह्मचारी दृढ बतः ॥ यो बहाचारी विधिना समाहितऋरेत् पृथिव्यां गु रुसेवने रतः । संपाप्य विद्यामति दुर्लभां शिवां फेल्ब्र्य तस्याः क्रुलमं तु विन्दति॥ ॥ इति हारीते धम्मिशास्त्रे तृती-योऽध्यायः॥

गृहीतवेदाध्ययनः ऋतशास्त्रार्थतत्त्ववित्। असमा
नार्षगोत्रां हि कन्यां सफातृकां श्रामाम् ॥ सव्ववियवसंपू
णां सहना मुद्दहेन्नरः। ब्राह्मेण विधिना कुर्य्यात् प्रश-स्तेन दिजोत्तमः॥ तथान्ये बहवः प्रोक्ता विवाहा वर्णधर्मा तः। औपासनञ्च विधिवदाहृत्य दिजपुड्नवाः।॥ सायं पा तश्च जुडुयात् सर्वकालमतन्द्रितः। स्नानं कार्य्यं ततोनित्यं दन्तधावनपूर्व्यकम् ॥ अषःकाले समुत्थाय कृतशोचो यथा विधि। मुखे पर्य्युषिते नित्यं भवत्यप्रयतो नरः॥ तस्मान्यु- ष्कमथांद्री वा भक्षयेद्दन्तकाष्ठकम् । करञ्ज खादिर वापि क दम्बं कुर्वं तथा ॥ सस्पर्णप्रिमपणीजाम्बनिम्बं तथेव च । अपामार्गञ्च बिल्वञ्चार्कञ्चोदुम्बरमेव च ॥ एते प्रशस्ताः क थिता दन्तधावनकम्मिणि। दन्तकाष्ठस्य मधन्त्र समासेन प कीर्त्तितः॥ सर्वे कण्टकिनः पुण्याः क्षीरिणन्त्र यशस्विनः। अष्टाङ्गुलेन मानेन दन्तकाष्ठिमहोच्यते। पादेशमात्रमथ वा तेन दन्तान् विशोधयेत् ॥ मतिपत्पर्वषष्ठीषु नवम्याञ्चे व सत्तमाः!। दन्तानां काष्ठसंयोगाद्हत्यासप्तमं कुलम्।। अभावे दन्तकाषानां प्रतिषिद्धदिनेषु च। अपां दाँदशांगण्डू षेर्मुखशुद्धिं समाचरेत् ॥ स्नात्वा मन्लवदाचम्य पुनराचमे नं चरेन्। मन्तवत् पोध्य नात्मानं प्रक्षिपेद्दकाञ्जितिम्॥ आदित्येन सह पातर्मन्देहा नाम राक्षसाः । युद्धान्ति वर-दानेन ब्रह्मणोऽव्यक्तजनमन्ः॥ उदकाञ्जलिनिःक्षेपारगाय त्या चापिमन्तिताः। निमन्ति राक्षसान् सर्वान् मन्देहा-स्यान् दिजेरिताः ॥ ततः प्रयाति स्विना ब्राह्मणेरिभरिक्ष तः। परीच्याद्येर्महाभागैः सनकाद्येश्व योगिभिः॥तस्मा न लड्डायेत् सन्ध्यां सायं पातः समाहितः । उल्लङ्घाति यो मोहात् स्याति नरकं धवम् ॥ सायं मन्त्रवदा्चम्य पो ६य सूर्य्यस्य चाञ्जितिम् । दत्वा मदक्षिणं कुर्याञ्जलं स्पृ ह्या विशान्द्राति ॥ पूर्वी सन्ध्यां सनक्षत्रा मुपासीत यथा विधि। गायत्रीमभ्यसेतावद् यावदादित्यद्शीनात्॥ उ पास्य पश्चिमां सन्ध्यां सादित्याञ्च यथाविधि । गायत्रीम भ्यसेताबद्यावतारा न पश्यति ॥ ततुश्रावसयं भाष्य रुखा होमं स्वयं बुधः । सिब्बन्य पोष्यवर्गस्य भूरणार्थे विचक्ष-णः॥ तनः शिष्यहितार्थाय स्वाध्यायं किञ्चिदाचरेत्। ईश्र

उधुहारीतस्मृती। 948

रन्त्रीव कार्यार्थम् भिगच्छे हिजोत्तमः ॥ कुशपुष्येन्धनादीनि गत्वा दूरं समाहरेत् । ततो माध्याक्तिकं कुर्याच्छ्ची देशे मनोरमे। विधि तस्य प्रवस्यामि समासात् पापनाशन-मृद्मानीय शुद्धाक्षताति छैः सह। समनाश्व ततो गच्छेन दी शुद्ध नलाधिकाम् ॥ नद्यां तु विद्यमानायां न स्नायाद न्यवारिणि। न स्वायादल्यतीयेषु विद्यमाने बहुद्के॥स रिद्दरं नदी स्वानं प्रतिस्त्रोतः स्थित अवरेत्। तडागादिषु तोये षु स्नायाच तदभावनः॥ श्विवदेशं सम्भ्युक्य स्थापयेत सकलाम्बरम् । मृत्तीयेन स्वकं देहं लिम्पेत् प्रक्षाल्य प्रकृतः॥ स्नानादिकञ्च संपाप्य कुर्व्यादाचमनं बुधः। सोऽन्तर्नलं प्र विश्याथ वाग्यतो नियमेन हि। इरिं संस्मृत्य मनसा मज येचीरुमञ्जरे ॥ ततस्तीरं समासाद्य आचम्यापः समन्त तः। प्रोक्षयेदारुणे मन्त्रैः पावमानी भिरेव च ॥ कुशाय कृततीयेन पोध्यात्मानं पयस्तः। स्योनापृथिवीतिमृद्रा त्रे इदं विष्णुरिति दिजाः। ॥ ततो नारायणं देवं संस्मरेत् प्रतिमज्जनम् । निमज्यान्तर्जले सम्यक् क्रियते नाघमर्ष णम् ॥ स्वात्वां क्षत्तिलेस्तइ देविषिपितृ भिः सह। तर्पः यित्वा जलं तस्मानिषीड्य च समाहितः ॥ जलतीरं स मासाद्य तत्र शुक्के च वाससी । परिधायोत्तरीयञ्च कु र्घात् केशान्न धूनयेत् ॥ न रक्तमुल्बणं वासो न नील्ब्र प्रशस्यते । म्लाकं ग्न्धहीनञ्च वर्जयेदम्बरं बुधः॥ततः मक्षालयेत् पादी मृत्तीयेन विचक्षणः । दक्षिणन्तु कर छ ला गोकणीकृतिवन् पुनः ॥ किः पिबेदी सिनं नौयमास्य द्विःपरिमार्जियेत् । पादी शिरस्ततो अभ्यस्य विभिरास्य

मुपस्पृशेन् ॥ अङ्गुष्टानामिकाभ्याञ्च चक्षुषी समुपस्पृशेन् । तथेव पञ्चिमिम्द्रि स्पृशेदेवं समाहितः ॥ अनेन विधि नानम्य ब्राह्मणः शन्द्रमानसः। कुचीतं दर्भपाणिस्तूदङ् मुखः पाङ्युखोडपि वा ॥ पाणाँयामत्रयं धीमान् यथा-न्यायमतन्द्रितः । जपयज्ञं ततः कुर्योद्रायत्री वेदमातरम्॥ विविधो जपयत्तः स्यात्तस्य तत्त्वं निबोधन । वानिकश्च उ पांक्रश्च मानसश्च त्रिधारुतिः॥ त्रयाणामपि यज्ञानां -श्रेषः स्यादुत्तरोत्तरः॥ यदुचनीचोचरितैः शब्दैः स्पष्टपदा क्षरैः। मन्त्रमुचारयन् वाचा जपयज्ञस्तु वाचिकः ॥ शनै-रुचारयन्मन्तं किञ्चिदोष्टी प्रचालयत् । किञ्चिच्छुवण-योग्यः स्यात् स उपांशुर्जिपः समृतः ॥ धिया पदाक्षरे श्रेण्या अवर्णमपदाक्षरम् । शब्दार्थिनिन्तनाप्यान्तु तदुक्तं मानसं स्पृतम् ॥ ज्पेन देवता नित्यं स्त्यमाना मसीदात । पसन्ने विपुलान् गोत्रान् प्राप्तनित मनीषिणः ॥ राक्षसान्त पिशा नाश्च महासपश्चि भीषणाः। जिपतान्नोपसपीन्ते दूरादेव प्रयानि ते ॥ च्छन्द ऋ ध्यादि विज्ञाय जपेन्मन्लमतान्द्र-तः। जपेदहरहज्ञीता गायत्रीं मनसा दिजः ॥ सहस्र पर-मां देवीं शतमध्यां दशावराम्। गायवीं यो जपेन्नित्यं स न पापेन लिप्यते ॥ अथ पुष्पाञ्जलि कत्या भानचे चोई बाह कः। उदुत्यञ्च जपेत् सूक्तं तच्छारिति चापरम् ॥ पद्धिण मुपारूत्य नमस्कुर्याहिंगकरम्। नतस्तीर्थेने देवादीनद्भिः सन्तर्पेयेद्विनः ॥ स्नानवस्त्रन्तु निष्पीङ्य पुनर चग्नं चरे-त्। तह्रद्रक्त ज्नस्येह स्नानं दानं प्रकीर्तितम् ॥ दमिशी नों द्रभीपाणिर्वहमयज्ञविधानतः। पाङ्युखो ब्रह्मयज्ञं तु कुर्याच्छ्न्दासमन्वितः॥ ततोऽ ध्यं भानवे दद्यासिलपुष्पाक्ष

उघुहारीतस्मृती। 948 तानितम्। उत्थाय मूर्द्धपर्यन्तं हंसः शुनिषदित्युचा ॥ततो देवं नमस्कृत्य गृहं गच्छेत्ताः पुनः । विधिना पुरुषसूक्तस्य गत्वा विष्णुं समर्चयेत् ॥ वैश्वदेवं ततः कुर्योद्द्रिकमिविधा नतः। गोदीहमात्रमाकोङ्क्षेदितिथि पति वे गृही ॥ अद्ख्यू र्जम्ज्ञातमतिथिं प्राप्तमचियेत्। स्वागतासनदानेन प्रत्य त्थानेन चाम्बुना॥ स्वागतेनाग्नयस्तुषा भवाने गृहमेधिनः आसनेन तु दत्तेन मीतो भवति देवराट् ॥ पादशीचेन पित-रः पीतिमायान्ति दुर्जुभाम् । अन्नदानेन युक्तेन तृष्यते हि यजापतिः ॥ तस्माद्तिथये कार्यं पूजनं गृहमेधिना । भ त्तया च शक्तितो नित्यं विष्णोरचीअनन्तरम् । भिक्षाव्य भिक्षवे दद्यान् परिवाइब्रह्मचारिणे ॥ अकल्पितानादुद्धत्य सव्यञ्जनसमान्वताम्। अकृते वैश्वदेवेऽपि पिक्षीच् गृह मागते। उद्दय वैश्वदेवार्थे भिक्षां दत्त्वा विसर्जयेत् ॥ वेश्वदे वाकृतान् दोषाञ्छको भिक्षुर्व्यपोहितुम्। नहि भिक्षुकृता न् दोषान् वैश्वदेवो व्यपोहति ॥ तस्मात् प्राप्ताय यत्ये भिक्षां दद्यात् समाहितः। विष्णुरेव यतिच्छ्रायइति निश्चि त्य भावयेत् ॥ सुवासिनीं कुमारीञ्च भोजयित्वा नरानिष। बाल वहारततः शेषं स्वयं भुञ्जीत वा गृही ॥ पाङ्गुरवोदङ्ग स्तो गापि मोनी च मितभाषकः। अन्नमादी नमस्कृत्य प हुए नान्तरात्मना॥ एवं प्राणाहुतिं कुर्य्यान्मन्त्रेण च पृथक् पृथक्। ततः स्वादुकरान्यञ्च फञ्जीत सुसमाहितः ॥आच म्य देवतामिष्टां संस्मरन्तुदरं स्पृशेत् । इतिहास पुराणाप्यां कञ्चित् कार्ड नयेद्बुधः ॥ ततः सन्ध्यामुपासीत् बिहर्गला विधानतः । इतहोमस्तु भुञ्जीत रात्री चाँतिथिभोजनम् ॥ सायं पातर्दिजातीनामशनं श्वतिचोदितम् । नान्तराभोजनं

कुर्व्यादिनिहोत्रसमोविधिः ॥ शिष्यानध्यापयेचापि अन-ध्याये विसर्जेयेन् । स्पृत्युक्तानसिढांश्वापि पुराणोक्तानपि हिजः॥ महानवस्यां हादश्यां भरण्यामपि पर्व्यक्तः। तथा-क्षयतृतीयायां शिष्यान्नाध्यापयेद्दिनः । माधमासे तु सप्तम्यां रथारयायां तु वर्जयेत् ॥ अध्यापनं समप्यञ्जन स्नानकाले च वर्जयेत् ॥ नीयमानं शवं दक्षा महीस्थं वा दिजोत्तमाः। न परेद्रदितं शुला सन्ध्यायां तु दिजोत्तमः॥ दानानि च प्रदेयानि गृहस्थेन दिजोत्तमाः । हिरण्यदानं गोदानं पृथिवीदानमेव च ॥ एवं धर्मी गृहस्थस्य सायंभू त उदाहतः। यएवं श्रद्धा कुर्यात् स याति ब्रह्मणः पद्मे ॥ज्ञानोत्कर्षत्र तस्य स्यान्नारसिंह प्रसादतः । तस्यान्युक्ति म्वाप्नोति ब्राह्मणो हिजसत्तमाः। ॥ एवं हि विपाः। कथि तो मया वः समासतः शोश्वत धर्माराशिः । गृही गृहस्थस्य सतोहि धर्म कुर्वन् पयलान्हरिमेति युक्तम् ॥ हारीते धर्माशास्त्रे चतुथेडि ध्यायः॥

अतः परं भवस्यामि वानप्रस्थस्य सत्तमाः।। धमित्रमं महाभागाः। कथ्यमानं निबोधत ॥ गृहस्थः पुत्रपीत्रादीन् हस्वा पितनमात्मनः। भार्थ्यो पुत्रेषु निःक्षिप्य सह वा प्रवि शे इनम् ॥ नरवरोमाणि च तथा सितगात्रत्वगादि च। धार यन जुड्डयादिनं वनस्थोविधिमाश्वितः ॥ धान्येश्व वनसं भूतेनी वाराद्ये रिनिन्दितेः। शाकमूलफलेव्यिप कुर्य्यानि त्यं भयस्तः॥ त्रिकालस्वान युक्तस्तु कुर्य्यातीव्रं तपस्तदा। पक्षान्ते वा समश्रीयान्मासान्ते वा स्वपक्षभुक् ॥ तथा च नुर्यकाले तु भव्जीयाद्यमेऽथवा। षष्ठे च कालेऽप्यथवा वासुभक्षोऽथवा भवेत् ॥ धर्म पञ्चािन मध्यस्थस्तथा वर्षे

१५८ उधुहारीतस्मृती।

निराश्रयः। हेमन्ते च जले स्थित्वा नयेत् काठं तपश्चरन् ॥
एक्ब्र कुर्व्यता येन कतबुद्धियथाक्रमम्। अग्निं स्वात्मनिक् त्वा तु प्रव्रजेदुत्तरां दिशम् ॥ आदेहपातं वनगो मीनमास्था य तापसः। स्परन्नतीन्द्रियं ब्रह्म ब्रह्मछोके महीयते॥ त पोहि यः सेवित वन्यवासः समाधियुक्तः प्रयतात्तरातमा। विमुक्तपापो विमलः प्रशान्तः स याति दिव्यं पुरुषं पुराण म्॥ ॥ इति हारीते धर्माशास्त्रो पञ्चमोऽध्यायः॥

अतः परं प्वध्यामि चतुर्थाश्यमसुत्तमम् । श्रद्ध्या तदनु श्य तिष्ठन्युच्येत बन्धनात् ॥ एवं वनाश्रमे तिष्ठने पातयं श्वीय कि लियम्। चतुर्थमाश्रमं गच्छेत् संन्यासि धिना हि जः ॥ दत्ता पितृभयो देवेभयो मानुषेभयश्च यहातः । दत्ता-श्रान्द्र पितृभ्यश्र्व मानुषेभ्य स्तथात्मनः ॥ इष्टिं वैश्वानरीं ह त्वा पाङ्मुखोदङ्मुखोऽपि वा। अग्निं स्वात्मनि संरोप्य मन्लवित् प्रवजेत् पुनः ॥ ततः मभृति पुत्रादी स्नेहालापा दि वर्जुयेत् । बन्ध्नामभयं दद्यात् सर्वभरताभयं तथा ॥ वि दण्डं वैणवं सम्यके सन्ततं समपर्कम् । वेष्टितं रूष्णगो-वालरज्जुमचतुर्ड्युलम् ॥ शोचार्थं मानसार्थञ्ज मुनिभिः समुदाहतम्। कीपीनाच्छादनं वास्ः कन्यां शीतनिवारिणी-म्। पादुके चापि गृहीयात् कुय्यानान्यस्य संयहम्। ए नोनि त्स्य छिङ्गानि यतेः योक्तानि सर्वदा ॥ संगृह्ये कृत संन्यासो गत्वा तीर्थमनुत्तमम्। स्नात्वा चम्य च विधिवह स्त्रपूर्तन वारिणा ॥ तर्पयित्वा तु देवांश्च मन्लबद्भास्करं न मेत्। आत्मनः पाइन्मुखो मोनी पाणायामनयं चरेत्॥ गा यत्रीञ्च ययाशक्ति जाला ध्यायेन् परंपदम् ॥ स्थित्यर्थमा त्मनीनित्यं भिक्षाटनमथाचरेत्। सायंकाले तु विपाणां

गृहाण्यप्यचपद्य तु । सम्यक् याचेच कव्हं दक्षिणेन करेण वै॥ पात्रं वामकरे स्थाप्य दक्षिणेन तु शेषयेत्। यावताने न तृप्तिः स्याताबद्भेक्षं समाचरेत् ॥ ततोनिच्त्य तत्पात्रं संस्थाप्यान्यत्र संयमी । चतुर्भिरङ्ग्युष्ठेश्लाद्य यासमात्रं स-माहितः॥ सर्वव्यञ्जनसंयुक्तं पृथक् पात्रे नियोजयेत् । सूर्यादिभूत्देवेभयो दुत्त्वा संप्रोक्यं वारिणा। भुन्जीत पा त्रपुरके पात्रे वावन्यतो यतिः ॥ वटकाश्वत्थपणीषु कुम्भी तैन्दुकपात्रके। कोविदारकदम्बेषु न फञ्जीयात् कदाच न॥ महाक्ताः सर्वे उच्यन्ते यतयः कांस्यभाजिनः॥ कांस्य भाष्डेषु यत् पाको गृहस्थस्य तथैव च। कांस्ये भोजयतः सर्वे किल्बिषं पाप्तयात्तयोः॥ मुत्का पात्रे युतिर्नित्यं सा उयेन्मन्लपूर्वकम् । न दूष्यते च् त्तात्रं यज्ञेषु नमसाइ व ॥ अयाचम्य निदिध्यास्य उपतिष्ठेत भास्करम् । जपध्या नेतिहासेश्व दिनशेषं नयेद्बुधः ॥ कृतसन्ध्यस्ततो रात्रि नयेदेवगृहादिषु । हृत्पुण्डरीकनिलये ध्यायेदात्मानमय यम्।। यदि धर्मारतिः शान्तः सर्वभूतसमो वशी। प्रामी-ति परमं स्थानं यत्पाप्य न निवर्तते ॥ त्रिदण्ड भृद्योहि पृ थक् समाचरेच्छनेः शनैयस्तु बहिर्मुखाक्षः । संमुच्य संसा रसेमस्तबन्धनात् स याति विष्णोरमृतात्मनः पदम् ॥ इति हारीते धरम्भिशास्त्रे षष्ठाऽध्यायः ॥

वण्णिनामात्रमाणाञ्च कथितं धर्मछक्षणम्। येन स्व गणिवर्गञ्च प्राप्तुवन्ति हिजातयः॥ योगशास्त्रं प्रवक्ष्यामि संक्षेपान् सारमुत्तमम्। यस्य च श्रवणाद्यान्ति मोक्षञ्चैव मुमुक्षवः॥ योगाभ्यासब्छेनैव नश्येयुः पातकानि तु। तस्मा द्यागपरो भूत्वा ध्यायेन्तित्यं कियापरः॥ प्राणायामेन व

उधुहारीत स्मृती। वनं प्रत्याहारेण चेन्द्रियम्। धारणाभिवेशे कत्वा पूर्चे दुर्धर्षणं मनः॥ एकाकारमना मन्दं बुधे रूप्मनामयम्। सूक्षात् सूक्ष्मतरं ध्यायेत् जगदाधारमुच्यते ॥ आत्मानं ब हिरन्तस्थं शुन्दवामीकरप्रभूम्। रहस्येकान्तमासीनो ध्या-येदामरणानिकम्॥ यत्सर्वमाणि हृद्यं सर्वेषाञ्च हृदि स्थि तम्। यच सर्वजनेत्रीयं सोऽहमस्मीति विन्तयेत्॥ आत्म लामसुखं यावत्तपोध्यानमुदीरितम् । श्वतिसमृत्यादिकं ध मी तहिरुद्दं न चाचरेत् ॥ यथा रथोऽ श्वहीनस्तु यथाश्वी रिषहीनकः। एवं तपश्च विद्या च संयुतं भैषजं भवेत्॥ यथा नं मधुसंयुक्तं मधुवानेन संयुतम्। उभाष्यामपि पक्षाभ्यां यथा खे पक्षिणां गतिः। तथैव ज्ञानकम्मित्यां प्राप्यते ब्रह्म शाश्वतम् ॥ विद्यातपोभ्यां संपन्नो ब्राह्मणो योगतत्परः । देहद्यं विहायाप्र मुक्तो भवति बन्धनात् । न तथा सीणदे-हस्य विनाशो विद्यते कवित् ॥ मया ते कथितः सच्ची वणित्र मविभागशः। संक्षेपेण दिजश्रेषा। धर्मास्तेषां सनातनः ॥ क्रत्वेवं मुनयो धर्म स्वर्गमोक्षफल्यदम्। मणम्य तमृषिं जग्मुर्सुदिनाः स्वं स्वमाश्रमम्॥ धर्मशास्त्रमिदं सर्वे हारीन मुखर्निः सृतम् । अधीत्य कुरुते धर्मे स याति परमां गति म् ॥ ब्राह्मणस्य तु यत् कम्मे कथितं बाहुजस्य च। ऊरुज-स्यापि यत् कम्मे कथितं पादनस्य च। अन्यथा वर्तमानस्तु सद्यः पति जातितः ॥ यो यस्याभिहितो धर्माः सतु तस्य तथेव च। तस्मात् स्वधमं कुर्जीत् हिजो नित्यमनाप्दि॥ वणिश्वत्वारो राजेन्द्र। चत्वारश्वापि नाश्रमाः। स्वधमं ये तु तिष्ठनि ने यानि परमां गतिम्। स्वधर्मेण यथा नृणां नारसिंहः पसीदित । न तुष्यित तथान्येन कर्माणा मधुसू

दनः ॥ अतः कुर्वन्तिजं कर्मा यथाकालमतन्द्रितः । सहस्रा नीकदेवेशं नारसिंहञ्च सालयम् ॥ उत्पन्नवेराग्यबलेन योगी ध्यायेत् परंब्रह्म सदा क्रियाचान् । सत्यं क्तरवं रू पमनन्तमाद्यं विहाय देहं पदमेति विष्णोः ॥ ॥ ॥ इति हारीते धर्माशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ॥

रुद्रारीतसंहितायाम्।

अम्बरीषस्तु तं गत्वा हारीतस्याश्रमं नृपः । वयन्दे तं महात्मानं बालाकसद्शयभाम् ॥ संस्पृषकुशालस्तेन पूजि तः परमासने । उप्विष्ट स्तत्वे विषयमुवाच नृपनन्दनः ॥ भगवन् ! सर्वधम्मिज् ! तत्ववेदविदाम्बर ! । पृच्छामिलां महाभाग। परमं धर्ममञ्जयम्॥ ब्रुहि वृणिश्रमाणान्तु नित्यनैमितिकाः कियाः । कर्त्तच्या मुनिशार्द्रेतः । नारीणाञ्च नृपस्य च ॥ स्वरूपं जीवपरयोः कथं मोक्षपेथस्य च । त त्याप्तेः साधनं ब्रह्मन् ! वक्तमहीसे सम्बत ! ॥ एवमुक्त-स्त विपर्विस्तेन राजविणां तदा । उवाच प्रमान्या नम स्कृत्य जनार्दनम् ॥ शृणु राज्न् । प्रवृष्यामि सर्वे वेदोप-रहितम् । यदुक्तं ब्रह्मणा पूर्व पृच्छतो मम् भूपते । ॥ तद् श्रवीमि परं धर्मे शृणु व्येकायमानसः । सर्वेषामेव देवाना मनादिः पुरुषोत्तमः॥ ईश्वरस्तु स एवान्याजगतो विभु रव्ययः। नारायणो वासत्वेवो विष्णुर्ब्रह्मात्मनो हरिः ॥ स्रष्टा धाता विधाता च स एव परमे चरः । हिरण्यगर्भः स्विता गुणध्इनिर्गुणोऽ व्ययः ॥ परमात्मा परं ब्रह्म परं ज्योतिः परात्परः । इन्द्रः मजापतिः सूर्धः शिवो बह्निः त

मी च भगवान् रुष्णो मुकुन्दोऽनन्तएव च ।। यज्ञो यज्ञपति र्यज्या ब्रह्मण्यो ब्रह्मणः पतिः। स एव पुण्डरीकाक्षः श्रीशो नाथोऽधिपो महान् ॥ सहस्रमूद्धी विश्वात्मा सहस्रकर्पा दवान्। यदत्वा न विवर्तन्ते तदाम परमं हरेः ॥ चतुर्भिः शो भनोपायैः साध्योऽयं समहात्मनः । तुरीयपदयोभीत्तया स्तिस्रोध्य मुदाह्तः॥ तं स्वीकुर्वन्तिं विद्रांसः स्वस्वरूप तया सदा। नैसर्गिकं हि सर्वेषां दास्यमेव हरेः सदा ॥स्वा म्यं परस्वरूपं स्याद्दास्यं जीवस्य सर्वदा । परुत्या लात्म नो रूपं स्वाम्यं दास्यमिति स्थितिः ॥ दास्यमेव परं धर्मदा स्यमेव परं हितम् । दास्येनेव भवेन्युक्तिरन्यथा निरयं भे वेत् ॥ विष्णोदिस्यं परा भक्तिरेषा तु न भवेत् कवित् । ते षामेव हि संस्पृष्टं निरयं ब्रह्मणा नृप्। ॥ नारायणस्य दासा येन भवन्ति नराधमाः । जीवन्त एव चण्डाला भविष्यनि न संशयः ॥ तस्पाद्दास्यं पूणं भक्तिमालम्ब्य नृपसत्तम ! नित्यं नैमितिकं सर्वे कुर्यात्प्रीत्ये हरेः सदा ॥ तस्य स्वरू पं रूपञ्च गुणांश्वापि विभूतयः। ज्ञात्वा समर्चये दिष्णुं या वज्जीव मतन्द्रितः ॥ तमेव मनसा ध्यायेद्वाचा सङ्गितियेत्य भुम्। जपेच जुहुयाद्रको तहानेक विलक्षणः ॥ शहुँ खनको ध्वी पुण्डादिधारणं दास्य उक्षणम् । तन्नामकरणञ्जीव वै ष्णावन्तदिहोच्यते ॥ अवैष्णावाश्व ये विमा हर्षदास्ते नराध माः । तेषां तु नरकं वासः कल्पको्टिशतेरपि ॥ तदादि व र्षसञ्चारी मन्तरलार्थतत्ववित् । वैष्णवः सज्गत्पूज्यो याति विष्णोः परं पदम् ॥ अच्यधारी यो विष्रो बहुवैदश्च तोऽपि वा। स जीवन्नेचे चण्डालो मृतो निरयमा प्रयान् ॥

तस्मात्ते हरिसंस्काराः कर्त्तव्या धर्म्मकाङ्क्षिणाम् । अयमे व परं धर्माः प्रधानं सर्व्यकर्मणाम् ॥ ॥ इति वृद्धहारी-तस्मृती विशिष्टधर्माशास्त्रे पञ्चसंस्कारमितपादनं नाम प्र थमोऽध्यायः॥

अम्बरीष्उवाच॥ ॥ भगवन् ! वैष्णवाः पञ्च संस्का राः सर्वकर्मणाम् । प्रधानमिति येचोक्तं सवैरेव महिषिशिः ॥ तद्धिमं ममाचक्ष विस्तरेणीय सम्बत्।। हारीतउ-वाच।। शृणु राजन् । प्रवक्ष्यामि निर्मला वैष्णवाः क्रि याः ॥ यदुक्तं ब्रह्मणा पूर्वे वंसिष्ठाद्येश्व वैष्णवेः । संस्का-राणां तु सर्वेषा माद्यं चक्रादिधारणम् ॥ तत् कर्तव्यं हि सर्वेषां विधीनां व दिजन्मनाम् । आचार्यं संश्येत् पूर्व-मनधं वैष्णवं दिजम् ॥ शुद्धसत्वगुणोपेत् न्यज्याकर्मे-कारणम् । सत्सम्पदायसंयुक्तं मन्त्ररतार्थकोविदम् ॥ ज्ञाः नवैराग्यसंपन्नं वेदवेदाङ्गणरगम् । शासितारं सदा्चायः सर्वधर्मविदाम्बरम् ॥ महीभागवतं विश्वं सदाचारनिषेव-णम्। आलोक्य सर्वशास्त्राणि पुराणानि च वैष्णवाः ॥ नदर्थमाचरेद्यस्तु आचार्यः स उदाहतः । आस्तिक्यमान सं सद्भिरुपेतं धर्मावत्सलम् ॥ श्रद्धानं सदाचारे गुरुशु-श्रूषतत्परम्। सम्बत्सरं मतीक्ष्याये तं शिष्यं शासयेद्रु रुः॥ तस्यादी पञ्च संस्कारान् कुर्यात् समविधानतः। भा तः स्नाता भुनी देशे पूजियता जनादनम् ॥ स्नातं शिष्यं समानीय तेनेव सह देशिकः। स्माप्य पञ्चामृतैरियीश्वका दीनचीयेत्तनः ॥ पुष्पे धूप्रेच दीपश्च नेवेदी विविधेरिप। तत्तत्मकाशके मन्तिरचित् पुरतो हरेः ॥ अग्नो होमं म कुर्वित इध्माधानादिपूर्वकम् । पौरुषेण तु स्रकेन पायसं

रुद्रहारीत संहितायाम्। 838 ध्तमिश्रितम् ॥ आज्येन मूलमन्त्रेण हत्वा चाष्टोत्तरं शतम्। वेष्णच्या चैव गायच्या जुहुयात् प्रयतो गुरुः ॥ पश्चाद-ग्नी विनिक्षिप्य चुकाचाँयुधपञ्चक्म्। पूजयित्वा सह-स्नारं ध्यात्वा तहुहि, मण्डले ॥ षडक्षरेण जुहुयादाज्यं विंश तिसंख्यया। सर्वेश्वं हेतिमन्त्रेश्व एकेकाज्याहतिं कमात् ॥ ततः भदक्षिणं कृत्वा स शिष्यो वह्निमात्मवान्। नमस्कः त्वा ततो विष्णुं जम्बा मन्त्रवरं शुभम् ॥ प्राडन्तरवं तु समा सीनं शिष्यमेकायचेत्सम्। प्रतपेचक्रशङ्खा ही हेत्-भिर्मन्त्रपुचरन् ॥ दक्षिणे तु भूजे नकं वामांसे शङ्खमे व च। गद्रां च भालमध्ये तु हृदये नन्दकं तदा ॥ मस्तके तु तथा शाई मङ्योदिमलं तदा । प्रशात् प्रकाल्य तोयेन प्र नः पूजां समानरेत् ॥ होमशेष समाप्याथ चेष्णवान् भी जयेत्ततः। एवं तापः कियाः कार्याः वैष्णव्यः कल्मषापद्दाः ॥ प्रधानं वैष्णवं तेषां तापसंस्कारमुत्तमम् । नापसंस्कारमा भूण परां सिद्धिमवामुयात् ॥ केविनु वक्रशङ्खी ही प्रत-भी बाहुमूलयोः। धारयन्ति महात्मानश्रक्तमेकं तु वापरे॥ वैष्णावानां तु हेतीनां प्रधानं चक्रमुच्यते । तेनैव बाहुमू ही तु प्रतिनाङ्क येद्बुधः ॥ जाते पुत्रे पिता स्नात्वा होम् हत्वा विधानतः। तेनाग्निनेव सन्तप्त्रक्रण फजमूलयोः ॥ अङ्खिता शिशोः पश्चान्नाम कुर्याच्च वैष्णवम् । पश्चा त्सवीणि कर्माणि कुवीतास्य विधानतः ॥ अङ्कृतिता स् न केण् यत्किञ्चित्कर्म सञ्चरेत्। तत्सर्वे याति वैफल्य मिष्टा प्रतिदिकं नृप। ॥ कारयेन्मन्लेदी्सायां नकाद्याः पञ्च हेत् यः। चकं वै कमीसध्यर्थं जातकमीणि धारयेत्। अचकधारी वित्रस्तु सर्वकर्मसु गर्हिनः ॥ अवैष्णवः समापन्नो नरकं -

नाधिगच्छति । नकादिनिन्हरहितं प्राकृतं कलुषा्नितम् ॥ अवैष्णवन्तु तं द्रात् श्वपाकिमिव सन्त्यजेत् । अवैष्णवस्तु यो विषः श्वपाकादधमः स्मृतः । अश्वाद्धेयो ह्यपाइन्तेयो रीरवं नरकं व्रजेत् ॥ अवेष्णवस्तु यो विषः सर्वधमयुतोऽपि वा । गवां षण्डति विज्ञेयः सर्वकर्मस्क नाहिति ॥ तस्मात्र्वः वि धानेन नप्तं वै धारयेद्दिनः। सविश्रमेषु वसतां स्त्रीणां च श्रुतिचोदनात् ॥ अनायुधासो असुता अदेवा इति वै श्रातिः। चक्रेण तामपवप इत्युचा समुदाहतम् ॥ अपेत्थपङ्गित्यु कं वपेति श्रवणं तदा । तस्माहे तसचकस्य चाहूनं मुनि-भिः श्रतम् ॥ पवित्रं विततं ब्राह्मं प्रभोगित्रे तु धारितम् ॥श्र सैव चाङ्ग्येद्गाने तद्गस्ममवासये। यत्ते प्वित्रमिचिष्यम् ग्ने वीतमनन्तरा ॥ ब्रह्मति निहितन्तेव ब्रह्मणो श्रुतिइहित् म्। पवित्रमिति चेवाग्निर्ग्निवे चक्रमुच्यते ॥ अग्निरेव सह स्रोरः सहस्रा नेमिरुच्यते । नेमितम्तनुः स्यो ब्रह्मणा स-मनां ब्रजन् ॥ यत्ते पित्रमिद्धियमग्नेस्तु न स्तिनिहेतः । द सिणे तु भुजे विषो विभ्रयाद्दे स्तदर्शनम् ॥ सच्ये तु शङ्-खं विभ्रयादिति ब्रह्मविदा विदुः । इत्यादि श्रातिभिः पोत्त विष्णोश्वरूस्य धारणम् ॥ पुराणाब्विति हासेषु सात्विकेषु समृ तिष्विष । शङ्ख्यकोन्द्दं पुण्डादिरहितं ब्राह्मणं नृप ! ॥ यः श्वान्दे भोजयोद्दिशः पितृणां तस्य दुर्गितिः । शृङ्ख्यकोध्य पुण्डादिविन्हेः त्रियतमे हरेः ॥ रहितः सर्वधमेभ्यश्चातो न रकमाभ्रयात् । रुद्रार्चनं त्रिपुण्ड्स्य धारणं यत्र दृश्यते ॥
तच्छ्द्राणां विधिः प्रोक्तो न दिजानां कदाचन । प्रतिलोमा
नुलोमानां दुर्गागणसः भैरवाः ॥ पूजनीया यदाईण बिल्वच
न्दनधारिणाम् । यक्षराक्षसभूतानि विद्याधरगणास्तदा ॥

च्द्रहारीत संहितायाम्।

98,8

चण्डालानामचनीया मद्यमांसन्षिवणम् । स्ववणीविहितं ध र्ममेवं ज्ञाला समाचरेत्॥ रुद्राचिनाद्ब्राह्मणस्तु श्र्द्रेणस मतां व्रजेत्। यक्षभूताचीनात् सद्येषण्डालत्वम्बाभुयात्॥ न भस्म धारयेदियः प्रमापद्गतोऽपि वा। मोहाद्वे विभृ-याद्यस्त सरूरापो भवेद्धवम् ॥ तिर्चक् पुण्ड्धरं विशं प झम्बरध्रं तथा। श्वपाकं इव वीक्षेत न सम्भाषेत कुन्नित तस्माद्हिजाति भिर्धार्य मूर्द्धपुण्ड्विधानतः॥ मृदा शुभ्रेण सततं सान्तरालं मनोहरम् । स्नात्वा शुद्धे प पूर्वाहे विष्णु मभ्यर्च्य देशिकः ॥ स्नातं शिष्यं समाह्य होमं कुर्वति पूर्ववत् परोमाबेति स्केन पायसं मधुमिश्रितम् ॥ इत्वोदमूलमन्त्रे-ण शतमधोत्तरं घृतम् । स्थण्डि हे तु ततः पश्चान्मण्डहानि यदा कमान् ॥ दीत्यस्थमध्ये चलारि विन्यसेन् पुरतो हरेः। विलिखेत्तव पुण्डादि विस्तारायामभेदतः ॥ तेष्व्वयेत्ततौ धीमान् केशवादीननुक्रमात्। तत्र तत्र च तन्मूर्ति ध्यालाम न्तीः समर्चित् ॥ गन्धपुष्पादि सकलं मन्त्रेणैवोचियेद्गुरुम्। मदक्षिण मनुब्रज्य स शिष्यः मणमेत्तथा ॥ तद्बाही निक्षि पेखिष्यः केशवादीन समात्। हिदि विन्यस्य पुण्डाणि गु रूकानि स वैष्णवः ॥ शुभ्नेणेवं मृदा पश्चादिभृयात् सुसमा हितः। त्रिसन्धास्क मृदा विभो यागुकाले विशेषतः ॥ श्रा दे दाने तथा होमे साध्याये पितृतर्पणे। श्रदालुक् र्घपुण्डा णि विभूयाद्दिजसत्तमः ॥ श्राद्धं होमस्तथा दानं स्वाध्या यः पितृतपेणम् । भस्मीभवन्ति तत्सर्वे मूर्ध्वपुण्ड्रम्विनाकृतः म्। ऊर्ध्वपुण्ड्रं विना यस्तु श्राद्धं कुर्वात् सं हिजः । सर्वे न द्राक्ष्सेन्ति नरकं चाधिगच्छति॥ ऊर्ध्वपुण्ड्विहीनन्तु यः श्रादे भोजयेद्दिजम्। अश्रान्ति पितरस्तस्य विण्मूत्रं नात्र

संशयः॥ तस्मातु सततं धार्य मूर्ध्यपुण्डं दिजन्मकः। धारये न तिर्यक् पुण्ड्मापद्यपि कदाचन ॥ तिर्यक्षपुण्ड्धरं विप्रं चण्डालिय सन्त्यजेत्। सोऽनर्हः सर्वरूत्येषु सर्वलोकेषुग् हितः॥ अर्ध्यपुण्ड्विहीनः सन् सन्ध्याकम् समाचरेत्। सर्व तद्राक्तसैनीतं नरकञ्च स गच्छिति ॥ यदि स्यानु मनुष्या-णा मूर्धपुण्ड्विवृजित्म्। द्रष्टव्यन्नेव त्तिञ्चित् शम्शानिम व तद्वेत् ॥ ऊर्धापुण्डं मृदा शुभ्नं ललाटे यस्य देश्यते । च ण्डालोऽपि हि शुद्धातमा विष्णुलोके महीयते ॥ ऊर्ध्यपण्डस्य मध्येतु छलाटे स्तमनोहरे। उक्स्या सह समासीनो रमते त व वे हरिः ॥ निरन्तरातं यः कुर्याद्र्ध्यपुण्डं दिजाधमः। स हि तत्र स्थितं विष्णुं श्रियञ्चेव व्यपोहति ॥ अथेद्मूर्ध्यपु-ण्डुन्तु यः करोति द्विजाधमः। कल्पकोटिसहस्नाणि रीरेवं न रकें बजेत्। तस्माद्रागान्वितं पुण्डुन्धरेदिष्णुपदास्रति। स लाटादिषु नाङ्गेषु सर्वकम्मिक वैष्णवः ॥ नासिकामूलमार-भ्य ललाटान्तेषु विन्यसेत् । अङ्गुलद्यमात्रन्तु मध्यच्छिद्र मकल्पयेत् ॥ पार्श्वे चाङ्गुलमोत्रन्तु विन्यसेट्हिज्सत्तमः। पुण्ड्राणामन्त्राले तु हारिद्रां धारयाँ च्छ्यम् ॥ लेलाटे पृष्ठयोः कण्ठे फजयोरुपायारिष । चतुरुङ्गुरुमात्रन्तु विभ्यादा-य्त दिनः ॥ उरस्यषाङ्गुलं धार्यी भुजयोरायतं तदा। उ दरे पार्वियोन्नित्यमायतन्तु दशाङ्गुलम् ॥ केशवादि नमो उन्तेश्व भीणनाद्यरनुकमात् । ललाटे केशवं स्तपं कुसी ना-रायणं न्यसेत् ॥ वक्षःस्यछे माधवञ्च गोविन्दं कण्डदेशतः । विष्णुञ्च दक्षिणे पार्श्वे बाह्नोश्व मधुसूदनम् ॥ त्रिविकमन्तु वामासे वामनं वामपार्श्वतः । श्रीधरं वामबाहोतु हषीकेशं तदा भुजे ॥ पृषञ्च पद्मनाभन्तु योवे दामोदरं तदा । तत्प्रक्षा

वृन्दहारीतसंहितायाम्। 339 लनतोयेन वासुदेवेति मूर्धनि ॥ केशवसूत स्वणणिमः शङ् खनकगदाधरः। शुकाम्बरधरः सीम्यो मुक्ताभरणभूषिः तः॥ नारायणो घनुश्यामः शङ्खचकगदासिभृत् । पीतवा सा मणिमयेभूषणेरुपशोभितः॥माधवश्वोत्पलप्रस्यश्व कशाई गदासिंभृत्। चिन्माल्याम्बरधरः पुण्डरीकनिभे क्षणः ॥ गोविन्दः शशिवणीः स्यात्पद्मशङ्खगदासिभृत्। रक्तारविन्दपादाङ्ग तसकाञ्चनभूषणः ॥ गोरवण्णी भवे दिष्णुश्वकशङ्खहलासिभृत्। क्षीमाम्बरधरः स्रावी केयू राङ्गदेभूषितः ॥ अरविन्दनिभः श्रीमान् मधुजित्कमलाने नः । चकें शाईन्त्र मुसरं पदां दोिभिविभित्यसी ॥ विविक म्रोरक्तवर्णः शंड्रवनकगदासिभृत् । किरीटहारकेयूरकुण्ड हैश्व विराजितः ॥ वामनः कुन्दवर्णः स्यात् पुण्डरीकोयते क्षणः । दोप्तिविज्ञं गदां चक्रं पदां हैमं विभत्यसी ॥ श्रीध रः पुण्डरीकारव्य श्वक्षशाङ्गी च पद्मध्कृ। रक्तारविन्दन यनी मुक्तादामविभाषितः॥ विद्युद्दण्णी हषीकेशश्वक शाई हलासिभृत्। रक्तमाल्याम्बरधरः पुण्डरीकावतंसकः ॥ इन्द्रनीलनिभश्वकशङ्खपद्मगदाधरः । पद्मनाभः पीत गुसा श्वित्रमाल्यानुलेपनः । दामोदरः सार्व्यभौमः पद्मशा कुंसिशङ्खभूत् ॥ पीतवासा विशालाक्षी नानारलविभू-वितः। ऐवं पुण्ड्राणि सततं धार्येद्वैष्णावीत्मः॥ पुण्ड्सं स्कार इत्येवं शिष्येणापि च कारयेत्। मन्त्रशेषं समाप्या-थू वैष्णवान् भोजयेत्ततः ॥ ॥ इति पुण्ड्संस्कारो हि तीयः॥ नृतीयं नाम संस्कारं कुळीत शुभवासरे ॥ स्नात्वा संपूज्य दे वेशं गन्धपुष्पादिभिगुरून् । नानाधिदेवतं पश्चात् पूजयेत्

प्रयतात्मवान् ॥ द्वादशैव तु मासास्तु केश्वादीरधिष्टिताः । आरम्य मार्गशीर्षं तु यदा संख्या हिजोत्तमः॥ यस्मिन्मा सि भवेदीक्षा तन्मूर्त्तन्मि चोदितम्। नृसिहरामकृष्णा रव्यं दासनाम पकल्पयेत् ॥ शत्त्रयो द्रशावताराणां व जियनाम वैष्णवः । नाम द्यात्प्रयत्नेन वैष्णवं पापनाश नम्॥ यस्य वे वेष्णवं नाम नास्ति चेतु हिजन्मनः। अ
नामिकः स विज्ञेयः सर्वकर्म्सु गहितः ॥ चकस्य धार णं यस्य जातकर्गणि सम्भवेत्। तत्र वे मासनामापि द्यादिमा विधानतः। ध्यात्वा समर्चयन्नाम्मूति मन्त्रेण देशिकः ॥ धूपं दीपञ्च नैवेद्यं नाम्बूलञ्च समर्पयेन् । पद-क्षिण मनुबंद्य भक्तया सम्यक् प्रेणम्य च ॥ तन्मत्र मूल मन्त्रं ग् जपेत्साहस्त्रसङ्ख्यया । पश्चाद्धोमं पकुर्वित शतमशोत्तरं इविः ॥ वैष्णेवैरनुवाकेश्व जुह्यात् सर्पिषा तदा। नाम दद्यान् ततः शिष्यं मन्त्रतीय समाप्रुतम् ॥ त्तः पुष्पाञ्जििं दत्ता होमशेषं स्मापयेत् । वैष्णवो न् भोजयेत्पश्चाद्दक्षिणाद्यैश्च तोषयेत् ॥ एवं हि नाम-संस्कारं कुवीत् दिज्सत्तमः । गुण्योगेन चान्यानि वि ष्णोन्नीमानि हो किके।। विशिष्ट वैष्णवं नाम सर्वकर्म-सु चोदितम्। हरेः परं पितुन्नीम् यो ददात्यपरं स्ततम्। अतिरोचनक् दिव्यं तृतीयं श्रुतिचोदितम्। तस्माद्र गवतो नाम सवैषां मुनिभिः स्मृतम्॥ ॥ इति नामसं स्कार स्तृतीयः॥

एवं तृतींयसंस्कारं कृत्वा वे वेदिकोत्तमः ॥ चतुर्धमन्त्र-संस्कारं कुर्वीत दिजसत्तमः । ततः स्नात्वा विधानेन पू जयेत् जगतां पतिम् । अष्टोत्तरसहस्रं तु मन्तरह्नं ज-

रुद्धारीत संहितायाम्। 9000 पेद्गुरुः ॥ स्नातं शिष्यं समाह्य सवेषं समलङ्कतम्। आदोय कलशं रम्यं पिन्नोदकेपूरितम् ॥ पञ्चलक्पूह वयुतं पञ्चरत्समन्वित्म्। मङ्गलद्रव्यसंयुक्तं मन्त्रेणि वाभिमन्त्रयेत् ॥ सम्मार्ज्येत् ततः शिष्यं तज्जलेन कृशेः श्मीः। स्कीश्व विष्णुदेवत्यैः पावमानैस्तदेव न ॥ अ श्रोत्तरश्तं पश्चान्मन्तरत्नेन मार्जयेत् । अभिविच्यत तो मुधि फक्कवस्त्रधरं श्विम् ॥ स्वलङ्कतं समाचान मूर्धिपुण्ड्रधरं तदा। प्रिवहस्तं पद्माक्षेमालया सम्र ड्रेकतम्। निवेश्य दक्षिणे स्वस्य आसने कुश्निमिते। स्वगृद्योक्तविधानेन पुरतोऽग्नि पकल्पयेत् ॥ पीरुषेणतु स्केन श्रीस्केन तथेव च। मध्याज्यमिश्रितं रम्यं पा यसं जुहुयादूगुरुः॥ अष्टोत्तरशत् पृश्वादाज्यं म्न्लद्द्येन च। मूल्मन्लेण जुहुयाचरं घत्विमिश्रित्म्॥ केशवादी न समोहिश्य नित्यान मुक्तांस्तथेव च। एकैकमाहुतिं ह ला होमशूषं समापयत् ॥ ततः मदक्षिणं छत्वा नमस्ह ला जनार्दनम्। आचाच्यीः स्वगुरुं नत्वा जपेद्गुरुपर-म्पराम् ॥ मातरं सर्वजगतां पपद्येत श्रियं ततः । त्वं मा ता सर्वढोकानां सर्वढोकेश्वरिपये। ॥ अपराध्यातेर्जुषं नमस्तेन ममच्युतम्। एवं प्रप्दा उस्मीं तां श्रियं सद्-गुरुभावतः ॥ नित्ययुक्तं तया देव्या वात्सल्यादिगुणा-न्वितम्। शरण्यं सर्वेहोकानां प्रपद्येत सनातनम्। ना रायण ! दयासिन्धो ! वात्सव्यगुणसागर ! ॥ एनं रेक्ष जगन्नाथ ! बृहुजन्मापराधिनम् । इत्याचार्यण सन्दिष्टः मपद्येत जनादनम् ॥ मपद्येत तेतः शिष्यो गुरुमेव दया निधिम्। गुरो ! त्वमेव मे देव स्त्वमेव परमा गतिः ॥त्वमे-

व प्रमो धर्मी स्त्वमेच परमं तपः । इति अपन्नमाचाच्यी निवेश्य पुरतो हरे: ॥ भागमेषु समोसीनं दभेषु कसमा हितः। स्वाचार्ये पुरतो ध्याला नमस्कृताथ भक्तिमान्॥ गु रीः प्रम्प्रां ज्ञा हदि ध्याता जनादेनम् । रूपया बीक्षि-तं शिष्यं दक्षिणं ज्ञानदक्षिणम् ॥निक्षिप्य हस्तं शिरसि वामं हिद् विन्यसेत् । पादो गृहीत्वा शिष्यस्तु गुरोः भय तमानसः ॥ भो ! गुरो ! ब्रह्म मन्तं मे ब्र्यादिति दयानिधे ! अध्यापयेत्ततस्तस्मे मन्त्रस्तं शुभाद्धयम् ॥ सन्यासञ्च समुद्रञ्ज सिष्यदो धदेवतम् । सार्थमध्यापयेन्छिष्यं मयतं शरणागतम् ॥ अष्टाक्षरं द्वादशाणं षद्कृष्ट्री वैष्ण गीं तदा। रामकृष्णानु सिहारच्यान् मन्लान् तस्मे निचेदये तु॥ न्यासे वाष्यचीने वापि मन्त्रमेकान्तिनं श्रयेत्। अ धैष्णवोपदिष्टेन मन्त्रेण नरकं झजेत्॥ अधैष्णवादेगुरो मन्त्रं यः पठेद्देष्णवा दिजः। कल्पकारिसहस्राणि पच्यते मारकात्मना ॥ अचकधारिणं यस्तु मन्त्रमध्यापयेद्य रः। रोरवं नरकं प्राप्य चाण्डालीं योनिमासुयात् ॥ त स्मादीसाविधानेन शिष्यं भिक्तसमन्वितम्। मन्त्रमध्या पयदिद्वान् वेष्णवं पापनाशनम्॥ अनधीत्य द्वयं मन्तं -योग्ववेष्णवसुत्तमम्। अधीत्य मन्त्रसंसिद्धं न शामोति न संशयः॥ जातकम्मिणि वाचीले तद्वा मोञ्जीनिबन्धने। चक्रस्य धारणं यम भवेत्तस्य तु तम् वै ॥उपनीय गुरुः शि ष्यं गृह्योक्तविधिना ततः। अध्यापयेच सावित्रं तपीमन्त द्यं अभूम् ॥ प्राप्तमन्त्र स्ततः शिष्यः पूज्येच्छ्द्या गु रुम्। गोभ्रहिरण्यरहाद्येः वासोभिर्भूषणीरपि।। सहका शासयेच्डिष्यमाचार्य्यः संशितवृतः। स्वरूपं साधनं सा-

चन्द्रारीत संहितायाम्। 907 ध्यं मन्तेणासी निवेदयेत्॥ इयेन वृत्तियाथात्यं सम्यग-सी निवेदयेत्। आचाय्येधिनवृत्तिस्तु संयतस्तु वसेत्स दा ॥ कम्मीणां मनसा बाचा हरिमेव मजेत् सुधीः । याव च नीरपातन्तु इयमावर्तयेत्सदा ॥ एवं हि विधिना स-म्यङ्गन्लसंस्कारसंस्कृतः। ॥इति मन्त्रसंस्कारश्वतुर्थः॥ म्नार्थतत्व्विदुषं यागतन्त्रे नियोजयेत्। प्रचीहि पूजयेहेवं त्रस्य भियत्रं शुभः ॥ मन्तरत्विधानेन गन्ध पुष्पादिभिग्रीरः । अचीयत्वान्यतं भत्तया होमं पूर्ववदाचरे न् ॥ संवैश्व वैष्णवेः सूत्तेः पायसं घतमिश्रितम् । आज्यं मन्तेण होत्व्यं शतम्शीतरं तदा ॥ शत्त्या च वैष्णावैर्मन्तेः सर्वेहीमं समाचरेत् । एकेकमाहृतिं हत्वा सर्वावरण देव्ताः ॥ प्रणवाद्चितुर्ध्यन्ते स्तेषां व नामिष्रयजेत् । हो म्योषं समाप्याथ वैष्णवान् भोजयेत्तदा ॥ मन्त्र्लैन त हिम्बं पुष्पाञ्जितिशतं यजेत्। यणम्य भक्तया देवेशं ज् स्वा मन्त्रमनुत्तमम्॥ आह्रय प्रणतं शिष्यं तिहूम्बं दर्श यद्गुरुः। रूपयाथ तृतस्त्रसी दद्याद्विम्बं हरे। गुरुः। ॥ एनं रक्ष जगन्नाथ! केवलं रूपया तव। अर्चनं यत्रुतं तेन विभो! स्वीकर्त्तुमहिसि॥ एवं लब्धा गुरोधिम्बं पूज येत्तं पयत्वतः। हिरणयवस्त्राभरणयानशय्यासनादिभिः ॥ ततः प्रभृति देवेशमर्चयेदिधिना सदा । श्रोनस्मानीगः मोक्तानां ज्ञात्वान्यतमम्च्युतम् ॥ ॥ इति चृद्धहारीत स्मृतो विशिष्टधर्माशास्त्रे पञ्चसंस्कारविधानं नाम दिती योऽध्यायः॥ अम्बरीष उवाच ॥ भगवन् । सर्व मन्त्राणां विधानं मम सञ्जत । ब्रूहि सर्वमशेषेण ययोगं सार्थसंस्कृतम्॥ ॥

हारीत उपाच ॥ अ्युंगु राजन् । भवस्यामि मन्लयोग म नुत्तमम्। यथोक्तं विष्णुना पूर्वे ब्रह्मणा परमात्मना ॥ स वैषामेव मन्त्राणां प्रथमं युद्धमृत्तमम् । मन्तरतं नृपश्रेष्ठः सद्यो मुक्तिफ्रुपदम् ॥ सवै व्यर्थपदं पथ्यं सर्वेषां सर्वका-पदम् । यस्योचारणमात्रेण परिनुष्टो भवेद्धरिः ॥ देशका-सादिनियममरिमित्रादिशोधनम् । स्वर्वण्णोदिदोषश्च पौ रश्वरणकं न तु ॥ ब्राह्मणाः क्षात्र्या वेश्याः स्त्रियः श्रद्धा स्तथेतराः । तस्याधिकारिणः सर्वे सत्वशीलगुणा यदि ॥ पञ्चसंस्कारसम्पन्नाः श्रद्धावन्तोऽनस्यकाः । भक्त्यो प रमयाविष्टा युक्तास्तस्याधिकारिणः ॥ पञ्चविंशाक्षरो म न्तः पदैः षड्भिः समन्वितः । वाक्यद्वयं परं श्रेयं मन्तरं स्त्रमनुत्तमम् ॥ यदाश्रयित् विद्यादिः संस्थिता जगतां पतिम्। तया विद्याः नपायिन्या संयुतः परमः पुमान्॥ नारायणोऽ न्युतः श्रीमान् वात्सत्यगुणसागरः। नायः संशीलः सलभः सूर्वज्ञः शक्तिमान् परः॥ आपद्बन्धुः सदा मित्रं परिपूर्णमनोरथः । दयास्त्रधाब्धिः सविता वी-र्यवान् द्युतिमान् विभुः ॥ भपद्य चरणो तस्य शरणंश्रे यसे मम् । श्रीमते विष्णावे नित्यं सर्वावस्थासः सूर्वदा ॥ निर्ममो निरहङ्गरः केंड्र-र्य करवाण्यहम् । एवमर्थे वि दिलीव् पन्धान्मन्तं प्रयोजयेत् ॥ नारायणो महाशब्दा गायकी च परा शुभा। स्वयं नारायणः श्रीमान् देवता समुदा्हतः ॥ करयोः स्थलयोराद्य मक्षरं विन्यसेद्द्धि-जः। शेषाक्षराणि देयानि चतुर्विशतिपर्वसः ॥ षट्पदेर ङ्गुिलन्यासं मङ्गेषु च यथाकमम्। षड्ङगं षटपरैः केला मन्नायेश्व यथाकमम्॥ मूर्धि भारे नेवनासाश्व

वणेषु तथानने। फंजयोहित्यदेशेच स्तनयोगिभिमण्ड ते॥ पृष्ठे च जघने कट्यो स्वीजान्योश्य पादयोः। पञ्जि शाक्षराण्यस्य क्रमेणाङ्गेषु विन्यसेत् ॥ एवं न्यासविधि ह त्वा पश्चाद्ध्यानं समान्रेत् । इन्दीवरदळऱ्यामं कोटिसू य्योग्निवर्श्वसम् ॥ च्तुर्फजं सन्दराङ्गं सर्वापरणभूषित म्। पद्मासनस्थं देवेशं पुण्डरीकनिभीक्षणम् ॥ रक्तोरवि न्देसदशदिव्यहस्तपदाञ्चितम्। माणिक्यमुकुरोपेतं नी लूकुन्तल श्रीर्वजम् ॥ श्रीवत्सकी स्तुभोरस्कं वनमाठाविरा जितम् । दिव्यचन्दनिक्साङ्गे दिव्यपुष्पावृतंसकम् ॥ हार कुण्डलं केयूर नूपुरादिविराजितम्। कटकेरङ्गुलीयेश्व पीत्वरत्रेण शोभितम् ॥ शृङ्खपद्मगदाचकपाणिनं पु रुषोत्तमम् । वामाङ्के चिन्तयेत्तस्य देवीं कमललोचनाम्॥ नरणीं संकुमाराङ्गीं सर्वलक्षणशोभिताम् । दुकूलवस्त्रसं युक्तां सर्वीभरणभूषिताम् ॥ तसकाञ्चनसङ्ग्रीशां पीनी न्नतप्योधराम्। रह्नेकुण्डेल्संयुक्तां नीलकुन्तेलभीर्षजा-म् ॥ दिव्यचन्दन्छिप्ताङ्गी दिव्यपुष्पावनंसकाम् । मातुलु कें च रक्ता डां दर्पणं वरदं तथा ॥ देवीं च विभूतों दोिभिन्न न्तयेदिष्टदा सदा । एवं ध्यात्वा परं नित्यमचीयेदच्युतं हि जः ॥ यथात्मनि तथा देवे ज्ञानकर्म समाचरेत्। अचेयेदु पन्तरेश्व मनसा वा जनाद्नम् ॥ आवाहनासने पाधम्-घ्यमानम्नीयकम्। स्नान् वस्त्रीपवीते चे भूषणं गन्धमेव च ॥ पुष्पं धूपं तथा दीपं नेवेदां च पदक्षिणम् । नमस्कार ञ्च ताम्बूलं पुष्पमालां निवेदयेत्॥ नमस्कत्वा गुरूच् प-श्राज्नपेन्मन्तं समाहितः। अष्टीत्तरसहस्रन्तु शतमष्टीत्त रंतथा॥ ध्यायन्वे मनसा देवं जपेदेकायमानसः। प्राङ्

मुखोदङ्गुरवो वापि समासीनः कुशासने ॥ त्रिसन्थ्यासु ज पेदेवं सर्वेसिदिम्बाभुयात्। आदावन्ते जपस्यास्य पा-स्थित्रक्षणः । वामेन पूरयेद्दायुं बाह्यं नासा जपन्मनुम् ॥ उमाभ्यां धारणं वासाः कुम्भकं समुदाहतम् । तदेवनं दक्षिणेन रेचणं समुदाहतम् ॥ पयि हिन्या पुनश्रीवं पाणा यामवयं कमात्। प्रके कुम्भके चैव रेचके च विशेषतः॥ अष्टाविंशतिवारं तु जपन् मन्तं समाहितः । उत्तमं मुनि-भिः भोक्तं पाणायामं नृपोत्तम । ॥ जपन् द्वादशवारं तु उत्त मं तत्यकीतितम्। षड्वारन्तु कनीयः स्योत्रिवार मधम समृ तम्॥ मनसेवाचिये देवं पश्चादर्थं विचिन्तयेत्। प्राणा-यामेवयं रुत्वा पश्चान्यासं समाचरेत् ॥ सात्वा शुक्का-म्बरधरः रुत्वा सन्ध्यादिकर्म च। धृतोन्द्वेपुण्ड्देह्न्य पवि युकर एव च ॥ धृत्वा पद्माक्षमाठां च सान्निधा वासने-स्थितः। भूतश्रद्धिविधान्त्र्वं कला मन्तं प्रयोजयेत् ॥ अ शक्षरस्य मेन्नस्य गुरुर्नारायणाः स्मृतः । छन्दश्च देवी गायत्री परमात्मा च देवता । जपश्चाशक्षरो मन्तः सर्वपा पत्रणात्रानः ॥ सर्वदुःखहरः श्रीमान् सर्वकामफलपदः । सर्वदेवात्मको मन्त्रं स्ततो मोक्षपदो चूणाम् ॥ अर्चो य ज्यि सामानि तथैवाथर्वणानि च । सर्वमधाक्षरान्तस्यं तचान्यद्रि वाङ्मयम् ॥ सर्वार्थी वेदगर्भस्थः वेदाश्चा शक्षरे स्थिताः। अशक्षरस्तु प्रणवे अकारे प्रणवः स्थितः ॥ इह होकिकमेशवर्ध्य स्वर्गाद्यं पारहोकिकम्। केवल्यं भ गवत्त्वज्ञ मन्त्रोऽयं साधिष्यति ॥ सरुदुचारणान्तृणां चतुः वर्गफलपदम्। स्वरूपं साधनं प्राप्यं ददाति हि समञ्जसा॥

वृद्धहारीतसंहितायाम्। JUE महापापं चातिपापं विद्यते वोप्पापकम्। जपादस्य मनोरा शर् प्रणश्यंति न संशयः ॥ अश्वमेधसहस्राणि राजसूय-शतानि च। सरुद्शासरं जह्या उपते नात्र संशयः॥ ग वामयुतदानस्य पृथिच्या मण्डलस्य च । कन्याशतसहस्र स्य गजाश्वानां तथेव च ॥ दानस्य यत्फलं नृणां सत्पाने नृपनन्दन्।। शतवारं मृतुं जस्वा तत्फलं सर्वमाभुयात्।।सा थे समुद्रं सन्यासं सर्विचण्डोऽधिदेवतम्। अष्टाह्मरेमनु श्चार्वा विष्णुसायुज्यमाप्त्रयात् ॥ पदत्रयात्मकं मन्तं चत् थ्या सहितं तदा । स्वरूपसाधनोपयमिति मला जपेद्रु धः ॥ प्रणवेन स्वरूपं स्यात् साधनं मनसा तथा। संवि-भक्तया चतुर्ध्यात्र पुरुषार्थी भवेन्मनोः ॥ अकारत्राप्युक् रञ्च मकाराञ्चीत तत्वतः । तान्येकदा समभवत्तदोभित्ये तदुच्यते ॥ तस्मादोभिति भणवो विज्ञेयः साक्षरात्मकः। वेदनयात्मकं ज्ञेयं भूभीयः स्वरितीति वै॥ अकारस्तु भूवे हिष्णु स्तद्दग्वेद उदोह्नः। उकारस्तु भवेछ्ध्यीर्यज्वेदा त्मको महान्॥ मकारस्तु भवेज्जीव स्तयोदीस उदाह्नः। पञ्चविशाक्षरः साक्षान् सामवेदस्वरूपवान्॥ पञ्चविशो उयं पुरुषः पञ्चिषां आत्मेति श्चतः । आत्मा पञ्चिषाः स्यादिनि म्मात्मानं संस्मरेत् ॥ इत्योपनिषदं सर्थे विदि त्वा स्वं निवेदयेत्। अवधारेणमन्येतु मध्यमाणी वद-नि ह।। तदेवानि स्तदायु स्तत्सूर्य स्तदाप चन्द्रमाः। इ खेवं धारणश्चतेरेव मेवोप इंहित म् ॥ उकारेणेव श्रीशृब्दः मोन्यते मुनिसत्तमेः। न्यायेन गुणिसिद्धिस्तु तस्येव श्रीप-तेवीरी ॥ श्रीरस्येशाना जगतो विष्णुपहीति वेश्वतिः। क ल्याणगुणसिद्धिस्तु उध्यीभर्तश्च नंतरा ॥ सामानाधिक-

रण्यतातारणतं तदोच्यते। अकार एव सर्वेषामक्षरा-णां हिकारणम् ॥ अकारो वे सर्वा वागित्यादि श्रातिवच स्तथा। स्पर्शोध्माभिर्व्यज्यमानो नानाबहुविधाऽभवत्॥ कारणत्वं तथेवास्य विष्णोवे जगतां पतेः। तस्माते स ष्टाच दाताच विधाता जगतां हरिः ॥ रक्षिता जीवली कस्य गुणवानेच सर्वगः। अनन्या विष्णाना सक्मी भी करेण प्रभा यथा ॥ हस्मी मनुपगामिनीमिति कतिव-चो महत्। तस्मादकारो वै विष्णुः श्रीशएव जगत्पतिः॥ लक्षीपतिलं तस्येव नान्यस्येति सुनिश्चितम् । नित्येवैषा जुगुन्माता हरेः श्रीरनपाथिनी ॥ यथा सर्वगृतो विष्णु स्त थेवैषा जगन्मयी । तस्मादकारो वे विष्णुरुस्मी भर्तो ज गन्पतिः ॥ तसिंश्यतुर्थीयुक्तत्वात् विपदस्य च संग्रहः । अकारप्रथमां तस्माच्नुथ्यों संयहं नतु ॥ तच ऋति विरो ध्तान युक्तमिति चौँदितम्। महसे ब्रह्मणे त्या वै ओ-मित्यात्मानं युद्धीत ॥ परस्य यात्मनां तस्माद्रेद स्त्र स निश्चितः ॥ त्वमस्माकं नपस्यैच श्रत्युक्तमपि पार्थिवः। ती शाश्वती विषचिता वियन्ताविति वै तथा ॥ गृभिष्वद या प्रागेववात्मा न विश्वपृष्टत् । असोयमत्यी मत्यीन् नयूनेत्येषयोनिता ॥ इत्यादि कत्यो भेदं वदन्ति परजी वयोः। दास्यमेवात्मनां विष्णोः स्वरूपं परमात्मनः ॥सा म्यं उद्मीवरपोक्तं देवादीनां तथात्मनाम् । अनन्यशेषह पा वै जीवास्तस्य जगत्यवेः ॥ दास्यं स्वऋषं सर्वेषामा सनां सतत् हरेः । भगवच्छेषमात्मानमन्यथा यः प्रप-घते ॥ स चैवं हि महापापी चण्डातः स्यात् न संशयः । तस्मानमकारवाच्योऽसी पञ्चविशात्मकः पुमान् ॥ अका-

रवाच्यस्येशस्य दास एवाभिधीयते। अनुज्ञानाश्रयो नि त्यो निर्विकारोऽ व्ययः सदा । देहेन्द्रियान् परो ज्ञाता क त्ती भोक्ता सनातनः ॥ मकारवाच्यो जीवीं औ दान एव हरेः सदा । श्रीशस्याकारवाच्यस्य विष्णोरस्य जगत्पतेः ॥ खस्वामिनोरुकारेण ह्यबधारण मुच्यते । स्जीवः स्या दतः स्वामी सर्वदा नृपसत्तमः ॥ अनयोनिन्यथेत्युक्तभुका रेण महिषितिः । इत्येवं प्रणवस्यार्थे प्रणवस्य पदस्य तु ॥ आत्मन्श्व स्वरूपत्वादिजेय मृषिसत्तमेः । सर्वेषामेव म न्लाणां कारणं प्रणवः स्मृतः ॥ तस्माद्माहतयो जातासा भयो बेदत्रयं तथा। भूरित्येव हि तर्वदो भुव रिति यजु स्तथा ॥ स्वरिति सामवदः स्यात्यणवो भूक्तवःस वः । भूविषा अन् तदा उस्मी फीच इत्यभिधी यते ॥ तयोः स्वरि ति नीवस्तु सव इत्यभिधीयते । अग्निवृधि स्त्रण् सूर्य स्तेभ्य एवं हि जिहारे ॥ य एना ब्याह्ती हुत्वा सर्व वेदं जु होति वे। प्रसङ्गत्महितं वेदं मन्त्रश्रेष मुदीर्घ्यते ॥ असा तन्त्र्यात्तुजीवाना मधीनं परमात्मनः । नमसा प्रोच्यते तस्मान्नहन्ता ममतोऽ पितम् ॥ स्वस्त्र्पादि त्रिवर्गस्य संस् दिन्नीतु सेंवु हि। नमसा रहितं सर्वे विफलं सम्प्रकी ति तम् ॥ नमसेवृहि संसिद्धिभविदन न् संशयः । पुरतः पृ ष्ठतत्र्वेच पावर्वतत्र्यावशेषतः । नमसेवेक्षते राजन्। त्रि वर्गः सर्वदेहिनाम् ॥ मकारेण स्वतन्तः स्यान्नरकस्तं -निषिध्यति । तस्माच नम इत्यत्र स्वातन्त्र्यमपनोद्ति ॥ झक्षरस्तु भवेन्मृत्युरुयक्षरस्तु हि शाश्वतम् । ममेति द्य क्षरं मृत्युनीममेति तु शाश्वतम् ॥ न ममेति च सर्वत्र स्वा नन्त्यरहिताय वे । युज्यते मुनिभिः सम्यक् सर्वकर्मस

पार्थिव । ॥ तस्मानु नमसा युक्ता मन्त्राः सर्वे च पार्थिव । । सर्वसिद्धियदा नृणां भवन्त्यत्र न संशयः । नमसा रहिता येतु नतु मुक्तियदा नृणाम् ॥ तस्मात्तु नमूसेनेषां पार-तन्त्यत्वमीशितः। पारतन्त्या छभेत् सिद्धिं स्वातन्त्या नाशमेष्यति ॥ दास्यमेव हि जीवानां घोच्यते नमसेव तु। नमसा रहितं लोके किञ्चिदन न विद्यते ॥ नमो दे वैभ्यो नम इति येषामीशे तथा मनः । हति ब्रिदेनो नम सा अविवाक्येति वैऋतिः ॥ क्षयेरकारः सम्प्रोक्तो नका रस्तं निषिध्यति । तस्मानु नर इत्यत्रं नित्यत्वेनोच्यते ज नः ॥ नारा इति समूहत्वे बाहुत्यत्वाज्जनस्य च । तेषाम् यनमावासस्तेन नारायणः स्मृतः ॥ महाभूतान्यहडुन्रो महद्व्यक्तमेव च । अण्डं तदन्तर्गता ये लोकाः संवे चतुर्दश्रा । चतुर्विधशर्शराणि कालः कमीति वै जगत्। म गहरूपेणैवेषां नारत्वेनोच्यते बुधैः ॥ तेषाम्पि निवास-लान्नारायण इतीरिनः । अन्तर्बहिश्च नगतो धाता स च सनातनः ॥ स्रष्टा नियन्ता शरणं विधाता भूतभावनः। माता पिता सरवा भाता निवासन्य सहद्गते ॥ योनी श्रियः श्रीः परमस्तेन नारायणः स्मृतः । नराणां सर्वजग नाम्यनं शरणं हरिः ॥ तस्मान्नारायण इति मुनिभिः स म्प्रकीर्त्यते। सर्वेषु देशकालेषु सर्वावस्थासः सर्वदा ॥ त स्येष किंदुःरोऽस्मीति चतुःही परमात्मनः। भगवर्त्परिच येष जीवानां फलमुच्यते॥ तिहना किंशरीरेण यातनस्य ज्नस्य तु । यस्मिन् श्रीरे जीवानां न दास्यं परमात्मनः॥ नदेव निरयं प्रोक्तं सर्वदुःखफलं भवेत् । दास्यमेव फलं विष्णोदीस्यमेव परं सम्बम् ॥ दास्यमेव इरेमेंक्षिं दास्य

रुद्रहारीत संहितायाम्। 900 मेव पर तपः । ब्रह्माद्याः सकला देवा विशिष्ठाद्या महर्षयः काङ्ख्नः परमं दास्यं विष्णोरेव यजनि तम् ॥ तस्मा चतुर्था मन्त्रय प्रधानं दास्यमुच्यते । न दास्यवृत्तिः जीवानां नाशहेतुः परस्य हि ॥ इत्यं सिब्बन्त्य मन्तार्थं जपेन्मन्लमतन्द्रितः । अविदित्वां मनोरर्थं जपेत् प्रयत मानसः ॥ न संसिद्धिम्बामोति स्वरूपञ्च न विन्द्रति। सं सारत्र समुद्रञ्च सर्षिच्ण्डोऽधि देवतम् ॥ सार्द्र न् यूत्रं सस्यानं मन्त्रमेवम्प्रपूजयेत्। नाराय्णार्षे ग्रायत्री दैवी न न्द्रोऽधिदेवता ॥ परमात्मा च हस्मीशो विष्णुरेवाच्युतो इ-रिः। प्रणवस्त भवेद्दीनं चतुर्थी शक्तिरुच्यते ॥ क्रुद्दोल्का य महोल्काय विष्णूल्काय तथेव च। जाल्काय सहस्रो-ल्काय पञ्जाङ्की न्यास उच्यते ॥ हन् मुझेन्त्रि शिखायाञ्च कवचो नेत्रयोर्न्यसेत् । पञ्जाङ्कन्यासमित्युक्तं सर्वमन्तेषु व ष्णवेः ॥ यदात्रयेण कुवीत षडङ्कं तु यथाक्रमम्। मू-ध्यानने च हृदये फजयोर्जघने तथा ॥ पृष्ठे चजान्योः पद योमेन्लाणीनि यदा न्यसेत्। अष्टाक्षराण्यष्टिहरू क्रमेण तद्नन्तरम् ॥ नासिकायां तथास्णोत्र श्रोत्रयोरानने तथा। कण्ठेच स्तनयोनिभी गृह्ये च तदनन्तरम् ॥ अचका्य वि चकाय सनकाय तथेव च। ज्वालामहासनकाय बैली-क्याय तदन्तरम् ॥ आधारकालचकाय दशदिक यथा-कमम्। स्वाहान्तं प्रणवाद्यन्तं न्यसेचकाणि वैष्णवः ॥ एवन्योसिविधि कुला पश्चाद्धानं समाचरेत्। हदये प्रति मायां वा जले सिपत्मण्डले ॥ वृद्धी च स्थण्डिले स्वापे वि न्तयेहिष्णुमव्ययम् । बाठाकैकौटिसङ्गशं पीतवस्त्रं चतु भुजम् ॥ पद्मपत्रविशालाक्षं सर्वाभरणभूषितम् । चक्रम

क्षंगदां शङ्खं चतुदींभि ध्तं तथा ॥ श्रीभूमिसहितं देव मासीनं परमासने। तत्र चाधारशक्तयां धैर्धम् द्वीः स्रिक् र्धतः ॥ दिव्यरह्ममये पीठे पङ्कि अप्रदे अप्रे । तत्केणिको परिनरे नप्तकाञ्चनसन्तिभे ॥ देवीभ्यां सहितं तस्मिना स्निनं पहुन्जासने । चिन्तयद्क्षिणे पाश्वे रुस्मी काञ्चन-सनिभाम् ॥ पद्महस्तविशालाक्षीं दुक्लवसनां क्रशाम्। वामे दुर्गद्लश्यामां विचित्राम्बरभूषिताम् ॥ चिन्तयेद्दर णीं देवीं नीहोत्यलधरां शामाम्। मेहिष्यष्टद्रायेषु वि-न्तर्यद्भृतचामराम् ॥ एवं ध्यात्वां हरिं नित्यं जपेत्प्रयतमान सः। स्मातः शरक्षाम्बरधरः कृतकृत्यो यथाविधि ॥ धनो द्वेपुण्ड्देह्रश्च पविश्वकर एव च । शतिः रुष्णाजिनासीनः पोणायामी च न्यासरुत् ॥ शङ्खचक्रगदाखद्गशार्डः प-पान्यनुक्रमात् । तास्यञ्ज वनमालाञ्ज सुद्रा अष्टी पप् जयत् ॥ पृत्रात् ध्याला ज्गन्नायं मनसेवाचीयदिभुम्। गुन्धपुष्पादि सकेल मन्त्रेणैव निवेदयेत् ॥ अनेनाप्याची नी विष्णुः भीतो भवति तत्स्णात् । अयुतं वा सहस्रं वा विसन्ध्यांस जपेन्मनुम्। विष्णोः समानस्पेण शाश्वतं प्रमाध्यात् ॥ आयुष्कामी जपेनित्यं षणमासं नियते-न्द्रियः । अयुतं तु जपेन्मन्तं सहस्रं जुह्याद् एतम् ॥ आयुर्निरामयं सम्पद्भवेद्दर्षशताधिकम् । विद्याकामी जपेद्दं त्रिसन्ध्यास्वयुतं मनुम् ॥ जुहुयाद्दिमलेः पुष्येः स हस्रं नियतेन्द्रियः । अष्टाद्शानां विद्यानां भवेद्यासस-मो दिजः ॥ विवाहाधी जपेनित्यमेवं वर्षचनुष्यम् ॥ राजहोमी सहस्त्रंतु उभेत्कन्यां स्वशोभिनाम् । सम्पत्का मीजपेनित्यं त्र्ययुतं वत्सरत्रयम् ॥ पद्मेवी पद्मपत्रवी-

एन्द्रारीत संहितायाम्। 963 तथा होमी श्रियं उमेत्। भूकामी तु जपेनित्यं वत्सरं वि जितेन्द्रियः ॥ दूर्वीभिजुंहयात्तद्वभेद्भूमिमभीषिताम्। राज्यकामी जपेनित्यं षड्बंत्र्ययुतं तथा ॥ सहस्रं जुह-यात् नित्यं पायसं धतमिश्रितम्। च्ऋवत्ती भवेत् स्दाः प्याभर्ताः पसादतः ॥ हादशाब्दं जपेहेवं सततं विजिते-न्द्रियः। आत्महोमी तु यो नित्यमिन्द्रत्वं रुपते नरः॥ रुष क्तपेच यो नित्यं विषाहर्षे जितेन्द्रियः। ब्रह्मत्वं वा शिव-त्वं वा समाभोति न संशयः ॥ यावज्जीवं तु यो नित्यम्युतं ससमाहितः । सहस्रं वा शतं वापि होत्वयं विह्नम्ण्डले॥ आज्येन चरुणा वापि तिसेवी शकरानितेः । पदी वी वि ल्वपत्रे वी समिद्धिः पिप्पलस्य वा । कोमहेस्तुलसीपत्रेर्च-वित्वा सनातनम् ॥ अनन्त्विहगेशानां क्षिपमन्यतमो भ वेत्। किमन बहुनोक्तेन सर्वासिद्दिमदो नृणाम् ॥ श्रीमदश सरा मन्त्रो नित्यपियतमो हरेः। आसीनो वा शयानो वा तिष्ठन्वा यत्र कुन्नचित् ॥ ज्येदशाक्ष्रं मन्त्रं तस्य विष्णुः म सीदित । संस्मानः सर्वतिथिषु सर्वयज्ञेषु दीक्षितः ॥ अभि तः सर्वदेवानां यो जपेत्सततं मनुम् । ब्रह्मघ्रो वा कृतघ्री वा महापापसुनोऽपि वा ॥ अष्टास्तरस्य जप्तारं दृष्या पा पैः प्रमुच्यते । अष्टाक्षरस्य जातारो यथा भागवतीत्तमाः ॥पुनान्त सक्छं छोकं सूदेवासरमानुषम् । अष्टाक्षरस्य जसार् पणमेद्यस्तु भक्तितः ॥ सर्वपापविनिर्मुक्ती वि-णालोके महीयते। अचिन्त्यमेतन्माहात्म्यं म्नोर्स्यज गत्पतेः ॥ न हिचकुं मया शक्यं ब्रह्मादि ब्रिदशैरिप। अ थ वस्यापि माहारम्यं दादशाणिस्य पार्थवं।। यस्यो-चारणमाञेण दादशाब्दफलं लभेत्। नमो भगवते निसं

गिसदेवाय शार्झिणे ॥ पणवेन समायुक्तं द्वादशाणिमनुं ज पेत्। पूर्ववत्यणवस्याद्दे नमसन्य महामनोः ॥ ऐश्वयं व तथा वीयं तेजः शक्तिरनुत्तमा । ज्ञानं बढं यदेतेषां षण्णां भगवदारितः ॥ एभिर्गुणोः पूर्ववाक्यैः स एव भगवान् ह रिः । नित्या च यो भगवती प्रोच्यते मुनिसत्तमेः ॥ ऐश्व-र्यस्पा सा देवी सभगा कमलालया । ई भवरी सर्वजगतां विष्णुपली सनातनी ॥ तस्याः पतित्वा धीशस्य भगवानि ति चोच्यते । तस्मात् तु भगवान् श्रीमानेकाथी मुनिभिः स्मृतः ॥ भगवानिति शब्दोऽयं तथा पुरुष इत्यपि । निरु पाधी च वर्तत् वास्तदेवेऽखिलात्मनि ॥ वस्यन्ति केचिद्रग गान् ज्ञान्गानिति सत्तमाः । तद्दास्तदेवेनोक्तं स्यात्सामा-न्यलात्ततोऽन्यथा ॥ तस्मात्कल्याणगुण्यान् श्रीमान् योऽ सी जगत्यितः। स एव भगवान् विष्णुर्वास्त्रदेवः सनातनः॥
भगवते श्रीमते चेत्येकार्थो हि पोच्यत् बुधेः। गुणवान्
भगवानेव सृष्टिस्थितिविनाशकृत्॥ हो हो गुणाविधिष्ठा य सर्वाचमकरोत्प्रभुः । मद्युम्नश्रानिरुद्श्व सङ्घण इ म्। ऐखर्यवीर्यवान् सर्गे पद्युमाः पर्यपद्यत् ॥ तेजः शाकिं समाविश्य अनिरुद्धा ह्यपाल्यत् । बलज्ञानं तथा देतु स इर्पणो हाधिष्ठितः ॥ अकरोद्गगवानेव संहारं जगतः पुनः। एवं षड्गुणपूर्णत्वात् पतित्वात्वपि च श्रियः ॥ सगिदः -कारणत्याच भगवानिति चोच्यते । सर्वत्रासी समस्तं च व सत्यत्रीति वै यतः ॥ ततः स बाक्तदेवेति विद्वद्भिः परिप-घते। चतुर्थी पूर्वविद्विचात् केङ्ग्योर्थ महात्मनः॥ एवं शत्वा मनोर्थे द्वादशाणिस्य चक्रिणः। संसिद्धि परमाप्तो

958 ति सम्यगावत्यं चेत्सा ॥ गत्वा गत्वा निवर्तन्ते सर्वऋतुफ छैरपि। तद्भला न निवर्तन्ते दादशाक्षरचिन्तकाः ॥ दाद-शाणी सक्जना सर्वपापैः प्रमुच्यते । ब्रह्महत्यादिपापानि तत्संसर्गकतानि च ॥ हाद्शाणे मनोर्जपत्न दहत्यिनिरि वेन्धनम्। सर्वसीपाग्यसस्वदं पुत्रपीत्राभिवर्द्दनम्॥ स र्वकाममदं नृणामायुरारोग्यवर्द्दनम् । देवत्वमम्रेशत्वं शि वब्रह्मलमेव च ॥ हादशाणी मनु जस्वा समाप्नोति नसं-शयः । दुराचारोऽपि सर्वाशी कृत्रा नास्तिकोऽपि वा ॥ द्वादशाणमनुं जस्वा विष्णुसायुज्यमाभुयान् । प्रजाप-तिः कश्यपश्च मनुः स्वायम्भवस्तथा ॥ सम्बंदो एतश्री ते अरुषयस्तस्य कीर्तिताः । विशिष्ठः कृत्रयपोऽिशम् विश्वा मित्रश्च गौतमः ॥ जमद्गिर्भरहाजस्त्वेते सप्तम हर्षयः । भगवान् वास्तदेवो वे देवतास्य प्रकीर्तितः ॥ छन्दश्च पर मा देवी गायबी समुदाहता। साधकानां सदा राजून्। का मध्नुरिनीरितः ॥ द्वाङ्गुडी घु त्रयो हरियाणीनि वि त्यसेत्। पदेश्वतुर्भिर्द्गेषु विन्यसेत्तदनन्तरम्॥ चत्र द्गेषु विन्यस्य मन्त्रेणोत्तरयोद्दयोः । मुध्यस्य नेत्रया-नींसाकणीयोर्फ्जयो स्तथा। हिंदि कुक्षी तथा गृही कवी ज्निवोश्य पादयोः॥ मन्त्राणीनि तु विनयस्य कमणीव नृ पोत्तम ।। अनकाय विचकाय सनकाय तथैव च ॥ तथा वैलोक्यचकाय महाचकाय वै तथा । असरान्तकचका-य स्वाहान्तं पणवादिकम् ॥ हृद्यादिषडङ्गेषु यथाशास्त्रं पयोजयेत्। क्षीराब्धी शैषपर्यक्के समासीनं श्रिया सह॥ नीलजीमूतेसङ्गाशं तप्तकाञ्चनभूषणम् । पीताम्बर्धरं दे वं रक्ताङ्मदललाचनम् ॥दीर्घश्चतुर्भिदीभिश्च सर्वाभरण भूषितैः। शङ्खचकग्दाशाङ्गीन् विकाणं पर्मेन्वरम् ॥नानाकुस्तमसम्बद्ध नीलकुन्तलशीषिजम्। श्रीवत्सकी स्त्रभारस्कं वनमालाविभूषितम्॥ समाश्विष्टं श्रिया दिया पद्मया पद्महस्तया। स्त्यमानं विमानस्थेदेव-गन्धर्विकन्तरेः॥ मुनिभिः सनकाद्येश्य सेवितञ्ज स राषिभिः । एवं ध्यात्वा हरि नित्यं ज्पेन्मन्तं समाहितः॥ अर्चियता हबिकेशं संगन्धकुरूमेः सदा। शालया-गादिकस्थानेष्वचि मानं जपेद् बुधः ॥ जपित्वा दश-साहस्रं यावूजीवं समाहितः । वैष्णवं पदमाभीति पू नुराष्ट्रिवर्जितम् ॥ आयुष्कामी जपेनित्यं वत्सरं वि जितेन्द्रियः। संख्या हादशसाहस्रं होमं तिलसहस्र-कम्॥ लभेतायुः शतसमा दुःखरोगिववर्जितम्। वि बाहकामी षणमासं जपेन्नित्यं जितेन्द्रियः॥ आज्यहो मी सहस्रन्तु लभेत्कन्यां सलक्षणाम्। सम्पत्कामी ज पेनित्यं वत्सरन्तु सहस्रशः॥ साज्येश्व बीहिभिहोमी सहस्रं श्रियमार्भुयात् । राज्यमि्न्द्रपदं वापि शिवत्वं ब्रह्मतामपि ॥ बहुकालं बिल्वपन्नेः कमलैवां जपेन्म-नुम्। जुहुयाच् जपन्नित्यं त्तत्यामोत्यसंशयम्॥ यं य कामयतं चित्ते तत्र तत्र नृपोत्तमः। जुहुयान्मालती पृष्णेरयुतं चित्रितेन्द्रियः॥ तां तां सिद्धिमंगाभोति पदं चामोति वेष्णावम्। द्वाद्याणीनं मनुना पक्षे पक्षे द्वि जोत्तमः॥ द्वाद्यां पूजयदिष्णुं कोमले स्तुलसीदलेः। विष्णुतुल्य चपुः श्रीमान्। मोदते परमे पदे ॥ द्वाद्या धामनोरेवं विधानं पोच्यतं नृपः। अद्य ते सम्प्रचित्र्याः प्रिक्तं परमे पदे ॥ द्वाद्या धामनोरेवं विधानं पोच्यतं नृपः। अद्य ते सम्प्रचित्र्याः मिषडसरमनोरिदम् ॥ विधानं सर्वफलदं जन्ममृत्युवि

रहहारीतसंहितायाम्। 958 कुन्तनम् । जीन्मो विष्णवे वैति षडक्षर मुदाहतम् ॥ पूर्ववत्यणवस्यार्थे नमःशब्द उदाह्तः। व्याप्तत्वाद्याप कत्वाच विष्णुरित्यभिधीयते ॥ सदैकृत्रपत्रपतात् स व्यत्मिलादिफल्वतः । अनामयलादीशलाद्रमस्त्ला द्घणित्वतः। यथेष्ठफरुदातृत्वाहिष्णुंरित्यभिधीयते॥ णेकारो बढमित्युक्तः ष्कारः प्राण उच्यते । तयोक्त स इतिर्यत्र तदात्मेत्युच्यते धृतिः ॥ तस्माण्णकारषकार नुसहित मुत्तमम्। स्पाणं स्बहं देव ! संहितामुत्तमां तु यः ॥ तस्यैवायुष्यामित्युक्तं नेत्रस्येव च श्रतः । एत्रे व हि विद्वांसी वस्यन्ते ये महर्षयः ॥ एवं वस्यामहे किन्तु किमुत व्यामहे वयम्। इमी णकारषकारावस संहित्मति यत्।। तदेव विष्णुः रूषोति जिष्णुरित्यपि धीयते। विष्णावे नम इत्येष मन्त्रः सर्वफलपदः ॥ ऐ श्वयं तु विकारः स्यानोदात्म्याणणाद्यं समृतम्। ऐश्रं र्याद्वयां स्याद्विण्यमन्त्रमन्तमम्॥ तत् पूड्णंवि धानेन केवलं वे जूपेमाहि। इत्युत्का मुनयः सेवे वेदवे दान्तपारगाः ॥ परित्यज्येत्रं धर्म तदेकशरणं गताः । एवं महामनुं जुःखा विधानेनाच्युतं गताः ॥ तस्मादेत न्महामन्तं सर्वसिद्धिपदं नृप!। सहुद्भारणेनास्य हरि स्तत्र प्रसीदित ॥ ब्रह्माद्याः सनकाद्याश्य मुनयश्य जपन् हि। च्छन्दस्त तस्य गायत्री देवता विष्णुरच्युतः ॥ स्यादी म्बीजं नमः शिक्तिर्मनोरस्य मकीर्तितम्। शिषिः पदैः ष डङ्गेषु यथासंख्यं स्विन्यसेत्॥ अङ्गुलीष्विप चाङ्गेषु मन्ताणानि पथाकमान्। मूध्यस्मि हृदये बाह्नीः पृष गुहो यथाकमम् ॥ विन्यस्य वक्रन्यासं च पश्चाद्धानेषु

तनायम्। पणवेनोन् मुरवीकृत्य हत्यङ्गमधो मुखम्॥ विकासयेच मन्त्रेण विमलं तस्य केशरम्। तस्योप्र न बहारीसोमबिम्बानि चिन्त्येत् ॥ तत्र रत्मसयं पीढं तन्मध्येऽष्ट्र राम्बुजम् । तस्मिन् कोटिशशाङ्गाभं सर्व रुक्षणरुक्षितम् ॥ चतुर्भजं सन्देराङ्गं युवानं पद्मरोच नम्। कोटिकन्दपैलावण्यं नीलभूलातकालकम् ॥ श्वरूण नासं रक्तगण्डं बिम्बितोज्वल कुण्डलम् । शङ्ख्वक्रग दापस्धारणं दोर्भिरुज्वलेः ॥ क्यूराङ्गदहारा द्ये भूषणे श्रन्दनैरपि। अलङ्कृतं गन्धपुषी रक्तं हस्ताङ्घिपंडू ज म्॥ मुक्ताफ्लाभदन्तालिं वनमालाविभूषितम्। श्रीवेत्स् कें स्तिभोरस्कं दिव्यपीताम्बरं हरिम् ॥ तेसकाञ्चन वर्णा-भं पद्मया पद्महस्तया । समाश्विष्टममुं देवं ध्यात्वा विष्णुमयो भवेत् ॥ मन्स्रेवोपचाराणि कत्वा मन्तं जपत तः। भिसन्धां सु जपे नित्यं सहसू साष्ट्रकं हिजः॥ वि ष्णोलीकमबामोति पुन्राइतिचर्जितम्। पूर्वच्जपहो-माज्यं कृत्वा सिद्धिं वरहाभेः ॥ भगवत्सनिधी वापि तुष्सीकाननेऽपि गो। समाहितमना जस्वा घडणी निय तेन्द्रियः ॥ तिल्होमायुतं कत्वां सर्वसिदिमवासुयात् एवं विष्णुमनोः प्रोक्तं विधानं नृपसत्तमः।।विधानेरधु नामुख्य मन्त्रस्यापि बरीमि ते। षडक्षरं दाशरथेस्तारक मस् कथ्यते ॥ संवैश्वर्यपदं चृणां सर्वकामफलपदम् । एतम्व परं मन्त्रं ब्रह्मरुद्रादिदेवताः ॥ ऋषयश्व महो-सानो मुत्का जस्वा भवाम्बुधी। एतन् मन्त्रमगस्त्यस्तु जसा रुद्रत्वमामुयात् ॥ ब्रह्मत्वं काश्यपो जस्ता कीशि कस्त्यमरेशताम्। कार्सिकेयो मनुत्वञ्च इन्द्राकी गिरिना

एड्हारीन्स्हिनायाम्। 955 रदी ॥ बाल्सिल्यादिमुनयो देवतालं प्रपेदिरे । एष वैसर्व लोकानामेश्वर्यस्येव कारणम् ॥ इममेव जपेनम्लं रुद्र स्त्रिपुरघातकः । ब्रह्महत्यादि निर्मुक्तः पूज्यमानोऽभवत् स्ररेः ॥ अद्यापि काश्यां रुद्रस्तु सर्वेषां त्यक्तजीविनाम्। दिशात्येतन् महामन्त्रं तारकं ब्रह्मनामकम् ॥ तस्य श्रव णमात्रेण सर्व एव दिवं गताः। श्रीरामाये नमो स्रेष ता रकब्रह्मनामकः ॥ नाम्नां विष्णोः सहस्राणां तुल्यएव म हामनुः । अनन्तो भगवन्यन्तो नानेच तु समाः हताः। श्रियो रमणसामध्यत्तिोकर्यगुणगोरवात् ॥ श्रीराम इति नामेदं तस्य विष्णोः मकीतित्म् । रमयां नित्ययुक्तत्वा द्राम इत्यभिधीयते ॥ रकारमैश्वर्यबीजं मकारस्तेन सं यतः। अवधारणयोगेन रामेत्यस्मान्मनोः स्मृतः॥ भ क्तिः श्री रुच्यते राजन्। सर्व्याभीष्टफलपदा । श्रियां म नोरमो योऽसी सराम इति विश्वतः ॥ चतुथ्यां नमसश्री व सोऽर्थः पूर्ववदेव हि। ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च अगस्त्या द्या महर्षयः ॥ छन्दश्च प्रमा देवी गायत्री समुदाहता। श्रीरामी देवता मोक्तः सर्वेश्वर्यमदो हरिः ॥ अङ्गुढीष्व-पि चाङ्गेषु न्यासकर्मा घ्वीजतः। पूर्ध्यस्ये हृदये पृष्ठे ग ह्ये चरणयो स्तथा ॥ वैष्णवाच गुरोः पञ्चसंस्कारविधिष्र विकम्। अधीत्य म्न्लं विधिना पश्वादेवं जपेद्बुधः ॥ ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः स्त्रियः शुद्रास्तथेत्राः। मन्त्रा धिकारिणः सर्वे ह्यनन्यशरणा यदि ॥ स्नानादिकृतकृत्यः सन्नुध्येपुण्डुः पवित्रध्त् । रुष्णाजिने समासीनः प्राणा-यामी च न्यासकत्॥ ध्यायेत्कमलप्रवाक्षं जान्की सहि तं हरिम् । नेव ध्यानं पकुर्वीत वियहे सति शार्झिणाः ॥

चन्द्रनायुरुकपूरिवासितं रत्नमंडपे। विनानैः पुष्पमालाधे धूपेरिच्येविराजिते ॥ तन्मध्ये कृत्यवृक्षस्य खायायां पर मासने। नानारतम्ये दिव्ये सीव्णे समनोहरे॥ त सिन् बालार्क सङ्गरो पङ्गजेऽ घटले शक्ते। वीरासने स मासीनं वामाङ्ग श्रितसीतयां॥ सन्तिग्धशादलश्यामं को रिवेशवान्र प्रमाम् । युवानं पद्मपत्राक्षं कनकाम्बरशोभि-तम्॥ सिंहस्कन्धोनुरूपांसं कम्बुयीवं महाहनुम्। पीनव त्तायनिस्मिन्धमहाबाहु चनुष्यम् ॥विशालयह्न्सं रक्तह् स्तपादतलं शूपाम्। बन्धं कस्मितमुक्तापादन्ती ष्टइयशी भिन्म्॥ पूर्णचन्द्रोननं सिन्धं भ्रयुगं घननासिकम् । रम्भोरु इयमानी छुकुन्तलं स्मितचेन्दनम् ॥ तरुणादित्य सङ्ग्राकुण्डलाभ्यां विराजितम् । हारकेयूर्कटकेरङ्गु रुपिश्व भूषणेः ॥ श्रीवृत्सकी्स्तुभाष्याञ्च वेजयन्त्यां -विभ्यवितम् । हरिचन्दनिलसाङ्गः वस्तूरीतिलकाञ्चितम् ॥श ङ्खन्क्धनुबिणान् विभाणं दोर्भिरायतेः। वामाङ्कः स स्थिता देवीं तप्तकाञ्चनसन्निमाम् ॥ पद्माक्षीं पद्मवद-नां नील्कुन्तलभीषीजाम् । आरुद्यीवनां निन्धां पीनी नतपयोधराम् ॥ दुक् उवस्त्रसम्वीतां भूषणे स्पशोभिता म्। भूज् तां कामदा पैदाहस्तां सीतां विचिन्दोत् ॥ उसम ण् पश्चिमे भागे धृतच्छ्यं महाब्लम् । पार्वे भरतशत्रु प्री बालव्यजनपाणिनी ॥ अधतस्तु हनूमन्तं बहाञ्जलि पुरं तथा। क्तग्रीचं जाम्बवंतञ्च क्तघेणञ्चे विभावण्म् ॥ नीलं नलबाङ्गदन्त्र ऋषभं दिक्षु पूज्येत् । ब्शिष्ठो वाम देवस्य जाबाद्रिय कश्यपः ॥ मार्कण्डेयस्य मीद्रस्य स्त था पर्वतनारदी। द्वितीयावरणं प्रोक्तं रामस्य परमात्म

इद्दारीतसंहितायाम्। 960 नः ॥ धृष्टिर्जियंती विजयः कराष्ट्री राष्ट्रवर्धनः । अलकोध र्मपालन्य समन्तुन्याष्ट्रमन्तिणः ॥ तृतीयावरणं तस्य त त्र चन्द्रादिदेवताः । कुमुदाद्याश्य चण्डाद्या विमाने चान रीयकाः ॥ एवं ध्यात्वा जगन्नाथं पूजयेन्मनसाऽपि वा।ष ट्र सहस्रं जपेनमन्तं जुह्याच सहस्रकम् ॥ जुहूयाचरणा वापि शतं पुषाञ्जिलि न्यसेत् । एवं संपूज्य देवेशं यावजी वमनन्द्रितः ॥ तद्देहपतने तस्य सारूप्यं परमे पदे । विद्या स्त्री राज्यवितादां यं यं कामयते हृदि ॥ अन्यं देवं नमस्क्र ला सर्भिद्धिमवाभुयात् । विना वै वैष्णवं मन्त्रमन्यमन्त्रा न्विसर्जियेत् ॥ नमेव पूजयेद्रामं तन्मन्तं वैजपेत् सदा । अन्यथा नाशमाप्तीति इह छोके परव च ॥ अहितीयं यदा मन्त्रं तारकब्रह्मनामकम् । जपित्वा सिद्धिमाप्तोति अन्य था नाशमास्यात् ॥ सावित्री मन्तरल्ज्न तथा मन्त्रद्र्यं शुभुम् । सर्वमन्तं जपेत् पूर्वे संसिध्यर्धे जपेत् सदा॥अ जप्येतान्महामन्तानातु संसिद्धिमाभ्यात्। तस्मान्ध-त्तया जिपत्वेतान् पश्चानम्लं पयोजयेत् ॥ विद्यास्त्रीवि त्तराज्यादिक्तपारोग्यजयार्थिनः। युष्पाज्यविल्वरकाञ्ज जा तिदूर्वाङ्कुरेस्तथा ॥ आरक्तकरवीरेश्व इत्वा सिद्धिमवापु युः । सर्वेसिद्धिम्वाभोति तिलहोमेन वैष्णवः ॥ अष्टोत्तर सहस्रं वा शतमधीतरं तुवा। सायं पातश्च जुहुयात् षण्ण सं विजितेन्द्रियः ॥ यावज्जीवं जपे चस्तु भत्त्या राममनुस्म रन् । सदारपुनः सगणः त्रेत्य स्वर्गे महीयते ॥षद्कारयु-कं साहानां रामास्यं सम्प्रकीर्तितम् । सर्वापन्सः जपेन्म् न्तं रामं ध्यात्वा महाबलम् ॥ बोराग्निशञ्चसम्बाधे तथा री गभयेषु च । तोयवातयहादिभयोभयेषु च सभक्तिकम् ॥श

ङ्खनकधनुर्वाणपाणिनं समहाबलम् । लक्ष्मणानुनरं रामं ध्याता राक्षसन्। भइस्नन् जपेन्मन्तं सर्वीप्द्यो विमुच्यते । सूर्योदये यदा नाशमुपेति ध्वान्तमाशुर वे ॥त थैव रामस्मरणाद्भिनाशं यान्त्युपद्रवाः । एवं श्रीराममन्त्र स्य विधानं ज्ञायते नृप ! ॥ विधानं कृष्णमन्त्रस्य वक्ष्या-मि शृणु पार्थिव !। श्रीरुष्णाय नमो होष मन्त्रः सर्वार्थ-साधकुः ॥ कृष्णेति मङ्गलं नाम् यस्य वानि प्रवर्तते । अस्मी भवन्ति राजेन्द्र! महापातककोटयः ॥ सकृत् कृष्णेति यो ब्र्याद् भक्तया वापि च मान्वः। पापकोटिविनिर्मुको विष्णु लीकमंगामुयात् ॥ अश्वमेधसहस्राणि राजसूयशतानि य। भक्तया कृष्णमनुं जस्या समाप्तोति नसंशयः॥ गवा श्र कन्यकानाञ्च यामाणाञ्चायुतानि च। दत्ता गोदाव-री रुष्णा यसुनाच सरस्वती ॥ कावेरी चन्द्रभागादिस्ना नं रुषोति योऽसमम्। रूषोति पञ्चरुज्नस्या सर्वतीर्थ फलं लभेत् ॥ कोटिजन्मार्जितं पापं ज्ञानतोऽ ज्ञानतः कृतम्। भक्तया कृष्णोमनुं जस्वा दह्यते तूलराशिवत् ॥ अगम्यागम नात्पापादमस्याणाञ्च मक्षणात्। सकृत् कृष्णमनु जस्ता मुच्यते नात्र संशयः॥ सरुद् भूवांचकः शब्दो णश्च निर्ध-तिवाचकः । उपायोः सङ्गतियेत्रं तद्बहोत्यिभिधीयते ॥ ण कार्श्व षकार्श्व बल्पाणा वुभी स्मृतो । आत्मन्यतो स मायुक्ती जगतोऽस्यापि कृष्णातः ॥ तस्मात् कृष्णोति मन्लो ऽयं वाचकः प्रमात्मनः । कृष्णोति परमो मन्त्रः सर्वेदाधि कः स्मृतः ॥ श्रियः स्तः प्राणपदान् श्रीकृष्ण इति वे स्मृ-तः। एवमर्थे विदित्वेव पश्यान्मन्ते अपेद् बुधः ॥ सर्वेषः। ममदलाच जीजं कान्दर्पमुच्यते । नित्यान्ण्या श्रीशिकिमी

955

नोरस्य प्रयुज्यते ॥ देविष् निरदस्तस्य गायत्री छन्दउच ते। देवता रुक्मिणी भत्ती रुष्णः सर्वफलमदः ॥ पूर्वविद्वि-धिना मन्तं गृहीत्वा वैष्णवाद्गुरोः। स्नान्वस्त्रादिभिः शु दः कृत्यं कृत्वोध्वीपुण्ड्धत् ॥ तुल्सीकानने रम्ये देशे ग प्राडनुखः युभे । कुन्ने कृष्णाजिने वापि पुण्येवा श्रुभवास-रे॥ समासीनस्तु कुर्वीत प्राणायामांऋ पूर्ववत्। आद्बी जेन कुर्वीत षडद्गेषु यथाक्रमम्॥ अङ्गुढीष्वपि तेनेव न्यासकर्म्य समाचरेत्। मुखे बाह्नोश्च हृदये ध्वजेजानो श्च पाद्योः ॥ विन्यस्य मन्लवणीनि चर्कन्यासं ततः क्रत म्। पूर्ववन्मन्त्रपादीनि स्मरेच्छा भरण न च ॥ विचित्रश्र भपर्यक्ने दिव्यकल्पतरो रधः। कगन्धपुष्पसङ्घीणे सर्वतः क्तविवितित ॥ नस्मिन् देव्या समासीनं रुक्मिण्या रुक्मव-णिया। नीलोत्यलामं कन्द्रपेलावण्यं पद्मलोचनम् ॥चन्द्राः नन् ज्यापुष्परक्तहस्तपदाम्बुज्म्। नील्कुञ्चितकेशञ्च स कपोलं सनासिकम् ॥ सञ्जूयुगं सिविम्बोष्ठं सदन्तालिष् राजितम्। उन्नतांसं दीर्घबाँहं पीनवक्समव्ययम्॥ नि रङ्ग चन्द्रनरवरं सर्वे छक्षणलक्षितम् । श्रीवत्सकी स्तुभी-द्रसिं वनमालामहोरसम्॥ पीताम्बरं भूष्णाढ्यं बालाकी भ् सकुण्डलम् । हारकेय्रकटकेरङ्गुलीयेन्य शोभितम्॥ मोक्तिकान्वितनासायं कस्तूरीतिलकाञ्चितम्। इरिच्दन लिप्ताङ्गं सदेवारहरयोवनम् । मन्दारपारिजानादिकुरूमैः कवलीं रुतम्। अनर्धमुक्ताहारेश्व तुरुसी वनमालया॥ व कशृङ्ख्समैताभ्यामुद्बाहुभ्यां विराजितम्। इतराभ्यां व था देवीं समाश्विष्टं निरन्तरम् ॥ अलङ्क्ताभिः सत्यादि महिषीभिः समावृतम्। काछिन्दी सत्यभामा च मित्रविन्दी

च सत्यवित् ॥ स्मनन्दा च संशीला च जाम्बवती सलक्ष-णा। एता महिष्यः संयोक्ताः रुष्णस्य परमात्मनः॥ तापि श्व राजकन्यानां सहस्रोः परिसेवितम् । तारका चुन्राजेव शो भितं निधिभिर्चतम् ॥ एवं ध्यात्वा हरिं नित्यम्बीयित्वा ज पेन्मनुम्। शाल्यामे च तुलसीवने वा स्थण्डिले हिद् ॥ स्मृत्वा जपेत् श्रिसन्ध्यांस षद्सहस्रं मनुं हिजः । विष्णुत् ल्यवपुः श्रीमान्विष्णुलोकमवापुरेगत् ॥ सर्विसिन्दिमवाप्ती ति इह लोके परत्रच । विद्यार्थी वेणुगायन्तं जपेत् ध्याय-न् भरतुत्रयम् ॥ जहुयात् कुरूमेः क्षात्रे विद्यासिहिमवा मुयात् । आयुष्कामी तु पूर्वाह्रे वत्सरान् ह्ययुतं जपत्॥ ध्यायेच्छिशुत्नुं कृष्णं तिलेईत्वायुरामुयात् । कन्यार्थी तुजिल्लायं षोडशं त्ययुतं हरिम् ॥ ध्यात्वा सहस्रं जुह याहाजीमीध्रविमिश्रितेः। स्त्रियं हेमेत् स्वाभिमतां स्पी दायीवतीं संतीम् ॥ सम्पत्कामी जपेनित्यं गध्याह्मे तु ऋ तुत्रयम्। द्वारकायां स्वधम्पित्रं रह्मिहासनस्थितम् ॥ शङ्खादिनिधिभी राजकुछेरपि ससेवितम्। हारादिभू-ष्णेर्युक्तं शङ्खाद्यायुधधारिणम् ॥ध्यात्वा संपूज्य हो मंच जपश्चायुत सङ्ख्यया। अद्भाविल्वदछेवीपि होमं मधुविमिश्रितम् ॥ शोश्वतीं श्रियमाभोति कुबेरसदशो भवत्। रूपलावण्यकामी तु रासमण्डलम्ध्यगम्॥ ध्या यन् विमासमयुतं जस्या लॉवण्यूवान् भवेत्। एवं ह-ष्णमनोरस्य माहारम्यं परिकीतितम्॥ अनन्तान् भग वन्मन्तान् वक्तं शक्यं न ते मया । वाराहं नारसिंहज्ज्ञ वामनं तुरगाननम् ॥ ऋमेणीव तु वस्यामि यथावच्छृणु पार्थिव !। हुङ्कारं प्रथमं बीजं आद्यं वाराहमुच्यते ॥पन्ना

ब्दहारीतसंहितायाम्। 368 न् तु धरणीबीजं लक्ष्मीबीजं ततः परम्। शीन् बीजानादितः हत्वा पश्चान्मन्त्र प्रयोजनम् ॥ औं नमी भगवते पश्चा दराहरूपाय भूकीयः। सुयः पतयेति भूपतित्वं मे देहीति नदाप्यायस्वे ति॥ अङ्गुडीषु यथाङ्गेषु बीजेनाद्येन वे क्रमात्। यथा सन्यासंबद्भूत्वा पश्चाँद्धानं समावरेत् ॥ वहलानुं वहद्यीवं वृहदंष्ट्रं केशोभनम्। समस्तवेदवे दाङ्साङ्गोपाङ्गयुनं हरिम्।। रजनादिसमपरव्यं शनवा हं श्रीतेक्षणम्। उद्दय् देषुयाभूमि समाविङ्ग्य भुजैर्मुदा॥ ब्रह्मादि त्रिद्शैः सर्वैः सनेका ही मुनी खरैः । स्तूयमानं स मन्ताच गीय मानञ्ज किन्नरेः ॥ एवं ध्यात्वा हरिं नित्यं मात्रशेत्तरं शृतम् । जन्ता उभेच भूपत्वं तता विष्णुपु रं बजेत् ॥ नमो यज्ञवराहाय इत्यषाक्षरको मनुः। उक्त बीज्ञयं पूर्वे कत्वा मन्तं ज्येद्बुधः ॥ मूलमन्त्रमिद्र्या ह्वरिग्हं मुनिपुद्गवाः । एतमेव परं मन्तं जेस्वा भूमिपति भैवेत् ॥ नित्यमप्सहसं तु जपेहिष्णुं विचिन्तयन् । कमले बिल्वप्रीबो जुहुयाच दशांशकम् ॥ एवं संवत्सरं जस्या सा विभीमो भवेद् अवम्। राज्यं कृत्वा व धर्मण पश्चादिष्णुप दं वर्जेत्।। विधानं नारसिंहस्य मनोर्वक्ष्यामि सवतः।। उमं वीरं महाविष्णुं ज्वलनं सर्वतो मुख्म्॥ नृसिंहं भीष् णं भद्रं मृत्योमृत्युं नमाम्यहम् । ऑर्षे ब्रह्मानुष्ट्रप्च्छन्दो देवताच नकेशरी ॥ चतुत्रमृतुत्र षर्षर्च पूर्वत्र य-थाकमात्। शिरो उल्टि नेत्रेषु मुखबाह्न इ मिस्चिषु ॥ सायेषु कुसी हदये गरे पार्शिद्यें पि च । अपराङ्गे कुर्से च न्यसेहणीन्यनुक्रमात् ॥ वायोदिशाक्षरं यत्तु बहुदुग्रं जप् त् सरुत्। बिन्द्ना सहितं यसु नृसिंहं बीजमुच्यते॥अ

गुढीषु तथाङ्गेषु न्यास्नतेनैव चोदितम्। तद्दीजमादितः रुता मन्तं पत्रात्ययोजयेत् ॥ औं नमो भगवते न-रसिंहाय ज्वालामालिने । दी घें दं ख्यानिनेत्रायं सर्वर स्वी-माय सर्वभूतविनाशाय दहदह प्चप्च रक्षरक्ष हम्पट् - खाहा। इति ज्वालामाछिपातालन्सिंहाय नमः॥ बीजेने व्न्यासः आंदीं क्षीं कीं हुं फरू॥ अस्य मन्लस्य ब्रह्मा षें पड्किच्छन्दो नृसिंहो दैवतो नृसिंहास्त्रमिदं बीजेनेच-न्यासः। श्रीकारपूर्वी नृसिंहो दिर्जयादुपरिस्थितः। त्रिः सप्तरुतो नप्तः स्यान्म्हाभयनिवारणम् ॥ अस्य ब्रह्मा च रुद्रस्य महादस्य महर्षयः। तथेव जगति च्छन्दो देवता च न्केसरी ॥ न्यासंबीजेन कुर्वीत ततो ध्यानं नृपोत्तम !। मा णिक्यादिस्मप्रभं निज्रुक्वा सन्त्रस्तरक्षोगणम् जानुन्यस्त कराम्बुजं त्रिन्यनं रलोह्नसद्भूषणम् । बाहुभ्यां धृतश इसचेक मनिशन्दं शेष्ठसत्स्वोननम् ज्वालाजिह्मुदय-केशनिचयं वन्दे नृसिहं प्रभुम् ॥ उद्यत्कोटिरविपभं नरह रिं कोटिसपेशोज्वलम् दंष्ट्राभिः समुखोज्वलं नखमुखे-द्धिरिनेके फीजे: । निषिन्नोसरनायकन्तु शश्मन्स्या गिन्नेत्रत्रम् विद्युद्जिद्सराक्रापभयदं वृह्मं वहन्तं भने। कोपादालों लेक्कि विवतनिजमुखं सोमस्याभि नेत्रपादादानाभिरक्तं प्रसंभसुपरि संभिन्न देत्येन्द्रगात्रम्। चके शङ्खं सपाशाङ्कुशासुसठगृदाशाङ्गे बाणान्वह-न्तम् भीमं तीक्ष्णायदेषुं मणिमयविविधाकेल्पमीडे नृ-सिंह्म् ॥ महाभयेष्विदं ध्यानं सीम्यमभयुद्येषु च ॥ सी वण्णे मण्डपान्तस्यं पदां ध्यायेत्सके सरम्। पञ्चास्यवद नं भीमं सोमसूर्याग्निलोचनम् ॥ तरुणादित्यसङ्गशंकु-

ए-द्रहारीतसंहितायाम्। 988 ण्डलाप्यां विराजितम् । उपयन्यासं सम्पर्वं ती्स्ण्दंष्ट्रिक राजितम् ॥ व्यात्तास्य मरुणोषुञ्च भीषणौर्नयनैर्युतम्।सि हस्कन्धानुरूपांसं वृत्तायनचतुर्फजम् ॥ जपासमाङ्घिह स्ताडा पदासनसुसंस्थितम्। श्रीवत्सकीस्तुभीरस्कं वन-मालाविराजितम्।। केयूराङ्गदहाराढ्यं नपुराप्यां विराजि-तम्। चक्रशङ्खाभयवरे चंतुईस्तं विश्वं समरेत्॥वामाईः संस्थिता रुक्षीं सन्दरीं भूषणान्विताम् । दिव्यचन्दनिः साङ्गी दिव्यपुष्पोपशोभिताम् ॥ गृहीतपत्रयुगलमातुलु इन्करां चलाम् । एवं देवीं नृसिंहस्य वामाङ्गीपरिसंस्थिन नाम्॥ध्यात्वां जपेज्जपं नित्यं पूजयेच यथांविधि। हीं श्रींशीं निसिंहायनमः ॥ इमं उस्मीन्सिंहस्य जपेत् सर्वार्थदं मनुम्। अष्टोत्तरसहस्रं वा जपेत् सन्धासु ग् ग्यतः ॥ अरवण्डं बिल्वपत्रेश्य जुहूचादाज्यमिश्रितैः। सर्वि दिम्बाभोति षणमासं प्रयतो भवेत् ॥ देवत्वम्मरेशत्वं ग न्धर्वत्वं तथा नृप !। प्राप्तवन्ति नरः सर्वे स्वर्गे मोक्षक दु र्ठभम्॥ यं यं कामयते वित्ते तं तमेवाप्त्याद् ध्रवम्। ब्र ह्माषी तत्र गायत्री नरसिंहत्र्य देवता ॥ तदेव बीजं शाकिः श्रीम्नोरस्य विधीयते। न्यासमायेन बाजेन चार्चनं तुल-सीदलेः ॥ पूर्वोक्तविधिना पीठे पूजियत्वा समाहितः । पू रितः पूजयोदिक्ष गरुडं शंकरं तथा ॥ शेषन्त पद्मयोनिन्न श्रियं मोयां ध्रतिं तथा। पुष्टिं समर्चये दिक्त तती छोके-श्वरान् यजेत् ॥ महाभागवतं दैत्यनाशकं देवमयतः। ए वं सम्पूज्य देवेशं नारसिंहं सुनातनम्॥ तत्पदं समवाभी-ति मुदितः सजनैः सह। कर्परधवछं देवं दिव्यकुण्डलभू-षितम्॥ किरीटकेयूरधरं पीताम्बरधरं प्रभुम्। पदासन

स्यं देवेशं चन्द्रमण्डलमध्यगम् ॥ सूर्यकीटियतीकाशं पूर्णचन्द्रनिभाननम्। मेखलाजिनदण्डादिधारिणं बदुरूपि णम् ॥ कलधीतमयं पात्रं दधानं वस्तपूजितम् । पायूषक लश्रामे द्धानं दिफजं हरिम् ॥ स्नेकादीः स्तूयमानं सर्वदेवेरुपासितम् । एवं ध्यात्वा जपेन्नित्यं स्वासने च समाहितः॥ विष्णवे वामनायेति प्रणवादिनमोऽन्तकः। इन्द्रार्षञ्च विराट्चन्द्रो देवता वामनः स्वयम् ॥ सधाबी जं सदीर्घन्त बीजमाद्यन्त वामनम् । तेनैव तु षडङ्गाद्यं न्यासं कुर्विति वेष्णावः ॥ देध्यन्नं पायसं वापि जुहुया-स्पत्यहं दिजः। औपासनाग्नी जुहुयादशीत्तरशॅनं गृ नमो वैष्णवे पत्य मुहाबलाय स्वाहा ॥ इति बामन मन्त्रः। स्मृत्वा नेविकमं रूपं ज्येन्मन्त मनन्यधीः॥ मुक्तो बन्धाद्रवेत् सद्यो नाच कार्य्या विनार्णा। ही श्री श्री वामनाय नमं इति मूलमन्तः ॥ ब्रह्मार्षे नेव गायत्री देवता च विविक्रमः । न्यांसं बीजेन जपवानुष्टोत्तरसहस्य कम् ॥ इति वामनमन्त्रस्य जपादन्तयतिर्भवेत्। उद्गीय-मण्योदीय सर्ववागी न्यरे न्यर ! ॥ सर्ववेद मया विन्त्य ? सर्वे बोधय मे पितः!। हूँ ऐं ह्ययीवाय नमः॥ नित्या ष नेव गायत्री ह्ययीवों स्य देवता। न्यासं बीजेन क त्वाय पश्चान्द्रानं समाचरेत् ॥ शरखशाङ्क प्रभमश्ववक्रं मुक्तामयैराभरणेरुपेनम् । रथाङ्गशङ्खाञ्चितबाहुयुगमं जानुदूयन्यस्तकरं भजामः ॥ शृङ्खाभः शङ्ख्यके क रसरसिजयोः पुस्तकं चान्यहस्ते विभाद्व्यारच्यानसुद्रा उसदितरकरो मण्डउस्यः स्मधांशोः। आसीनः पुण्डरीके

385 चृद्धारीतसंहितायाम् । तुरग्बरिशिराः पूरुषो मे पुराणः श्रीमानज्ञानहारी मन सि निवसता मृग्येजुः सामरूपः ॥ एवं ध्यात्वा जपेनमन्त्रं सन्ध्यास विजितेन्द्रियः। सर्ववेदार्थतत्वज्ञो भवेदन् न संशयः ॥ अष्टोत्रसहस्रं वा शतम्ष्टोत्तरन्तु वा। जपेच जुह्याचेवं साज्येः शुभीः सत्पड्छैः। विद्यासिद्धिमवा भाति षणमासं हिजसँत्तमः॥ अष्टादशानां विद्यानां वृ नं मनुम्।। अहिर्बुध्योऽ नुष्टुभस्ये देवता च संदर्शनम्। अचकाय विचकाय स्वकाय तथेव च ॥ विचकाय स चकाय ज्वालाचकाय वैकमात्। षडक्नेषु च विन्यस्य प श्रासान समाचरेत्।। नमश्रकाय स्वाहेति दश्रिक यथाकमम्। नकेण सह बभामीत्युत्तया भितदिशेततः॥ त्रेलोक्यं रक्ष रक्ष इंफर् स्वाहेति वैक्रमान्। अग्निमा-कारमन्त्रोऽयं सर्वरक्षाकरः परः ॥ ओं सूर्धि स भूमधे इ मुखे साहमधीत्यतः । रङ्ग्यहो इन्तु जान्वीश्र फर्ट् प दद्यसन्धिषु ॥ कल्पान्तार्कप्रकाशं त्रिफवनमसिलं ते जसा पूरयन्तम् रक्ताक्षं पिङ्गकेशं रिपुकुरुपायद्म्भीमद ष्ट्राजहासम् । शङ्खं चकं गृदाङ्गं पृथुतरमुस्तं नापग शोइ-कुशाब्यम् विभाण्न्दोभिराद्यं मनसि मुरिरेषुं भाव येचेकसंज्ञम् ॥ ओं नमो भगवने महासदर्शनाय हंफ ट्। इति षोडशाक्षरं इति सुदर्शन्विधानम्॥ ति हारीतस्मृती विशिष्धमिशास्त्रे भगवन्मन्वविधा-नं नाम नृतीयोऽध्यायः॥

अथ वक्ष्यामि राजेन्द्र। विष्णोराराधनं परम्। मत्यूषे सहसोत्याय सम्यगाचम्य वारिणा ॥ आत्मानं देहमीश

ज्य विन्तयेत् संयतेन्द्रियः। ज्ञानानन्दमयो नित्यो निर्धि कारो निरामयः॥ देहेन्द्रियात्यरः साक्षातूत्वज्य विशा-सको हाइम् । अस्मिन् देशे वसाम्यस्य शेषभूनो हि शार्द्भिणः ॥ अरुक्शोणितसम्भूते ज्रारोगाद्यपद्रवे । मे दोरकास्थिमांसादिदेहद्रव्यसमीकुठे ॥ मलमूत्र्वसापङ्के नानादुः समाकुले। तापत्रयमहाविद्धिद्धमान् अनिशी म्मृशम् ॥ इषण्वयस्रष्णाहिबाध्यमाने दुरत्यये। क्रि श्यामि पापभाषिष्ठे कारायहानेभे श्वभे ॥ बहुजन्मबहुक्कें भागभवासादि दुःखिते । वसामि सर्वदोषाणामालये दुःखभाज्ने ॥ अस्माद्विमोक्षणायेव चिन्तिय्ष्यामि के शवम् । वेकुण्ठे परमञ्गोिम् दुग्धाब्धी वैष्णवे पद्।।अ नन्तुभोगिपॅर्योङ्के समासीनं श्रिया सह। इन्द्रनीलनिभं श्याम् चक्रशङ्खेगदाधरम् ॥ पीताम्बरधरं देवं पद्मप नायतेक्षणम्। श्रीवत्सकीरतुभीररूकं सर्वाभरणभूषि तम् ॥ चिन्तयित्वा नमस्कृत्वा कीर्त्तयेदिव्यनामिशः। सङ्गीर्य नामसाहस्रं नमस्कृत्वा गुरूनपिना तुळ्सीं का क्रमें गान्त्र संस्पृश्याथ समाहितः । दूराद्बहिविनिष्क्र म्य क्रची देशे च निर्जने ॥ कणस्थ् ब्रह्मसूत्रस्तु शिरः मार्च्य वाससा। कुर्यान् मूत्रपुरीषेच छोवनोच्छासव-जिनः ॥ अहन्युद्जनुर्वा रात्री दक्षिणाभिसुरवस्तथा। स माहितम्ना मानी विण्मूत्रे विसृजेत्ततः ॥ उत्थाय त न्द्रितः शीचं कुर्यादभ्युद्धते जिलेः । गन्धलेपक्षयकरं यथा सङ्ख्यं मृदा किविः ॥ अध्यस्तिमात्रन्तु मृदं दद्याद्य-थोक्तवत् । षडपाने त्रिलिङ्गे तु सन्यहस्ते तथा दशा ॥ उ भयोः सप्तदद्याच्य तिस्नस्तिस्त्रस्तु पादयोः । आजङ्घान्

इन्ह हारीन संहितायाम्। 300 मणिबन्धातु प्रक्षाल्य शुभवारिणा॥ उपविष्ठः शुन्ते देशे अन्तर्जानुकरस्तथा । पवित्रपाणिराचामृत् प्रसृतिस्यः स बारिणा ॥ त्रिः पारयाङ्गुष्ठ मूलेन हिधोन् मृज्यं कपोल-की। मध्यमाङ्गुलिभिः पश्चोद्दिरोष्ठी मृजयेतथा ॥ नासिकोषान्तरं पश्चात् सर्वाङ्गुिकिभरेवच् । पादी इस्ती शिरश्रीव जलैः संगाजियेत्ततः ॥ अङ्गुष्ठतर्जनीभ्यां तु स्पृ-शेत्दी नासिकापुरी। अङ्ग्रष्ठानामिकाप्यां तु चसःश्रो वे जलें:स्पृशेत्॥ कनिष्ठाङ्गुष्ठनाभिञ्च त्लेन हृदयनः तः। सर्वोङ्गुलिभिः शिरोसे बाहुमूछे तथेव च । नामिभः केश्वादीस्य यथासङ्ख्यमपस्पृतीत् ॥ दिराचामेतु सर्व-त्र विण्यूत्रोत्सर्जने त्रयम्। सामान्यमेतत् सर्वेषां शौरं तु हिराणीदितम् ॥ आचम्यातः परं मीनी दन्तान् काष्ठेन शोधयेत्। प्राङ्मुखोद्ङमुखो वापि कषायं तिककुण्टकम् ॥ किन्छायमितस्थू ल हार्शाङ्गुलमायतः । पर्गधः ह तक् चीन तेन दन्तानिकषीयेत् ॥ अपूरं हाद्यागण्डूषेः वकी संशोधयेद्दिजः। मुखे संमाजियित्वाय पश्चीदा-चमनं चरेत्। पवित्रपाणिराचम्य पश्चात् स्नानं समान् रेत् ॥ नद्यां तडागे खाते वा तथा प्रस्ववणे जले । नुउसी मुतिकां धात्रीमुप्रिध्य कछेवरे ॥ अभिमन्त्य जहं पश्च न्मूलमन्त्रण विष्णवः। निम्ज्य तुल्सीमिशं जलंस-म्प्रोशयेत्ततः॥ आचम्य मार्जनं कुर्यात् कुशैः सतुरुसी दर्छः। पीरुषेण तु सूक्तेन आपोहिष्ठादि पिस्तथा॥ नि मज्याप्स जले पश्चात्रिवारमघ्मषीणम् । उत्थाय प्र-नराचम्य पश्चादप्स निमन्य वै ॥ मन्त्रेर्तं त्रिवारं तु जपद्ध्यायन् सनातनम् । पिबेदुत्थाय नेनेव त्रिवारम- चतुर्थोऽध्यायः.

प्रमन्तितम् । आचम्यं तर्पयेदेवान् वितृनिप विधानतः। निष्पीड्य कुले वस्त्रं तु पुनराचम्नं चरेत् ॥ धीतवस्त्रं सो त्तरीयं सकें।पूनं धरेंस्थितम्। निबृद्दिस्यकच्छस्तु दिश वम्य यथाविधि ॥ धारयेद्दे पुण्डाणि मृदा शुभाणि वैणी वः। श्रीरुष्णतुलसीमूलमृदा वापि भयलतः ॥ मन्लेणेवा-भिमन्त्याय तलाटादिषु धारयेत् । नासिकामूलमारभ्य वि भृयाच्छीपदाकृति ॥ सान्तरालं भवेत् पुण्डं दण्डाकारं तु वा य था। उलादादि तथा पत्रबाद्यीवान्तं केशवादिभिः॥ नाम्बां द्वादशाभि मूर्भि वास्तदेवं तलाम्बना। पवित्रपाणिः युद्धासा सन्यां कुर्यात् समाहितः ॥ प्रादेशमात्री नैशेयी सायं मूल युत्ती तथा । अन्तर्गप्ती स्विमली पवित्रं कारयेद् हिजः ॥ दे गर्ने ज्ये होमे कुर्याद्ब्राह्यं पूबित्रकम्। इतरे वर्त्त्रियान्य देवं धमी विधीयते ॥ पेथि दर्भाश्रिता दुर्भी ये दर्भी यज्ञ भू-पिषु। स्तरणासन्पिण्डेषु ब्रह्मयज्ञे च तर्पणे ।। पानभोजनको लेच धृतान् दर्भान् विसर्जयेत् । सपवित्रकरेणेव आचामेत्म यतो हिजः ॥ आचान्तस्य प्रतिः पाणिर्यधापाणि स्तथा कुशः सन्धान्मनकाले तु धतं न परिवर्जयेत् ॥ अपसूताः समृता द भीः समिध्सु कुशाः स्पृताः। समूठास्तु कुशा शैयाः छिन्ना यास्तृणसंज्ञिताः ॥ कुशोदकेन यत् कण्डं नित्यं संशोधयेद्हि जः। न पर्युषन्ति पापानि ब्रह्मकूर्च् दिने दिने ॥ कुशासनं सदा पूर्त जपहोमार्चनादिषु । क्रेशैनेव कृतं कूर्म सर्वेमान्त्य मभुते। तस्मात् कुशपवित्रेण सन्ध्यां कुर्यात् यथाविधि। लगृह्योक्तविधानेन सन्ध्योपास्तिं समान्द्रेत् ॥ ध्याला नारा यणं देवं रविमण्डलमध्यगम् । गायत्र्याध्यं पदद्याच जपन् कुर्वीत भक्तिमान् । सूर्यस्याभिमुखो जस्वा सावित्रीं नियता-

203 ट्युहारीतसंहिनायाम्। लगान्। उपस्थान ततः कृत्वा न्मस्कुयत्तितो हरिम्॥ नमो श्रह्मणेत्यादि जाह्नाथ विसर्जयेत्। ततः सन्तपैयेदिणा मन्तरलेन मन्त्रवित् ॥ शतवारं सहस्रं वा तुल्सीमित्रिते पारेखादिदेवतानामनुकमात् । एकेक्मञ्जिलं दत्ता पश्चा-दाचमनं चरत्। श्रीशस्यारोधनार्थं वे कुर्यात् प्रधास्य स कान्तं मरुवकं केशाम्बद्दलं तथा ॥ उशीरं जातिकुसमें कुन्दञ्जीव कुरन्दकम् । शमीञ्चम्पाङ्कृदम्बञ्च च्युतपुष्पंचम्। धवीम् ॥ पिण्लस्य प्रवासानि जाम्बवं पादसंतथा । आस्पो रं कुरजं खोधं कर्णिकारव्य किंशकम् ॥ नीपार्जुने शिंशप-ञ्च भ्वेतिकिश्वकनामकम्। जम्बीरं मातुलक्कं च यूथिकारच यं तथा ॥ पुन्नागं बकुछै नागकेशराशों कम दिकाः। शतप मं व हारिद्रं करवीरं भियङ्गु च ॥ नीछोत्पूळं त्र्यलब्द्र न न्द्यावर्तञ्च फैतकम्। घटजं स्थलपदां च सर्वाणि जलदानिच ॥ तत्कारुसम्भवं पुष्पं गृहीताथ गृहं विशेत्। विनानादियु-ते दिव्यधूपदीपैर्विराजिते ॥ चन्दनागरकस्तूरी कर्परामोद वासिते। विचित्ररङ्गवल्याद्ये मण्डपे रत्नपीवकै॥ विस्तीर्ण-पुष्पपर्दे देव्या सहितमच्युतम्। सन्निधा वासने स्थिला कुशे पद्रासने स्थितः॥ प्राणायामविधानेन भूतशाहिष धाय व। प्राणायामवयं छत्वा पश्चाद्ध्यानं यथोक्तवत्॥प र्योम्नि स्थितं देवं छक्मीनारायणं विक्रम्। पराप्तिः शासिषि र्युक्तं भूछीलाविम्लादिभिः॥ अन्नविह्गाधाशसेन्याद्यैः सु रसत्तमैः। चण्डाद्यैः कुमुदाद्यैश्व ढोकपालेश्व संवितम्॥ च नुर्भुजं सन्दराङ्गं नानारलिविभूषणम्। वामाङ्कस्थिया य

क्तं शङ्खनक्रगदाधरम् ॥ मन्लरक्षिधानेन न्यास्मुद्रादि कर्महत्। पञ्जीपनिषदं न्यासं कुर्यात् सर्वत्र कम्मिसं।ओं मीशाय नमः परायेति परमेध्यात्मने नमः । ओं यांनमः प राचेति ततः पुरुषात्मने नमः ॥ ओं रां नमः परायेति ततो -भिशात्मने नमः। ओंवामनः परायेति स्वनिवृत्यात्मने नमः॥ ओं हां नमः परायेति ततः सर्वात्मने नमः । शिरोनासायहृद्य गुह्मपादेषु विन्यसेत्। यथाकमेण तन्मन्तान् पन्नागेषु क मान्यसेन्। तन्मुद्रया तदाबाह्य दद्यादासनमेव च ॥ पाचा प्यविमन स्नानपात्राणि स्थाप्य पूजरोत् । पूरियत्वा शतभज हं पात्रेषु कुस्तमेर्युत्म् ॥ द्याणि निक्षिपेत् तेषु मङ्ग्छानि यथाक्रमान् । उशीरं चन्द्नं कुछ पाद्यपात्रं विनिक्षिपेत्॥वि ण्त्रान्त्र दूर्वाञ्च कोशेयान् तिरुसर्पपान्। अस्तांश्र फल पुष्पमध्येपाने विनिक्षिपेन् ॥ जातीफल्ज्न कपूरमेलाज्ञा चमनीयके। मक्रन्दं भवालञ्च रह्मं सीवण्णीमेव च ॥ तानि द्यात् स्नानपात्रे धात्रीं सर्तरं तथा । द्रव्याणामप्यलामे तु तुरुसीपनमेव च ॥ चन्दनं वा सत्वणणी वा की शोयं वा वि निक्षिपेत्। दशीयेत् करभोर्मुद्रां पूजयेत् कुस्तमञ्जैः ॥अ भिमन्त्य च मन्त्रेण धूपदीपेनिवेदयेत्। अनन्तं चोद्धरण्या न रघाताघादिकं तथा ॥ नतात्रक्षालनं कत्वा तथा पु-षाञ्चितं न्यसेत्। सीचणीत् व रीज्याणि तामकांस्यानि योजयेत्।। पात्रोणामप्यलाभं तु शङ्खमेकं विशिष्यते । शङ्खोदकं सदा पूतमति पियतरं हरेः॥ उद्धरिण्या जलं द्धानाप्स शहरपं निमज्जयेत्। अष्टाक्षरेण मनुना म ल्ला चगा यजेत्।। पा घा घ्या चमनं द्ला मधुपके निवे-दयेत्। पुनराचमनं दत्ता पादपीठं निवेदयेत्।। दन्तधा-

वनगण्ड्षद्पणालोच्नं तथा । निवेद्याभ्यञ्जनं तैलेनोह्रं केशरञ्जनम् ॥ सरगोष्णातजलेः स्नानं पुनरुहर्तनं हरेत्। कुड़्कुमेन हरिद्रेण चन्दनेन सगिचना ॥ उह्स्र गन्धती-येने स्नापयेच पुनस्ततः । स्नानपानोदकं पत्रादादायकु स्रमेः सह॥ पोरुषेण् तु स्रकेन् स्नापयेत्कमद्राप्तिम्। मा र्जियेच्छुभवस्त्रेण दीपैनिशिज्येत्तदा ॥ वस्त्रञ्जेगेपपीतञ्ज दुद्यादाभरणानि च। कस्त्रीतिलकं गन्धपुष्पाणि सरभी णिच्। अन्तनिवेशय देवस्य उक्ष्मी संपूज्येतथा ॥पार्शन योर्र्न्ह्धरणी महिष्यः पतिता स्तथा । विमहोत्कर्षणीत्यापः पूर्वमेव प्रकीर्तिनाः ॥ चण्डादि दारपाछांश्य कुमुदादींसाधार्व थेन्। गरुदेवः सीर्पाणिः पद्यम्मन्त्र उषापतिः। दिक्षुको णेषु तत्पत्यो उद्मीरेव निर्तीउषा॥ दितीयावरणं पन्माले शवाद्याः सशक्तयः । संकर्षणादयः पन्नान्मत्स्यकूमीदय-स्तथा ।। श्रीः उक्षीः कुमला प्या पियनी कमलोलया। र मा रुषाकपेर्धन्या रुतिर्यज्ञान्तदेवता ॥ शक्तयः केशवादीना संशोक्ताः परमे पदे। हिरण्या हरणी सत्या नित्यानन्दा श्रयी सर्वा ॥ सग्न्या सन्दरी विद्या सशीला च सलक्षणा। स इर्षणादिमूत्तीनां शक्तयः समुदाहताः ॥ वेदा वेदवती धात्री में हा उसी: करवा उया । भागीवी च तदा सीता रेवती रिक्स णी यभा ॥ मत्स्यक्रमिदिमूर्त्तीनां शक्त्यः सम्बद्धीर्तिताः । एवं सशक्तयः पूज्योः केशवाद्याः सरेशवराः ॥ पश्वात्सशः क्तयः प्रज्या श्रक्तशङ्खादिहेतयः। शङ्खं चकं गदां पर् शाङ्गे ज्ञ मुसल हल्म् ॥ बाणेळ्य खड्गरेवेटं च च्छरिका दि व्यहतयः। भद्रा सीम्या तथा माया जया च विजया शिवा ॥ समङ्गला सनन्दा च हिता रम्या सरक्षिणी। शक्तयो

दिव्यहेतीनां पूजनीयाः सनातनाः ॥ बहिरुकिभवराः पूज्याः साध्याश्च समरुद्रणाः । एवमावरूणं सर्वेमर्चयेत्परमात्मनः। पुन्रच्यादिकं दत्ता धूपदीपेनिवेदयेत्॥ मागुदीच्याञ्च स देशं नागराजं तथापरे । पुरतो वै नयेत् यञ्च पूजयेच्छिति भिः सह ॥ सेनापतेः सूत्रु वतीं नागराजस्य वारुणीम् । भद्रा श्रतां तथा यस्य पूजये देखा वोत्तमः ॥ गुगुलुं महिषा सीञ्च साल्नियसिमेव चै। अगरं देवदारुख्य उशीरं श्रीफलं तथा ॥ हीवेरं चन्दनं मुस्ता दशाङ्गं धूपमुच्यते। गवान्येन च सं पोज्य दद्याह्यं स्तवासितम्॥ कार्पासमार्के क्षीमञ्च शाल हीक्षीरकोद्भवेम् । अम्भोजं की्टजं काशतू िकाषादुः मुच्य ते॥ गराज्यं तिलतेलं वा कुरूमेश्व स्ववासितम्। संयो-ज्य बह्लिना दीपं भक्तया विष्णोनिवेदयेत्॥ नैवेदं शुभ-हृद्यानं पायसापूपसंयुतम् । फ्लेश्व भस्यभोज्येश्व पान-कैर्यञ्जनेः सह ॥ गवाज्यञ्च द्धि सीरं श्कराञ्च निवेद्येत् कह हविषयं हद्द्व सरुच्यं वै निवेदयेत् ॥ यच्छास्त्रेषु निषिद्धं तु तत्प्रयहोन वर्जियेत्। कोद्रवं चौरुकं लुब्धं या-ब्नालं तदासितम्।। निष्पावञ्चे मस्रव्य तुच्छ्धान्यानिस् व्याः। फक्तं पर्युषितं स्ह्यं यज्ञे क्म्मीण वर्जयेत्॥ वर्जये दारनाख्य मद्यमांससमानि च। नियसान्वजीयेत् सर्वा न्षिना हिङ्गु च गुगगुलुम् ॥ छत्राकं मूल्कं शीयु क्रेड्जं संक्रमं तथा। कुम्मीद्रस्त्रचे पिण्याकं श्वेत इन्ताकमेव च ॥ आवळा नारिकाशाकं नारिकेयरिव्यमेव च । बिल्वळा श णपुष्पञ्च भूस्तृणं भौतिकंतथा।। कोशातकीं विम्बफलं म माससमानि ने । अभस्याण्यप्यशेषाणि वर्जयेद्यज्ञकमीणि॥ काछिङ्गं कतकं विल्वफलं जन्तुफलं तथा । वशाङ्कुरमठा- 308

वुन्न तालहिन्तालके फले ॥ अन्वत्यं पूक्षनीपन्न वरमारग् वधं तथा। कलम्बिका च निर्गणिड मुण्डिवातीक्मेव च ॥ ऊप रं उपणञ्चीय श्वेतञ्च रहतीफलम् । नरपचमतिकञ्चीय चि ञ्चिल्ञ्चेति यलतः ॥ विज्ञेयानि न भक्ष्याणि नर्जधेषज्ञ कम्भणि। श्लेष्मातकञ्च विङ्जानि प्रत्यक्षरवणं तथा॥ अविर्दर्शी बगोधीर मचत्साया स्तथाविक्ष्म । अष्ट्रिमेकश-फञ्चेव पश्रमां विइक्तजामपि ॥ अतिदीणे तथा तकें कर-निर्माधितन्द्धि। ताम्नेण संयुतं गव्यं क्षीरव्य स्वणानि-तम् ॥ धृतं ठवृणसंयुक्तं पयलेन विवर्जधेत्। सूपानञ्च गुडोन्नञ्च शकरामधुसंयुन्म्॥ मरीचिमिश्रं दध्यन्नं पा यसान्नं फरें:सह। तुरुसी देरुसम्मिश्रं जरें: सम्बोध्य-गम्यतः॥ अष्टाविंशात्वारन्तु मूरुमन्त्राभिमन्त्रितम्।मु द्राव्य सीरभेयीन्तां दर्शयन्मन्त्रमुचरन्॥ सधान्तिममृतं बीजं चिन्तयन् परमात्मनः। दद्यात् पुष्पाञ्जिहि पश्चाद्श वारं समाहितः ॥ पेषणिकयया पूर्वमन्नमस्मे निवेदयेन् । शतवारं जपैन्मन्तं घण्टाशब्दं निनादयन् ॥ जपेत्पीयूपदै वत्यानमन्तानेकायचेतसा । हरेफीक्त वृतः पश्चाद्द्याद्द्यार सवासित्म् ॥ पश्चादाचमनं देद्याक्त हैर्गन्धविमिश्रितैः। अम्बय्निपींरुषस्यास्य स्कूस्य सरसन्मान् ॥ विष्यपित चतुर्भागं क्रमाह्यस्य चार्पयेत्। अनन्ततार्ह्यसेनेशपि त्राणां निवेदयेत्॥ तीर्थेन सहितं हव्यं पृथक् पानेषु नि क्षिपेत्। सर्वेषां वारिपूर्वेण पन्नात् पुष्पाञ्जिति म् नीराजनं त्तो द्त्या ताम्बूलञ्जू निवैद्येत्। पणमेच् ततो भत्तया रम्येः स्तोत्रेः शाक्षीह्नयैः ॥ प्रसार्ये बाहुपादी चू बहेनाञ्जििना सह। स्तुवन् स्तुति भिरेवं तु प्रणामो दीर्घ उच्यते ॥ नता दीर्घपणामेश्व स्तुत्वा स्तुतिभिरेवच । सर्वे श्व वैष्ण्योमेन्नेः कूर्यात् पुष्पाञ्जिष्ठं नतः ॥ स्तूकेश्व विष्णु देवत्येनिमिभिः शाङ्गिणस्तया। ततः शुभासने स्थित्वा ज पेनान्लमचुत्तमम् ॥ न्यासमुद्रादिपूर्वेण ध्यायन्वे कमलेक्ष णम्। अष्टीत्तरसहस्रं वा शतमष्टीत्तरं तुवा ॥ अस्वा पु षाञ्जिति दद्याद्यथाशत्त्या च मृत्त्रतः। नमेद्योगेन देवेशं इदिस्थं कुमलेक्षणम् ॥ मनसैर्वाचित्वास्मिन् समाधी विर मत् सधीः । पातरीपासनं कृत्वा तत्र होमं समाचरेत् ॥ आज्येन चरुणा वापि समिदिवीं च यजियेः। तणुउउँ दिन मिश्रेवि बिल्वपनेरथापि वा।। तिलेवि कुस्तमेविपि यवैभि अभिरेग वा। यज्ञरूपं हरिंध्यात्वा सर्ववेदमयं विभुम्॥ दियाभरणसम्पन्नं शङ्खनकगदाधरम्। वरदं पुण्डेरी काक्षं वामाइ स्थित्रियं हरिम्॥ यज्ञस्वरूपिणं वही ध्याय न् मन्त्रहयेने व। स्वैश्व वेषावैमन्त्रीरेके के नाहातें तथा। नामितः केशवाहार्यश्व स्त्ते विष्णुप्रकाशकेः । वेकुण्ठ-पार्षदं सर्वे हत्या चैच ततो बेछिम् ॥ क्षिपेचतुर्विधान् भूता नुद्दियच तंनो भुवि। आचम्य पूजयेत्यश्वात्तदीयान् सं समाहितः ॥ तेभ्यः प्रणम्य भक्तयाथ सन्तर्धः पितृदेवताः। व्दमध्यापयेच्छन्या धर्माशास्त्रञ्च संहिताः ॥ सालिका नि पुराणानि सेतिहासानि बेष्णावः । सञ्चीपनिषदामधी सिद्धः सह विचिन्तयेत् ॥ योगक्षेमार्थवृद्धित्त्र कुर्याच्छ-त्या यथाईतः । ब्राह्मणाः क्षित्रया वैश्याः शुद्धा वर्णाय थाक्रमम्॥ आद्यास्त्रयो द्विजाः प्रोक्ता स्तेषां वै मन्त्रस-नेषां सङ्करयांगाच प्रतिलोमानुलोमजाः । विपान्मूर्धा

रहहारीतसंहितायाम्।

305 भिषिक्तस्त क्षियायामजाय्त् ॥ वैश्यायान्तु तथाम्बृष्ठोति पादः शूद्रया तथा। राजन्याद् वेश्यशू खान्तु, माहिष्योगी त ती स्मृती ॥ श्र्मां वैश्यान् तु करण्स्थिरे वि ते अनुरोपजाः। विमायां क्षत्रियात् स्तः वेश्याद्वेदेहिकस्तथा ॥ चण्डाल-स्तु तथा श्रद्धात्सर्वकम्मिस गहितः । मागधः क्षत्रियायां वे वेश्या क्षेत्रात् तु शरद्भतः ॥ शरदादयोगवं वेश्या जनया मास वे स्कतम् । रथकारः क्रण्यान्तु माहिष्येण मृजायते ॥ असत्सन्ततयो ज्ञेयाः प्रतिलोमानुलोम्जाः। प्रतिलोगा स्त येजाता गहिताः सूर्वकम्मणाम् ॥ एतेषां ब्राह्मणाद्या श्व षट्कम्म्स नियोजिताः । त्रिकम्स स्तवविशावेकसि न् श्रद्रयोनिजः ॥ मनियहञ्च वृत्त्यर्थे बाह्मणस्तु समाचरे ते। असदेवासतां भोकं निषिदं तिहवर्जयेत्॥ पाषण्डाः पतिताः पापास्तथेव मतिलोमजाः । कुल्टाश्च विकर्मास्या असतः परिकीत्तिताः ॥ खवणं तिलकापरिसं चम्मिच नपुसी सकम् । आयसं मधुमासञ्च विषमन्तं घृतं रुजम् ॥किलि षं गजमुष्ट्रञ्ज सूर्षपं जलमेव च । तृणकाष्ठञ्ज कूष्माण्डं शि शपाञ्च विवर्जयेत्॥ महिषीं गर्दभञ्जेव वाजिनञ्च तथावि केम्। दासीमजां यानवृक्षा न पञ्चानडुहन्तुलाम्॥एवगा ध मसद्द्रच्यं प्रयद्भेन विवर्जयेत्। धान्यं वासांसि भू-मिञ्ज स्तेवण्णं रत्नमेव च ॥ पुष्पाणि फलम्ला सं सद्द्रे यां मुनिभिः स्मृतम् । सर्वत्र परिगृह्णीयाद्भूमि धान्यं फलाधिकम् ॥ भूमि यस्तु प्रगृह्णाति भूमि यस्तु पयच्छ ति। तासुभा पुण्यकम्मीणो नियती स्वर्गगामिन्।॥ धान्य करोति दातारं पगृहीनारमेच च। धान्यं नृपवरश्रेष्ट! इह-लोके परवच ॥ तस्मादान्यं धरित्रीव्य प्रतिगृहीत सर्वनः।

कुक्तम्भधान्य एव स्थान् कुक्तम्भधान्यवान् नृपः ॥ शिलो-न्छेनापि वाजीवच्छ्रेयानेषां परो वरः । जीवद्यायावरेणीव विप्रः सर्वत्र सर्वदा ॥ वजियित्वेच पाषण्डान् पतितांश्चान्यदे विकान्। कृषिणा वापि जी्वेत सतां चानुम्तेन वा ॥ न वा हयेदनेडुहं क्षुधार्त श्रान्तमेव च। तस्य पुंस्त महित्वेव वा हयेद हिजपुद्भवः ॥ कम्मिछोप मकुर्वन्वे कृषि कुर्वात वे हि जः।हरेः पूजां यथाकारं कृषिछोपे समाचरेत् ॥ न ब्राह्यं मन्यनेद्विम साथा यज्ञादिकम् न। आपद्यपि न कूर्वीत् सेवां वाणिज्यमेव च ॥ असत्मितयहं स्तेयं तथा धर्मस्य वि कयम्। अन्यायोपार्जितं द्रच्यमापद्येपि विवर्जयेत् ॥ भृत-काध्यापनं चैव सदासत्कर्माभावनम् । प्रीतये वासदेव स्य यदत्तमसन्।मपि । मेहाभागवतस्पेश्नित्सदित्युच्यते युधैः ॥ नापादीन् पञ्च संस्कारां स्तथाकारे स्त्रिभिश्वनः । ह रेरनन्यशरणो महाभागवतः स्मृतः ॥ यक्षराक्षसभूतानां नामसानां दिवोकसाम् । नेषां यत्पीतये दत्तं तथा यद्यपि पर्नयेत् ॥ बुद्दरद्रो तथा वायुर्दुगिगणसभोरवाः । यमः स्कन्दी नेक्रतस्य तामसा देवताः स्मृताः । एवं विक्राद्धं द्र-यस्य शात्वा गृहीत सत्तमः ॥ कृषिस्तु सर्ववणीनां सामान्यो धर्मा उच्यते । यतियहस्तु विप्राणां राज्ञां क्ष्मापालनं तथा ॥ क्यीराचेता सामान्यो । क्या तथा ॥ क्रसीदञ्जीव वाणिज्यं विशामेव प्रकीर्तितम् । सेवा रित्तिस्तु श्रद्राणां रुषिवी सम्प्रकीर्तिता ॥ अशक्तस्तु भवे द्राजा पृथिच्याः परिपाउने । जीवेद्दापि विशां रूत्या श्रद्रा णां वा यथासुरवम् ॥ कृषिभृतिः पार्क्षपाल्यं सर्वेषां ने नि षिध्यते । स्तेयं परस्त्रीहरणं हिंसा कुहककोशिके ॥ स्त्रीम षमांसलवणाविकयं पतितं स्मृतम् । अपकृष्निकृषानां -

पूर्हारीन सहितायाम्। 390 जीवित शिल्पक्रमिभिः॥ हीनन्तु भतिलोमानामहीन मनु छोमिनाम्। चर्मवैणववस्थाणां हिंसाकम्मिच नेजनेम्॥मा णिक्यं वपनाग्निज्य मद्यमां सिक्रिया तथा। सारथ्यं वाह-कानाञ्च रथानां भूभृता्मपि ॥ एवमादि निषिदं यत्पाति छोम्यं तदुच्यते । यत्सीम्यशिल्पं छोकेऽस्मिन् सीम्यं तद नुलोमकम् ॥ मृद्दारुशेललोहानां शिल्पं सीम्यमिहोन्यते। न्यायेन पालयेदाजा पृथिवीं शास्त्रमार्गतः ॥ स्वराष्ट्रकतथ-म्मस्य सदा षड्भागासिद्ये। राज्ञां राष्ट्रकृतं पापमिति धर्म विदो विद्वः ॥ तस्पादपापसंयुक्तां यथा संरक्षयेद्भवम् । अग्नित्दङ्गरदञ्जोरं हिंस्यं दुवृत्तमेव च ॥ धूर्त्तं पतितिम्त्या-दीन् हन्यादेवाविचारयन् । अङ्ग्रियता श्वपादेन गर्दभे-चाधिरोद्ध वे॥ प्रवासयेत् स्वराष्ट्रातु ब्राह्मणं पतितं नृपः। कुलटां कामचारेण गर्भाद्यां भृतृहिंसकाम् ॥ निष्ठत्तकणना-सोष्ठीं कृत्वा नारीं प्रवासयेत् । न्यायेन दण्डनं राज्ञः स्वर्गन्तितार्थाः । कीर्तिविवर्धनम्। अदण्ड्यान् दण्डयन् राजा तथा दण्डा न्दण्डचन् ॥ अयशो महदामोति नरकं चाधिगच्छति । दिग्दण्डस्त्यथ वाग्दण्डो धनदण्डो वधस्तथा ॥ ज्ञात्वापराध देशं च जनं कालमदोऽपि वा। वयः कर्मच वित्रव्य दण्डं न्यायेन पातयेत् ॥ निम्बित्य शास्त्रमार्गेण् विद्दिः सह पा र्थिवः। गुरूणां तु गुरुं दण्डं पापानां च उघोर्डघुम् ॥ व्यवहा रान् वयं पश्येन क्यानि सभ्येर्शतोऽन्वहम्। मिथ्याप्वादशु
न्द्रार्थ् पञ्च दिव्यानि कल्पयेत् ॥ ज्ञात्वा शुरुदेषु दिव्येषु शु दान्वे मानयेत्रथा। तिनाथ्याशांसिनं दुष्टं जिह्नाच्छेदेनं द् ण्डयेत् ॥ अपद्रच्यादि हरणं परदाराभिमर्शनम् । यः कुर्या त् तु बढात् यस्य हस्तच्छेदः मकीर्तितः ॥ यो गच्छेत् परदा

रांस्तु बढ़ात्कामाच् वा नरः। सर्वस्वहरणं कृत्वा ठिङ्गच्छेद ऋ दापयेत् ॥ दहेलागिना देहं गुरुखीगामिनं तदा । ब्रह्ममं च सुरापं वा गोस्त्री्बालनिष्दनम् ॥ देव्धिमस्वह-निरं शूलमारोपयेन्नरम् । दैवतं बाह्मणं गाञ्च पितृमातृगु संसाधा ॥ पादेन त्रियं चस्तु तस्य तच्छेदनं समृतम् । तेषा मुपरि हस्तं तु दोष्णो श्छेदन्तुं कामतः ॥ मत्येकं दण्डनं क् र्योद्दर्शतस्य परिस्थियाम् । चुम्बने नालुविच्छेदो द्वी हस्ती परिरम्भाणे ॥ हस्त्स्याङ्गुि विच्छेदः केशादियहणे स्त्रि यः। दाहयेनसतेलेन हेस्तमुख्या च ताइनम् ॥ सुर्तं या चमानस्य जिह्नाच्छेदं च कामतः। कामे कितेषु स्वीत ता ब्वीश्र दहनं स्मृतम्॥ दह्या मुहुः प्रेरणे तु नेत्रयोः स्फो दनं चरेत्। मान्कूटं तुरुाकूटं कूटसाक्यकृतां नृणाम्॥स हसंदापयेदण्डं ऐत्या स्वस्थापनायने ! येषु केषु व पापेषु शरीरे दण्डन स्मृतम्॥ तेषु तेष्वडुन्नेनैव अक्षतो ब्राह्म णो बनेत्। पापानेबाडुन्यितास्य मुण्डियता शिरोरुहा न्। सर्वस्वहरणं कृत्वीं राष्ट्रात् सम्यक् प्रवासयेत्। अ वैष्णवं विक्मिस्यं हरिवासरेभोजिनम् ॥ बाह्मणं गार्दभं-यानमारीप्येव विवासयेत्। न्यायेन् पाउयेद्राजा धम्मी म् षड्भाग माहरेत् ॥ त्रिभागमाहरेदान्याद्नात् षड्-भागमेव च। गोभूहिरण्यवासोभिधन्यरत्नविभूषणेः॥पू जयेद्बाह्मणान् भेत्तया पोषयेच विशेषतः ॥ विम्बानि स्यापयेदिष्णोर्यामेषु नगरेषु च्। चैत्यान्यायत्नान्यस्य रम्यान्येव तु कारयेत्॥ वस्तपुष्पोपहारोघं भूधेन्वादि स मपयेत्। इतरेषां सराणां च बेदिकानां जनेश्वरः॥ धर्मतूः कारयेद् यश्च चैत्यान्यायतनानि तु। वापी क्रूपतडागादि

फलपुष्पवनानि च॥ क्वींत सविशालानि पूर्वकान्यपि पालयेत्। फुछितं पुष्पितं वापि वनं खिन्दात् यो नरः॥ त डाग्सेतुं यो भिन्धात् तं शूढेना सुरोह्येत्। अगिदं गर दं गोझं बालस्वीयुरुघातिनम् ॥ भगिनीं मानरं पुत्रीं गु रुदारान् सुषामपि । साधीं तपस्विनीं वापि गच्छनाम-तिपापिनम् ॥ हिंस्रयन्त्रपयोक्तारं दाहयेद् वे कटानि-ना। अद्ण्डं यित्वा दुईतान् तत्यापं पृथिवीपतिः ॥ सम्प्रा प्य निरयं गच्छेत्तस्मातान् दण्डयेतथा । यः स्ववणिश्रमं हिला स्वच्छन्देन तु वर्तयेत् ॥ तं दण्डयंद्वर्षशतं नाशये त्तिदि शतम्। सर्वे ब्वित्येषु पापेषु धनदण्डं प्रयोजयेत्॥ पितेव पालयेद्भृत्यान् प्रजाश्च पृथिवीपितः। प्रजासंरस णार्थीय संयामें कारयेन्तृपः॥ तस्मिन् मृत्युर्भवेच्छ्येग् राज्ञः संयामसूई नि । मृतेन् लभ्यते स्वर्गे जितेन पृथिवी सि यम् ॥ यशः कीर्तिविच्ध्यर्थे धर्मसंयाममाचरेत्। मुक्तशी र्षे मुक्तवस्यं त्यक्तहेतिं परायितम् ॥ न हन्याद्देशनं राजा युद्दे मेक्षण हज्जनान्। भगने स्वसैन्यपुद्धे व संगामे वि-निवर्तिनः ॥ पदे पदे समयस्य यज्ञस्य फलमश्चते । नातः परतरो धर्मी नृपाणां नस्शालिनाम् ॥ युद्दलब्धा मही शस्य दीयते नृपसत्तमेः। जित्या शत्रूनमहीं लब्बा लब्धां यतेन पाउचेत् ॥ पालितां वर्धयेनित्यं रुद्धां पाने विनिक्षिपेत् । पात्रमित्युच्यते विशस्तपोविद्यासमन्वितः॥ न विद्ययां कै वस्या त्पसा वापि पात्रता । श्रुतमध्ययनं शीलं तपइसु-च्यते बुधैः ॥ दूर्श्वरस्यात्मनश्चापि ज्ञानं विद्यति चोच्यते । तथाविधेषुपात्रेषु दत्ता भूमि धनं नृपः ॥ शासनं कारये तसम्यक स्वहस्ताहारवनादिभिः। उपजीव्योपसंपैच रम्ये

देशो नृपोत्तमः ॥ दुर्गाणि तत्र कुर्वीत जनकस्यात्मगुप्तये । तत्र कर्मिस निष्णातान् कुशलान् धर्मनिष्ठितान् ॥ सत्यशी चयुनान् शन्दानध्यक्षान् स्थापयेत् नृपः। अशीतिभागो रहिः स्यान्मासि मासि संबन्धके ॥ अबन्धके स्याद्रियुणं यया तत्काल्मात्रकम् । लेखयेत्तरणं सम्यक् सममासादि क्लानैः ॥ द्यं सर्द्धाधनिक पुरुषे स्विभिरेष तत् । नि धीनस्तु शनिर्दे घाद्यथाकारं यथादयम् ॥ औदत्यादा ब निने दाप्येरणम् ॥ च्छिन्ने दंग्धे थवा पत्रे साक्षिभिः प्रिकल्पयेत्। वस्त्रधान्यहिरण्यानां चतुस्त्रिहिगुणादि भिः॥ न सन्ति साक्षिण स्तत्र देशकालान्तरादिभिः। शो धियवा तु दिव्येन दापयेन्द्रिनने अरणम् ॥ मध्यस्थस्या-पितं द्रव्यं वर्धते न ततः परम् । कृते प्रतियहे चाधी पूर्वी वै बरुवत्तरः ॥ अवधिद्विविधं प्रोक्तं भोग्यं गोप्यं तृथेव न। क्षेत्रारामादिकं भोग्यं गोप्यं द्यमुपस्करम् ॥ गोप्या धिभोग्ये नो हिस्सि सोपस्कारे तथापि ते। नष्टं देयं विन ष्त्र द्रव्यं राजकता हते ॥ उपस्थितस्य भोक्तव्य आधि-स्तेनोऽन्यथा भवेत्। प्रयोजने सति धनं कुलेऽन्यस्याधि माभुयान् ॥ तत्कालंकतम्लये वा तत्र तिषेद्रिहिकम् । विना धारणकादापि विकीणितमसाक्षिकम् ॥ तं वनस्थ मनाख्याय धान्यमस्य न दीयते। तदा यद्धिकं द्रव्यं प्र तिदेयं तथेव च ॥ न दाप्योडपहनस्यक्तराजदेविकृतस्क्रेः। न पद्यानु त्न्मोहात्म द्ण्ड्य श्रोरवन्तदा ॥ द्दीत स्वेच्ड या दण्डं दॉपयेद् बापि सीदरम् । याचितान्वाहितं न्याया निक्षेपादिष्वयं विधिः॥ सराकामद्यूतकृतं वृथा दानं त

इद्दहारीतसंहितायाम्। 398 थेव च। दण्ड्याल्कानुशिष्ट्य पुत्रो दद्यान्न पेतृकम् ॥पित् रि मोषिते मेते व्यसनाधिष्टितेऽपि वा। पुत्रपोत्रेर्क्तणं दे यं निह्नते चाक्षिचादितम् ॥ रिक्थयाही ऋणं दद्याद्योषि द्याहस्तथेव च। पुत्रो न स्वाशितद्रयः पुत्रहीनस्तु रिक् थिनः॥ पातिभाव्यं मृणं साक्ष्यं देशं तस्मै यथोचितम् । दीयते स्यात्पतिभुवा धनिने तु ऋणं यथा ॥ दिगुणं तेस दातच्यं दण्डं राझे च तत्समम्। पुत्रादिभिने दातच्यं प्रति भाव्यं मृणं स्थियाम्॥ यतिपन्नं स्थिया देयं पत्या चैवहि युत् कृतम्। स्वयं कृतं तु यहणं नान्यस्त्रीदात्महिति॥ प त्ये स्वकं धनं पुत्रा विभाजेयुः स्तिनिर्णितम् । मातृकञ्जेद् दु हित्रस्तदभावे तु तत्सतः ॥ भगिन्यश्व प्रमुदिताः पैतृश दाहरेन्द्रनात् । नस्त्रीधनं तु दायादा विभनेयुरनापदि ॥ पितृमातृसनाभातृपत्यपत्याद्यपागतम्। आधिवेत्नि-कार्यं च स्थाधनं परिकार्तितम् ॥ अपुत्रा योषितश्रीव भतेच्या साधुरुत्यः। निवस्या व्यभिचारिण्यः प्रतिकृ लास्तथेव च ॥ नेव भागं वनस्थानां यतीनां ब्रह्मचारि णाम्। पाषण्डपतितानां च नचावैदिककर्मणाम्॥ विभू-केष्यं सुजो जातः सवणी यदि भागभाक्। अविभक्त पि वकाणां पितृच्यात् भागकल्पेना ॥ है मोतृणां मातृतभ् कल्पयेदा समोऽपिवा। विभुक्तस्यास्य पुत्रस्य पूली दुहितरस्तथा ॥ पितरी भातरश्रीव तुस्कताश्र्व सपिण्डि-नः। सम्बन्धिबान्धवास्त्रीव कमाद् वै रिक्यभागिनः॥ सीम्नोपवादे क्षेत्रेषु सामन्ताः स्यविरादयः । गोपाः सी-मारुषाणां च सर्वे भवनगोचराः ॥ नयेयु रेते सीमानं सू णाङ्गरत्षद्रमेः । सन्तु वल्मीकलिम्नास्थिनैत्या देरुपमे

भिताः ॥ और्सो दत्तकश्रीय कीतः रुनिमएय च । क्षेत्रजः कानिकश्चेव दोहिनः सत्तमः स्मृतः ॥ पिण्डजश्च परश्चेषां पूर्वाभावे परः परः । पुत्रः पौत्रश्च तत् पुत्रः पुत्रिकापुत्र एवं व ॥ पुत्री च भातरश्चेव पिण्डदाः स्युर्यथाक्रमात् । एवं ध मेण नृपतिः शासयेत्सर्वदा प्रजाः ॥ यदुक्तं मनुना धंमे व्य बहारपदं प्रति । विलोक्य तुञ्च विह्निद्विचीतरागे विमत्सरेः ॥विमृश्य धर्मविद्रिश्च विमर्थेः पापभीरुभिः । धर्मणीय स दा राजा शासयेन् पृथिवीं स्वकाम् ॥ विपर्तां दण्डये है या बह्पीपनाशनम्। अस्या अपि च देण्डचा वै शास्त्रमार्गि रोधिनः॥ राजधमेि यमित्येवं प्रसङ्गत् कथितो मया।का त्यायनेन मनुना याज्ञवल्क्येन धीमता ॥ नारदेन्च सम्प्रो-कं विस्तरादिदमेव हि। तस्मान्मया विस्तरेण नोक्त मत्र नृ पोत्तम्। ॥ परं भागवतं धर्म विस्तरेण बवामि ते। विष्णो र्म्यचीनं यसु नित्यं नैमितिकं नृप ।। यदाह भगवान् धातु स्तेन स्वायम्भुवस्य च ॥ नारदस्य च मे सम्यक् नूदद्य कथ यामिते। ॥ इति हारीत्समृती विशिष्धमिशास्त्रेमा तःकालभगवत् समाराधनविधिनीम चतुर्थोऽध्यायः॥

तःकार भगवत् समाराधनायाधनाम चतुथाऽध्यायः॥
अम्बरीष उवाच। भगवन् ! ब्रह्मणा यत् तु सम्प्रो
कं स्यान्मनोः पुरा। तत्सर्व परमं धर्म वक्तुमहिसि मङ्नधः
॥हारीत उवाच। सर्गादी छोककर्तासो भगवान् पद्मसम्भवः। मन्वादि प्रमुखान् विभान् सस्यजे धर्मग्रसये॥मन्
भिग्रविशिष्ठश्च मराचिदेस एव च। अङ्गिराः पुरुहश्चीव पु
छस्त्योऽत्रिमहातपाः॥ वेदान्तपारगास्ते च तं प्रणम्य अग्
दशुरुम्। भगवन् । परमं धर्म भवबन्धापनुत्तये॥ वद सर्व
मेश्राषेण श्रोतुमिच्छामहे वयम्। इत्युक्तः स द्विजेः सोऽपि

रुद्धारीनसंहिनायाम्।

39E ब्रह्मा नृत्वा जनार्दनम् ॥ वैदान्तगोचरं धर्म तेषां वक्तं प्रचन्न मे। सर्वेषामेवलोकानां स्रष्टा धाता जनार्दनः ॥ सर्वेवेदान तत्वार्यसर्वयज्ञमयः पृभुः। यज्ञो वे विष्णुरित्यन प्रत्यक्षं श्रूयते श्रतिः ॥ इज्यते यत् तमुद्दिश्य प्रमी धर्मा उच्य-ते। भगवन्त मुनुद्रिय ह्यते यत्र कुत्र वै॥ तत्र हिंसाफरं पापं भवेदन विगहितम् । तस्मात् सर्वस्य यज्ञस्य भोकारं पुरुषं हरिम् ॥ ध्यात्वेच जुहुयात्तसी ह्यं दी प्ते हृताशने। मु खमिनिर्भग्वतो विष्णोः सर्वगतस्य वै॥ तस्मिन्नेव यज-नित्यमुत्तमं मुनिसत्तमाः। यजेद्विपमुखे शत्तया जलमनं फलाधिकम्॥ पीनये वास्तदेवस्य सर्वभूतनिवासिनः। त मेव चार्चयेनित्यं नमस्क्यत्मिवहि॥ ध्यात्वा जपेत्तमेवे शं तमेव ध्यापये हृदि। तन्नामेव प्रगातव्यं वाचा वक्तव्यमे ब्च ॥ ब्रतोपवासानियमान् तमुद्दिश्येव कारयेत्। तत्सम पितभोगः स्यादन्नपानादिभक्षणेः ॥ मृतिः स्वार्थः सद्रार षु नेतस्य कदाचन्। न हिस्यात्सर्वभूतानि यज्ञेषु विधिना विना ॥ सो इं दासी भगवती मम स्वीमी जनाईनः। एवं इतिभीवेदस्मिन् स्वधर्माः परमो मतः ॥ एष निष्कण्टकः पन्या तस्य विष्णोः परं पदम् । अन्यन्तु कुप्यं हीयं निर यपापिहेतुकम् ॥ भगवन्त् मनुद्दिश्य यः कर्म कुरुते नरः स षाषण्डीति विज्ञेयः सर्वलोकेषु गर्हितः॥ यो हि विष्णुं प रित्यज्य सर्वछोके न्यरं हरिम्। इतरान्चते मोहात्स छोका यतिकः स्मृतः॥ उक्तं धर्म परित्यज्य यो इधर्मे च वर्तते।प तितः सत् विज्ञेयः सर्वधर्मबहिष्कृतः ॥ यः कर्मकुरुते विभी विना विष्यवर्चनं किन्त्। बाह्मण्याद्भाश्यते सद्य श्र्णडाल-लं सगच्छति॥ ब्राह्मणी वैष्णेचो विद्यो गुरुरच्यश्च वेदिन्। पर्यायेण च विद्येत नामानि क्षारूरस्य हि ॥ तस्माद्वेषा वत्वेन विश्वाद भश्यते हि सः। अर्चियत्वापि गोविन्द भितरान्चियत् पृथक्॥ अविष्णुवत्वं तस्यापि मिश्रभ-त्या भवेदध्वम् । भोकारं सर्वयज्ञानां सर्वछोके चरं इ रिम्॥ ज्ञात्वा तत्पीत्ये सञ्चान् जुहुयात्सततं हरिम् । दानं तुपन्य युज्ञन्य त्रिविधं कर्म की तित्रम्॥ तत्सर्वे भेग वत्प्रीत्ये कुर्वातं स्त्रसमाहितः । तस्मानु वैष्णाचा विषाः प्र जनीया यथा हरिः ॥ ये तु वैहेतुकं वाक्यमाश्चित्येव स्ववा ग्वलात् । वैष्णावं प्रतिषिध्यान्त ते लोकायतिकाः स्मृताः ॥ यो यन्तु वैष्णावं लिङ्गं धत्वा च् तमसा इतः । त्युजेचेद्वे-ष्णवं धंमें सोऽपि पाषण्डतां वजेत् ॥ तस्मानु वैष्णवो भू त्वा वैदिकीं रित्तमाशितः। कुवृति भगवत्प्रीत्ये कृष्यि ज्ञादिकमें यत्।। तद्दिशिष्टमिति योक्तं सामान्यमितरं समृतम्। एउद्दीना भवेत्सातु सामान्या वैद्किक्रिया॥ तो-यवेर्जितवापीय निरर्था भवति ध्रवम् । नैसर्गिकन्तु जी गनां दास्यं विष्णोः सनातनम् ॥ तदिना वर्त्तते मींहा-दात्मचारः सनातनात् । तस्मानु भगवद्दास्यमात्मनां भितिचोदितम् ॥ दास्य विना कतं यनु तदेव कलुषं भव त्। विशिष्टं परमं धर्म दास्यं भगवती हरेः ॥ अष यें जुः। कथं दास्यं हि तहितः कथं नैसर्गिकं नृणाम्। तत्सर्वे ब्रहि तत्वेन ठोकानुयहकाम्यया॥ ब्रह्मोबान। कद्रीनोध्वे पुण्डाणिधारणं दास्यमुच्यते। तदिधिवै-ब्रह्मोबाच। दिकी याच तदाज्ञा चोदिता किया।। तत्राप्याराधनत्वेन कृता पापस्य नाशिनी। निरूपणत्वाद्दास्यस्य धार्ये नुकं म हात्मनः ॥ अङ्गत्वात् सर्वधमिणां वैष्णवत्वाच धर्मातः ।

२५८

कर्म कुर्योद्भगवतस्तस्मे राज्ञा मनुस्मरन् ॥ विधिनैव प्रतप्ते न चकेणेवाडु-येद्भुने। तथेव विभूयादारे पुण्डं शक्तरं मृदा। विभूयाद्ववीतन्त सव्यस्कन्धे विधाननः। क्णे परा क्षमाराञ्च कीशीयं दक्षिणे करे। उसे चिह्ने विना विशो न भ वेहि कथन्त्रन। न् उपोक्तर्मणां सिद्धिं वेदिकानां विशेषतः॥ आश्रमाणां चतुर्णाञ्च स्वीणाञ्च श्वतिचोद्नात् । अङ्करोश्वक शङ्खाभ्यां प्रतप्ताभ्यां विधानतः ॥ एकेकमुप्रवीतन्तु य तीनां ब्रह्मचारिणाम् । गृहिणाञ्च वनस्थाना मुपबीतह्यं सु तम् ॥ सोत्तरीयं त्रयं वापि विभूयाच्छुभतन्तुना । त्रयमूर्धं इयं तन्तु तन्तुत्रयं मनो इतम् ॥ त्रिवृच यान्यनेकेन उपेवी-तमिहोच्यते। अर्ककापिसकोशेय सीमशोणमयानि च॥त न्तूनि नोपवीतानां योज्यानि मुनिसत्तमाः!। सर्वेषामप्यरा भे तु कुर्यात् कुशमयं हिजः ॥ ऐणेयमुत्तरीयं स्याहनस्य ब्रह्मचारिणाम् । श्रुक्रकाषायवसने गृहस्थस्य यतेः क्रमान् ॥ उक्तालामेषु सर्वषाङ्कुशचीरं विशिष्यूते । मोन्त्री वै मेख छा दण्डं पाठाशं ब्रह्मचारिणः॥ त्रयस्तु वैणवा दण्डा यतेः काषायवाससी। कुशचीरं वल्कडं वा वनस्थस्य विधीयते ॥ कटीसूबञ्च कीपीनं महच शकुवाससा । कुण्डले गङ्गुः हीयानि गृहस्यस्य विधीयते ॥ मुण्डिनी सूहमाश्रिलनी य त्यन्तेवासिनावुभी। वान्यस्थो यतिविस्यात्सदावै स्पन्धः रामधत्॥ सक्येशी स्वशिखो वा स्याद्गृहस्थः सोम्यवेष-वान्। यतिश्व ब्रह्मचारी च उभी भिक्षांशनी स्मृती ॥शाक् मूरुफराशी स्यादन्स्यः सततं दिजः । कुस्रुकुम्भधान्यो वो त्याहिको वा भवेदगृही॥ मनियहेण सोम्येन जीवेधा यावरेण वा। यस्त्वेकं देण्डमालम्ब्य धर्म ब्राह्मं परित्यजेन्॥

विकर्मास्थो भवेद्दिमः संयाति नरकं ध्वयम् । शिखायज्ञीप वीतादि ब्रह्मकर्म यतिस्त्यजेत्।। सजीवं नैव चण्डाहो मू-तश्वानोऽभिजायने। स्वरूपेणीव धर्मस्य त्यागो हानिभवि द्रध्वम् ॥ कर्मणां फलसन्त्यागः सन्यासः सउदाहतः अनाश्रितः कर्मफलं कृत्यं कर्म समाचरेत् ॥ स सन्यासी च योगी च समुनिः सालिकः स्मृतः । तुष्चिर्धे वासदेवस्य धर्मे वेयः समाचरेत् ॥ सयोगी परमेकान्तं हरेः पियत्मा भवेत्। मोहाद्दास्यं विना विष्णोः किञ्चित्कर्मे समाचरेत्॥ नतस्य फलमाभोति तामसीं गतिमश्चते । हित्वा यज्ञोपवी तन्तु हित्वा च्कस्य धारणम् ॥ हित्वा शिखोर्ध्यपुण्डेच वि पताद्भाश्यते ध्रुपम् । पुञ्चसंस्कारुपूर्वेण मन्त्रमध्यापयेद् गुरुः ॥ संस्काराः पञ्च कर्नव्याः पारमैकान्त्यसिद्धये । प्रतिस म्बलारं कुर्योद्वपाकर्म ह्युत्तमम् ॥ सूर्ववेद्वतं कृत्वा तत्र सम्भूज्येद्दरिम्। दद्याद्त्रीपवीतानि विष्णवे परमात्मने॥ ब्राह्मणे भयत्र्वं दत्त्वाथ विभ्रुयान् स्वयमेव च । तदम्नो प्रूप स्नर्प च्यञ्जेगाङ्करेर्फर्जे॥ एवं पात्याह्निकं धार्य मुपवी त् सदर्शनम् । पुण्डास्तु प्रतिसन्ध्यन्तु नित्यमेव च धार-येन् ॥ द्वारवत्युद्भवं गोपी चन्दनं चेङ्करोद्भवम् । सान्तरारं मुक्कवीत पुण्डं हरिपदाकृति ॥ श्रान्दकारे विशेषण कृत्ती भोका च धारयेत्। अर्थे पञ्चकतत्वज्ञः पञ्चसंस्कारदी-क्षितः॥ महाभागेवतो विषः सनतं प्रजयेन्द्ररिम्। नाराय-णः प्रं ब्रह्म विष्ठाणां देवतं सद्।। तस्य फक्तावशेषन्तु पार्नं मुनिसत्तमाः।। हरिफक्तोर्पि तं द्धासित्णाञ्च दिगोकसाम्॥ तदेव जुहुयाद् वद्धी भुञ्जीयानु तदेव हि। हरेरनिर्वतं यनु देवानामार्यतञ्ज यत्॥ मद्यमांससमं प्रोक्तं

तद्भाञ्जीयात्कंदाचन। हरेः पादजलं पाश्यं नित्यं नान्य दिवींकसाम्॥ सर्गणामितरेषां तु फलपुष्पजलादिकम्। निर्माल्यम् अं प्रोक्तमस्पृथ्यं हि क्दाचन ॥ विधिर्हीष हि जातीमां नेतरेषां कदाचन । शिवार्चनं त्रिपुण्ड्य श्रदाणां तु विधीयते ॥ तिह्धानामिदं येच विषाः शिवपेरायणाः । तै वै देवलका ज्ञेयाः सर्वकर्मबहिष्क्रताः ॥ वैखानसास्तु येवि माः इरिपूजनतत्प्राः । न ते देवेलका ज्ञेया हरिपादाझसंश्रया न् ॥ नापहत्य हरे द्रव्यं यामार्च नपरो भवेन् । भन्या संप ज्ये देवेशं नासी देवलंकः स्मृतः ॥ भक्तया योऽप्युर्न्येदेवं-यामार्चे हरिमव्ययम् । प्रसादतीर्थस्वीकारान्नासी देवलकः स्पृतः ॥ शेङ्ख्यकोध्वीपुण्डादिधारणं स्मरणं हरेः । तना मुफीर्त्नञ्जीव तत्पादाम्बुनिषेवणम् ॥ तत्पाद्व्न्दन्ञीव् तं निवेदितभोजनम्। एकादश्युपवासम्ब तुरुस्यैवार्चनं हरे॥
तदीयानामचन्त्र भाक्तिनवविधीर् को वैष्णवः पोच्यते बुधैः ॥ एतेर्गुणै विहीनस्तु नत् विभी न वैष्णवः । कर्मणा मनसा वाचा न प्रमाद्येजनादेनम् ॥भक्तिः सा सालिकी होया भवेदव्यभिचारिणी। नान्य देवं नमस्कुर्यानान्यं देवं प्रपूजयेत् ॥ नान्यप्रसादं भुजी त नान्यदायतनं विश्रोत्। न निपुण्डे तथा कुर्यात्पर्याका रं जगन्यस्।। यतिर्यस्य गृहे अङ्कें तस्य फड़के हिर स यम्। हरियस्य गृहे अङ्के तस्य अङ्के जगन्यस्॥ म हाभागवतो विषः सततं पूजियन्दरिम् । पाञ्चकाल्यं विधा नेन निमित्तेषु विदोषतः ॥ अप्स्वगी हृदये सूर्य्य स्थण्डि ले प्रतिमास च । षट्षु तेषु हरेः पूजा नित्यमेव विधीयते ॥ स्नानकाले तु संप्राप्त नद्यां पुण्यजले शुभे । ध्याला नारा

यणं देवं नागपर्यं इत्शायिनम् ॥ दादशाणीन मनुना सोऽर्च यिता ध्सतादिभिः। अष्टोत्तरशतं जस्या ततः स्नानं समा-चरेत् ॥ एनद्प्यर्चमं प्रोक्तं ब्राह्मणस्य जगत्पतेः । हीमकाले तु सततं परिस्तीयनिलं शुभम्। यज्ञरूपं महात्मानं चिन्त येत् पुरुषोत्तम्म् । साङ्गन्यीमेयं शुभ्नदिच्योङ्गोपाङ्गशो-भितेम् ॥ सर्वत्रक्षणसम्पन्नं शुक्दजाम्बून्दप्रभम् । युवानं पुण्डरीकाहां शङ्खचक्रधनुधरम् ॥ सर्वेयज्ञमयं ध्याये-हामाङ्गितपद्मया। सम्पूज्य चोक्षतेरेव पश्चाद्धोमं समा चर्त् ॥ प्राणानिहात्रसमय सम्यूगाच्म्य वारिणो। कुशा सने समासीनः पाग्वा पत्युडन्तुरवोऽपि वा। पतिष्यासन-मात्मानं प्राणायामं सुमाचरेत्। मन्त्रेणोद्बुध्य हृद्यपङ्क ज केंशरान्वित्म्। तस्मिन्वह्मकेशीनांशुविम्बान्यने विनि न्तयेत् ॥ सर्वाक्षिरमयं दिव्यरेत् पीठं तद्त्तरे । तन्मध्येऽ ष्ट्रं पेदां ध्यायेत्कृत्यतरोर्धः ॥ वीरासने समासीनं त-सिनीशं विविन्तयेत्। सिग्धद्विदत्वथ्यामं सन्दरं भू-षणीयुतम् ॥ पीताम्बरं युवानं च चन्दनस्रिग्निषित्म्। शरत्यसमं रत्नपद्माभाइनिकरद्वयम् ॥ स्निग्धेवर्णे म होबाहुं विशालोरस्कमव्ययम्। चक्रशाङ्खगदाबाणपा णि रघुवरं हरिम्॥ जानकीलक्ष्मणोपेतं मनसेवाचिये हि भूम्। मन्त्रहयनाचियता जूक्षा चैव षडसरम्॥ पश्चाद् वैजुहुयात् पञ्चे प्राणानभ्यच्ये तं पुनः । ध्याय्न्वे मनसा विष्णुँ सरवं फञ्जीत वाग्यतः ॥ एवं हृद्युर्चनं विष्णोरुत्तमं मुनिसत्तमाः ।। अत्यन्ताभिम्ता विष्णो हित्पूजा परमा-ल्पनः ॥ सन्ध्याकाछे तु सम्मासे रिवमण्डलमध्येगम् । हिर ण्यगभी पुरुषं हिरण्यवपुषं हरिम् ॥ श्रीवत्सकोस्तुभोर-

वृद्धारीतसंहितायाम्। स्कं वैजयनीविराजितम् । शङ्करवचकादिभिर्युक्तं भूषिनैदी भिरायतेः ॥ अरुकाम्बरधरं विष्णुं मुक्ताहारेविभूषितम्। ध्यात्वा समर्वयेदेवं कुक्तमेरक्षतेरिप ॥ पणवेन च साव-व्या पम्यात् सूक्तं निव्दयेत् । ध्यायन्नेवं जपेदिष्णुं गाय त्रीं भक्तिसंद्युनः ॥ तथैवाभ्येच्य गोविन्दं नमस्कृत्वा विव ज्येत् । एवमभ्यर्चयदेवं त्रिसन्ध्यास तथा हरिम्॥वैश देवावसाने तु पुरस्ताद् वे विभावसोः । उपिरप्य स्थण्डि छे तु जुहुयाद्विकमी तन् ॥ध्यात्वा सर्गतं विष्णुं घन श्यामं सर्गचनम्। कोस्तुभोद्रासितोरस्कं तुरुसीवन-माछिनम् ॥ पीताम्बर्धरं द्वं रत्नकुण्डस्भाभितम्। हरि चन्दन हिंसाइं पुण्डरीकायतेक्षण्म् ॥ मोक्तिकान्वितनासा यं जगन्मोहन वियहम्। गोपीजनैः परिचृतं वेणुं गायनाम च्युतम् ॥ ध्यात्वा कृष्णे ज्गन्नाथं पूजियत्वा यथाविधि । जुहुँयाद्दरिचकं तदेवानुदिश्य सत्तमाः । ॥ जात्वा रूष्णम-नु पश्चादभयच्य मनसा हरिम्। आच्म्य प्रयतो भूला नू मस्कत्य विस्वियेत्॥ स्याण्डिलेऽ भयत्रीनं विष्णोरेवं कुर्या हिधानतः । त्रिस्न्ध्यास्वर्नियेद् विष्णुं प्रतिमास विशेषतः ॥ स्तवणीरजताद्ये विशिष्ठाद्वीदिनाऽपिवा। कृत्वा बिर्मे हरे: सम्यक् सर्वावयवशामितम् ॥ सर्वत्रक्षणसम्पनं स विद्युधसमन्वितम्। त्नोऽधिवासनं कुर्यात्रिरात्रं शुद्धगिरात्रं शुद्धगिरात्रं शुद्धगिरात्रं शुद्धगिरात्रं शुद्धगिरात्रं शुद्धगिरात्रं सुद्धगिरात्रं सुद्धगिरात त्रामृतेरियेस्तदा मन्त्रजिरिषे॥ युज्जपेद्यां स्मारीप्य पू जयेत्र दीक्षितः। मृङ्गलद्रव्यसंयुक्तेः पूर्णकुम्भेः समन्वि तः॥ शरावेद्रियसम्पूर्णीः पताकेस्तीरणादिभिः। कुम्भेषु ग सद्वादीन् सरान् संपूजयेत् कमात्॥ वासदेवा हययीव-

स्तथा सङ्कर्षणो विभुः। महावराहः पद्युको नारसिंहस्त थेवच ॥ अभिरुद्धो वामनश्र पूजनीया यथाकमात्। त स्य पूर्णशरावेषु छोकेशानचियेत्ततः ॥ मध्ये त् वारुणं कु मां पञ्चरत्समान्वतम्। पूजयेद्गन्धपुष्पाद्ये ध्यत्वासि न् जलशायिनम् ॥ ततः संपूजयेद्देवं धान्योपरि निधाय चे॥ व्याघचम्मे समास्तीर्य तेस्मिन् कोशेयवास्ति।नि वेष पूजरेद विम्बं मूलमन्त्रेण वेष्णवः॥ तोरणेषु चतु दिसु चूण्डादीनचेयेत् तदा । कुमुदादि स्तरान् दिसु त था धर्मादिदेवताः ॥ संपूज्य विधिना तस्मिन् पश्चादीमं समाचरेत्। आग्नेयं कल्पयेत् कुण्डं मेर्वलायुपशीपित-म्॥ अश्वत्याद् वा शमीगभी दाहत्याग्नी विनिक्षिपेत्। वैषावस्य गृहाद्वापि समानीयानलं दिजः ॥ गृह्योक्तविधि नेगान् प्रतिष्ठाप्य हुताशानम् । इध्याधानादि पर्यन्तं ह-ता होमं समान्त्रेत् ॥ पायसेन गचाज्येन तिलेबिहि भिरे पच। चतुर्भिवेष्णियेः स्केः पायसं जुहुयाद्विः।। हिर ण्यग्रिस्केन श्रीस्केन तथेवच। अहं रुद्रोभरितिचग वाज्यं नुहुयात्ततः ॥ खमग्ने द्याभिरिति च स्केन पत्यूच-निविभः। अस्य वामेति स्केन पत्यूचं बीहिभिस्तथा॥ अग्निं त्रोदीधितिभिः स्केन पत्युचं नथा। समिद्धिः पि पलीरीदे होत्यं मुनिसत्तमाः ।॥ अष्टोत्तरसहस्रं वा श नमधोत्तरं तुवा। होत्व्यमाज्यं पन्नातु तथा मन्त्रचतुष्-यम्।। वैकुण्ठपाषीदं होमं पायसेन घत्न वा। समाप्य हो म् हेविषः शेषं तस्मै निवेदयेत्। चूतुर्मन्त्राञ्चतुर्वेदांश्चतु दिसु जपेत्ततः॥ तत्र जागरणं कुर्योद्गीतवादित्र न्तिकेः । रजन्यां तु व्यवीतायां स्मात्वानद्यां विधानतः ॥ वैकुण्ठ-

चन्द्रारीत संहितायाम्। २२४ नर्पणं क्रय्यो दिल्ग्भिष्ठोहाणेः सह। तर्पित्न पेतृन् दे वान्वाग्यता भवनं विशेत्॥ आचम्य पूर्ववत् पूजां हत्वा होमं समाचरेत्। जुहुयाद्ब्रह्मणः स्तुत्ये स्तेत्रेत्र घनपा यसम् ॥ पीरुषेण तु स्केन श्रीस्केन तथेव च । वैकुण्ठ पार्षदं हत्वा क्मेशेषं समापयेत् ॥ नयनोन्भी छनं कुर्या-त् समुद्दनेण वैष्णवः । महाभागवृतः श्रेष्ठः सूक्ष्महमश लोकया। हयेनेच मक्रवीत नयनोन्मील्नं हरेः। निवेश्युभ द्विरे तु स्नापयेत् ससमाहितः ॥ सवैश्वि वैष्णवैः सूक्ते र्यत्विजः कलशोदकैः। तृतस्तन्मध्यमं कुम्भमादाय् हिन सत्तमः ॥ स्नापयेन्मन्तरलेन शतवारं समाहितः । सीव्णेष न्च ताम्रेण शङ्खेन रजतेन् वा॥ स्नाप्य पञ्चामृतेर्ग-व्येरुद्द्य शुप्रचन्दनम्। मन्लेण स्नापयित्वाच तुरुसीमि श्रितेजिलैः ॥ वासोभिभूषिणेः सम्यगढङ्कत्य च वैष्णवः। उपचारेः समभयर्च पृत्रीनीराजयेन्द्रो॥ अउइन्हते शु भे गेहे पीठे संस्थापये इरिम्। स्ते नोत्तानपादस्य इढं-स्थाप्य सुरगसने ॥ अष्टात्तरशतं वारं सुभमन्त्रचतुष्यात् ध्याला पुष्पाञ्चि द्यान्महाभागवतोत्तम्ः ॥ नत्वा गुरू न परं धानि स्थितं देवं सनातन्म्। ध्यात्वेव मन्तरलेन् तिसान बिम्बे निवेशयेत्॥ अर्चियत्वोपचारेस्त मङ्गलानि निवेदयेत्। द्पीणं कापलां कन्यां शङ्खं दूर्विस्तानं पयः॥ सीवणणिमाज्यं लाजांश्व मधुसर्पपमञ्जनम् । एवं बर्गोद्शै मासि मङ्गलानि निवेदयेत्॥ तथैव दशमुद्राश्च मन्त्रेणैव समीक्षयेत्। निद्भिबम्तिमन्त्रेण पश्चादशशतानि तु॥ पु षाणि दद्याद्भत्या चं जपेच सत्तमाहितः। सतिले स्त-णुरुः शुभ्ने जुहुयाच दिजोत्तमाः।॥ आशिषोषाचनं इत्या

दीपैनीराजयेतदा । भोजयिता ततो विपान् दिस्णाभिश्व तो षयत् ॥ आचार्य मृत्विजश्वापि विद्योषेण समझ्येत् । तदिनं संयहेनित्यं होगार्थं परमात्म्नः ॥ विरात्रमुत्सवं तत्र कु र्याच्यत्तया यतात्मवान् । वैष्णवैः पापमामुश्य तूत्र पु षाञ्जिहि चरेत्।। आज्येन चरुणा वापि होमं कुर्जीत वै षावः। पत्यहं भोजयेदिपान् वैषावान् घृतपायसम्॥ त न्यूतिपीतये शक्तया द्धादासांसि दक्षिणाः। क्र्यदिन्भू थेषित्र महाभागवतेः सद्दे॥ सहस्रनामिषिणोः स्के विष्णुपकाशकेः। नद्यामवभ्यं हत्वा तर्पये सितृदेवताः ॥अस्य गमेति स्केन पायसं मधुसंयुतम्। काज्येन मू रमन्त्रेण सहस्र जुहुयानदा ॥ आशिषा वाचन कत्वा भाज येदिज्सत्तमान्। एवं संस्थाप्येदेवम्बियेदिधिना तदा॥ गृहार्चीया स्थापेने तुं ल्घुनन्तं समाचरेत्। अधिवासनमे-घोदि मन्त्रमन विवर्जधेत् ॥ एकत्र पञ्चगच्येषु विनििध प्य परे इति । पञ्चामृतेः स्नापयिता पश्चादु इर्नेनादिकम् ॥ आदाय करुशं श्वदं पवित्रोदकपूरिनम् । निक्षिप्य पञ्च रसानि सवण्णीतुरुसोदरम् ॥ चन्देनास्नेतद्व्याश्चि तिरा न् धानीत्र सर्पपम् । अभिमन्त्र्यं कुन्नोः पश्चान्मन्त्ररस्नेन वैष्णवः॥ शतवारं सहसं वा मन्तेणवाभिषेचयेत्। सवै- श्रवेषावेः स्केर्ण्यञ्या वैष्णवेनच॥ नामभिः केशवा-धैश्र स्वैमिन्नेश्र वैषावैः। स्नाप्य वस्त्रेपूषणेश्र सुपो धान्ये निवेशयेत्॥ स्यण्डिलेअनिं मनिषाप्ये इध्माधाना दिपूर्ववत्। होमं कुर्याद्गवाज्येन पायसान्नेन वैष्णवः ॥ कर्तुगपासनाग्ने तु होममत्र विशिष्यते। प्रत्युचं वैष्ण वैः स्कैर्नुहुयाद्धनपायसम्॥ अस्य गामेति सूकेन ग

वृद्धहारीत्संहितायाम्। वाज्यं जुह्यात्ततः । मन्लर्लेन जुहुयाद्शेत्रसहस्रकम्॥ निहम्बस्तिमन्लेण निउहोमं नथेव न। अविज्ञातस्त तन्म न्तं मूलमन्त्रेण वा यजेत् ॥ यजेन्छी भूपकाशैश्व गायत्रा विष्णुसंज्ञया । वैकुण्ठ्पार्षद् होमं कृत्वा होमं समापयेत्॥ नय्नीन्मीलनं कृता सीवण्णीन् कुशेन् वा । निवेश्यावाहयै-त्पीठे मन्त्ररहोन बेष्णावः ॥ मन्त्रेणीवार्चनं कृत्वा पश्चात् पुष्णा ञ्जििं यजेत्। तस्मिन्विम्बे तु तन्मूर्ति ध्यात्वा नियुत्तमान्सः ॥अष्टोत्तरसेइस्नन्त द्दान् पुष्पञ्जितिं ततः। संवेद्य वैष्णे वैः स्केद्दात् पुष्पाणि वेष्णवः॥ ब्राह्मणान् भोजयेत्यश्रा सायसानं घतानितम्। शक्याच दक्षिणां दत्ता विशेषे णार्चियेद्गुरुम्॥ सहस्रोनामिनः स्तुत्वा आशीर्भिरिभवाद येत्। प्रदक्षिणनमस्कारान् कुळीताञ पुनः पुनः॥ प्रसीद मम नायेति भक्तया सम्प्रार्थयिदिभुम्। दी सैनीराजयेत्प-श्वाच्छत्तया तेन समाहितः ॥ हत्योषं हविः पाश्य जस्वा मन्त्र मनुत्तमम् । ध्यायन् कमलपत्राक्षं भूमो स्वप्यात् कु शोत्तरम् ॥ एवं गृहाची विम्बस्य विष्णुं संस्थाप्य विष्णुवः अर्चये हिंधिना नित्यं याव देह निपातन्म् ॥ शाल्याम् शिन् लायान्तु पूजनं परमात्मनः । कोरिकोरिगुणाधिक्यं भूवे दन न संघायः ॥ नजपो नाधिवासश्च न च संस्थापनि या। शाल्यामार्चने विष्णुस्त्सिन् सन्निहितस्त्या॥ मू त्तीनान्तु हरेस्तस्य यस्याँ शितिरचुन्तमा । तस्यामेव तु ता ध्याला पूजरोत् ति हथानतः ॥ मूर्यन्तरमिषम्बे तु न य-यः ॥ अर्चनं वन्दनं दानं प्रणामं दशने नृणाम् । शाल्यामे -शिलायान्तु सर्व कोटिगुणं भवेत् ॥ न स्नातः सर्वनीर्थेषु सर्व

यज्ञेषु दीक्षितः। यो वहेच्छिरसा नित्यं शालयामशिलाज-लम्। असत्यकथन् हिंसाममध्याणाञ्च भक्षणम्। शाल यापजरं पीत्वा सर्वे दहित तत्सणात् ॥ हिजानामेव नान्ये षां शालयाम्शिलाच्नम् । बालकृष्णवपुदेवं पूजयेत्तद् हि जः सदा ॥ परेद्दाप्यचिये दिष्णुं विशिष्टः शूद्रयो निजः। स्थापि ले हदये वापि पूज्येतद् हिजः सदा ॥ वाराहं नारसिंहञ्ज हययीच्य गामनम्। ब्रोह्मणाः पूजये दिष्णुं यज्ञमूर्तिञ्चके ब्हम्।। क्षत्रियः पूजयेद्रामं केशावें मधुसूदनम्। नाराय णं नोसुदेवमनन्ते जनार्दनम् ॥ प्रधुम्ने म्निरुद्व गो विन्दन्त्राच्युतं हरिम्। सङ्घीणं तथा हुँ णां वैश्यः स्पूजये तदा।। बाल गोपालवेष वा प्रायेच्छ द्रुयोनिजः। सर्व एव-हि संपूज्या विषेणा मुनिसत्तमाः । ॥ सेवैंऽपि भगवन्मन्ना जमयाः सर्वसिद्धिदाः । तस्माहिजोत्तमः पूज्यः सर्वेगां भू-तिमिच्छताम् ॥पञ्चसंस्कार्सम्पन्नो मन्तरहार्थकोविदः । शाल्याम् शिलायां तु यूजयेत् पुरुषीत्मम्। पूजितस्त्ल-सीपनेदिद्यादि सक्छ हरिः ॥ यः श्राद्ध कुरुते विपः शास्त्रा मिशिलायतः। पितृणां तत्र तृप्तिः स्याद्गयाश्राद्दादनन्तरम् ॥जप्हुत् तथा दाने वन्दनं च ततः किया। शास्त्रामसमीपे तु सर्वे कोटिगुणं भवेत् ॥ ध्यात्वा क्मरुपत्राक्षं शालयाम शिलोपरि। पारुषेण्तु सूक्तेन पूज्येत् पुरुषोत्मम् ॥अ नुष्टुभस्य स्कस्य विष्टुवन्त्वास्य देवता । पुरुषो योजग ह्रींज मुष्निरियणः स्मृतः॥ प्रथ्मां विन्यसे हामे हिती-यो दक्षिणे करे। तृतीयां वामपादे तु चतुर्थी दक्षिणे तथा। पञ्चमी वामजानी तु पषी वे दक्षिणे तथा। सुप्तमी गामकट्यां तु ह्यष्मीं दक्षिणेऽ पि च ॥ नचमीं नाभिदेशे तु

प्येकरात्रमुखवा तदेशास्तीर्ध्सम्मितः॥ भोजियत्वा महा भागान् वैष्णवानिषीन्पि। ततो बालसहद्वह्मन् बा न्धवांश्वे समागतान् ॥ भोजयित्वा यथा शक्त्यो यथाका-खं जितसुधः। भिक्षां द्यात् पयल्नेन यतीनां ब्रह्मचा-रिणाम् ॥ श्रद्धो वा मतिलोमो वा पथि श्रान्तः क्षधातुरः। भोजयेनं प्रयुलेन गृहमभ्याग्तो यदि ॥ पाषण्डः पतितो वापि क्ष्यात्ती गृहमागतः। नेव दद्यात् स्वपकान्न माम मेच प्रदापयेत् ॥ स्वशक्तया तर्पयित्वेच मतिथीनागतान् गृहे। सम्यङ्गिवेदितं विष्णोः स्वयं भुञ्जीत वाग्यतः॥ मुक्ताल्य पादी हस्ती च सम्यगाचम्य वारिणा। विष्णोर भिमुखं पीठे हेमदिग्धे कुशोत्तरे॥ पाग्वा प्रत्यङ्मुखा वापि जान्बोरन्तः करः शुनिः । उद्इन्तुरवी वा पैत्र्ये तु समा सीताभिप्रिन्तः ॥ वंशातालादिपत्रेस्त कृतं वसनम्भ च। कपाले मिएकं बापि वर्णे तृणमये तथा।। चमिसनं शुष्ककाषुं खलं पर्यं मेव च। निषिद्धा तु पीठं च द्रा न्तमस्थिमयञ्च तत् ॥ दग्धं पराधितं तोलमायसञ्च वि वर्जयेत् । विभीतकान्तिन्दुकञ्च कर्ञं व्याधिद्यातकम्॥ भ्हानकै किप्तयं च हिन्तालं शियुमेव च। निषिद्त्रयो होते सर्वकर्मक गहिताः ॥ शुद्धदारमये पीठे समासीत कुशात्रे। पाठत्वछामे सीम्य स्यात् कुवलं कुश्विष्रम्॥ चतुरसं त्रिकोणं वा वर्तुउज्जार्द्धचन्द्रकम्। वॅणीनामानुपू वैण मण्डलानि यथाकमात्॥ स्वलङ्कते मण्डलेऽसिन् विम्हं भाजनं न्यसेत्। स्वणि रोप्यं च कांस्यं वा पणि वाशो स्वचोदितम्॥ चतुःषष्टिप लं कांस्यं तदधं पादमेव वा। गृ हिणामेव भाज्यं स्यान् ततो हीनन्तु वर्जयेत् ॥ पलाशप-

यपत्रे तु गृही यलेन वर्जयेत्। युतीनाञ्च वनस्थानां पि तृणाञ्च शुभायदम् ॥ वटाश्वत्यार्कपणानि कुम्मीतिन्दुक योक्तया। एरण्डताल बिल्वेषु को विदारकरञ्जके ॥ भहात-कार्वपणीना पणीनि परिवर्जयेत्। मोनागर्भपछाशं न वर्जयत्तत्त् सर्वदा ॥ मध्कं कृटजं ब्राह्मजम्बू प्रक्षमुदुम्बर म्। मानुळङ्गं पनसं च मोचाचम्म्दलानि च॥ पालाक्य वणी श्रीपणी सुभानीमानि मोजने। यथाकालोपपन्ने-तु भोजने धृतसंस्कृते॥ पद्यादिभिर्दत्तवस्तु वास्तुदेवा पिते अभे। गायत्र्या मूलमन्त्रेण संघोह्य अभगरिणा ॥ क्रतसत्याभ्यामिति च मन्त्राभ्यां परिषेचयेत्। अन्तस्त्पं विराजं सन्धात्वा मन्त्रं जपेद्बुधः ॥ध्यात्वा हन्पङ्क्ते विष्णुं सधांशुसदशद्यतिम् । शुङ्खचकगदापद्मेपीणि वै दिन्यभूषणम् ॥ मनसेवाचियत्वाथ् मूलमन्त्रेण वैष्ण वः। पादीद्कं हरेः पुण्यं तुलसीदलमिश्रित्म ॥अमृतो पस्तरणमसीति मन्त्रण पात्रायेत्। उद्दिश्येवं हरि पाणा न् जुहुयात् सघतं हविः ॥ अन्नलाभे तु होत्यं शाकम् हफराँदिभिः। पञ्चपाणाद्या इतयो मन्त्रेस्ते जीह्रयाद्ये रै:॥ श्रद्धायां पाणेनिषेति मन्त्रेण च यथाक्रमात्। नर्ज-नीम्ध्यमाङ्गुष्टेः पाणायेति यजेद्धविः ॥ मध्यमानामिका इ्.गुष्ठेरपानायत्यनन्तरम्। कनिष्ठानामिकाङ्गुष्ठेर्व्याना यैत्याहुतिं ततः॥ कनिष्ठतर्जन्यङ्गुष्ठैरुदानायैति वै यजे त्। समानायेति जुहुयात्सर्वेरङ्गुिष्ठिमिद्दिजः॥ अयम मिन्दैन्वान्रिरित्यात्मानमनन्तरम्। शतमष्टोत्तरं मन्त्रं मनसेव जपेत्रतः ॥ध्यायन् नारायणां देवं भुञ्जीयान् तुय थासुसम्। वकादपातयन् यासं चिनायनमधुसूदनम् ॥

नासनास्द्रपाद्स्तु न वेष्टित शिरास्तथा। न स्कन्दयन् न च हस्य बहिन् प्यवसीकयन् ॥ नात्मीयान् प्रषपन् जल न् बहिर्जानुकरो न च। न बादकोपितनरः पृथिच्यामपि वां नचे ॥ न पसारितपादश्व नोत्सङ्ग कृतभाजनः । ना-श्रीयाद्भार्यया सार्धे न पुत्रविपि विक्रतः॥ न श्रयानो न तिसङ्गो न विमुक्त शिरोरु हः। अन्न रथा न विकिरन् नि षीवनं नातिकाङ्क्या ॥ नातिशब्देन भुञ्जीत न वस्तार्थी पवेषितः। प्रमुखे पात्रं हस्तेन भुञ्जीयान् पैतृके यदि॥ य षके पुरके वापि पिबेत्तीयं दिजीतमः। तकं वाष्यथ् वा क्षीरं पानकं वापि भोजने ॥ वक्रेण सान्त्यन्निन दत्तमन्यन वा पिवेत्। यासशेषं ननाश्रीयात्पीतशेषं पिवेन्न तु॥ शाकपू-लफ्डादीनि दन्तन्छिनां न खाद्येत्। उद्द्य बामहस्तेन तो यं बक्रेण यः पिबेत् ॥ सक्तरां वे पिबेद्यक्तां सद्यः पति रीर वे। शब्देनापोशानं पीत्वा शब्देन दिधपायसे ॥ शब्देनान्नर सं क्षीरं पीत्वेव पिततो भवेत्। प्रत्यक्षरवणं श्वकं क्षीरं व लवणान्वितम् ॥ द्धि हस्तेन मच्छ्रीतं सरापानसमं स्मृतम् आरनाळरसं तद्दनद्वीनापितं हरें।। आसनेन तु पात्रण नेव द्याद्घतादिकम्। नोच्छिष्टं घतमाद्यात् पेतृके भो जुने विना ॥ तथेव तु पुरीडाशं पृषदाज्यञ्च माक्षिकम्।पा नीयं पायसं क्षीरं घृतं ठवणमेव न॥ हस्तद्तं न गृहीया त्तुल्यं गोमांसभक्षणम्। अपूपं पायसं मांसं यावकं कुस रं मधु ॥ केवलं यो र्थासाति तेन फक्तं सरास्मम् । कर-क्षं मूलकं शीय उशुनं तिलपिष्टकम् ॥ तालास्य भ्येत इ नाकं सरापानंसमं स्मृतम्। अन्यच फलमूला धं भक्षं पानादिकन्त्र यत्॥ स्नक्चन्दनादि नाम्बूहं यो भुङ्के हर्यः

नर्पितम्। कल्पकोटिसहस्राणि रेतोविणमूत्रभाग् भवेत्॥त स्मात्सर्वे स्विमलं हरिभुक्तं यथोक्तवत् । स पवित्रेण यो भुङ्के सर्वयज्ञफलं लभेत् ॥ ध्यायन् नारायणं देवं वाग्य तः प्रयतात्मवान् । भुत्कावनतितृत्येव पात्रायदम्बु निर्म रुम् ॥ अमृतापिधानमसीतिमन्त्रेण कुत्रापाणिना । कि-त्रिदन्तमुपादाय पीतशेषेण गारिणा ॥ पैतकेन तु तीर्थेन भूमो द्यात्तद्थिन्। रोरवे नरके घोरे वसतां क्षुतिपास यो॥ तेषामन्तं सोदकेञ्च अक्षय्यमुपतिष्ठतः । इति दलो दकं तेषां तस्मिन्नेवासने स्थितः ॥ प्रकाल्य हस्तो पादीच वेत्रं संशोध्य वारिभिः। दिराचम्य विधानेन मन्लेण पा-शयज्जलम्॥ पीत्वा मन्त्रजलं पश्चादाचम्य हृदयाम्बुजे। राममिन्दीवरश्यामं चक्रशाह्र खधनुधरम् ॥ युवानं पुण्ड रीकाक्षं ध्यात्वा मन्तं जपद्बुधः। समासीनः कर्वासने वेदमध्यापयेत्ततः॥ सिख्यान् यांस्तु शास्त्रं वा स्नेहाहा धर्मीसंहिताम्। इतिहासपुराणं वा क्ययेच्छ्णुयाच वा। स्वावस्तुङ्क्त् सन्ध्यां बृहिः कुर्जीत पूर्ववृत्॥ बहिः सन्ध्या शतगुणं गोष्ठे शतगुणं तथा । गङ्गाजिले सहस्रं स्यादन-न्तं विष्णुसनिधी ॥ उपास्य पश्चिमां सन्ध्यां जन्ता जूप्यं समाहितः। पूर्ववत् पूज्येदिष्णुं गन्धपुष्पाक्षतादिभिः॥ अष्टाक्षर्विधानेन् निवेष्येवं समाहितः। सायमीपास नं हुला वैष्णवं होममाचरेन् ॥ध्यात्वा यज्ञमयं विष्णुं म न्सेणाष्ट्रीतरं शतम् । तिछबीद्याज्यचरुपिस्तनेकेनापि वा यजेत्॥ वैश्वदेवं भूतबिहं हत्त्वा दत्त्वा च आचम्त्। शय्यायां विन्यसेदेवं पर्याङ्के समलङ्कते ॥ सविताने गन्धपुष्पधूपेरामोदिते शुभे । शायित्वा च देवेशं देवीश्यां

एद्रहारीत्संहितायाम्। २३४ सहितं हरिम्॥ हिरण्यगर्भस्तेन नासदासीदनेन च। ह त्युचेव अवसूक्तेन च हिजः। दीपेनीरोजनं कत्वा पश्चा दर्धं निवेदयेत् ॥ स्कवाससा यवनिकां विन्यस्याथ स्माहितः । द्वादशाणी महामन्त्रं जपदेशोत्तरं शत्मु ॥ असे श्च शङ्खचका दी दिखा रक्षां सुविन्यसेत्। स्तोत्रैः स्तुला नमस्कृत्वा पुनः पुनरनन्तरम् ॥ वैष्णवैश्व सहिद्रश्व भु ञ्जीयादिपति हरेः। आचम्यानिमुपस्पृश्य समासीनस्त वाग्यतः ॥ ध्यायन् हिद् भुभं मन्तं जपेदशीतरं शतम्। रोषाहिशायिनं देवं मनसेवार्चयेत्ततः॥ श्रायीत शुभशे-यायां विमले शुभमण्डले। ऋती गच्छे इमीपलीं विना प ऋस पर्वसः ॥ पुत्रार्थी चेनु युग्मासः स्त्रीकामी विष्मास् च्। न श्राद्धिवसे चैव नोपवांसिदने तथा।। नाश्विमिति नो वापि न चैव मिलनां तथा। नकुद्दां न च कुद्दः सन् नरो गी नच रोगिणीम् ॥ न गच्छेन् क्र्रदिवसं मघाम्लह्योर पि। ब्राह्मे सुहूर्ते उत्थाय आचामत्प्रयतात्मवान्॥ यती न ब्रह्मचारी च वन्त्थो विधवा तथा। आजिने कम्बले वापि भू मी स्वयात् कुशोत्ररे ॥ ध्यायन्तः पद्मनाभं तु शयीरन् वि जितेन्द्रियाः। अप्येद् गाचियेदिष्णुं त्रिकाढं श्रद्धयानितः॥ आच्रेयुः परंधर्म यथोव्त्यनुस्रितः । भातः रुषां जगन्त्रा थं कीर्त्येत् पुण्यनाम् भिः ॥ शौचादिकन्तु यत्कर्म पूर्वी-कं सबीगाचरेत्। नैमितिक विशेषेण पूजयेत् पतिमय्यय
म् ॥त्तरकाले तु तन्मूर्ते रर्चनं मुनिभिः स्मृतम्। प्रसुत्ते प येनाभेतु नित्यं मासचितुष्यम्। द्रोण्यान्दोलोयामपि वा भक्तया संपूजयहिभुम्। क्षीराब्धो शेषपर्यद्गे शयानं रमया

सह।। नीलजीम्तसङ्गाशं सर्वालङ्गारसन्दूरम्। कीस्तुभ्रो-द्रासिततत्तुं वैजयन्त्या विराजितम् ॥ उदमीघनकुच्सपरिशु भीरसं संबर्वसम्। ध्यात्वैवं पद्मनाभन्तं हादशाणीनं नित्यं शः॥ पूजयेद्रन्धपुष्पाद्ये स्थिसन्ध्यास्विप वैष्णवः। निवेद्य पा यसानं तु द्धात् पुष्पाञ्जिि तृतः ॥ सहस्रं शत्वारं वा ह यं मन्त्रं जपेत्सधीः । द्वादशाणीमनुञ्जीव जालाज्येन तिरेश्य गा। केवलं चुरुणा वापि जुहुयात्यतिवासरम्। अधःशायी ब्रह्मचारी सर्वभोग विवृजितः ॥ वार्षिकां ऋतुरो मासान् ए वमभ्यच्ये केशवस्। ब्रोधियत्वाथ कार्तिक्यां दद्यात् पुष्पा ण्यनेकशः॥ साज्येसिछैः पायसेन मधुना च सहस्रशः। मू लमलेण जुहुयात् स्कैन्यायभृथं ततः ॥ सहस्रानामिः हला द्याद्रें ण्मेंव च। गृहं गलाथ देवेशम्यूजियला य थाविधि ॥ भोजयेहैषाचान वियान दक्षिणाभिन्न तोषयेत शुक्रपक्षे नभोमासि द्वादत्रयां वैष्णवः श्वितः॥ पवित्रारी पण कुर्यान्नाभिमात्रायतं न्यसेत्। तथा वक्षसि पर्यन्तं सहस्रन्तान्तवं समृतम् ॥ कुशयान्येसहस्रन्तु पादान्तं वि न्यसेत्ततः । सोवणी राजतीं मूढां शतयन्ययुतां न्य्सेत् ॥ मृणाउतान्तवं पश्चात् पुष्पमोठां तृतः परम् । शतमीति कहाराणि नानारलमयान्यपि॥ उपोध्येकादशीं तत्र रात्री · जागरणान्वितः । अभ्यर्चयेक्तगन्नाथं गन्धपुष्पफरादिभिः ॥ नीत्वा राभिं नर्तका्दीः मभाते विमले न्दीम् । गत्वा स्ना त्याच विधिना तर्पयिखेशमर्चयेत्॥ सवैश्व वैष्णवैः स्-कैर्मध्वाज्यतिरुपायसेः। हत्या दत्वा दशाणेन सहस्रं जु हयात्ततः ॥ पश्चादारोपयो हष्णोः पवित्राणि शुभानि वै। पवस्य सोम इति च जपन् सूक्तं सुपावनम् ॥ निवेदयेत्प-

रुद्दारीत संहितायाम्।

२३६ वित्राणि तथा विष्णोर्यथाकमात्। मन्दिरं कुत्रायोक्षेन वेषू यन् परमात्मनः ॥ वितानपुष्पमालाचे रलङ्कत्य च सर्व नः। सहस्रं हादशाणीन भक्तया पुष्पाञ्जििं न्यसेत्॥ अ थोपनिषदुक्तानि पञ्चस्कान्यनुक्रमात्। लेह यत्पीति। त्यादि जपन् पुष्पाञ्च छीनतः ॥ ब्राह्मणान् भोजयेत्पन्ता त् स्वयं कृषीत पारणम्। शक्तया वा चोत्सवं कृष्यात्रिरा न वेष्णवात्तमः ॥ प्रत्यब्दमेवं कृष्यित पविनारोपणं हरेः। कनुकोटिसहस्रस्य फलं प्राप्नोत्यसंशयः ॥ तत्र दुर्शिक्ष रोगादिभयं नास्ति कृदाचन्। संप्राप्ते कार्त्तिके मासे साया क्षे प्रजयेदिए ॥ हधेः पुष्पेश्व जातीभिः कोमले स्तुलसी दलेः । अर्चयेदिष्णुं गायत्र्यानुवाकेविष्णवेरिष ॥ पावमा न्येश्व तन्मासं भक्तया पुष्पाञ्जालं न्यसेत् । अष्टोत्तरसहसं वा शतमृष्टोत्तरं तुवा ॥ अष्टाविंत्राति वा शक्त्या दद्याद्दीपा न् सपाछिकान्। सवासितेन तैलेन गवाज्येनाथवा हरेः॥ अष्टोत्तरशतं नित्यं तिल्होमं समाचरेत्। मनुना वैष्णवे नापि गायत्र्या विष्णुसंज्ञया ॥ हत्वा पुष्पाञ्जिति दत्ता ग भ्यामेव तदा विभोः। हविष्यं मौदकं शुद्धं नक्तं भञ्जीत ग ग्यतः ॥ तेलं शक्तं तथा मांसं निष्णाचानमाक्षिकं तथा। च णकानपि माषांश्र वर्जयेत्कातिकेऽ इनि ॥ भोजयेदेषावा न् विमान् नित्यं दानादिशक्तयः। अन्ते च भोजयेदियान् दक्षिणाभिश्च तोषयेत्॥ एवं संयूज्य देवेशं कार्तिक् अतुकी टिभिः। पुण्यं प्राप्यान्घो भूत्वा विष्णुलोके महीयते॥ द शमीमिश्रितां त्यत्का वेलायामरुणोदये। उपोष्येकादशी शुद्धां द्वादशीं वापि वैष्णवः ॥ स्नात्वाम् रुक्या नद्यां तु वि धानेन हरिं यजेत्। सगन्धकुसमीः शुभीरुपचारेश्व सर्व-

शः॥ रात्री जागरणं कुर्यान् पुराणं संहितां पठेन्। जागरेऽ स्मिन्भक्तभेद्रमिनास्तीय वैष्णवः ॥ पुरतो वास्तदेवस्य भू मी स्वयात्समाहितः । तृत्ः भुभातसमये तुलसीमिश्रिते-जीतेः ॥ स्नात्वा सन्तप्य देवेशं तुरुस्या मूरुमन्त्रतः । इये-न वा विष्णुसूक्तेः कुर्यात् पुष्णञ्जलीं स्ततः ॥ तथैव जुह-यादाज्यं मन्त्रेणीव शतं ततः । पायसान्नं निर्वेद्येशे बाह्म णान् भोजयेन्तः ॥ ध्यायन् कमलपत्राक्षं स्वयं भुज्जीते ग ग्यतः। अहःशेषं समानीय पुराणं वाचयन् बुधः॥ सायाह्ने समनुपासे दोलायां पूजये इरिम्। अभ्यच्ये गन्धपुष्पाधै । भिक्ष्यनीनाविधेरिप ॥ ब्राह्मणस्यतु स्केश्च शनेदेलां प्र चालयेत्। इतिहासपुराणाभ्यां गीतवाद्यः प्रबन्धकेः॥ एवं संपूज्येदैवं तस्यां निशि समाहितः। म्ध्याह्ने पूज्येदि ष्णुं वैष्णवेन समाहितः ॥ चम्पकैः शतपवेश्व करवेरिः शि तैरपि । वैष्णवेनेव मन्त्रेण पूजयेत्कमलाप्तिम् ॥ नकरी-न्द्रेति स्केन दद्यान् पुष्पाञ्जा है हरेः। मन्त्रेणा शेत्ररश्नं द यान् पुष्पाणि भक्तिनः॥ तथेच होमं कुचीन् निहे बीहि-भिरेव वा। सदध्यनं फलयुतं नैव धं विनिवेदयेत्॥दी पैन्शिजनं सत्वा वृष्णवान् भोजयेत्ततः। मन्दवारे तु सा-याद्धे तावसम्यगुपोषितः ॥ तिछैः स्मात्वा विधानेन सन्त-र्प्य सनातनम्। नृसिंहव्पुषं देवं पूजयेत्ति धानतः॥म नुतराजेन गायूत्र्या मूलमन्त्रेण वा यजेत्। अखण्डविल्वप नैश्व जातिकुन्देश्व यूथिकेः ॥ च्छन्नः पञ्चोशाना शान्त्याः लम्मे ! द्यात् पुष्पाञ्जिरं भत्तया मन्त्रेणेव

रुद्धारीत संहितायाम्।

236

दं इत्वा होमशेषं समापयेत्। मधुशकर्यंयुक्तानपूपान् मीदकांस्तथा ॥ मण्डकान् विविधान् भस्यान् सूपानं मधु मिश्रितम्। सवासितं पानकञ्च नृसिंहाय समर्पयेत्॥ नृतं गीतं तथा वाद्यं कुर्वीत पुरतो हरेः। भोजयेच ततो वियान नव सप्ताथ पञ्च वा ॥ हर्य पितहविष्यान्नं भुन्तीयाद्वाग्यतः स्वयम्। ध्यायेन्नृसिंहं मन्सा भूमी स्वप्याज्ञितेन्द्रियः ॥ एवं शानिदिने देवमभ्यन्यं नरकेशरीम्। सविन् कामानवा माति सो १ श्वमेधायुनं छभेन् ॥ षष्टिवर्षसहस्रं स पूजां-पामोति केभावः। कुलकोटि समुद्धत्य वेकुण्ठपुरमाभ्योत्॥ पायश्वित्तमिदं गुह्यं पातकेषु महत्स्वपि। अपुत्रो लभते पुत्र मधनो धनमाभुयात्॥ पक्षे पक्षे पोण्मास्यामुदितेऽसि न्दिवाकरे। स्नात्वा संयूजयेहिष्णुं वामनं देवमव्ययूम्॥ स-मासीनं महात्मानं तस्मिन् पूर्णेन्दुमण्डहे। सन्तर्पर्येच्छुभ जलेः कुसमाक्षतामिश्रितेः॥ तत्र मूलेन मन्लेण प्रायेत् प्रमेश्वरम् । तुलसीकुन्दकुसुदैरथ पुष्पाञ्जलि चरेत्॥ तं सोम इति स्केन प्रत्युचं कुसुमैयजित् । पश्चाहोम् पकुची न पायसान्नं सशर्भरम्॥ मन्त्रेणाष्ट्रोत्तरशतं सूक्तेन पत्य चं तथा। अग्निसोमानुवाकेन समिद्धिः पिप्छेर्यजैत्॥ सह स्ननामिशः स्तुत्वा नमस्कृत्वा जनादिनम्। वैष्णवान् भोज येत्यश्वात्पाय्सान्नेन शाकितः॥ स्वयं भ्रत्का हिषः भोषं भ्र यीत नियतेन्द्रियः । एवं संपूज्य देवेशं पीर्णियास्यां जनार्द नम् ॥ सर्वप्रपिविनिर्मुक्तो विष्णुस्रायुज्यमासुयात् । मधा यामिप पूर्वाहे स्नात्वा हृष्णां जेले हिजः ॥ सन्तप्ये मूलम-न्त्रेण निलमिश्रितवारिभिः। नर्पियत्वा पितृन्देवानचिये दच्युनं नतः॥ हृष्णेश्व नुलसीपनेः केनकेः कमलेरपि। शो

णितेः करविरेश्व जपाकुरजपारलेः॥ अस्य वामेति सूक्ते न दद्यान् पुष्पाञ्चिति हरेः। मन्त्रेणाधोत्तरशतं रुष्णां श्री वुरुसीदर्वेः॥ तथेव जुहुयादग्नी निर्देः रुष्णाः संशर्करेः। आज्येन पीरुषं सक्तं पत्यृचं जुहुयात् नतः॥ नारायणानु वाकेन उपस्थाय जन्दिनम्। सुसंयाचेः सीहदेश्य शाल्य नं विनिवेदयेत्॥ वैष्णवान् भोजयेत्पश्चात्स्वयं भुन्नीत् वाग्यतः। तस्यां रात्रीजपेन्यन्तमयुतं हरिसन्निधी॥ वै षावैरचवाकेश्च दत्ता पुष्पाञ्जितिं ततः। पुरतो वासदेवस्य भूमी स्वप्यातुक्शोत्तरे॥ एवं संपूज्य देवेश मधायां वैष्णवो त्तमः। उद्दर्यं वंशजान् सर्वान् वैष्णवं पदमाभुयात्॥ व्यती पाने तु संयासे हययावं जनादनम्। पुष्पेश्च कर्विरेश्च पुण्ड रिकैः सम्बीयेत् ॥ योरयीत्यनुवाकेन पत्युन् वी यजेद् बु धः। मन्त्रेण च शतं दत्वा पश्चाद्धोमं समाचरेत्॥ यवैश्व नण्डुहेर्चापि तिछैः पुष्पेरमापि वा। मुन्नेणाष्ट्रोत्तरशतं जु ह्याँ हैषाग्रेत्मः ॥ अभूदेकाद्यष्टसूक्तैः मृत्यृचं जुहुयाच-रूम्। शेषं निवेद्य हरये संपाश्याचमेन् चरेत् ॥ सहस्रशी ष्स्तिन् उपस्थाय जनादनम्। शाल्योदनं स्पयुतं विवि धैश्व फलेरिष्।। ग्वाज्येन युतं दत्ता दीपेनीराजयेत्ततः॥ ब्राह्मणान् भोज्येसश्वाद्क्षिणाभिश्व तोष्येत्। हिष्यनु स्वयं भुक्षा भूमी स्वप्याज्जिते द्वियः॥ एवं संयुज्य देवेशं व्यतीपाते सनात्नम्। द्शाचष्सिंहस्यस्य पूजायाः फल-मामुयात्।। यहणे रिवसंकान्ती वराहवपुषे हरिम्। कु मुदेरुज्वलेः पद्मस्तुलसीिमः कुरण्ट्केः॥ अवधेद्भूधरं देवं तन्मन्त्रणेव वेष्णवः। दूरादिहात स्क्लेन द्द्यात् पुष्णा जिति हिजः॥ मन्त्रण च सहस्रं तु शतं वापि यजे त्तदा। ति

वृद्ध हारीत सहितायाम्।

380 लैश्र जुहुयातद्व सूक्तेन मत्युन्ं घ्नम् ॥ सूपानं इसरा नं न भेरया पूर्वी घतपुतान्। नेवेद्यं विनिवेद्येशे ब्राह्मण न भोज्येत्ततः ॥ एवं संपूज्य द्वेशं संकान्ती महण् हिरम्। कल्पकोटिसहस्राणि विष्णुठोके महीयते ॥ वैशाखे पूज्ये द्रामं काकुत्स्यं पुरुषोत्तमम्। सीताठक्षणसंयुक्तं मध्योह्ने पूजयहिमुम्॥पुनागकेत्कापद्येरुत्यठेः करग्रकेः। चा म्पैयबकुर्देः पूजां षडणेनिव कारयेत्। जानयेवाति स्-क्तेन कुयति पुष्पाञ्जििं ततः। संक्षेपेण शतन्त्रोक्यां भे तिन्होक्या यजेतथा ॥ पुष्पाञ्जिहिं सहस्रं तु मन्त्रेणीव यजे द्रमाम्। त्वम्ग्नं इति स्केन पायसं जुहुयाह्या॥ पश्चान न्लेणाज्यहोम्। न्वेद्यं पायसं घतम्। कद्रशंफलं शक्रांच पानकं च निवेद्येत्॥ पञ्च सम् त्रयौ वापि पूजनीया हिजो त्तमाः!। सह धैरन्नपानां धै गीहिरण्यादिदेक्षिणीः ॥हवि ष्यान्नं स्वयं फत्का पठेद्रामायणं नरः। एवं संपूज्य विधि बद्राघ्वं जानकीयुतम्॥ भुत्का भोगान् मन्रिस्यान् वि ष्णुलोके महीयते । लक्ष्मीनारायणं देवं भागवे वासरे नि शि॥अखण्डबिल्वपत्रेश्च तुलसीकोमलेद्लैः । अर्व्येन्म न्नरलेन वामाइ स्थित्रिया सह।। चन्दनं कुइ कुमोपेते इ स्तुर्या च समर्पयत् । श्रीसूक्तपुरुषसूक्ताभ्यां द्धात् पु-ष्पाञ्जितिं ततः ॥ मन्नद्दयेन पुष्पाणां सहस्रं च निवेदयेत् लमग्न इति स्केन पत्येचं कुरूमान् यजेत्॥ अरगण्डविं लपत्रेची पद्मपत्रेचितेन गा। श्रीस्क्षप्रपस्काप्यां प्र-त्युचं जुहुयात् ततः॥ अग्निं न विति स्केन तिलेबीहि भिरे ववा। मन्त्ररहोन जुहुयात् सगन्धुकुस्तमैः शतस्॥ मण्डका न् सीरसंयुक्तान् पायसान्नं संशर्करम्। शाल्यन्नं पृषदाज्य

च भन्यासो विनिवेदयेत्॥ अभ्यर्च्य विमिषयुनान् वासो उसङ्गरभूषणैः। भोज्यित्वा यथाश्त्या पश्वाद्भुज्जीत वा ग्यतः॥ मन्यन्तरशतं विष्णुं दुग्धाब्धी हेमपङ्गतेः। संपूज्यं यदवामोति तत्फ्छं भृगुवासर॥ एवं संपूज्यमानस्तु तस्मि-नहींन वैष्णवेः । उद्भया सह हरिः साम्रात् पत्यक्षं तत्स्णा द्वेत्। रुष्णाष्टम्यां चतुर्दश्यां सायंसन्ध्यासमागमे। गो पारुपुरुषं कृष्णमर्चयेच्छ्रद्यान्वितः। मुद्धिकामारुतीकुन्द यूथी कुट्जकैत्कैः ॥ ठोधनीपार्जनैर्नागैः कणिकारैः कदे मकैः। कोविदारेः करवीरे बिल्वेरास्फोटकैरपि॥ दशाक्ष रेण मन्तेण पूज्येत् पुरुषोत्तमम्। ये शिंशतीति सूक्तेन द्यात् पुष्पांजिहिं ततः ॥ श्रीरुष्णां तुरुसीप्तैः प्रत्यूचं पू जयहिसुम्। श्रीकृष्णायं नम्इति स्केनाष्ट्रोत्तरं शतम्।। पूजिय लाय होमन्तु तिलेः रूपो हितान्दितेः। प्रत्यूचं वैषा वैः स्कै जुंह्यात् पुरुषोत्तमम्। समिद्भिः पिप्रहे स्वापि -मन्त्रेणाष्ट्रोत्तरं शतम् । नामिशः केशवाधिश्व चरुं पश्चाद् घ तपुतम् ॥ वैष्णच्या चैव गायव्या पृषदाज्यं शतं तथा। गुडो द्नं स्पिषाक्तं भक्ष्याणि विविधानि च ॥ क्षीरान्नं शर्करो पेतं नैवेद्यन्त समर्पयेत् । वेष्णुगुन् भोजयेत्यश्चात् स्वयं भुन्तीत वाग्यतः ॥ एवमभ्यन्यं गोविन्दं रूष्णाष्ट्रम्यां विधा न्तः । सर्वपाप् विनिर्मुक्तो विष्णुसायुज्यमाप्यान् ॥ इ योरप्यनयोः श्रीशं कूमेर्रिपं समर्चियेत्। ससागरां महीं सप्पी लगते नात्र संशायः॥ अर्चयेनमूलमन्त्रेण गन्धपु-षासतादिभिः। अर्चियत्वा विधानेने हविष्यं य्वनेर्य तम्॥ सदीर्घयन्त्रराजान् सूपघृतमिश्रान् निवेदयेत्। अ इ ययेति स्केन कुर्यात्पुष्पाञ्जितिं ततः ॥ सहस्रं मूलमन्त्रे २४२ वृद्धारीतसंहितायाम्। ण्यूजयेतुलसीदलेः। तिलमिश्रेश्व पृथुके जुहुयाद्य्या हने॥ प्रयद्व इति सूक्ताभ्यां नासदासीत्यनेन च । मन्त्रे-णाज्यं सहस्रन्तु जुहुया देष्णायोत्तमः॥ भोजयेद्वेषायान् भक्त्या विशेषेणा चयेद्युरूम्। कीर्मे तु शत्यर्षन्तु समभ्य च्ये विधानतः॥ अत्राप्येचीनमात्रेण तटफलं समबाभुयात् मधुक्तक प्रतिपदि केश्व पूजरेद्दिजः ॥ स्नात्वा मध्याह्न समये करवीरेः कंगन्धिभिः। अग्निमील इत्याद्येन प्रत्ये चं कुरमं येजेत् ॥ मन्तरहोन गुभ्यच्य चरुपायसहोम्हन्। ईले दावेति स्कैन यदिन्द्राग्नीत्यनेन च ॥ विष्णुस्कैश्र जुहुयाद्वायत्र्यो विष्णुसंज्ञया। अपूपान् करकाकारान् शा त्यनं धतसंयुत्म्॥ फलैन्न भस्यभोज्येश्व नैवेद्यं विनि वेदयेत्। भोजयद्वाह्मणान् शक्त्या दक्षिणाभिः प्रपूज्ये त्॥ सार्यं सम्बत्सरं त्व सम्यक् संपूजयेद्धरिम्। सर्वान् कोमानवाभीति हयमेथायुतं लेभेत्।। तस्मिन्नेवम्यां शुक्रै तु नक्षत्रे द्वितिदेवते। तत्र जातो जगन्नाथो राघवः पुरुषो त्तमः॥ तस्मिन्यपोष्य मध्याद्गे स्नात्वा सन्ध्यां विधानतः। नपीयत्वा पितृन् देवान्चिद्राघवं हरिम् ॥ षडसरेण म-न्तं समाहितः। शान्ति शास्त्रं पुराणञ्च नाम्नां विष्णोः सहस्त्रकम्॥ पावमाने विष्णुसूक्तेः कुर्चात् पुष्णञ्जिति त तः। रामायणशतश्लोक्या दद्यान् पुष्पाणि वैष्णवः॥ सश क्रं पायसानं कपिला धृतसंयुतम्। रम्भाफलं पानकञ्च नेवेद्यं विनिवेद्येत्॥ पीतानि नागपणानि द्भिग्धपूर्गीफ लानि च। कर्परेण च संयुक्तं ताम्बल्ज्यं समर्पयेत् ॥ दीण नीराजयेद्रस्या नमस्कृत्य पुनः पुनः। मीतये रघुनाय-

स्य कुर्याद्दानानि शक्तिन् ॥ षड्सरेण साहस्रं तिसेवी पा यसेन गा। कमले बिल्वपत्रेवी घतेन जुहुयात्ततः ॥ अस्य गमेति सूकेन समिद्रिः पि्णलस्य तु । येकुण्ठपार्षदं इंबा होमधोषं समापयेत्। रात्री जागरणं कुर्यीत् हित्रियामं स मर्चयेत्। प्रभाते विम्छ्रं चापि त्तो भरतजन्मनि ॥ नृतीये ऽहिन मध्याद्गे सीमिन्नेर्जन्मवासरे । सानुजं जगतामीशाम्बि-येत् पूर्वविद्वाः॥ पूजां पुष्पाञ्जििं होमं जपं ब्राह्मणभो-जनम्। अविच्छिन्नं तथा कुर्च्यादिग्निहोत्रं त्रिवासरम्॥ए वं त्रिरात्रं कुर्चीत राघवाणां विधानतः। महोत्सवं जन्मभे षु प्रत्यब्दं चैत्रमासिके॥ चतुर्थे कि तथा न्धां कुर्च्याद्व भृतं दिजः। वेषावेरनुवाकेश्व रामनामिशरेव च ॥ चरितं रघुनाथस्य जपन्नवभृतं चरेत् । देवान् पितृश्व सन्तप्य गृहं गत्वाचियेत्रभुम्॥ कृर्याद्वेभृथेषिञ्च चरुणा पायसे न षा। अस्य ग्मिति स्केन परीमात्रेत्यनेन च॥ पृत्यृचं जुहुयात्पश्चान्मंत्रेण शतसंख्यया । हुत्वा समाप्य होमन्तु श्व सम्प्राशयेचरम् ॥ आचम्य पूजयेदेवं वैष्णवान्-भोजयेत्ततः। स्वयं भेज्जीत् तदात्रीं वृद्धशायी समाहितः॥ एवं दाद्शामः पूज्यश्रीत्रे नाव्मिके तथा। षष्टिवृष सहस्राणि श्वेनदीपनिचासिन्म्॥ संपूज्य यद्वामोति त देवान स्मश्चते। यज्ञायुतशतं हेब्धा विष्णुहोके महीय ने ॥ तस्येव पोर्णमास्याञ्च शीतांशो रुदये तथा। स्नात्वा स्पूजयेदेवं माधवं रमयासह ॥ शुक्रुजाम्बून्दम्ख्यं कन्द पेशनसन्तिभम्। लक्ष्म्या सह समासीनं विमले हेमपडू जे ॥ चन्दनेन सगन्धेन करवीराद्धापडू जेः। कर्परकुड् कुं मोपेतचन्दनेन च पूजयेत्॥ तन्मन्तिमन्तरहापयां माध

रहहारीतसंहितायाम्। २४४ वं विधिना यजेत्। मण्डकान् क्षीर्संयुक्तान् शाल्यनं ए तसंयुतम् ॥ रूषारमा। फ्लेज् एं नेवे यं विनिवेदयेत्। अ स जीवत्व इत्यादि षट्स्तेः कुसमेयजेत् ॥ मन्त्रेणाष्ट्रीतर शतं कोमसे स्तुरुसी्द्रेः । संपूज्य होमं कुर्वीत साज्येनच रुणा ततः॥ विहीभोतो रित्यनेन स्तेन पत्युचं हिजः। कमले बिल्वपनेवी मन्लेणाष्ट्रीतरं शतम् ॥ इत्याध पीरुषं स्कं श्रीस्कं जुहुयाद्दिजः। सहस्रनामिभः स्तुत्वा वृष्ण वान भोजयेत्ततः ॥ इतेशेषं स्वयं भुत्का भूमो स्वयाजि तिन्द्रयः। एवं स्पूज्य देवेशं माध्या मधुस्ट्रुनः ॥ सर्वा-न्कामानवामीति हरिसायुज्यमाम्यात् । वैशाख्यां पी णिमास्यान्तु मध्याद्गे पुरुषोत्तम् म्। अर्चयेद्रक्तकमछै ह त्यत्रेः पाटलरिप । हीचरकरवीरिश्च गायत्र्या विष्णुसंज्ञ या ॥ दध्यन्नं फलसंयुक्तं पायसञ्च निवेदयेत्। पृत्यृचं चू द्विं स्के: पत्युचं जुहुयात्ततः॥ साराष्ट्रे देति स्केन् दीपै न्शिजयेत्ततः । शत्त्या विमान् भोजयित्वा पूजेये देशि कं तथा। नस्मन् सम्पूजितो देवः पत्यक्षस्तत्क्षणाद्वे त्। शयूने भोजयदिष्णुं पूज्येच्छ्न्हयान्वितः ॥ कुश्रम् स्नद्र्यायपुण्डरीककदम्बकैः। मूलमन्त्रेण धीविषां गायत्र्या च समब्येत्॥ सत्येनोत्तमस्तेन ऋग्भिः पु षाञ्जिलं यजेत्। मन्त्रेणाष्ट्रोत्तरभातं तुलसीपहर्वे स्त-था ॥ पश्चान्द्रोम प्रकृत्वीतं विष्णुसूक्तेः स्तपायसम्। म न्तरलेन जुद्धयादाज्यमष्ट्रोत्तरं शत्म्॥ स्वादरं पायस्। नमपूरानिविदयेत्। विश्वजितेतिस्केन कुर्यानी राजनं ततः॥ भोजयेद्देष्णवान् विप्रान् पूजयेत्र विशे षतः। सर्वान् कामानवान्नोति हयमेधायुतं उभेत्॥पा जापत्यर्ससंयुक्ता नभः रूप्णाष्ट्रमी यदा। नभस्येव भवे सानु जयन्ती परिकीतिता ॥ तस्यां जातो जगन्नाधः के शवः कंसमर्दनः । तस्मिन्नुपोष्यं विधिवत्सर्वपापैः प्रमुख ते। अष्टमी रोहिणीयोगो मुहर्त वा दिवानिशम्। मुख्य काल इति ख्यात स्तत्र जातः स्वयं हरिः। मासहये यद्य-लाभे योगे तस्पन् दिवा निशि॥ नवमी रोहिणीयोगः क्त्रेया वेष्णवेदिजैः। रात्रियोगस्तु बलवान् तस्यां जा तो जनाद्नः॥ तिलेन वै भवान्ते च पारणा यत्र चोच्यने। याम्त्रयावयुक्तायां पातरेव हि पारणा॥ पूर्वेद्यनियमं कु य्योदन्तधावनपूर्वकम्। मातः स्नात्वा विधानेन पूज्ये त् रुष्णमञ्चयम् ॥ ष्डुसरेण मन्तेण बाउरुष्णतनुं हरि म्। सुक्रबात्वसीप्रभैरच्येच्युद्यान्वितः॥ दुर्धं सीरं शक़राद्य नवनीतं निवेदयेत्। सहस्त्रमयुतं वृापि जपेनम न्त षडक्षरम्॥ गवाज्यं जुहुयाह्रद्धी कृष्ण्मन्त्रेण पायस म्। सहसं शतवारं वा पत्युंचं विष्णुसूक्तकेः॥ इत्वा सं गन्धिपुष्णाणि तेरेव च समर्चयेत्। सहस्रनामा ग्तानां परनं गुरुप्जनम्॥ वैष्ण्यान् भोजयेच्छत्त्या हुतशेषं स कृत्त्वयम्। हृत्या कुशोत्तरे स्वप्याद्भूमी नियमवान् शरु दिः ॥परेऽद्धुपोष्य विधिवत् स्नात्वा नद्यां विधानतः । तर्पयित्वा जगन्नाथं पितृन्देवांश्च तप्येत् ॥ पूर्ववत् पू जयित्वेशं जपहोमादिकं चरेत् ॥ अवैष्णावं हिजं तस्मिन् वाङ्गावेणापि नार्चयेत् । पुराणादि प्रपाठेन रात्रो जागर णं चरेत् ॥ शीतांशाचुदिते स्नात्वा शुक्राम्बरधरः श्विः । नवो नवो भवतीत्यृचार्ध्य विनिवेद्यंत् ॥ अर्चयन्मा तुरुत्सङ्गे स्थितं कृष्णां सनातनम् । तुरुसीगन्धपुष्पेश्च

वृद्धारीत्संहितायाम्। २४६ कस्तूरीचन्द्रचन्द्रनैः ॥ष्डक्षरेण मन्त्रेण् भक्तया सम्पूज्ये-इरिम्। वस्तदेव नन्दगोपं बलभद्रञ्च रोहिणीम्। यशोदां च सुभद्रां च मायां दिसु प्रपूजयेन्। प्रह्लादादीन् वैषावां श्रात्था लोकेम्बरान्पि॥ धूपें दीपञ्च नेवैद्यं नाम्बूलञ्च स मर्पित्। अनुनमिति सूक्तेन भूक्या नीराजनं तथा॥ श न इत्यादिसूक्तेश्व द्द्यात् पुष्पाणि वैष्णवः। दशाक्षरेणम न्त्रेण पूज्येन् पुरुषोत्तमम् ॥ सहस्रनामभिः स्तुत्वा शया यां विनिवेशयेत्। गीतं नृत्यन्त वाद्यन्त यथा शक्ता च कारयेत्॥ नतः प्रभातसमय सन्ध्यामन्वास्य वैष्णुवः। इ शास्तरेण मृन्त्रेण तुलसीचन्दनादिभिः॥ सम्पूज्य वैष्णवैः स्तेः कुर्यात् पृष्णञ्जातिं ततः । मन्तेण जुहुयोदाज्यं स हस्रं हव्यवाहन् ॥ ममाग्न इति सूक्ताभ्यां जुहुयात्पाय्सं ततः। परोमानेति स्केन चरं तिछ विमित्रित्म्॥ स्वैश भगवन्मन्त्रेरेकेकामाहुति यजेत्। नामिशः केषावाद्येश्व तथा सङ्घणादिभिः॥ वेकुण्ठपार्षदं हत्वा होम्प्रोषं स मापयेत्। ततो मङ्गलवादित्रयानियाक्त्रेश्व चामरेः॥लाजे हिर्द्राचूणेन्त्र गन्धेः पुष्पेः संगन्धिः । मुद्रा विद्रीरयन् सर्वे बालेवृद्धाश्च मध्यमाः ॥ नाय्येश्च रमणीः साद्धे सुवा सिन्यश्व योषितः। आरोप्य भिविकायान्तु देवकीनन्दनं हरिम्॥ अकर्दमां नदीं रम्यां नुडागं वा मनोहरम्। गच्छे युप्रहिशेषाळज्ञीकादि विवजित्म्॥ कृष्यदिवभृतं त्र पावमान्येः पवित्रकेः । विष्णुस्तेश्व संस्थाता देवान्-पितृश्व तर्पयेत् ॥ विचित्राणि च भस्याणि द्धात्तत्र शुभा न्वितः । गृहं गत्वा तथेवेशं पूर्ववृत्पूज्ये हिजः ॥ भोजिय ला ततो विमान् दक्षिणाभिश्चे तोषयेत्। हिरण्यवस्था-

भरणेराचार्य पूजयेतु सः ॥स्वयञ्च पारणां कुर्यात् पुत्र-पोत्रसमन्वितः। सायाद्वे समनुपात् दोठायामर्चयेद्धिः म्॥ चतुः स्तम्भां चतुर्धामवितानाचेरलङ्कताम्। धूपे दीपेश्चीवरम्यां दोठां सम्पूजयेद्दिजः॥ स्तम्भेषु वेदान् मन्त्रांश्च धामस्वभ्यर्च्यक्च्छपम्। पादेष्वाशागजान् पीठे सप्तन्छन्दांसि चास्तरे॥ प्रणवञ्चातपनेतु शेषद्भेती खग श्रम्। इतिहासपुराणानि सर्वतः परिपूजयेत् ॥ तस्यां निवेश्य दोलायां वासुदेवं सियः पतिम्। उपचारेर्चित्वा शनेदेशिक्च द्रेरियेत् ॥ वेदाद्येर्बह्मणः सत्यैः स्तेरङ्गेदिनी त्तमः। सामगानैः प्रबन्धैश्व गायन् कृष्णं जगद्रगुरुम् ॥ सुवा सिन्यो दोरुधिता वैष्णाचान पूजयेत्ततः । एवं संपूज्य देवैशां पापैमुकी हरिवजेत् ॥ दोलाया दर्शनं विष्णामिहापात्केना शनम्। कोरियागानुजं पुण्यं छमते नात्र संशयः ॥ शिवब सादयो देवा नारदाचा महर्षयः । दोछायां दर्शनार्थं वै प यान्यनुचरैः सह। गन्धर्वाप्सरसः सर्वा विमानस्याः स किनराः। गायन्ति सामगानैश्व दोडायामिनितं हरिम्॥ ग्वाज्यसंयुति दिपि भक्तिया नीराजनं चरेत्। मुरुत्व इन्द्रे सू हेन मङ्गलाशीभिरेव च ॥ ताम्ब्लफलपुष्पाद्येवैष्णावान् भोजयेत्ततः । आशिषोवाचनं कत्वा नमस्कत्वा विसर्ज्ये त्॥ एवं संपूज्य देवेशां जयन्त्यां मधुसदनम्। सवीन् हो कान् जपेत्वाशु याति विष्णोः प्रंपदम्॥ मासि भाद्रप्दे शुक्ते द्वादश्यां विष्णुदैवते । अदित्यापुदेभृदिष्णुरुपेन्द्रो वामनोऽज्ययः ॥ तस्यां स्नानोपवासाद्यमृद्धार्यं परिकीति तम्। श्रीकृष्णजनम्बत् सर्वे कुर्याद्त्रापि वैष्णवः॥ स् रान् कामानवाप्तीति विष्णुसायुज्यमाभुयात्। माधमास

386

नु सप्तम्या मुदिते चैव भास्करे। स्नाला नद्यां विधानेन पू जयेन पुरुषोत्तमम् ॥ रक्तेश्च करवीरेश्च कुमुदेन्दीवरादिभिः मन्लरेलेनार्चित्वा पायसान्नं निवेदयेत्। यतस्य गोपा इत्यादि दश्सूकान्यनुक्रमात्। पुष्पाणि द्याद्रक्या वै प त्यूचं वेष्णवोत्तमः ॥ सहस्यं श्तवारं वा मन्त्रणापि यजेन तः । पश्चान्द्रोमं पकुचीत तिलेः कृष्णेः सभाईरैः ॥वैष्णवै रनुवाकेश्व मन्लरलेन मन्लवित्। वेकुण्डपार्षदं हत्वा शेषं कम्मी समाचरेन् ॥ नीराजनं ततो द्यादयं गीरित्यनेन तु। इति वा इति स्तेन उपस्थाय जनादेनम्॥ सहस्रनामिशः स्तुला वैष्णवान् भोजयेत्ततः। गुरुं सम्यूज्येद्र्त्या अञ् नित तद्यिः सकत् ॥ अधःशायी ब्रह्मचौरी नपेदात्री स-माहितः । एवं सम्पूज्य देवेशं तस्मिन्नहनि वैष्णवः॥ ति कोट्जिलमुन्हत्य वैष्णवं पदम्। ध्रयान्। हादश्यामपि त स्यां वे यज्ञवाराहमच्युतम् ॥ वैष्णाच्या चेव् गायन्या पूज येत् पयतात्मवान्। महिसाक्षं घताकं वे धूपं द्वात्प यूल्लेनः ॥ दद्याद्षां इतिपं च गवाज्येन च वैष्णवः। संश कराज्यं सूपान्नं मोदकान् कसरं तथा ॥ इसुद्ण्डानि र म्याणि फरोणि च निवेदयेत्। प्रतेमहीति सुर्केन द्धा न पुष्पाणि भक्तिमान् ॥ स्वैत्र्य वैष्णवैः स्क्रै श्रहणा-पायसेन ग्। म्धुसूक्तेन होत्यं गायत्या विष्णुसंज्ञया ॥ आज्येन वैष्णवैर्मन्त्रेः त्रिशतं त्रिभिरेव तु । वैदुण्हणा षदं इत्वा होमशेषं समापयेत् ॥ भोजयेद् ब्राह्मणान् भक्तया गुरुं चापि प्रयूजयेत् । सर्यक्षेषु यत्युण्यं सर्वरा नेषु यत्फ्लम् ॥ नत्फले रुभते मत्यो विष्णुसायुज्यमाधु-यात्। कोदण्डेस्ये दिनकरे तस्मिन्मासि निरन्तरम्॥अर

णोदयवेलायां पातः स्नानं समाचरेन्। तर्पयित्वा विधाने न रुत्रुत्यः समाहितः॥ नारायणं जगन्नाथ मर्च्योहिधि बद् हिजः। पोरुषेण विधानेन मूरुम्न्वेण ब्रू यूज्त ॥श त्पत्रेश्व जात्। भिरत्त्रसी बिल्वपुष्करेः । गन्धे धूपेश्व दी पैश्व नेवेदीविधिरपि॥ पायसान्नं शर्करान्नं सुद्रान्नं स घतं हविः। सुवासितञ्च दध्यन्नमूपपान् मधुमिश्रिनान् ॥मोरकान पृथुकान् हाजान् शष्कुहीनणकानपि। विवि-धानिच भृक्याणि फलानिच निवेदयेत् ॥ वेदपारायणेनैव मासमेकं निरन्तरम्। ऋचां दशसहस्राणि ऋचां पञ्चशना निचु ॥ऋचामशीतिपादऋ पारायणं प्रकृतिनम्। वेद्पारा यूणेनेव पत्युचं कुसूमान्यजेत् ॥ रात्रो होमं प्कृञीत तिलै-वीहिभिरेव गा। सर्ववेदेष्वपाक्तस्तु होमकर्माण वैष्णवः ॥ वैष्णवेरनुवाकेवी प्रत्यहं जुडुयाद बुधः । यजुषापि तथा सा मा शक्तया पुष्णाव्विति चरत्॥ अंशक्तो यस्तु वेदेन प्रतिवा सरमच्युतम्। मूलमन्त्रेण साहस्रं दद्यात् पुष्पाञ्जिि हि जः॥ तेनैव जुहुयाद्रत्तया सहस्रं विद्धमण्डले। अथवा र घुनाथस्य चारित्रेण महात्मनः ॥ प्रतिरहोकेन पुष्पाणि द्वा न्मासं निरन्तरम्। अधःशायी ब्रह्मचारी सरुद्भोजी भवे हिजः ॥ मासान्ते तु विशेषेण पूजयेद् वेष्णवाने हिजान्। एवमभ्यन्य गोविन्दं धनुमसि निरन्तरम् ॥ दिने दिने वेष्ण वैध्या फडं प्राप्तोत्यसंशयः। यं यं काम्यते विन्ते तन्तमा-मोति पूरुषः ॥ महद्रिः पापके मुक्तो विष्णु होके महीयते । तपोमास्युदिते भानी मासमेकं निरन्तरम् ॥ स्नात्वा नद्यां तडागे वा तर्पयेत्पतिमच्युतम् । अर्चयन्माधवं नित्यं त्नम न्त्रेणीव तत्र वै ॥ मन्तरद्वेन वा नित्यं माधवीचूतचम्पकः।

वृद्हारी तुसंहितायाम्। 240 मण्डपानि विचित्राणि शकराज्ययुतानि च ॥ शाल्यन्तं द-धिसंयुक्तं मोदकांश्व निवेद्येत्। वैष्णवैः पावमानेश्व कु य्यति पुषाञ्जिति ततः ॥तिषेश्व जुहुयाह् हो मधुदार्करमि श्रितेः। पत्यूचं पुरुषसूक्तेन् श्रीस्केनापि वैष्णवः ॥सूहस्र मूलमन्त्रेण तन्मन्त्रेणापि वे हिजः। सहसं वाशतं वापिश त्रेयाच जुहुयाद्बुधः ॥ यज्ञे यज्ञमिति क्रेचा दीषान्नीराज यत्ततः । रात्रो दोलार्चनं कुर्याद्बेष्णावे दिजसत्तमेः ॥मा सान्ते भोजये दियान् वासी इल इगर भूषणीः । एवं सम्पूर्ति ते तस्मिन् प्रसन्नो अभूज्जनार्दनः ॥ ददाति स्वपदं दिव्यं यो गिगम्यं सनातनम् । फाल्युन्यां पोणमास्यां वे उदिते चूनि शाकरे॥ उपोष्य विधिवृद्धिकं पूजयेद्वीष्णावीत्तमः। तिही श्च करवीरेश्च कणिकारेश्च पोटलें: ॥ कुन्दसहस्रकुक्तमें यीजेत् तं कमलापतिम्। विष्णुस्तीः पत्यृचं च् चरणाज्ये न मन्त्रतः ॥ ब्रह्मा देवानामनेन दीपान्तीराजयेत्ततः। म सन्नो नित्यम्नेन उपस्थाय सनातनम्। वैष्णवान् भीजये च्छत्तया भुञ्जीयाद्दाग्यतः स्व्यम् ॥ एवं सम्पूज्य देवेशं त स्यां रात्री सनातनम् । षष्टिवर्षसहस्यस्य पूजीमा मीत्यसं शयः ॥ एवं सम्पूजयद्विष्णुं निमित्तेषु विद्योषतः। यथा कालं यथावण् यथाशत्त्या यथावलम् ॥ यथोक्तपुष्णल भेतु तुलस्या व समझयेन् । नेवेद्यस्याप्यलाभे तु हविष्यं वा निवेद्येत्॥ सूकानि वैष्णवान्येव स्कालाभ यथाय जेत्। एकेन वा पीरुषेण सूक्तेन जुहुयात्रिया ॥ सर्वत्राज्य प्रशस्तं स्याद्दोमद्रच्याद्यराप्ततः। मन्त्राराभे मूलमन्तं सर्वतन्त्रेषु यो यजेत्॥ उपस्थानन्तु सर्वत्र तद्दिष्णोरिति वा ऋता। नीराजनन्तु सर्वत्र श्रिधे जातेत्यनेन वा ॥तत्त्त्वा खोचितं सर्वे मनसा वापि पूज्येन्। तुरुसीमित्रितं तोयं भन्त्या वापि समर्पयेत् ॥ सर्वेष्वेषु निमित्तेषु महाभागवतो तमान्। संपूज्य परिपूर्णत्वमा भोत्यत्र न संशयः॥ ॥ इति हारीतस्मृतो विशिष्ट्परमधर्माशास्त्र भगवन्तित्यने मित्तिकविधिनीम पञ्चमो ध्यायः।

हारीत उचाच्। महोत्सविधिं कुर्यादेवस्य परमा सनः । यामार्चीयाः मकुवीत यथोक्तविधिना नृप!। यात्री सर्वे कृते विष्णोः श्रुतिस्मृत्युक्तमार्गतः॥ अनावृध्यग्निदुर्भि क्षभयं नास्यत्र किञ्चन । वारिज़ं वानजं वाग्निसप्विद्य द्दिषत्रुतम् ॥ महारोगयहे भ्येवं यद्भं यामवासिनाम रेते महोत्सवे तब भयं नास्ति न संवायः ॥ तस्य दासा म विष्यन्ति नानाजनपदेश्वराः । सार्वभौमो भवेदाजा भक्त्या क्बा मुहोत्सवुम् ॥ नवाह्मिकं च सप्ताहं पञ्चाहं पत्यहं तथा सम्बत्सरे ऋती मासि पक्षे कुर्यात् क्रमेण तु ॥ तस्मिन्नादी श्वभूदिने स्वस्तिवाचनपूर्वकम्। अङ्कुरार्पणमादी तु गरु एकतुमुच्छ्येत् ॥ यात्रे पहित्योषध्यः केतुकी वेद इत्य पि। अश्वत्थारव्येशमीगर्भश्वनामरिणमाहरेन् ॥ निर्मयी नेति स्केन तथैवासीदमीति चू। आश्यां च प्रत्युचं तस्मि निस्माधानादि पूर्ववत् ॥ चर्वाज्येरयमन्नीति उपस्थाया चैयेत्तथा। तदिग्नं संयहेतावदुत्सवः परिपूर्यते ॥ दीक्षि तः स भवेतावदानायी विजितन्द्रयः। वेद्वदाङ्गविच्छ्रो तस्मातंकुम्मे विधान्वत् ॥ महाभागवतो विशस्तान्तिकः सर्वकर्मिक । छोकिके वा प्रकृति म्यितामिन चे चिदि॥ आभ्यामेव न सक्ताभ्याम्मी देवं यजेद्बधः। प्रातः स्मा-निविधानेन धीनवस्त्रोध्वपुण्ड्धत्॥ ऋतिग्भित्रह्मणे

रहहारीत संहितायाम्। 343 दन्तियगिभूमिं विशेद्गुरुः। देवाल्यस्य मध्ये तु वेदिं र म्या प्रकल्पयेत् ॥अइन्कुरार्पणपात्रेश्व भद्रकुमीरलङ्कता म्। वितानकुरूमायुक्तां कुला त्य सुरवासने ॥ महोत्सेवाई बिम्बं च निवेश्यासिमन् पपूजयेत्। श्रीभूनिलादिसंयुक्तं नित्येः पर्जनेर्धनम्॥ मन्त्रेरल्धिभानेन् पूजियला जगद् गुरुम्। इमे विपस्येत्यादिभि स्त्रिभिः स्तेभ्यं पूजयेन्॥सु रमीणिच पुष्पाणि प्रत्युचं विनिवेदयेन् ॥ चनुदिक्षु च चला रो ब्राह्मणा मन्त्रवित्तमाः। वाराहं नारसिंहं च वामनं राघ वं मनुम् ॥ ईशान्यादिषु चलारो विष्णुमन्त्रान् विदिसुन्। वैद्या दक्षिणतः कुण्डं उवणाद्यं च तन् तु॥ इताशनं मिन ष्टाप्य इध्माधानादिकं चरेत्। सर्वेद्भ वैष्णवेः स्ती श्वरं ति लविमिश्रित्म्। प्रत्यृचं जुहुयाद्यक्तो मध्याज्यगुडेमिश्रित्म् ॥ अज्यं श्रीभूमिसूकाभ्यां त्वंसीम इति पायसम्। प्रवेकि वैष्णविर्मन्त्रे सिलेबीहिभिरेव वा ॥ घत्येकं जुहुयासम्बा द्रशेत्तरभातं क्रमात् । वैकुण्ठपार्षदं हत्वा होमशेषं समाप-येत् ॥ सद्ध्यन्नं फूलयुतं पानकञ्च निवदयेत् । ताम्बूल-श्च समाप्याय अरखिन स्नापि पूजयेत् ॥ तनः स्यन्दनमा-नीय पताकाच्छत्रसंयुतम्। श्वेतैः सरुक्षणे रुह्ययानमभ्यैः पुकल्पितेः ॥ वस्त्रपुष्पमणिरवणभूषितं तत्र विभितम्। त सिन् मृदुतर रहणपर्यं स्थाप्य देशिकः।। तसिनिवं धूपदीपादिभिक्तथा॥ रथ्नकेषु वेदांश्व धैमिदीनिप पू जयेत्। आधारशक्तिमाधारे ईषादण्डे पुराणकम्॥ च न्दांसि क्यरे सप्त पर्यक्ने भुजगाधिपम्। हयेषु चतुरो म-न्तान् योक्रेष्यद्गानि षट्च वे॥ ध्यजे पताकराजानं छनेः

ननं स्वराणि तु । तालवृन्ते चामरेच् अक्षराणिच पूजयेत्॥ अभ्यन्धेविं रथं दिव्यं पश्चात् संपूजयेद्द्रिम् । दिक्पोलावर णांभीयम्चिरिक्षु सर्वतः॥ जीमूतस्येति स्त्रेनं तत्र पुष्पा जािं चरेत्। मरुत्वानिन्द्रेति स्कैन रुत्वा नीराजनं ततः ॥ वनस्पतीति सूक्तेन वाद्येत्पटहादिक्म् । गीतेनृत्येश्व वादिनेः पुण्यस्तानेर्मनोहरेः ॥ इयेगजेः स्यन्दनेश्च परि तस्तप्येत्यभुम् । ऋत्यिज्ः पुरतो वेदानुङ्गानि च जपेत्तदा ॥गायेन सामानि भक्तया वै पुरतः पार्वती हरेः। कुड्कु मैः कूरूमेल्जि विकिरन्व समन्ततः ॥ ख्टङ्क्तेषु विधि षु पर्यटन सेव्येत्प्रभूम्। गृहदारेषु मार्गेषु भृक्षेरिक्षाभिरे व न ॥ कुक्तमै भूपदीपेश्व ताम्बूलेश्वापि सेवयेत्। एवं नि षेव्य देवेश पुनगृहिं निवेशयेत्। तमि प्रगायतेति जप न् स्कं निवेशयेत्। यसन्नाजं मित्यनेन दीपान्नीराजये त्ततः ॥ पीठे निवेश्यं देवेशमुप्चारान् स्मर्पयेत् । वयसुपे सध्यायेम आशीषो बोचनं चरेत् ॥ अनेन विधिना कुर्या दुलारं प्रतिवास्रम्। जपेहीमे स्तथा दानेविशाणां भोजने रिषे ॥ समाप्ते चोत्सवे विष्णोः कुर्यादवेभृथं शुभम् । नदीं खातं तडागं वा देवेन सहितो व्रजेत् ॥ स्यन्दनादिषु याने षु स्थिता नार्यः स्वलङ्कताः । पुरुषाश्च हरिद्राश्च चूणा दीन् विकिरनियः॥ कुर्यादवभृतं तत्र विशिष्टे ब्रह्मिणीः सह। वासुदेवोत्सवे स्नानमञ्चमधफलं लभेत्॥ स्नाता सन्तर्पा देवादीन् प्रविश्य हरिमन्दिरम्। यजेत्। वृश्ये षित्र अस्य वामैति स्कतः॥ चरुमाज्यं तिसेवीपि अ नुवाकेश्व वेष्णवेः। एवं हत्वावभृषेषिः व वेष्णवान् भा जयेत्ततः॥ गुरुक्र अरुत्विजश्वेव पूजयेद्रक्तित स्ततः। पि

च्ड हारीतसंहितायाम्। २५४ बासमित्यध्यायेन कुर्यात् स्वस्त्ययनं हरेः॥ इच्छनि-त्वेत्य ध्यायेन् प्रत्युचञ्च ह्येन च । अष्टोत्तर्शतं जुह्या कुक्तभेरेव वैष्णवः ॥ हिरण्यगर्भसूकेन तथैवाज्यं हि-जीतमः। पुनरेव तु होत्यं हत्वा वैकुण्ठपार्वदम्॥ होम शेषं समाप्याथ वैष्णवान् भौजयेदपि। सर्वयज्ञसमाप्ती तु पुष्पयागं समाचरेत् ॥ सर्वं संपूर्णतामेति परितृषोज नार्दनः। एवं महोत्सवं कुर्य्यात्प्रत्यव्दं प्रमातमनः॥ अथ निस्योत्सवे पूजा हो मध्यात्र विधीयते। शिबिकायां निवे-श्येशं पूज्यित्वा विधानतः ॥ तत्र चामरवादित्रभृङ्गारे स्ताल्बन्तकेः। दीपिकाभि रनेकाभिदूर्वायकुसुमासतेः॥ फुलमोद्कहस्ताभिनिशिभिः समलङ्कृतम् । देवस्यायत नं रम्यं बिः पदिक्षणमाचरेत्। तत्तन्मन्तान् जपेदिसु स र्वासु हिजपुङ्गर्गः। बृङ्ज्यि निक्षिपेतासु देवानु हिभय पू र्वतः॥ पानीं विश्वजिते सूक्तं अग्नेत्र अन्तरम्। या म्ये परे इमां सन्तु मोषुणस्तु तदन्त्रम् ॥ यश्हिते मती च्यान्तु विहिहोत्येत्यनन्तरम्। सं सोम् इति सीम्यान्तु कृ दुद्रायेत्यन्तरम्॥ प्रजापति तथा चोर्ह्रम्धश्च पृथिवी सि पैत्। एवं दिक्षु बिंदला परिणीय जनादेनम्॥ स्तुतिभिः पुष्कुलाभिन्य भवनं सम्यवेशयेत्। पृष्ठि निवेशय देवेशं पू जियत्वा विधानतः॥ विहिसोतादिस्केन् दद्यान् पुष्पाणि शार्दिणे। नीराजनं ततो देधात् भेवस्केन वेष्णेवः॥शा यथित्वा च शय्यायां दद्यात् पुष्पाणि मेन्त्तः। इमं महे ति सूक्ताभ्यां पूजयेत् विष्णुमय्ययम्॥ सीदर्शनेन मन्त्रे ण रक्षां कुयत्सिमन्ततः॥ एवं नित्योत्सवं कुर्याद्रात्री चा इनि सर्वदा। गुरुणामन्यदिवसे भगवज्जनमवासरे॥ का-

र्तिक्यां आवणे वापि कुर्यादिष्टिच्च वैष्णवीम्। उपोष्य प्-र्विदिवसे दीक्षितः सुसमाहितः॥ स्वस्तिवाचनपूर्वेण का-रयेद्ड्कर्पणम्। नद्यां स्वात्वा च अरतिग्भिन्वतिभिवेद् पारगैः॥ पौरुषेण विधानन पूज्येत पुरुषोत्तमम्। गन्धे नीनाविधेःपुष्पे ध्पेटिपिनिवेदनेः॥ फलेश्च भक्ष्यभोज्ये श्व नाम्बूलाद्येः पपूज्येत्। अध्यद्यिरुप्चारेस्त सूक्तान्ते पूजयेद्दरम्॥ अध्यायान्ते मुण्डलान्ते नैवेद्येविधेर-पि। पूजियत्वा हरिं भूचया वैष्णवान् भोजयेन्या॥ आ ज्येन चेरुणा वापि तिलैः पदौरथापि वा। समिद्रिबिल्यप त्रैवीं होमं कुवीत् वैष्णवः ॥ यज्ञरूपं हरि ध्यायन् पत्यृचं वेदसंहिताम्। होमः स्माप्यते यावनावहै दीक्षितो भवेत् ॥ जुहुयाहै गाईपत्यो सोडिनमभ्यर्च्य भूपते। । अनिरक्ष णमप्युक्तं याचदिष्टिः समाप्यते ॥ विशिष्टान् वैष्णवान् वि पान् भोजयेत्प्रतिवासरम्। ऋत्विजश्च प्रेताव्चतुर्भन्ना न् समाहितः॥ यजेदवसूथेषि च पाव्मान्येश्व वैष्णवेः।अ ने संपूज्येदिपान् वासीलङ्गरभूषणैः ॥ करित्ज्ञ गुरं वैष प्रजयेच विशेषतः। एवं मिष्टिन्तु यः कुर्याद्देष्णवीं वैष्णवीत्तमः॥ कृत्ननां दशकोटीनां फलं प्राप्नोत्यसंश्र-यः। यसिन्देशे वैष्णवेष्या पूजितो मधुसूदनः ॥ दुर्भि क्षरोगाग्निभयं तस्मिन् नास्ति न् संश्यः। अशक्तः सर्व देवेन कर्नुमिष्टिं च वेष्णाचीम्॥ संवैश्व वेष्णावैः स्ते जीह-यात्रत्युचं हविः। तैरेव पुष्पाञ्जलिं च कुर्यादिस्योः पपूर्त ये॥ अथवा मूलमन्त्रं तु लक्षं जस्ता हुताशने । अयुतं जे हुयात इत्युष्पाणि च सनातने ॥ इष्टिः संपूर्णातां याति सर्व वदाः सदक्षिणाः । एवभिष्टिं भकुवीत पत्यब्दं वैष्णवोत्तमः॥

वृद्धारीन्संहिनायाम्। २५६ नुष्यर्थं वासुदेवस्य वंशस्योज्जीवनाय च। वध्यर्थमपि हो क्स्य देवतानां हिनाय च ॥ पिता वा यदि वा माता भाता वा न्ये सहज्जनाः । यदि पञ्चत्वमापनाः कथं कुर्याद्दिजोत मः ॥ कनिष्ठक्रियात्र वपनं मुनिभिः समृतम् । स्नालाचम् विधानेन कारयेत् पूजनं हरेः। रङ्गवल्यादिभि स्नत्र कुर्या त् सर्वत्र मङ्गलम्॥ रादनं वर्जिथित्वव ग्रोमयेन श्वि स्थल में। विकिप्यं मण्डले तत्र धान्यस्योपर्यंद्रयम्॥ कल्यांलु चतुर्दिशु तण्डुलोपरि निक्षिपेत् । हिरण्यपेञ्चग्र्यानि प ऋतिक्पूह्यान् न्यसेत्॥ वाससा तन्तुना वापि वेष्टयेत् त्रिः पदिक्षणम् । उद्धरवृते वासुदेवं कलँशोषु कमेण च॥प द्युम्न मनिरुद्धे सङ्गेष्ण मधीक्षेत्रम्। सम्पूज्य गन्धपु षाद्येभित्तया भक्ष्यं निवेदयेत् ॥ अभ्यर्च्य मुस्तूं पुषीर्गाः यत्रा भणवेन च । हरिद्राम्बह्न्यानु परोमानेति वै जपन् ॥ भगवन्मन्दिरं विष्णुं हरिद्राद्धेः प्रपूजयेत्। पितः शरीरं विधिवत् स्नापयेत्कलशोद्कैः ॥ तिलेश्व पञ्चग्येश्व गा यत्र्या वैष्णवेन च। उइत्यं सर्वकर्मणीत स्नापयेतिपुत्रं स तः।। नारायणानुपाकेन् चैवं स्नाप्य नतः पितुः । धीतपस्र ञ्च सम्बेष्ट्य भूषणे भूषयेत्ततः ॥ गन्धमात्ये रहङ्हत्य शु नी देशो कुशोत्तरे । तिलोपरि विधायेनं वस्त्रं हित्वात्यतः सुनम्॥ धारयेदुत्तरीये हे यावत्कर्म समाप्यते। हत्वेषी-पासनं तस्य आर्द्रयज्ञीयकाष्ठकेः॥ शिबिकां कारयित्वा थ वस्त्रमूल्यादिभिः शुभाम्। नस्मिन्नेवेश्य तं मेतं वाह कान्वरयेन्तः॥ स्ववणवैष्णवानेव पूजयेत् स्वर्णदक्षिणेः बहेयुस्तेऽपि भत्तयातं प्रन् विष्णुस्तेवान् मुदा ॥ इरिद्रा राजपुष्णाणि विकिरन् वेष्णवा मुदा। वादित्रनृत्यगीताधै र्वजेयुः कीर्तयन् हरिम्। हुताग्निमयतः रुत्वा गच्छेयुस्तस्य बान्धवाः ॥ बाहकानामलाभे तु शकटे गोरुषान्विते । नि वेश्य शिबिकां रम्यां व्रजेयुन्निग्राहिहः ॥ दक्षिणेन मृतं शूदं पुरद्वारेण निर्हरेत्। पश्चिमोत्तरपूर्वेषु यथासङ्ख्यं दिजातयः॥ प्रागुद्दारं सर्वचणीनां न निषिदं कदाचन।ग त्या शुभनरं देशं रम्यं शुभजलान्वितम् ॥यज्ञवृक्षसमा-स्तवयं तदा। द्वाभ्यान्तिभिर्वा विस्तारं चतुरायत्मेव च॥ ततः संगुर्जनं कृत्वा गोमयान्वित्वारिणा। सम्बोध्य य तियें। काषे। स्थितिं कुर्याद्यथाविधि ॥ श्रास्तीर्य दक्षिणाम मेबमैनाजिन मनुत्तमम्। तस्मिन्नास्तीय्यं दर्भास्तु विकीर्य न तिलांस्तथा ॥ तस्मिन्निवेश्य तं देवं घ्तांकं नववस्त्रक-म्। ईषहीतं नवं श्वेतं सदाशयमवारितम् ॥ अहतं तदिजानीया हेवं पित्रयेच कमणि । प्रिष्च्य विते पश्चाद-पोऽप्यस्मानितीत्युचा ॥ परिस्तीर्घ्य श्रुभेदीभैरपसच्येन स व्यतः। उरस्यगिनं निधायास्य पात्रासादानमाचरेत्॥पो क्षणं चमसाज्येच चरुमिध्मखुवी तथा। असाद्योक्तिव-धानेन इध्माधानात् तमाचरेत्॥ स्वगृद्धोक्तविधानेन हत्वा सर्वमधोषतः। पश्चादाज्ययुतं हव्यं जुहुयादुपवीत्वान्॥ सोमानमित्योदनेन् प्रत्यृचं तत आज्यतः। तं म्हेन्द्रेति स् केन हत्वा मत्यूचमेव न ॥ एष इत्यनुवाकाभ्या पृषेदा ज्यं यूजेत्ततः । संवैश्व वैष्ण्वे मृन्तेः पृथगष्ट्रोत्तरं शतम् ॥ तिरुश्च जुहुयात्पादमष्टाविंशतिमेव वा। एकेकामाहु-तिं पश्चादवेकुण्ठपार्षदं यजेत्॥ ब्रह्ममेध इति श्रोक्तं सुनि भिब्रह्मतत्परेः। महाभागवतानां वे कर्तव्यामदसुन्तमम्॥

चृद्दहारीन् संहितायाम्। 345 केशवार्पितसवृद्धिं श्राप्तिभां मङ्गलाह्यम्। न गृथा दाप्ये हिद्दान् ब्रह्ममेधं विधि विना ॥ परमावगतेनापि कर्त्तव्यं हि हिजन्मनः। द्रव्यालाभेऽपि होतव्यं यज्ञियेश्व प्रसून कैः॥श्रद्रस्यापि विशिष्टस्य परमेकान्तिनस्तथा। साहा कारञ्च वदञ्च हिला पृष्पेर्यजेच्छुभेः॥तृष्णीमद्भः परी-षिच्य परिस्तीर्य्य कुशीस्तिलेः। नामभिः केशवाद्येश्व तथा सङ्क्षणादिभिः॥मत्स्यकूम्मीदिभिश्चेव वेदार्थोक्तप्रबन्ध के: । नमोड न्तमेव जुहुयाने स्वाहाकारं विवर्जयेत् ॥ अम्ब कं प्रकृषीत श्रद्धः सर्वमशेषतः । दग्ध्या श्रीरं विधिवद्वे-ष्णवस्य महात्मनः॥ यन्मरणं तद्वभृतमिति मत्वा विचेक्ष णः।स्नानार्थे पुण्यसित्तं व्रजेद्रागवतेः सह॥ अनुहि प्य छतं सर्व गामयं वा तिलेः सह। दूर्वायैरक्षतेलिः स्नानं कुर्वित् मङ्गलम्॥ स्वगृह्योक्त्विधानेन् तस्य पुनः स्वगोत्रजाः। पिण्डोद्क प्रदानायं स्वीमप्योधिदेहिकम्॥ निर्वर्त्य विधिना धर्म सामान्येनावश्रेषतः । विशिष्ट्र परम धमें नारायणबिक ततः ॥ यकुर्याद्वैष्णवैः साई यथा शास्त्र मतन्द्रितः। निमन्त्रयेतं पूर्वेद्युब्रिह्मणान् वैष्णाग न् शुभान्॥ चतुर्विश्रातिसंख्याकान् महाभागवतोत्तमः। केशवादीन् सुमुद्दिष्य चतुर्विश्राति वैष्णावान्॥ रात्रो निम न्त्य सम्पूज्य तैः साई विजितेन्द्रियः। प्रातरुत्थाय तैर्ग त्वा नदीं पुण्यजलान्विताम्॥धात्रीफलानुलिपाङ्गो निम ज्य विमलेजले। जपन् वे वेष्णावान् स्कान् स्नानं कुवीत वे हिजः॥वेकुण्डतपणं कुर्यात् कुस्तमेः सतिलास्ततेः। गृहं गत्वाचिये हेवं सर्वावरणसंयुतम् ॥स्तर्गन्धपुष्पेविधि गन्धिधूपेश्व दीपकैः। नेवेद्ये भक्ष्यभोज्येश्व फलेनीराजने

रिप ॥ अर्चियत्वा विधानेन मूलमन्त्रेण वैष्णवः । पुरतीऽभिं प्रतिषाप्य इध्माधानं समाच्रेत्॥ चरुं स्थार्कराज्यन्तु जुहुयाह्यद्भिमण्डले । प्रत्युचं वैष्णवेः स्तेः केशवादीश्वना मानः ॥ हत्वाय वैष्णवे मन्तेः पृथगुष्टात्तरं शृतम् । गवा ज्येनेव जुहुयाचतुर्भिवेषणवोत्तमः ॥ वैकुण्ठपाषदं हत्वा हो मशेषं समापयेत्। अग्नेरुत्तरभागेन ग्रीम्येनानुहिष्य च ॥ आस्तीर्य्दर्भान् पाग्यान् चतुर्विपाति संख्यया । उदक्-भावणिके नेव केशेगादिकमैण तु॥ अभ्यन्धे गन्धपुष्पाद्यै स्तृतनमन्तेः पृथ्क पृथक् । मध्याज्यतिलम्भ्रेण चरणापा यसेन गा। कुत्रोषु तेषु देचातु पिण्डान् तीर्थ विधानतः। साहाकारेण मनसा केशवादीन कमेण वै॥ दत्ता पिण्डा न् सम्भयच्ये गन्धपुष्पाक्षतोद्कैः। नित्यम्भयच्ये मुक्ते-भ्यो वैष्णवेषयस्तथेवच् ॥ दद्यात् पिण्डत्रयं चैव तेषां दक्षि-णतः कमात्। विष्णोर्ज्ञ केन स्केन् उपस्थानज्यं तथा ॥ प्रक्षिणं नमस्कारं रुत्वा भूत्तयोथ वैष्णवः । पिण्डांस्तु स हिले दत्ता सात्वा संपूज्य केशव्या ॥ ब्राह्मणानु भोज्ये सभासादप्रक्षालनादिभिः। अर्घ्याद्यैर्गन्धपुष्पाद्यैवस्ति ७ लुङ्गरभूषणीः ॥ केशवादीन् समुद्दिश्य नित्यान् मुक्तांश्य वैष्णवान्। संपूज्य विधिवद्गत्तया महाभागवतीत्तमान्॥ पायसं सगुडं सोज्यं श्वदान्नं पानुकैः फर्छैः। सम्भोज्य वि पानाचान्तान् प्रणिपत्य विसर्जयेत्॥ हविष्यञ्च सकृद् भुत्का भूमो द्यात् कुशोत्तरे। अयं नारायण्य हिस्निन भिः सम्प्रकीर्तितः ॥ स्वर्गस्थानां च सर्वेषां कर्त्वयो वैष्णागो त्तमैः। अराप्ते चैव विषेषु वैषावेष्यप्यशक्तितः॥ सर्व कृता विधानेन जपहोमार्चेनादिकम्। केशवादीन् समु-

चन्द्रहारीन संहिनायाम्। १६० हिश्य नित्यान् मुक्तांश्व बैष्णवान् ॥ एकं वा भोजयेहिपं महाभागवतोत्तमम्। श्वतिसमृत्युदितं धर्मं विशिष्टाद्यः स माचरेत् ॥ वैष्ण्वं पर्मं धर्म महाभागवतोत्तमम्। तस्मि-न् संपूजिते विषे सर्वे संपूजितं ज्यत् ॥ तस्माद्भागवतश्रे ष्मेकं वापि स्तपूज्येत्। हरिश्च देवताश्चीव पितरश्च मह ष्यः॥ तस्मिन् संपूजित विभे तुष्यन्त्येव न संश्यः। अर्च नं मुन्लपुरनं ध्यानं होमश्व वन्दनम्॥ मन्त्रार्थिन्तनं यो गो वैष्णवानान्त्र पूजनम्। प्रसादतीर्थसेवा चूनवेज्याक मी उच्यते। पञ्चसंस्कारसम्पन्नी नवेज्याकर्माकारकः॥ आकारत्रयसः यन्नो महाभागवतोत्तमः। श्राद्धानामप्य-राभेतु एकं नारायणं बिलम् ॥ कुवीत परया भक्तया वैक ण्ठपदमामुयात् । नित्यञ्च प्रतिमास्त्रञ्च पित्रोः श्राहं वि-धानतः ॥ सोदक्षमां पद्धात्त याबदिष्यान्तिकं दिजः। म त्यब्दं पार्वणश्राद्धं मातापित्रोर्मृते इति ॥ अचीयता इस तं भक्तया पश्चात् कुर्यादिधान्तः। वैष्णवानेव विश्रांस्तु सर्वकम्मिस् योजयेत् ॥ सर्वतावैष्णवान् विपान् पतिता निव सन्त्यजेत्। शङ्ख्यकाविद्यीनास्तु देवतान्तरपूज्यः द्यादशीविमुखा विभाः शेवाश्वावेष्णवाः स्मृताः ॥ अवे-ष्णावानां संसर्गात् पूजनाद्दन्दनादिष । यजनाध्यापनास द्यो विष्ण्यत्वाच्युनो भवत् ॥ श्रुतिस्मृत्युदितं धर्म् नात्र-कम्याचरेत्सदा। स्वशास्त्रोक्तिविधानेन वैकुण्ठाचीनपूर्वक म्॥ कर्तृत्वफरुसङ्गित्वे परित्यन्य समाचर्त् । धर्मस्य कर्ना भोका च परमात्मा सनातनः ॥ अधर्म मनसा वाचा कर्मणापि त्यनेत्सदा। अकृत्य करणाहिपः कृत्यस्याकर-णादपि॥ अनियहाचेन्द्रियाणां सद्यः पतन मृच्छति। अ

निशं मनसा यस्तु पापमेवाभिचिंतयेत् ॥ कल्पकोटिसह-स्नाणि निरयं वे स गच्छति । यस्तु बाचा बदेन्पाप मसत्यकं थनादिकम् ॥ कल्पायुतसहस्नाणि तिर्युग्योनिषु जायते यस्त्रघं कुरुते नित्यं नाप्ल्यात्करणादिभिः॥ युगको्टिस हसाणि विष्रायां जायते क्रिमिः। दान्तः श्वि स्तपस्वी च सत्यवाग्विजितेन्द्रियः ॥ स सालिकः शमयुतः सुरयोनि षु जायते । यून्त्वर्थकामनिर्तः सदा विषय्चापठः ॥ स राजसो मनुष्येषु भूयो भूयोऽभिजायते। कोधी प्रमादवा न् द्यो नास्तिको विपरीतवाक्॥ निद्रालु स्तामसो याति बहुशो मृगपिधताम्। महापापञ्चातिपापं पातकञ्चोप पात्कम्। पासिक्किकं नरः कृत्वा नर्कान् याति दारुणान्।। तामिस्र मन्धतामिस्रं महारीरवरीरवी। सङ्घातः कोल स्त्रञ्च प्यशाणितकर्मम्॥ कुम्भीपाकं लोहशङ्कस्त थां विण्यूत्रसागरः। तप्तायसास्त्रयो घीरा स्तप्तायसम-यं गृहम् ॥ शय्या तप्तायसमयी पानकञ्चाग्निसानिभम्। श्रुत्रसङ्घातं कालकङ्कीलदंशितम् ॥ सिंहच्याघ्रमहा नागभीक्रं सम्धनापनम् । किमिराशिमहाज्वालं त्या -विण्मूत्रभोजनम् ॥ असिप्त्रवनं घोरं त्रपाङ्गारमयी न दी। स्वीवनं महाघोर्मित्याचा नस्काः स्मृताः ॥ महा पातकने घरिरुपपातकजेरपि। बजतीमान् महाघोरान् दुईत्तेरन्वितश्वयः॥ पायश्वित्तेरपेत्यनो यद्कार्यकृतं म हत्। कामनस्त कृतं यत्त मरणात्सिदि मुच्छति ॥ ब्रह्महत्या स्रापानं विश्रस्वणीस्य हारणम्। गुरुदाराभिगमनं तत्सं-योगश्य पञ्चमः। संलापात् स्पर्शनाद्दासादेकशाख्यासनाश नात्॥ सीहाददिक्षणाद्दानात्तेनेच समतां व्रजेत्। गुविक्षेप

स्त्रयीनिन्दा सहदाम्बधएव च ॥ ब्रह्महत्यासम् ज्ञेयम्धी-तस्य च नाशनम्। यागस्यं क्षत्रियं वैश्यं विशिष्टं भूद्रमेव च॥ शरणागतं स्वामिनं च प्तरं भातरं गुरुम्। पुनं तप स्विनं शिष्यं भार्यो तेषां च सर्वतः ॥ अन्तर्वहीं स्वियो गा-श्च तथा त्रयीं रजस्वलाः। देवना प्रतिमां साध्वीं बालंश्वेच त पस्विनीम्॥ घातियेत्वा समाप्तीति ब्रह्महत्यां न संशयः। जै ह्यमात्मस्तवं क्ररं निषिद्भानांच भक्षणम्॥ रजस्वलामु-खारबादः पञ्चयज्ञादिवर्जनम्। अनृतं क्रटसाक्षीच महाय न्लमवर्तनम्॥ आकृषणादि षद्कम्भे ठाक्षाउवणविकयः। पाषण्डकत्ककुहकवेदबाह्य विधिकिया॥ यक्षराक्षसमूत् नामर्चनं वन्दनं तथा। वक्रेणीयाम्युपानव्य स्तरापस्त्रीनिषे वणम्।। गवां निष्पीडनं क्षीरं तामस्यं गुव्यमेवन । पात्रा न्तरगतं युत्त नारिकेलफलाम्ब च ॥ तालहिन्तालमाधुक्फ लानां रसमेव च। खरोषुमानुषी क्षीरं सुरापानस्मानि वै॥ मानकूट तुलाकूट निक्षेपहरणानि च। भूरत्ननारीहरणं र सान्तरतेयमेव च॥ गुडकापिस्लवणातिलकान् सामिषाम्ब च। काप्यवस्थेच हत्वा च छोहानां हरणं तथा ॥ विषा-ग्निदाहनं चैव क्रवणिक्तेयसम्मितम्। सर्वी भायक्रिमा री च सगोत्रा शरणागता ॥ साध्वी पव्रजिता राज्ञी नि-क्षिप्ता च्रजस्वला। वर्णोत्तमा तथा शिष्यभार्या भातृ पितृब्ययोः ॥ मातामही पितामही पितुमतिश्र्य सोदराः अन्या मातृव्यद्दिता मातुरानी पितृष्वसा॥ जननी भ गिनी धात्री दुहिताचार्यभामिनी। स्नुषाचार्यस्तता चैव तत्यली समहातपाः॥ मातुः सपली सार्वभोमी दीक्षिता चैव भामिनी। कपिरा महिषी धेनु देवतात्रतिमा तथा॥ आसामन्यत्माङ्गच्छेद्गुरुतल्पग् उच्यते। महापातिकना मब तत्संयोगिन एव च ॥ प्रायश्वितं नास्ति तेषां भूगिन पतनं स्मृतम्। हीनवणीिभगमनं गर्भाझं भतृहिंसनम्॥ विशेषप्तनीयानि स्त्रीणां पुंसांच यानि तु । स्त्रीश्रुद्रविट् क्षत्रवधो गोबालहननं तथा ॥ फलपुष्यद्वमाणां हि ची-षधीनाञ्च हिंसनम्। वापीक्षपतडागानां ध्वंसनं यामघा तनम्॥ अभिचारादिकं कम्मे शस्यध्यंसन्मेव च। उद्या-नारामहननं प्रपाविध्वंसनं तथा ॥ मातापितृक्ततत्यागी दारत्यागर्त्तथेव च । स्वाध्यायानिगुरुत्यागरत्या धर्मी स्य विकयः ॥ कन्याया विकयश्येव स्वाध्यायम् द्वविक्रयः परस्त्रीगमनञ्चीव परद्रच्यापहारणम्॥ तथा पुंसाभिग मन पश्नां गमनं तथा। रृष्धुद्रपश्चनाञ्च पुंस्तिविध्यं सनं तथा॥ कन्याया दूषणं चेष्रग्वां योनिनिपीडनम्। ग्रुषानां पृश्नाञ्च नांसाद्यु विभेदन्म् ॥ यामान्त्यज् स्रीगमन् विज्ञयमनुपातकम्। नित्यनैमितिकथाद्वर्ज-नं पश्चिहंसनम् ॥ मृगपिस्मिहासपयादसां हननिक्रया। साधारणस्त्रीगमूनं पत्यास्य मेथुनं तथा ॥ पारिवृत्तं पार दार्यं निन्दिताथेपिजीवनम्। तथैवानायमे वासो देवद्रव्योपजीवनम्॥ पयोद्धितिलानाञ्च विक्रयं लवूणक्यम्। शाक् मूलफलस्तेयमतिरुद्युपजीवनम्।। निमन्नितातिके मणं दुष्पासियहम्ब च । अरुणानामभदान्त्वं सन्ध्याका लानिवर्त्तनम् ॥ रृथेवाग्निपरित्यागः संग्रामेषु पलायिता दुर्गोजनं दुर्गूलापं स्वधम्मस्यू च कीर्त्तनम् ॥ परेषां दोषव चनं परदार निरीक्षणम् । नास्तिक्यं व्रतस्तिपश्च स्वाश्रमा-चार वर्जनम् ॥ असच्छास्माभिगमनं व्यसनान्यातमविकयः

<u>च्द्हारीतसंहितायाम्।</u>

३६४

बात्यतात्मार्थवचन् सेकैक मुपपातकम् ॥ इन्धनार्थे दुमछे दः किमिकीरादिहिंसनम् । भावदुष्टं कालदुष्टं कियाँदुष्टं च भक्षणम् ॥ मृचमन्णकाषाम्बुरतेयमत्यशनं तथा। अ नृतं विषयन्।पट्यं दिवास्वभमसत्कथा॥ तच्छावणं परा न्नं च दिवामेथुनमेव च । रजस्वला सूतिका च परस्वीम-भिदर्शनम् ॥उपवासदिने शाहे दिवा पर्वणि मेथुनम्।शू द्रपेष्यं हीनसर्व्य मुख्छिष्टस्पर्शनादिकम्॥स्त्राभिहिस्यं कामजल्पं मुक्तकेष्ट्रयादिवीक्षणम्। इत्यादयो ये च दोषाः मकीणाः परिकीर्तिताः। महापापं पातकन्त्र अनुपातक मेव च ॥ उपपापं मकीणञ्ज पञ्जधा तत्र कीर्तितम्। महा पात्कत्तुल्यानि पापान्युकानि यानि तु ॥ तानि पात्क्सं-ज्ञानि नन्सून मनुपातकम्। उपपापं ननो न्यूनं ततो हीनं प्रकीर्णकम् ॥ संसर्गस्तु तथा तथा प्रसङ्गात्सम्पर्कार्तिन म्। क्रमेण वस्युते तेषां प्रायश्चित्तं विश्वद्ये॥ यो येन सम्बसेत्तेषां तस्येव वतमाचरेत्। संसर्गिणस्तु संसर्गस्त संसर्गस्त्रथेव चृ॥ चतुर्थस्य न दोषस्तु पत्रस्युषु यथाक मम्। प्रकीणिकादिदोषाणां पासिङ्क मविद्यते॥ ख्ल्यू वात्पत्नाभावात्त्रंसग्नि दुष्यति । स्नानाच् गुदिरी षस्य संस्गत्पतित् विन्। । सावित्र्या नापि सुध्येत कर्त्ते रेव व्रतिकया। कते पापे यस्य पुंसः पश्चातापोऽ नुजाय ते॥ प्रायश्चित्तंतु तस्येव कर्तव्यं नेतरस्य तु। जातानु-तापस्य भवेत्पायश्चित्तं यथोदित्म् ॥ नानुतापस्य पुंस् स्तु प्रायश्चितं न विद्यते। नाश्चमेधेफले नापि नानुनाप विश्वस्मते॥ तस्माज्जातानुनापस्य प्रायश्वितं विश्वध्यते चरेदकामतः रुत्वा पतनीयं महत् पुमान्॥ न कामतश्य

रेह्म भृग्विनिपतनं विना। यः कामतो महापापं नरः कु योत्नयंत्रम् ॥ न तस्य शहिनिर्दिष्टा भूग्यग्निपतनं विना इसुक्तं ब्रह्मणा पूर्वे मनुना च महिषिभिः ॥ पातकेषु च सर्व ब कामतो दिशुणं बतम् । कामतः पूत्नीयेषु भरणा्न्छु हि मृखित ॥ हयमधायनः शृद्धिः सार्वभीमस्य भूपतेः । का-मन्त्रत्वनुपापेषु ठोके न व्यवहार्यता ॥ महत्त्र चातिपापेषु मदीसं ज्वलनं विशेत्। प्रायश्चित्ते रपेत्येनो यदकामकृतं भ वेत्॥ कामनो व्यवहारस्तु वचनादिह जायते। इति योगी श्वरेणोक्त मुपपापेषु तत्र तत्॥ तस्मादकामतः पापं प्रा यश्तिन शुल्यति। तेषां क्रमेण वध्यामि पायश्चितं वि शुर्ये॥ शिरः कपालध्यज्ञवान् भिक्षाशी कम्म वेदयन् । बह्यहा द्वादशाञ्दानि पुण्यतीर्थे समाविश्वेत् ॥ प्रयागे से तुवन्धादिपुण्यक्षेत्रेषु पापुरुत्। तत्र वर्षादि विज्ञाप्य स्व स्वकल्पमश्रेषतः॥ तत्रस्थेत्रीह्मणेरेवास्त्रातो व्रत्माच्र त्। चलारो ब्राह्मणाः शिष्टाः प्रिषदित्यभिधीयते॥ ते रुक्तमाचरेद्धर्ममेको बाध्यात्मधित्तमः। जटी बल्क्लबा-सान्न बहिरेव समाविशन ॥ स्नानं त्रिषवणां कुर्वन् क्षि तिशायी जितेन्द्रियः। एकभुक्तेन नक्तेन फरेरेरनशनेन च्यासमापयेत्क्रम्मिफरं यथाकाउं यथाबरुम्। राम्मि न्दीवरभ्यामं पोलस्त्यद्वमकलम्बम् ॥ध्यात्वा वडक्षरं म् लं नित्यं तावदहर्निशम् । एवं द्वादशवर्षाणि पुण्यतीर्थे समाचरन् ॥ मुच्यते ब्रह्महत्यायां स्तपसा वीतं कल्मषः। चरिते ब्रत्थायाते यव्सङ्ख्य दापयेत् ॥ ते स्तस्य च सु-संस्काराः कर्त्तच्या बान्धवैजैनैः । विश्वमुख्याय गां दत्ताशा सणान् भोजयेत्ततः ॥ शारम्भवतमध्य तु यदि पञ्चलमा

इन्द्रारीतसंहितायाम्। રૃદ્દદ भुयान्। विश्वहिस्तस्य विज्ञेया श्रुभाङ्गतिमवाभुयात्॥अ संस्कृतस्तु गोष्ट्रस्यान् पुनरेव वतं चरेत्। अशकस्तु वते द्धाद्गोसहस्रं हिजन्मनाम्।। पात्रे धनं वापयीतं द्ता शुह्दिमवामुयात्। ब्रह्महत्यासमृष्येवं काम्तो ब्रतमाचूरे-त् ॥ अकामनश्चेरेद्धम् पापं मन्सि चोच्यते। आज्ञापि-नानुमन्तानु याहकस्तेथेव च ॥ उपेक्षिता शक्तिमांश्रेतादोनं व्रत्माच्रेत् । कामन्स्तु च्रेत् पूर्ण त्वापि द्विगुणं गुरी॥ अ न्नर्वल्यां तथा अच्यां तथेव व्रतमाचरेत्। आचार्येच वन-स्थेन मातापित्रोग्री तथा॥ तपस्विनि ब्रह्मविदि दिगुणं व्र तमाचरेत्। यावत्स्वक्षत्रियं वेषयं विशिष्टं श्रद्रमेव न ॥ कपि लां गिर्तिणीद्भाञ्च इत्वा पूर्णवतं चरेत्। अकामतस्तु तेष्य-धं सुनिभिः सम्प्रकातितम् ॥ तिथेः भाषामिकादसमाद् द्विती ये दिगुणं चरेत्। तृतीये त्रिगुणं मोक्तं चतुर्थे नास्ति निष्कृ तिः ॥ चतुर्णामाश्रमाणाञ्च शोचवत् साधनं चरेत्। प्राय-श्चित्तं तरीर्मध्ये केचिदिच्छन्ति स्रयः ॥ गोब्राह्मणपरित्रा ण मश्वमेधावश्रधता। इयं विशुद्धिरुदिता पहत्याकाम-तो हिजान् ॥ अग्निप्रपत्नं केचिदिच्छन्ति मुनिसत्तमाः। लोसभ्यः स्वाहेत्यादि मन्त्रेईत्वा पृथक् पृथक् ॥ अवाक्षि राः प्रविश्याग्नी दग्धः श्वद्धो भवेन्नरः। अकामतः रूरा पीत्वा मद्यं वापि दिजोत्तमः॥ पूर्ववद्दादशाब्दानि चरे द्वतम् विक्षतम्। जपित्वा दशसाहस्रं विस्न्ध्यासः नि रन्त्रम् ॥ द्वादशाब्दं मनुंजस्वा रतः श्रुद्धो भवेन्मरः । याप्न कानि चे पापानि सुरापानसमानि तु ॥ अकामतश्वरेदर्धे कामनः पूर्णमाचरेत् । सर्वत्र पत्नीयेषु चरित्वा व्रतमुक्त चत् ॥ पुनः संस्कारमईनि श्यश्वेने दिजातयः । अज्ञाना

नु सरां पीत्वा रेतोविष्मूत्रमेव च ॥ मानुषीक्षीरपानेन पु नः संस्कारमहीत । इत्युक्तं मनुना पूर्वमन्येश्वापि मह्षिपिः ॥ करव्तं लशुनं शीमु मूठकं यामस्करम् । च्छवाकं कुक्कु राण्डञ्च कारुं पिण्याकं लशुनं तथा ॥ गृत्रमुष्ट्रं नृमांसं च खरं तत्रक्रमेव च। माहिषं माकरं मांसवृक्षं वोनरमेव च॥ निषीडितञ्च गोक्षीरभारनालं च मूषकम्। मार्जारं श्वेत रुनाकं कुम्मी निम्बदलं तथा।। कव्यादक्व तथा भेकं श-गारं व्याममेर च। एरमादिनिषिद्यां स्तु भक्षयित्वा नुकाम तः॥ बरेद्वतं तथा पूर्ण पादोनम्पादकामतः। नारिकेछ-रसंपीला दायुना ताडितं हिजः॥ दग्ध्या तालपलाशाम्बा करनिर्माधितं दुधि । ताम्मपात्रगतं गव्यं क्षीरं च ठवणान्वि तम्॥ करायेणीव यहतं घृतं लवणमम्बुच। सूतकान्तञ्च श्रद्रानं कदर्याधनामेचे च ॥ श्वस्पृष्टं स्त्रीतिका दृष्टं मुद्रक्या दृष्टमेव च । पाषण्ड भण्डचण्डाल वृष्यलीपेतिची क्षितम् ॥ द त्त्वाविशष्टं यक्षाणां भूतानां रक्षसां तथा। उद्दृत्य वामह-स्तेन् वक्रेणेव पिवेदपः ॥ यचान्नमाद्येकोहिष्मु छिष्ट मगुरोरिष। हरेरनिर्पतं भुत्का न भुत्का देवतापितम्॥का मतस्त चरेद्दमञ्जरेद्देदमकामतः। अकामतः सक्रज्ञाया चरेचान्द्रायणज्ञतम्॥म्लेच्छचण्डाल्पातृत्पाषण्डानाम कामतः। उदन्यासहं भुत्का च चरे इमे वतं हिजः॥ चण्डा लक्षणभाण्डस्थं मद्यभाण्डस्थमेव च। पत्वा समाचरेत्या-पं कामतोऽ दें समाचरेत्॥ मध्गन्धं समाघायं कामतो-अनुमाचरेत्। अकामतस्तु निषीच्य चरेदाचमनं दिजः॥ अभिमन्त्य जलं पाश्य साँवित्र्या च समन्वितम् । वृथा मां साशने चैव भावदुषादिभक्षणे ॥ चरेत्सान्तपनं रुच्छं चा

रुद्द हारी न संहितायाम्। २६८ न्द्रायणमधापि वा। कामनस्तु चरेत्पादमभ्यासे पूर्णमाच रेत्।।कामतस्तु करां पीत्वा सन्तर्भं चानिसन्तिभम्।गोम् त्रमम्बु वा पीत्वा मरणाच्छु हिमुच्छति ॥ सरायाः पतिषेषुसु हिजानामेव कीर्त्तितः। विशिष्टस्यापि श्रद्रस्य केनिदिच्छन्ति स्रयः॥ अनृतं मद्यमांसञ्च परस्त्रीस्वापहार्णम्। विशिष स्यापि श्रद्रस्य पातित्यं मनुरब्रवीत्।। करा वै मलमनादेः पापादे मलमुच्यते । तस्माद् बाह्मणराजन्यी वैश्यश्चनसं रां पिबेत् ॥ चक्रारादिशिष्ट्य श्रद्रस्यापि पूर्ववचनात् यतु राजन्यवैश्ययोगीयाज्यादि मद्यस्याम्तिष्धेः तन्न मतं स्यात् न च निषिदादीनां सतां मतन्त्र । विशिष शूदस्या-पि मद्यमांसनिषिद्धत्वात्। इज्याध्ययनादिश्रीतस्मार्तक महिस्य। क्षत्रविशिषस्योपि तहद्वैश्यस्य च प्रतिषेधात् नतु मायश्चित्ताल्यत्वप्रतिपादनपराणयेच नल्पप्रतिषिद्धपरो णि ब्राह्मणस्य मर्णान्तिक मुपदिष्टं राजन्यचेश्यविशिष्ट श्रुद्वाणाम् पूर्णपादोनाद्दीनव्तचर्या उक्ता। सरायासु सर्वीषां दिजानां मरणान्तिकमेव श्रदस्य गोसहस्रदानं ग परिपूर्णवतं वा चरितव्यम् नतु मरेणान्तिकम्॥ वणीं सुरां पीला सरायास्तु हिजात्यः। मरणांच्छाहिम्च नि श्रदस्तु व्रतमाचरेत्॥ राजन्यचेश्यो तु मधं पौत्वा च रेतां व्रतमेच च । श्रदस्त्वर्धञ्चरेत्तद्द्वाह्मणी मरणाच्छु-चिः ॥ यक्षरक्षः पिशाचान्नं मधं मांसं सुरासमम् । नात्त्र्य मेव विप्रेण भुत्का तु जननं विद्योत् ॥ मधं वापि सरां वा पि यः पिबेद्बाह्मणाधमः । अग्निवर्णन्तु गोमूत्रं पिबेद् व्जित्पञ्चकम् ॥ मरणाच्छुद्धिमामाति जीवेद्यदि विश्व-ध्यति । मद्यस्य प्रतिषिद्धार्थे घतं क्षीरमथाम्बु वा ॥ मा-

श्वितामिवणीन्तु तद्तां शुद्धिमाशुयात्। दत्त्वा स्ववणी विषाय गान्त दत्वा विश्वध्यति ॥ ध्रात्रविद्श्रद्रजातीनां सवणीत यथाक्रमम्। पादोनमई पाद्वा च्रेद्रतं यथो क्तवत्॥ समेष्यधे प्रकृष्यितं कामृतः पूर्णमाचरेत्। काम्
तः सण्हारा तु राज्ञे मुस्लमप्येत्॥ स्वकमं ख्यापयं-श्रीव हतो मुक्तोउपि वा श्रुचिः । राज्ञा यदि विमुक्तः स्यात् पूर्वद्रतमाचरेत् ॥ आत्मृतुल्यस्तवण्णं वा दद्यादिप्रस्य तुष्टित्तं। तत्समेच्यतिरिक्तेषु पादमेव चरे इतम्॥ चान्द्रा यणं पराकं वा कुच्यादल्पेषु सर्वभः। द्रव्यप्रत्यपणं कर्त्तु-न्नुत्यद्रयमेव ग्॥ व्रतं समाचरेत् कृत्वा यथा प्रि-षदीरितम्। बलाच्छीर्योण वा स्नेहा छन् बहारादिनापि ग ॥समाहरति यद् इत्यं तत्स्व स्तेयमुच्यते। देशं कालं व यः शक्तिं पापञ्चावेस्य सर्वतः ॥ पायश्वितं पदातव्यं ध-म्बिद्रिर्मनीषिभिः । भगिनीं मातर् पुत्रीं द्रुषामाचार्य ग्षितम्॥ अकामतः सक्द्रत्वा चरेत् पूर्णवतं नरः पश्चिमाभिमुखां गङ्गां काछिन्द्या सह सेङ्गेताम् ॥ प्राध्न मस्तवणं पुण्यं द्वारकां सेतुमेव वा । चन्द्रपुष्करेणीं वापि वेणी सागरसङ्गमम् ॥ गोदावयीः शवयी वा गत्वा तत्रा बरेद्रतम्। पूर्वेव हादेशाच्दानि चरेद् व्रतम्नुत्तमम्॥ह णाय नमें इत्येष मेन्त्रः सर्वोधनाशनः । इमं मेव जपनम में ध्याता हरि सनातनम् ॥ त्रिसन्ध्यास्वयुनं भूत्तया नित्यं हादशवत्सरम्। चान्द्रायणीः पराकेवीं क्रच्छेवीं श मयेत् समाः॥ जीवे क्षीणेऽ धवा पुण्यकामी मण्डपेपा-रहैः। निवसित्वा बहिर्यामात् क्षितिशायी जितेन्द्रियः॥ मनः सन्तापकरण मुद्दहेच्छोकमन्ततः। सदा कृष्णं हरिं-

ध्यायन् जपन्मन्लमनुत्तमम् ॥ हाद्शाब्दाहिमुच्येत् पापा द्स्मात्वो बढात्। भगिन्यादिषु योषित्स यो गच्छेत्काम तो नरः॥ अनुसासमतीयेन समाश्विष्य हुनाशाने। शाय ला समहद्क्षी दग्धः शुद्धिमवाभुयात् ॥ एतास मितदु पं विज्ञाप्य प्रविदे ॥अकामनः सरुद्रत्वा चरेद्दर्मेवनं नरः अभ्यासे व बरेत् पूर्ण कामतः सहदेव व ॥ कामतोऽभ्या सविषये तत्रापि मरणान्तिकम्। सम्बद्धं प्रकृरीत सह देव हाकामतः ॥कामतस्तु चरेत् पूर्णमभ्यासे मरणानिक म्। अकामतो वाज्यासे तु पूर्णमेव ब्रतं चरेत् ॥ अन्यास्य पि च नारीषु सरुद्रत्वाप्यकामतः । पादम्बाचरेहिद्दान -भ्यासे लर्धमाचरेत्॥ साधारणासु सर्वासु चरेचान्द्राय णवतम्। कामतो हिगुणं तास अभ्यासे वतमाचरेत्। स्वदारास्वास्यगमने पुसि तिर्यक्षु कामतः॥चान्द्रायणं पराकं वा पाजापत्यमधापि वा। उद्क्यां स्तिकां गृत्वाच रेत्सान्तपनं व्रतम् ॥ चान्द्रायणं तथान्यास्, कामतो हिए णं बरेत्। अष्टम्याञ्च चतुर्देश्यां दिवा पर्वणि मेथुनम्॥ कृत्वा संचेतं सात्वा च बारुणाभिश्व याजियेत्। चण्डा लीं पुंश्वलीं म्लेच्छां पाषण्डीं पतितामपि॥ रजकीम्बुक-धिच्योधां सर्वा यामान्त्यजाः स्त्रियः। अकामतः स्कुद्र ला चरे बान्द्रायणवनम्॥ अभ्यासे तु वतं पूर्णनाभिन सह भोजने। कामतस्तु सरुद्रत्वा भत्का त्यधेवतं चरेत् ॥ त्र भूयश्वरेत् पूर्णमिश्यासे मरणानिकम्। यो येन स म्बसेदेषान्तरपापं सीअप तत्समः॥ संलापस्पर्शनादेव श-य्याशनासनादिभिः। नद्देशचरेन् सर्वे व्रतं द्वादशवापिक

म्॥अकामतश्ररेद्रंमे षण्मासात्पादमाच्रेत्। मासनये दिवर्षे स्यान्यासमात्रे तु वत्सरम्।। कामतो दिगुणं तत्र चरे दद्यादिक व्रतम् । ऊर्द्यन्तु वृत्सरात् पूर्णे देगुण्याद्यमतः क मात्॥ कामती वत्तरीद्ध्वं द्विगुणवितमाचरेत्। ऊर्ध्वं द्वि वर्षातस्याप् मरणान्तिकमुच्यते ॥ यजनाध्यापुनाद्दानात्पा गच सह भोजनात्। सद्यु एव पतत्य सिम् पतिनेन सहाच रन्॥ तत्राप्यकामन्रस्तर्थं कामनः पूर्णमान्रेरत्। षण्मासे व सरेब्यूत्र दिग्णूं त्रिगुणूं स्मृतम् ॥ ऊध्वीतु निष्कृतिर्नस्या द्भगिगिनपतनं विना। दितीयस्य तृतीयस्य नेष्यते मर-स्रूचीप्रासेन चतुर्थस्य विनिष्कृतिः ॥ पञ्चमस्य न दो षः स्यादिति धर्मविदो विदुः । अन्यषामपि संसगित्पाय-श्रितं मकल्पयेत् ॥ पतनीयषु नारीणां मरणान्तिकमुच्य-ते । अकामतश्यरेन्द्रमिनतं पृथु यथोदितम् ॥ व्यक्षिचारेतु स्पेत्र कामतो मरणाच्छु विः। अकामतश्चरेते पूर्ण माति-सौम्यं गता सती॥ अई मैवानु लोम्येषु तथैव भूणहादिषु। यितश्र ब्रह्मचारीच ग्ला स्वियमकामतः॥ गुरुतल्पग्म हिएं पूर्णमर्थं समाचरेत्। नामतो ब्रह्मचारी तु पूर्णमे-गांचरेइत्म्॥ यतेस्तु मरणोच्छ द्धिः धिन्धः स्यात् हन्तेनेन वा। त्योस्तु रेतः स्वलने कुँच्छं चान्द्रायणं चरेत् ॥ जला सहस्रं गाय्व्या गृहस्थः शुद्धिमाञ्चयात्। हिसहस्रं वन स्थस्त ज्येद्रेतोनियातने ॥ तत्रापि काम्त्सेषां हिराण विगुणादिक्म्। परिवाजनकामस्तु नयनोत्पाटनं नथा॥ एव सूमाचरेद्दीमान् प्रायश्चित्तं मतन्द्रतः। प्रायश्चित्तम् कुर्याणः पापेषु निरतः सदा ॥ कल्पायुतशतं गला नरकं

रुद्धारीतसंहितायाम्। २७२ प्रतिपद्यते । धत्वा गोचर्ममात्रन्तु सममेकं निरन्तरम्॥ प ऋगव्यं पिबन् गोन्नो गुरुगामी विसुध्यति । गोमूत्रेणैव च स्नात्वा पीत्वा चाचम्य बारिभिः ॥ विष्णोः सहस्रनामानिज पेन्नित्यं समाहितः। शयीत गोव्रजे रात्री गवां हिन मनुस्मर न्।। याघादिभिर्मृहीतां गां पहें निपतितां तथा। सं चरेद थवा माणान् तदर्थं वै परित्यजेते ॥ तेनेव हि विशुद्धः स्याद सम्पूर्णवतोऽपि वा। वतान्ते गोमदो भूत्वा ततः श्रद्धिमवा-भुयात् ।।गोस्वाभिने च गां दत्वा पन्नादेवं वृतं चरेत्। देवात् विराव मुपोष्य यूषमे कत्र्य गा दशा। योकेच गृहदाहा धैर्ष न्यनेवा हता यदि। मितपूर्वण गां हत्वा चरेचेवाषिक वत म्। द्विवष् पूर्ववदापि चर्मणाद्रेण वाससा। कपिलां ग-भिणीं वापि वेषं हत्वा च काम्तः ॥ वतं दादशवषीण च रह्मव्रवत्दित्म् । आचाय्यदेव्विमाणां हत्वा च दिगुणं चरेत्।। होमधेनु पस्ताञ्च दानेच समलङ्कृताम्। उपभु कां बुषेणापि ताञ्च दादशवाषिकम् ॥ निष्पीडनं वापि ते षु दोषेष्वल्पम्तन्द्रितः। शरणागतबालस्त्री घातुकैः सम्ब सेन्न तु॥ चीर्णवतान् पि च्रन् कृत्रधानपि सर्वदा। अमि दाइ रदां चण्डां भन्दीं छोकघातिनीम्॥ हिस्तयंस्तु विधा नस्त्रीं हत्वा पापं न गंच्छति। गुरं वा बाल च्हान्वा श्रीं वियं वा बहुशुतम् ॥ आ्ततायिन् मायान्तं हन्यादेवाविचार्यन् नाततायिवधे दोषो हन्तुर्भविति कश्चन ॥ प्रख्यात दोषः कुर्वात परित्यक्तं यथोदितम्। अनिभरव्यातदोषस्तु र हस्यवतमाचरेत्॥ कण्ठमात्रजले स्थित्वाराममन्तं समा हितः। जपदा दशसाहस्रं ब्रह्महा शुद्धिमाग्नुयात्॥ सुरा पः स्वर्णहारीतु जपदेषाक्षरं तथा। उक्षं जस्वा रुष्णमन्तं

मुख्यते गुरुतल्पगात् ॥ उपोष्यान्तर्जिरे स्थित्वा वासुदेवमनुं
मुभम्। जपेद्वा दशसाहस्रं गोद्धः प्रयतमानसः ॥ असंख्याति च पापानि अनुक्तान्यपि यानि च। चित्तस्थो भगवान् कृ
ष्णः सर्वे हरित तत्स्रणात् ॥ एकाद्रयुपवासस्य फलं प्राप्रोति मानवः। आषाढादि चतुर्मासे कृते भुत्का जितेन्द्रियः॥
दुष्पाब्धो शेषप्यद्भे शयानं कमलापतिम्। ध्यात्वा समर्चये
नित्यं महद्भिच्यते ह्याः॥ इति रहस्य प्रायश्वित्तम्॥

रज्खलां सूतिकाञ्च चण्डारं पतितं तथा ॥ पाषण्डि नं विकर्मस्यं शूर्वे स्पृष्ट्वांडप्यकामतः। गोमयेनानु लिप्ताङ्गः म्गसा ज्लमाविशेत्।। गायत्र्याष्ट्रातं ज्ञा एतं माश्यं विशुध्यति। स्पृष्टातु कामतः स्मात्वा चरेत्सान्तपनं वतम्॥ श्वपनं पतितं स्पृष्ट्या गोपाल व्यनना हतम् । विड्वराहं श्व न्ड्राकं गर्दभं यूपमेव च ॥ मद्यं मांसं तथीवीष्टं विष्मूत्रं द शर्मिव च। करकेञ्जलफेनञ्च वृक्षानिय्सिमेव चे॥ करञ्जं छ भुन्ज्यानुगच्छनि स्वस्य शुद्धये। स्चैरुमेकवाह्यापः सावि शै विशतं जपेत्।। तत्स्पृष्टस्पृष्टिनी स्पृष्ट्या संवासा जलमा विशेत्। ऊर्ध्वमानमनं प्रोक्तं धर्मविद्भिरकल्मषेः। उच्छिष्ठके राभस्मास्थिकपाठं मलमेव च् ॥ स्नानाईध्रणीञ्चैव स्पृखा स्नानं समाचरेत्। प्रसाल्य पादी संक्रम्य नधेवाचम्य वारि-णा।। मन्त्रसम्मार्जिनजरं स्पृष्ट्या तान्त्र विशुध्यति। विशि शुनाञ्च विभाणां गुरूणां बत्रााडिनाम्॥ विनीततराणामु खिएं स्पृष्टा स्नानं समाचरेत्। शैवानां पतितानाञ्च वा-ह्यानान्यक्तकर्मणाम् ॥ अञ्चिष्टस्पर्शनं कृत्वा चरेचान्द्रा-यणं वतम्। उच्छिषेन स्वयं चान्यमुच्छिषं यद्यकामतः॥
स्था संवेढं स्नात्वाच सावित्र्यव्शतं जपेत्। कामतस्या

२७४ हदूहारीतसंहितायाभ्

चरेत् रुच्छं ब्रह्मकुच् हिजोत्तमः ॥ राजानञ्च विशं शुद्रं च रेबान्द्रायणं दिजः। तीच स्नात्वा चरेत् छच्छं गांवा द्यात्य-यस्विनीम् ॥ उच्छिष्टिनं स्पृशन् श्रूद्रमुच्छिषं श्वानमेववा।स वासा जलमाप्रत्य चरेत्सांन्तपन्वतम् ॥ तत्रापि कामृतः सृक्षा पराकद्वयमाचरेत्। पञ्चगच्यं पिबेच्छ्द्रः स्नातानद्यां विधान तः॥च्ण्डाउं पतितं मध् सूतिकाञ्च र्जेस्वताम्। उच्छिषेनत् संस्पृष्टो पराकत्रयमाच्रेत्॥ अच्छिष्टेन चिरं काल मुषिला सा नमाचरेत्। उच्छिष्टाशीचमर्णे चरेदब्दं दिज्ञातराः॥ रजस्य-ला स्तिका वा पञ्चत्वं यदिचेद्रता। पञ्चगच्येः स्नापयित्वा पावमान्येर्दिजोत्तमाः ॥ पत्यृचं कद्हेः स्नाप्य सपवित्रैर्जिहेः शु भीः। शुभवसीण सम्बेध्य दाहं कुर्योदिधानतः ॥ चण्डालाद ब्रा ह्मणात्मपति कव्यादादुदकोदिभिः। हेनानामपि कवीत पूर्वे वृद्दिजपूद्गवः॥ न्यापि कामतः कुर्यात् षडब्दं त्स्य बान्धवः। विषाधैर्धनशास्त्राधैरात्मानं यदि घातसेत् ॥ गोशतं विष्मु रख्येभ्यो दद्यादेकं रूषं तथा। नारायणबिंह रूवा सर्वमप्यो-ध्वेदहिकम्॥ रजस्वठा तु या नारी स्पृष्ट्या चान्यां रजस्वठाम् चण्डालं पतितं वापि शुनं गर्भमेवच ॥ तावतिष्ठेन्तिराहारा च्रेत्सान्तपनं वृतम् । स्पृष्ट्याप्यकामतः स्नात्वा पञ्चगव्यैःशु भूजिलीः ॥ चातुर्वर्णस्य गैहेषु चण्डाउः पतितोऽपि गा। अन्त र्वेली भवेत्सा चेत्कथं स्यात्तत्र निष्कृतिः॥ तद्गृहन्तु परित्य द्धा दग्धा वान्यन संस्थितः। संसग्धिन प्रकारेण पायश्वि तं समावरेत् ॥ पृथक् पृथक् मकुवीरन् सर्वे गृहनिवासिनः। दाराः पुत्राश्च सहदः पायश्चितं यथोदितम्। सभर्तृकाणां नारीणां व्यनन्तु विसर्जयेत्। सर्वान् केशान् समुद्धत्य च्छेद येदङ्गुिक्यम् ॥ केशानां रेक्षणार्थाय दिगुणं व्रतमाचरेत्

पायभिते तु सम्पूर्णे कत्वा सान्तपनं वतम्।। ब्रह्मक्चेपिवासं वा विशुध्यन्ति तदैनसः। अविक्सम्बत्सरोधितुं गृहदाहं न चोदितम्॥ यद्गृहे पानकोत्पत्ति स्तत्र यहोन दाह्यत्। त्यजेदा सं निरुषाच शुद्धिञ्चेवात्मन स्ततः ॥ सम्बन्धाचीव संसर्गात्त ल्यमेव नृणामघम्। तस्मात्स्सर्गसम्बधान् पतितेषु विवर्जे येत्॥ चण्डालपतितादीनां तोयं यस्तु पिबेन्नरः। पराकं का मतः कुर्याद्ब्रह्मकूच्च मकामतः॥ अभ्यासे तुष्डब्दं स्या-बान्द्रायणमेकामृतः। चण्डालानां तडागे वा नदीनां तीर्थए व वा ॥ स्नात्वा पीत्वा जरं विषः प्राजापत्यमकामृतः । कामत क्तु पराकं वा चान्द्रायण मथापि वा ॥ अभ्यासे तु व्रतं पू णे षडब्दं स्यादकामतः। सर्वेषां प्रतिलोमानां पीला सान्तप न् बर्त्। चान्द्रायणं पराकं वा त्यब्दं वापि यथाक्रम्म्। भोजने गमने उप्येवं पायश्चित्तं समाचरेत्। चाण्डा उपतितादी नां गृहेष्यन्नमपि हिजः। भुत्काब्दमाचरेत् कृच्छं चान्द्रायण-मकामतः॥ चण्डालचाटिकायान्तु सत्वा फेत्काप्यकामतः। चरेत्सान्तपनं रुच्छं चान्द्रायणम्थापि वा॥ चण्डाखवाटिका यानु मृतस्याब्दं विशोधनम्। स्मपनं पञ्चगब्येश्व पावमा न्यैः शुर्मैजिलैः ॥ श्रदानं स्तिकानं वा शुना स्पृष्टे काम-तः। भुत्का चान्द्रायणं कुच्छ्रं पराकं वा समाचरेत् ॥ जलंपी ला तयार्विषः पञ्चगव्यं पिबेद्द्यहम्। चण्डातः पिततो ग पि यस्मिन् गेहे समाचरेत्। त्यत्का मृण्ययभाण्डानि गो-भिः संकामयेत् त्र्यहम् ॥ मासाद्ध्ये दशाहन्तु हिमासं पक्षमे व तु। षण्मासानु तथा मासं गवां वन्दं निवेशयेत् ॥ ऊर्धि-नु दहनं प्रोक्तं राङ्गुरेन न खातनम्। ब्रह्मकूर्चे तथा क्र-च्छं नान्दायणमथापि वा॥ अतिकृच्छं पराकं न त्र्यब्दं वापि

२७६ वृद्धारीत संहितायाम्।

समाचरेत्। षडब्दं मूर्धं षणमासात्प्रायश्चितं समाचरेत्॥ व त्सरादूर्धसम्पूर्णं व्रतमेवाचरेद् बुधः। अमुध्यशवचण्डाः उमद्यमांसादिद्षितात् ॥ कूपादुँहत्य कद्छैः सहस्रं रेचये ज्जलम्। निक्षिप्य पञ्चगच्योनि वारुणैरपि मन्त्रयेत्॥ तडा गस्यापि शुध्यर्थे गोभिः संकामयेज्जलम्। धान्यन्तुं क्षार नाच्छिदिर्वाहुल्यं प्रोक्षणादिए॥ रसानान्तु परित्यांग श्वा ण्डालादिपद्षणात्। पासाददेवहम्याणां चण्डालपतिना दिषु ॥ अतः पविष्टेनु तदा शुद्धिः स्थालीन कर्मणा। गी लाय नत्तोयेर्दर्भसंयुतेः। सम्योध्य सर्वतः पन्यादेवं समि षेचयेत्।। पञ्चामृतुः पञ्चगच्यैः स्नापियत्वाथ वैष्णेयः। प त्युचं पावमानैश्व वैष्णवै श्वाभिषेचयेत्॥ अष्टोत्तरसहसं-या शतमष्टोत्तरं नु या। चतुर्भि वैष्णावे मन्त्रीः स्वाप्य पुष्पा-ञ्जलिं तथा ॥ श्रीसक्तेन तदा दिव्ये देधान्नीराजनं ततः । अवेष्णावस्पर्शनेऽपि एवं कुवीत् वेष्णावः । भिन्ने विम्बे त था दग्धे परित्यत्के चु तं गृहे ॥ वेदेहीं वेष्णावी मिष्टा पुनः स्थापनमाचरेत्। चौराद्यपहते नष्टे वास्तदेवीं येजेच्रम्। स्थापनमाचरेत्। तोयादिवा सनं वैद्यामधिरोहणमेव चु॥ नयनोन्मीलनं दीक्षां वर्ज यिखान्यमाचरेत्। पञ्चगच्यैः स्नापयिखा पञ्चलक्पष्ठ वाञ्चितेः॥मङ्गलं द्रव्यसंयुक्तेरदिः समिषवेचयेत्। स तिश्व ब्रह्मणः स्तुत्येरिवभैषावीस्तथा॥ चतुभिवैष्णे वैर्मन्तेः पृथ्गष्तेत्तरं शतम्। वैष्णव्या चेव गायत्र्या शङ् खेन सापयेद्बुधः॥ ध्रवसूत्तम् चं सम्ता जपन् संस्था पयेद्धरिम्। ततस्तन्यूर्तिमन्तेण मूलमन्त्रेण वा दिनः॥द

चात् पुष्पसहस्राणि देवतां स मर्च स्मरन् । पश्चात् साव रणं विष्णोरचीयत्वा विधानतः ॥ इन्द्रसोमं सोमपतेरिति सूक्तमनुत्तमम् । जपन् भक्तयाथ देवेस्तु दद्यान्नीराजनं हिनः॥ पद्क्षिणं नमस्कारं क्रूत्वा विभारत भोजयेत्। अ वैष्णवेन वियेण श्रद्रेणेवार्चिते हरी।। सहस्रमभिषेकं च प षाञ्जििसहस्रकम् । महाभागवतो विपः कुर्यान्मन्त्रह येन च ॥ देवतीत्तरसम्पर्के विना स्वाहरणं हरी। अवैष्ण गनां मन्ताणां पद्मान्नस्य निवेदने ॥ कृत्वा नारायणीिम्ष्रिं पुनः संस्कारमाचरेत्। देशान्तरगते बिम्बे चिरकालमनर्चि ते॥ अधिवासादिकं सर्वे पूर्ववद्देष्णावीत्तमः। विष्णोरुत्स-यमध्येतु विद्युत् स्तनितसम्भवे॥ रथे बिम्बे ध्वजे भग्ने विम्बेच पतिते भुवि। ग्रामदाहेऽभ्रमवृष्चेच गुरी भरत्यान्त्र वै मृते ॥ नाउड्कतेषु विधिषु परिणीते जनार्दने ।अवैदि कृत्रियापेते जपहोमादिवर्जिते ॥ कुवीत महती शान्ति वैष्ण् वीं वैष्णयोत्तमः। अग्निनाशेतु तन्मध्ये पुनरादानमाचरे त्॥ कुवीत वैन्तेयेषिं वैष्यक्सेनामथापि वा। श्वश्वकरा दिसम्पर्के पवित्रेष्टिं समाचरेत् ॥ वैष्णवेष्टिं पक्विति पाष ण्डादिपदूषिते। अ्ष्रिस्य संप्रवे विष्णो येत्र यत्र च सङ्ग्र म्॥ तत्र तत्र यजेदिष्टिं पावमानीं हिजोत्तमः। स्वापचीरे स्तथान्येवी मुच्यते सर्विकिल्बिषेः॥ अवेष्णाचेन विभेण स्यापिते मधुस्द्रने । तद्राष्ट्रं वा भूपितर्गा विनाशामुपयास्य ति ॥ क्रवीत वासुदेवेषिं सर्व पापं त्रशामयेत् । महाभाग-गतेनीय पुनः संस्कारमाचरेत्॥ सकेशाववीनतेयादि नित्या नाञ्च दिवीकसाम्। मुक्तानामपि पूजार्थ विम्बानि स्थाप येद्यदि॥ स निवेश्यैकरात्रन्तु गच्यैः स्माप्याथ देशिकः।स

305 **र-द्रहारीत सहितायाम्।** वीषेणावस्तेश्व तदायत्र्या सहस्रकृष्। राष्ट्ररवेनीवाभिष च्याथ भगवत्पुरतो न्यसेत्। स्थण्डिलेऽगिनं प्रतिषाप यजेच पुरतो हरें।। अस्य वामेति सूक्तेन पायसं मधुमि-श्रितम्। अष्टोत्तरशतं पश्चादाज्यं मन्त्रचतुष्ट्यात् ॥सुव णितास्त्रसूक्ताभ्यां पृषदाज्यं युजेत्ततः । तिरुव्यहितिभिर्ह त्वा पञ्चादकोत्तरं शतम्॥ वेकुण्ठं पार्षदञ्चीव होमशेषं स मापयेत्। अहमस्मातिसूक्तेन पीठे संस्थापयेद्बुधः॥प्रण वादिचतुर्थन्ते नामि सत्तेत्प्रकाशकेः । आवाह्य पूजियता थ दद्यात्प्रपाञ्जिि तृतः॥ द्वादशाणीन मनुना सहस्रमथ-वा शतम्। सोमरुद्रेति सूक्तेन दीपेनीराज्येततः ॥ भीज-यिला ततो विभान गुरुं सम्यक् प्रपूजयेत्। मत्स्यकूमीदि मूत्तीनामेवं संस्थापनं चरेत्॥ तृत्तत्मकाशक्षेमन्त्रे जपूरी-मोदिकं चरेत्। सहस्रनामभिद्धात्पुष्पाणि सरभीणिन ॥ वापीकूपत्डागानां तरूणां स्थापने तथा। वारूणी भिर्य सोम्येश्व जपहोमादिकं चरेत्।। तरूणां स्थापने गोपरुष्णं मातरमेच च । ताप्यामेव तु मन्त्राप्यां सहस्रं जुह्याद् पु तम्॥ वैन्तेयाद्भितं स्तम्भं मध्ये संस्थापयेद्वुधः। अवै-ष्णवान्ययं जातः कृत्वेष्ट्रं वैष्णवी दिजः॥ वैष्णवेः प्त्र संस्कारेः संस्कृती वैष्णुवी भवेत्। देवतान्तरश्रेषस्य भीज ने स्पर्शने तथा ॥अन्चिते पद्मनामे तस्यानपितभोजने। अवैष्णवानां विपाणां पूजने वन्दने तथा ॥ याजने अध्याप ने दाने शाहे चेषाञ्च भोजने। अन्चिते भागवते हरिया सरभोजने।। पायश्चित् पकुळीत वैय्यूही मिष्टिमुत्तमाम्। पश्चाद्भागवतानाच्च पिबेन पादजलं शुभम्॥ एतत्समस्ते पापानां पायश्चितं मनीषिभिः। निणीतं भगवद्रक्तपादामृ

तिनेषेषणम्॥अङ्गिकतो महाभागे मेहाभागवते हिँजेः। स व्यापनारे मुच्येत परां कृतिक्च विन्दति॥ प्रायश्चित्ते तथा नी णी महाभागवताद्दिजात्। वेष्णावेः पञ्चसंस्कारेः संस्कृतो हरिमर्चयेत्॥ ॥ इति हारीतस्मृती महापापादिपायश्चि तपकरणंनाम षष्ठोऽध्यायः॥

अम्बरीष उवान्व॥ भगवन् ! भवता प्रोक्ता विष्णो-राराधनिकया। प्रायश्चित्तमरुत्यानामसतां दण्डमेव च ॥अ धना श्रोतुमिच्छामि शाश्वतीं एनिमुनमाम्। इष्टीनाञ्च विधा नानि विशेषांश्रोत्सवान् इरेः॥ हारीन् उवाच ॥ शृणुराज न्! प्रवक्ष्यामि सर्वे निरवदोषतः । इष्टीनाञ्च विधानञ्च हरे रुत्सवकर्माणाम् ॥ नारायणी वासुदेवी गारुडी वेष्णावी तथा। वैध्यहा वैभवी पादी पवित्री पावमानिका॥ सीदर्शिनी च सेनेशी आनन्ती च शुभाद्भया। महाभागवतीत्येताः सर्वपा पहुराः शुभाः ॥ प्रायश्चित्तार्थमपि वा भोगार्थे वा समाचरेत् पूर्वे विधनसे विष्णुः मोक्तवान् विधनसा भुगोः ॥ मोकं म मेरितं तेन भगुणा दिव्यमुत्तमम्। गुद्धं तत्सर्ववेदेषु निश्चि तं ते अवीम्यहम् ॥ अग्निवे देवाना मव मीविष्णुरीश्वरः। त दूनरूण व सच्ची देवता इतिह श्वतिः॥ निवसन्ति पुरोडाशम मी वैष्णवम्व्ययम्। देवाश्य ऋषयः सर्वे योगिनः सन्का द्यः॥ अग्नी यद्भयते हव्यं विष्णवे परमात्मने। नदग्नी वै ष्णवं योक्तं सर्वदेवीपजीवनम्॥ एतदेवहि कुर्वन्ति सदानि त्या अपीत्वराः। विमुक्ता आप भोगार्थमेनम्व मुमुसवः॥ एतदेव परं मीतिः साँभयः परमात्मनः। एतदिना न तुष्ये-त भगवान् पुरुष्तिमः ॥ यज्ञाधीमेव संस्ष्मात्मवर्गे च तुविधम्। यज्ञार्थात्करमीणोडन्यच् तदेषां कर्माबन्धनम् ॥

चृद्दहारीत संहितायाम्। 350 विक्रिजिद्धा भगवतो वेदा अंगाः सदाध्वरे। अस्यीनि समि धः मोक्ता रोमा दर्भाः मकीर्तितः ॥ स्वाहाकारः शिरः मी क्तं पाणाएव इवींपिच। सर्ववेदिकिया भीगा मन्ताः पत्यः प्रकार्तिताः॥ एवं यज्ञवपुर्विष्णुविदित्वेनं हुताशने। जुहु याहे पुरोडाशं अज्ञात्वेनम्पतेदथ॥ यज्ञोयज्ञपतिर्यज्या य ज्ञाङ्गो यज्ञवाहनः । यज्ञभृधज्ञकृधज्ञयज्ञभायन्ः॥ यज्ञान्त सुद्यज्ञ गृह्य मन्त्रमन्ताद एव च। तस्मादेनं विदिलैव यज्ञं यज्ञेन पूजयेत् ॥ कोऽ्यं ठोकोऽस्ययज्ञस्य क्यं स्यास स्तः श्रविः । द्रेज्ययज्ञास्तपीयज्ञा योगयज्ञास्तथा प्रे ॥-स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च सदाकुर्वन्ति योगिनः ॥ हरेभीगत या कुर्यान्न साधनतया किनित्। साधनं भगवान् विष्णुः साध्याः स्युचैदिकाः कियाः ॥शेषभूत्स्य जीवस्य तद्दास्यैक फलाः कियाः। अतिसमृत्यदितं कर्मे तदास्यं परिकृतिंत म्।। नैसर्गिकं तथा कुर्योत्तदास्येकं निकितित्म्। वैदिके नैच मार्गीण पूजयेत्परमेश्चरम् ॥ अन्यथा न्रकं याति कुल्प कोटिशतत्रयम्। तस्माच्छु खुक्तमारीण यजेहिष्णुं हिवैषा यः॥ अचियामचिये खुष्पेरग्नी च जुहुयाह्विः। ध्याये जुमन् सा गाचा जपेनमन्तान् संवेदिकान्।। एवं विदिला सकर्म भोगार्थं परमात्मनः। कुर्वित परमेकान्ती पत्युः पूली यूया प्रिया। इदं प्रसङ्गेणोक्तं स्यादिधानं तद्ववीमि ते। पूर्वपक्ष दशम्यान्तु सात्वां संपूज्य केशवम्॥ स्वस्तिवाचन पूर्वेण कु र्यादनाड्-कुरार्पणम्। हरिं नारायणे स्पर्यमिति सङ्ख्य पू-जयेत्। विष्णुप्रकाशेके राज्यं भूस्काभ्यां शतं ततेः। मन्ते ण वैवे वैकुण्ठं पार्षदं हुता समापयेत्।। अयुतं तु जपेन्म-न्तं होमञ्चाषोत्तरं शतम्। शषं निवेद्य देवाय भुव्कीयात्

स्वयमेव च ॥ ततो मीनी जपेन्मर्नं शयीत पुरतो हरेः। प्रशाते चनदीं गता स्नात्वा सन्तर्प देवताः ॥ सन्ध्या मन्वास्य चा-गत्य स्वगेहे समलड्कृते। वेद्यां संपूज्य देवेशं मन्तरत्विधान तः॥ सप्तावरणसंयुक्तं महिषीिभः समन्वितम्। अभ्यर्च्यं ग न्यपुषाद्येषूपदीपनिवेदनेः॥ अर्चित्वा विधानेन कुण्डं द क्षिणभागतः । विस्तरायामनिम्नेश्व हस्तमात्रन्तिमेखलम्॥ तव् विक्तं प्रतिष्ठाप्य इध्माधानान्तमाचरेत् । ओङ्कारः स्या त्ररं बह्यं सर्व मन्त्रेषु नायकः ॥ त्र्यक्षरं तत्त्रयाणाञ्चे वेदानां बीजमुच्यते । अजायन्त त्रुत्तः पूर्वमकाराद्विष्णुवाचकात्॥ श्रीवानकादुकारात्तु युजूषि तदन्तरम् । अजायन्त तयीः सङ्गत्सामान्यन्यान्यनेकशः॥ तयोदिसी मकारेण प्राच्यने सर्वदेहिनः। कारणं सर्व्यवणानामकारः प्राच्यते बुधैः॥अ कारोवे न सर्वावाक् सेषा स्पन्नीष्मितिः सदा। वद्गी साज्य ज्यमानापि नानारूपा इति श्वतिः॥ अकार एव छुप्यन्ति सर्व मन्त्राक्षराणि हि। अकारो वासुदेवः स्यात्तस्मिन् सर्वे प्रतिषि तम्। मन्त्रोहि बीजं सर्वत्र किया तच्छक्तिरुच्यते। मन्त्रत-तम्॥ मन्ताह बाज सक्त । तच्छात्तरुच्यत । मन्तत-लसमायुक्तो यज्ञ इत्यिभधीयते ॥ मन्तः पुमान् क्रियास्त्री मत्त्रुक्तं मिथुनं स्मृतम् । तस्माद्यज्ञं षि तन्त्राणि कर्नो म-न्त्राणि चाध्वरे ॥ मन्त्रियाजुष्टमेव मिथुनं यज्ञ उच्यते । मन्त्रतन्त्रांशमेते कर्ग्यज्षी यज्ञक्मिणे ॥ उद्गतं तु भवे साम तस्मात्तदेषावं वयम् । करिभारेव तमुद्दिश्य पुरोडा शं यजेद्बुधः ॥ ताभिरेव तु पुष्पाणि दद्यान्तमसु शाङ्गिणे इन्द्राम्निवरुणादीनि नामान्युक्तानि तत्र तु । ज्ञेयानि विष्णो स्तान्यत्र नान्येषां स्युः कथ्वज्ञन ॥ अकारे रूढइत्यन्तिमन्द्र त्यं वर ईत्वरे । आत्मनां प्रसवे सूर्याः सीम्यत्वात्सामइत्यतः

वृद्धारीत संहितायाम्।

565

वाधुः स्याज्नीवतः पाणाहरूणः सर्वजीवनः । मित्रः स्यात्सर्व मित्रलादात्मेकलाद्रबहस्पतिः॥ रोगनाशो भवेद्रद्रोयमः -स्यानु नियामकः। हिरण्यत्विमित् मोक्तं नेति माप्यत्मस्य त्।। नित्यसत्वादिर्ण्यः स्यात्तद्रभत्वादिरणमयः। हिर्ण्यग भी इत्यक्तः सलगभी जुनादनः ॥ हिरणमेयः स भूतेभ्यो दृह शे इति वैऋतिः। सर्गन् स्त्राति स्विता पिता न पितृतसि ता॥ स्वर्भभुव इति प्रोक्तो वेदवे द्येति चोच्यते। यस्य च्छन्दां सि चाङ्गानि स संपर्ण इहोच्यते॥अत्राङ्गं वर्णमित्युक्तं च च ॥ त्रिष्प्च जगतीचेव च्छन्दांस्यतान्य समात्। एता नि यस्य नाङ्गनि संसुपूर्ण इहोच्यते ॥ यस्माज्जातास्त्रयो वृदा जातवेदाः सउच्यत् । प्वमानः पावृद्या शिवः स्यास वैदा शुभाता। सजनेः स्व्यते यस्तु अतो वै शम्भुरित्यजः। सञ्यान्यस्येव नामानि वैदिकानि वैवेचनात् ॥ पुन्नामानि यानि विष्णोः स्त्री सामानि श्रियस्तथा। परस्य वैदिकाः श-ब्दाः समारुष्येतरेष्वपि॥ व्यवहियन्ते सततं होकवेदानुसा रतः। नतु नारायणादीनि नामान्यन्यस्य किहिनित्॥ एत्-न्नाम्नां गतिर्विष्णुरेक एव पचक्षते। शब्दब्रह्मत्र्यी सर्वे वैष्णाचं तदिहोच्यत्॥देवतान्तरशङ्का तु न कर्त्तव्याहि वै-दिके। वषद्कृतं यहेदेन तदत्यन्तिपयं हरेः ॥ स्वाहास्वधा-र्ये बेदेनेव जुद्गति। यो मनसा सवर इत्युचां भोकः सदाध्य रे॥ बेदेनेव हरिं तस्माद्यजेत दिजसत्तमः। यसङ्गदेव मुकं स्याहिधानं नहवीमि ते ॥ ऋग्वेदसंहितायान्त मण्डलानि दशकमान्। एकेकिमिस्या होतव्यं चरुणा पायसेन बा॥ ध

तेन वा तिलेविपि बिल्वपत्रेरयापि वा। अग्निमील इति पूर्वे मण्डलं मत्युचं यजेत् ॥ पुष्पाणि च तथा दद्यात् क्रगन्धीनैज नादने । विष्णु स्केहीवहुत्वा चतुर्मन्तेः शतं यजेत् ॥ विष्णु गन् भोजयोन्नत्यमग्निञ्चापि संस्यहेत्। उपोषितो दी क्षितेश्व यावृदिष्टिः समाप्यते ॥ अन्तेचावभृथेष्टिञ्च पुष्प यागन्त्र पूर्ववत्। आचार्य बाह्मणांश्वापि दक्षिणाभिः पपू नयेत्॥इमान्नारायणोष्टिच्च सरुद्वापियजेतुयः। अनधी-नवेदश्रोष्टिम्युतं मूलमन्ततः॥ होमं पुष्पाञ्जितिं वापि तथे ग्युतमाचरेत्। पूजियित्वा ततो विप्रान्निष्याः सम्यक्षको भूवेत्॥ अवाक्यपीरुषं सूक्तमष्टोत्तरशतं चरुम्। इत्वा चतु-पिर्मन्त्रिश्च हमेदिष्टिं न संशयः॥ ॥ अथ वास्त्रदेवेष्टि हचते॥ ॥ एकाद्श्यां कृष्णपक्षे समुपोष्य जनार्दनम्। समर्चयेदिधानेन रात्री जागरणान्वितः॥ दादश्यां पात्रत्था य सायान्नद्यां तिलेः सह। दादशाणीन मनुना सिञ्चेदषीत् रं शतम् ॥ अभिमन्त्य जलं पश्चात्तुलसामिश्चितं पिचेत्। सर्व कर्मस्विभिहित एतदेवाधमर्पणः ॥ तत्तत्कर्मणि तन्मन्तं योजयेदधमर्पणे। र्मात्वा सन्तर्यः देवषीन् कतकत्यः सम् हितः॥ गृहं गत्वाचियेदेवं वासुदेवं सनातनम्। दादशाणी विधानेन कस्तूरीचन्दनादिभिः॥ज्ञातिकेतककुन्द्रद्धेः सन रुष्णातुलसीद्है:। सुधान्धी शेषपर्धा समासीन् शिया सह ॥इन्दीवर्दलश्यामं चक्रशङ्खगदाधरम्। सर्वाप्ररणस्म नं सदायीवनम्च्युत्म्॥ अन्ननं विह्गाधीशं शीनकादीरु पासितम्। विद्रोन्द्रैविमानस्थेर्बह्मरुद्रादिभि स्तथा ॥ स्त्य मानं हरिंध्यात्वा अर्चयेट्ययतात्मवान् । सर्वमावरणं पश्चा दर्चयेत् कुस्तमादिभिः ॥ प्रथमं महिषीसङ्गं उस्मीभूभयो

रुद्ध शित संहितायाम्।

1568

सनीख्या। अनन्तरञ्च गरुडधर्मसेनादिभि स्तथा॥ऐश्वर्य-ज्ञानवेराग्याः पूजनीया यथाकमम्। सनन्दनश्च सनकः स नकुमारः स्नातनः॥ ओडुश्च सोमकपिछः पञ्चमो नारदस्त था। भृगुर्विधनसोऽभिश्वं मरीचिः कश्यपोऽङ्गिराः॥पुरुहः स्वायमभूवो दाल्भयो विशिष्ठाद्यास्ततः क्रमात्। विशिष्ठो वाम्देवश्व हारीतश्च प्राश्ररः॥ व्यासः शुक्श्ये प्रहादः शी नको जनकस्तथा। मार्कण्डेयो ध्रवश्रीव पुण्डरीकश्र्य मारु-तः॥ रुक्माङ्गदः शिवो ब्रह्मा पूज्नीया यथाकमम्। तथा लोके वराः पूज्याः शङ्खन्कादि हेतयः ॥ वेदाश्य सोङ्गाः -स्मृतयः पुराणं धर्मासंहिताः । राशयो यहनक्षत्राः पूजनी या समं ततः ॥ एवं सम्पूज्य देवेश मग्न्याधानादि पूर्वकम्। हि तीयं मण्डलमूना जुहुयात्स्एतं चरुम्॥ ध्यात्वा वह्नी वासुदे वंदद्यात् पुष्पाणि तत्र तु। वैष्णवांश्च यनेत्तत्रावभूषं पुष्पं गकम् ॥ ब्राह्मणान् भोजयेदन्ते गुरुज्यापि पपूज्येत्। इमा ज्य वासुदेवेषि यः कुर्याद्वैष्णवात्तमः ॥ कुरुकोरि समुद् त्यं स गच्छेत्परमं पदम्। अथवा वासुदेवस्य मन्त्रेणेव दि जीनम्ः॥ जुहुयादयुतं बह्नी वैषावैः प्रत्यृचं तथा। पुष्पाणि दत्त्वा देवेशे सम्यगिष्ट्या उभेत् फलम् ॥ अथ वस्यामि राजर्षे। वैष्णावेष्ट्या विधिं तृतः । श्ववणक्षेतु पूर्विह्यं पूर्विवच समा रभेत्॥ उपोध्य पूर्वदिवसे पूजयेज्ञागरे हरिम्। मभाते पूर्वत्त्त्र स्नात्वा नप्येज्जगतां प्रतिम्॥ षडस्र विधानेन पर्-व्योग्नि स्थितं हरिम्। वह्नार्क हेमबिम्बाद्यैयीगपीवेससं-स्थितम्। चतुर्भुजं सन्दराङ्गं सर्वाभरणभूषितम्। चक्रपाङ्-रवगदाशाङ्कान् विभाणं द्राभिरायतेः ॥ वामाङ्कर्थाश्रयाः सा र्हे गन्धपुष्पाक्षतादिभिः। नैवेदीश्व फलेभिस्यै दिंचीभिन्धैः

स्तपानकैः॥अर्वयेदेवदेवेशं सर्वाभरणसंयुत्म्।श्रीहिसीः कमला पद्मा सीता सत्या च रुक्मिणी ॥ सावित्री परितः पू ज्या ततस्तुते बढादयः। धनन्ततास्यृदेवेशसत्यधर्मदमाः भ माः॥बुद्धिस्तु पूजनीयास्ते दिस्तु सर्वास्वनुक्रमात् । तेतो छो-केश्वराः पूज्या स्ततश्वकादिद्देतयः ॥ म्हाभागवताः पूज्या हो मकमी समाचरेत्। चतुर्भिवैष्णवैः स्कैः प्रत्यूचं जुहुयोचरम् ॥यापका मन्तरसञ्च चतुर्मन्ता उदाहताः। तैरप्यशात्रशतं पृ थक् पृथगत्। यजेत्॥ तृतीयम्ण्डउं पश्चाज्जुह्यात्यत्यृचं त तः। तथा पुष्पेश्व सम्यूज्य कुर्याद्वभृथं ततः ॥ समाप्यं पुष्प पोग्न वैषावान भोज्येत्ततः। एवं कर्त्तुमशक्त्रभेद्वेषावी वै ष्णगोत्तमः॥वैष्णांच्या नैव गायच्या पुष्पाञ्जल्ययुतं चरेत्। वि सहसं वरं हुता वैष्णवेध्याः फ्लं उभेत्।। इमा तु वैष्णवी मि रियः कुर्याद्यैषावोत्तमः । त्रिकोट्रिकुल मुद्द्य याति विष्णोः परं पूर्म ॥ मायश्चित्तमिदं कुर्याद्वित्तभक्तेषु वैष्णावः । शा-न्यर्थं देवकार्येषु पापेषु च महत्त्वाप ॥ ॥ अथ वैयही इ ष्टिरूचते॥ ॥शुक्रपक्षे तु दादश्यां सङ्कान्ती ग्रहणेऽ पिवा। उपोध्य विधिविद्देष्णुं पूजियत्वा विधानतः ॥ अभ्यर्च पद्रन्थपुष्पैः केशवादीन् पृथक् पृथक् । सङ्किणादीनिप च पू जयेत्रयतात्मवान् ॥ तत्तन्मूर्ति पृथक् ध्यात्वा पृथगेव सम-चयत्। केशवस्तु स्वर्णापाः श्यामो नारायणोऽ व्ययः ॥ माधवः स्यादुसहाभो गोविन्दः शशिसानिषाः । गोरवर्ण स्वथाविष्णुः शोणी मधुजिदव्ययः॥ त्रिविकमोडिग्निसङ्गशो वामनः स्फॅटि क्पमः। श्रीधरस्तु हरिद्राभो हषीकेशो ऽश्रीमान् यथा॥ पद्म नाभो घनश्यामो हैमो दोमोदरः प्रभुः। सङ्घणस्तु मुक्ताभो वासदेवो घनद्यतिः॥ प्रद्युम्नो रक्तवर्णः स्योदनिरुद्दी अथो-

त्पलम्। अधीक्षजः शाह्रलाभी रक्ताङ्गः पुरुषीत्तमः॥ नृसिंही-मणिवर्णः स्यादच्युनोऽर्कसमयभः। जनार्देनः कुन्दवर्णं उपेन्द्रो विद्वमद्यतिः॥ हरिवे सूर्यसङ्गशः कृष्णोभिनाञ्जनद्यतिः। आयुधानि बुवे चैषां दक्षिणाधेः करादितः ॥ पदां शङ्खं तथा चुकं गदा द्याति केशवः।शङ्खं पद्यं गदाचकं धत्ते नाराय णोऽव्ययः ॥ साधवस्तु गदां चक्तं शङ्खं पद्मं विभर्ति च । चक्रं गरां तथा पद्मं शङ्खं गोविन्द एवं ने।। गदां पद्मं तथाशङ्खं चकं विष्णुविभविहि। चकं शङ्खं तथा पूर्वं गदां न मधुसू दनः ॥ पदां गदां तथा चकं शङ्खं चैव विविक्रमः । शङ्खं च कंगदापदां वामनो विभाषात्र्यो ॥ पदां चकंगदाशङ्खं श्री धरः श्रीपतिर्देधत्। गदाँ चकं हषीकेशः पदां शङ्खं विभिति हि।। पद्मनाभस्तथा शङ्खं पद्मं चक्रं ग्दां धरेत्। पद्मं शङ्खं गदां चकुं धने दामोदरस्तथा ॥ सङ्क्षणो गदा शङ्खं प्यंच क द्धाति हि। वासदेवो गदां शर्ड्रेन्सं चकं पदां विभर्ति हि॥ चकं शङ्खं गदां पदां पद्मा विभ्रेयातथा। अनिरुद्धत्तथा नकं गदो शङ्खं च पर्कजम् ॥ चकं पदां त्या श्रूर्यं गदीन पुरुषोत्तमः। पेदां गदां तथा शङ्खं चुकं चाधोक्षजो हरिः॥ च के पद्मं गदां शङ्खं नरसिंहो विभर्ति हि। अच्युतश्च गदा पदां चकं शङ्खं विभिति हि॥ जनादेन स्तथा पदा शङ्खं व कंगदां धरेत्। उपेन्द्रस्त तथा शङ्खं गदां चकंच पङ्केजः॥ हरिस्तु शङ्खं चकं च पदां चेच गदां धरेतू। शङ्खं गूदां प् इनं च चूकं विष्णु विभाति हि॥ एवं चतुर्विशतिन्त मूनी ध्या त्वा समर्चयेत्। तनिहम्बेषु वाराजन् । शालयाम् शिलासः ग ज्येश्व पानियः शर्करोन्वितेः ॥ नामभिस्तेश्वतुर्थन्तेमूलम-

न्तण वा यजन् । देवानावरणीयांश्व पूजयेत्यहिनः ऋमान् ॥ यं हैलाहतिसूक्तेन कुर्यानीराजनं शुभेम्। पुरतो अनि पति ष्टाप्य स्वगृह्यों कविधानतः। मण्डलेन् चतुर्थेण पत्युचं जुहु-याचरम्।। पुष्पेः सम्पूजयेद्रत्तया कुयदिवभृथं नरः। इमा वै यूहिकीमिष्टिं सम्यक् याहर्महर्षयः ॥ प्रायश्वित मिद् पोक्तं पातेकेषु महत्स्वपि। अनप्स्वपि च विम्बानां शान्त्यर्थेवास-माचरेत्।। भायश्चितं विशिष्टं स्यादेयं पत्यृचकर्मासः। अन धीतः क्यं कुर्याद्वेयद्वा वैष्णवी हिनः ॥ मत्येकं शतमधी च मन्त्रेस्तेषां यजेह्यः। सर्वत्रावमृथेष्टिञ्च पुष्पयागञ्च वैषा गः॥इयेन मूल्मन्लेण कुर्वात संसमाहितः। वैष्णवान भोज येद्रक्या क्रमीन्ते सल्सिद्ध्ये ॥ चतुर्विशातिसंख्यान्वे महाभा गवतान् दिजान्। एकं वा भोजयेद्भिं महाभागवतोत्तमम्। सर्व सम्पूर्णतामेति तस्मिन् संपूजिते दिने ॥ यः करोति खुमा मिष्टिं वैय्यूहीं वैष्णुबोत्तमः। अनन्तस्याच्युतानाञ्च विशिष्टो ^{ऽन्यत्}मो भूवेत् ॥ वैभवीमथ वक्ष्यामि सर्वेपापप्रणाहानीम्। पावनीं सर्वेद्योकानां सर्वकामपदां शुभाम् ॥ भगवूज्जनम्दि वसे वारे सूर्यक्रतस्य वा। स्वजन्मक्षें पिवा क्यि से म इलाइयाम्॥ प्रवेडह्मभ्युद्यं कुर्यादङ्कुरार्पणपूर्वकम्। उपो ष्य प्रचयेदिष्णु मग्न्याधानं समाचरेत्॥ स्नात्वा परेऽह्मि वि धिना सन्तर्प्य पितृदेवताः। विशिष्टे ब्रोह्मणीः सार्द्रमचीयत्वा जनार्दनम् ॥ मत्स्य कूर्मच् वाराहं नारसिंहब्च वामनम्।श्री रामं बरुभद्रत्र्य रुष्णं किल्किनम्ययम् ॥हययीवं जगद्यो निं प्जयेदेष्णवोत्तमः। नार्चयेद्वार्गवं बुद्धं सर्वत्रापि च कर्मम् सु॥कुशयन्थीषु बिम्बेषु शारुयामशिरास्त वा। अर्चयेद्र-न्यपुष्णाद्यैः पागुदक्षप्रवर्णन च॥ पृथक् पृथक् च नेवेदं वि

र इहारीत संहितायाम्। २८८ विधं वै समर्पयेत्। मोदकान् पृथुकान् सकून्पूपान् पायसा स्तथा।। हविष्यमन्न मुद्रान्नं मण्डकान् मधुसंयुतान्। दध्य न्नञ्च गुडान्नञ्च भक्त्या तेभ्यो निवेदयेत्॥ कर्प्रसंयुतं दिव्यं ताम्बूलव्य निवेदयेत्। इमा विश्वेतिसूक्तेन् देघानी-राजनं तथा ॥ सहस्रनामिषः स्तुत्वा भक्तया च प्रणमेहुधः। इ ध्माधानादि पर्ध्यन्तं इत्वा होम समाचरेत् ॥ सवस्तु वैषावैः स्केहृत्वा पूर्व्यस्तं हविः। पञ्चमं मण्डरं पश्चास्तरम् जह-याद्दिजः॥ इमान्तु वेभवीमिष्टं क्रुयीहिष्णुपरायणः। अह त्वा वैभवीमन्तं योऽध्यापयति देशिकः ॥ रीरवं नरकं याति यावदाभूतसंप्रुवम्। होमं विना सश्द्राणां कुर्यात् सर्वमशेष तः ॥ मन्त्रेवि-जुहुयादाज्यं तत्तन्मूति प्रकाशकेः । पूज्यत्वा द्विजवरान् पश्चान्मन्तं मदापयेत् ॥ अशक्तो यस्तु वेदेन क तुमिष्टि द्विजोत्तमः । तत्तनमूर्तिमये मन्त्रेः पृथगश्चारं शतम् ॥ हत्वा चर् घृतयुत् सम्योगिष्याः फलं उभेत्। वैष्णवला च्युतस्यापि कार्यदिष्मित्तमाम् ॥ अह्रियं वैष्णवान् स्वस पितृनिष् च वैष्णवः । यः कुच्यदिष्णवीमिष् भक्तया पर्वया युनः ।। वैष्णवत्वं कुरं संवी उभेन सुन संशयः । अतऊ वी पव स्यामि आननीमधनाशनीम्। पीण्णीमास्यां पकुर्वात पू व्यक्तिविधिना नृप !। आदानं पूर्ववत् हत्वा अङ्कुरार्पण पूर्वकम् ॥ उपोध्याभ्यचिथ्देवमनन्तं पुरुषोत्तमम् । सहस्त्रशी षं विश्वेशं सहस्रकर्लीचनम्॥ सहस्रचरणं श्रीशं सदेश श्रितवत्सरम् । पौरुषेण विधानेन पूजयेत् पुरुषोत्तमम्। गन्धपुष्पेश्च धूपेश्च दीपेश्चापि निवेदनैः। पूजियत्वा जगन्ना थं पश्चादावरणं यजेत् ॥ पार्श्वयोश्च श्रियं भूमि नीलाज्व श्वभलोचनाम्। हिरण्यवणा इरिणी जातवेदो हिरण्यया॥

नन्द्रा सूर्य्या च दुर्धपा गन्धद्वारा महेश्वरी। नित्यपुष्पा सहस्रा क्षी महालेक्सीः सनातनी ॥पूजनीया समस्ताश्य गन्धपुष्पांक्ष तादिभिः। संकर्षणस्तथाननः शेषो भूधर एव न ॥ उद्मणो नागराजश्च बल्भद्रौ इलायुधः । तच्छ्क्यः पूजनीयाः पागादि षुयधाकमम् ॥ रेवती वारुणी कान्तिरैश्वय्यी च इळा नथा । भ द्रा क्तमङ्गला गीरी शक्तयः परिकीर्तिताः॥ अस्यान् लोकेश्व रोन् पूज्य पश्चादोमं समाचरेत्। पश्चान्त मण्डलं षष्ठे पत्युचं जुहुयाच्रम्॥ पुष्पाणिच न्था दत्त्वा कुर्याद्वभृथादिकम्। अंशकश्रेनुस्केन शतमष्टोत्तरं चुरुम्॥ इक्षेवेध्याः फलं सम्यगामीत्येव न संशयः । आनन्तीयामिमामिष्टिं वैकुण्डप रमाभुयान्। न दास्यमीशस्य भवेद्यस्य दास्यं नृणामुस-त्। त्र क्योदिमामिषिं दास्येकफलसिद्यं ॥ अधुना चैन-त्रेपेष्टिं वस्यामि नृप्सत्तम!। पञ्चम्यां भाजवारे वा कस्मिं भिन्छुभूगासरे ॥उपोष्य पूर्ववत्सर्वे कुट्यदिभ्युदयादिकम्। बालांचीयुला देवेशं गन्धपुष्पास्तादिभिः॥ उद्या सह समासीनं वैकुण्डमवने शुभै। सर्वमन्त्रमये दिव्ये वाङन्ये परमासने॥ मन्त्रस्वरे रक्षरेश्व साङ्गेविदेः समन्विने। तारेण मह सावित्र्या संस्तीणे श्वभवश्चिसि॥ इश्वर्या च समासीनं सहस्रार्कसमद्युतिम्। चतुर्भुजमुदाराङ्गे कन्दर्पशत्सन्तिभ म्। युगानं पद्मपत्राक्षं चक्रशङ्खग्दां क्रिन्म् ॥ वैष्णाच्या वैप गायत्र्या पूज्येहरिमज्ययम्। भियं देवीं नित्यपुषां सः भगाञ्च स्रूक्षणाम् ॥ ऐरावतीं वेदवृतीं सुकेशीव्य समङ्ग-लाम्। अर्चयेत्परितो देवीः सस्त्पा नित्ययोवनाः ॥ तृतः सम र्वयेत्राक्ष्यं गरुडं विन्तासत्म्। स्रपणंत्र्य चतुर्दिस्तु विदि एशक्तयसाथा ॥ श्रुतिसमृतीतिहासाश्च पुराणानीति शक्तयः

रुद्ध हारी त्संहिताया म्। 260 अ्खादीनीश्वरान् पश्चाद्चियेत् कुसमाक्षतेः॥धूपंदीपञ्च नैवेदां ताम्बूळञ्च समप्येत्। अयं हि तेच अधीति द्वानी राज्नं शुभम्॥ पदिक्षणं नमस्कारं कत्वा होमं सुमाचरेत्। विशिष्ठेन व संदर्ध सप्तमं मण्डलं धुनेत्॥ पुष्पाणि च ततो द त्त्वा कुर्याद्वभृथादिकम्। रद्यानादिभङ्गे च वाहनध्यंसने त था। अवैदिकिकियाजुषे क्योदिषिमिमी शुभाम्। अरिष्टे चोपपातेषु शान्त्यर्थमपि वा यजेत्॥ इध्यान्या पूजितेशे रो ग्सपीमितिः शमेत्। वैन्तेयसमी भूत्वा भवेद्नुव्रोहरेः॥ वैष्वक्सेन्। ततो वक्ष्ये सर्वपापप्रणाशिनीम्। उपाष्येकाद्शीं शुद्धां पूर्विवत् पूजयेद्धरिम् ॥ निह्यणोरितिमन्नाभयासुपचारैः समर्चयेत्। विष्वेक्सेनव्यं सेनेशं सेनान् पञ्च चमूपतिम् ॥ अर्चिया चतुरिक्षु शक्तयश्व विदिक्षु च। त्रयीं सूत्रवतीं सी म्यां सावित्रीं चार्चिद्दिजः॥ अस्त्रान् दीपांत्र्यसम्पूज्य होमं पन्नात् समाचरेत्। कृत्वेध्मानादिपर्यन्तमष्टमं मण्डले यजेत् ।।पायसेनाथ पुष्पाणि दद्यात् प्रयतमानसः। अन्ते चावभू-थेष्टिञ्च मसून्यजनं तथा ॥ बाह्मणान् भोन्येच्छत्तया राष णाभिश्व तोष्येत्। अशक्तो यस्त वेदेन कर्तिमिष्टिञ्च वैष्ण-वः॥ तिह्णोरिति मन्त्राभ्यां सहस्रं जुहुयाचरुम्। हूला प षाञ्ज्विज्ञापि सम्यगिष्टिं छभेन्नरः ॥ वैध्वक्सेनी मिमां हु त्वा विष्युक्सेनसमो भवेत्। यसूत्धनधान्याद्यमैन्वर्यन व विन्दित ॥ यक्षराक्षसभूतानां तामसानां दिवीकसाम्।अ भयर्चने तद्दोषस्य विशुद्धार्थिमदं यजेत् ॥ सीद्रिनीं प्रवस्या मि सर्वपापपणाशिनीम् । व्यतीपाते वेधती वा स्मुपोव्यान येद्धरिम्। अखण्डबिल्बपनेजी कोमले स्तुलसीदलेः। अर्व-यिन्वा हवीकेशं गन्धपुष्पाक्षतादिभिः॥ पश्चात्समचैनीरा

स्युः श्रीभूनीलादिमातरः। सत्दर्शनं सहस्रारं पविश्रं ब्रह्मणः पतिम् ॥ सहस्रार्के शतोद्यामं ठोकदारं हिरणमयम् । अभयर्चयेत् कमादिक्ष तथा शक्तीः समर्चयेत् ॥ अनिष्धंसिनी माया ठज्जा पुष्टिः सरस्वती । प्रकृतीर्जगदाधारा कामधुक् काष्ठशक्तिका ॥ तया तामीव लोकेशाः पूज्या दिस्तु यथाक्रमात्। अभयुर्च्य गन्ध पुषाधेनेविद्येविविधेरपि॥अर्वेदोक्स्य स्केन ततो नीरा-जनं हरेः। नवमं मण्डलं पश्चा होतव्यं चरुणो नृप ।।। आज्येन वा तिलेविपि बिल्वेवीपि सरोरुहेः । हत्त्वा पुष्पाञ्जलि दत्त्वा कृ यदिवभ्रादिक्ष ॥ बाह्मणान् भोजयेत्यश्वाद् गुरुत्वापि समर्च येत। उदास वैष्णवीं कन्यां याचित्वा वैष्णवीं तथा ॥ इत्वा वा वैष्णवेनैव तथैवादित्यभूज्यि । अन्यसिङ्गध्नी चापि कुर्या दिषिमिमां दिजः ॥सीदर्शनेन मन्तेण सहस्रं जुहुयाचरुम्। पु णाणि दत्वा साइसं सम्यगिष्याः फुछं उभेत् ॥ अय भागव-तीमिष्टिं प्रवस्यामि नृपोत्तम ।। उपोष्येकादशीं शुन्हां हाद्श्यां पूर्ववहरिम् ॥ अर्चिया विधानेन गन्धपुष्पासतादिभिः। पौ रुषेण तु स्केन श्रीमद्शाक्षरेण वा ॥ अर्चयेज्नगतामीशं स विवरणसंयुत्रम् । ततो भागवतान् सव्यान् अर्चयेत्परितो हिनः ॥ पुषीर्चा नुस्सीपनैः सिछि रक्षतेरपि । यहादं नारद नीय पण्डरीकं विभीषणम् ॥ रुक्माङ्गदं तत्सुतच्च हनूमन्तं शि मं भगुम्। विशिष्ठं वामदेवञ्च व्यासं शीनकमेव च ॥ मार्कण्डे यं नाम्बरीष् द्तानेयं पराशारम्। रुक्मदाख्पयो कश्यपञ्च हारीतव्याभिमेव च ॥ भरदाजं बिंह भीष्मं उद्याकूर्पुष्करा-न्। गुहं स्तञ्च वाल्मीकं स्वायम्भुवमनुं ध्रवम्॥ वैणञ्च रो मशञ्चीय मात्गं श बरीं तथा। सन्दनञ्च सनकं विधनञ्च-सनातनम्॥ वोदुं पञ्चिशिखञ्चीव गजेन्द्रञ्च जटायुषम् । सुशी-

लं निजरां गीरीं शुभां सन्ध्याव्हिं तथा ॥ अनसूयां द्रीपदीच य्यादां देवकीं नथा। सभद्राञ्चीव गोपीश्व श्रुभा नन्द्रज्ञे-स्थिताः ॥ नन्दंच वस्तदेवच्च दिलीपं दशर्थं तथा । कीशल्या-ञ्चेष ज्नक्कन्यामाप् च बैष्णवान् ॥ अर्चयेद्रन्धपुष्णाद्येधूपे दीपनिवेदनेः। नाम्बुलेर्भस्यभोज्येश्व दीपेनीराजनेरपि॥ अहं भुवेनि स्कैन द्दान्नीराजनं हरेः। पञ्जादोमं पकुलीत अ ग्नाधानादिपूर्ववन् ॥ दशमं मण्डलं सर्वे प्रत्युचं जुहुयाद्दिः निलमिश्रेण साज्येन बरुणा गोधनेन वा ॥ स्वैत्रि वैषावैः सु कैश्रनुभिश्वाशीतरं श्तम्। नामभिश्व चनुर्ध्यन्ते स्तान् सर्वान् वैष्णवान् यजेत् ॥ पुष्पेरिस्वा चावभृथं पस्नेष्टिञ्च कारयेन्। ही मं कर्त्तमशक्त्रेदेदेन नृपनन्दन !॥ चनुर्भिवैष्णविमन्तिः माइ-स्रं वा पृथक् पृथक्। इमा भागवनी मिष्टिं यः कुयि है ज्या वीतमः ॥ अनन्तग्रेडादीनामयमन्यतमो भवेत्। पावमानैयदा ऋ गिरिज्यते मधुसूदनः ॥ तन्वावमानी मुनिभिः पोच्यते मधु सदनः। यदातु द्वादशी शुक्का भृगुवासरसंयुता॥ तस्याम् व पकुर्वात पासीमिष्टिं हिजोत्तमः। महाप्रीतिकरं विण्णीः सद्योमुक्तियदायक्ष ॥ तस्यां कृतायामिष्यां तु उक्ष्मीभन्तीज नार्दनः। पत्यक्षो हि भवेत्तत्र सर्वकामफलपदः॥ श्रीधरं पूज येत्र तन्मन्तेणीय वैष्णवः। सुवर्णमण्डपे दिव्ये नानास्त्रम दीपिते ॥ उदयादित्यसङ्गशे हिरण्ये पङ्कां श्रमे । लक्ष्या स इसमासीनं कोटिशीतांशुसनिभम्॥ चक्रेशइरवगदापद्मपा णिनं श्रीधरं विभुम्। पीताम्ब्रधरं विष्णुं वनमालाविराजित म्।। अर्चयेज्ञगतामीशं सर्वाभरणभूषितम्। पद्मां पद्मालया सम्भी कमसं पद्मसम्भागम्॥ पद्ममाल्यां पद्महस्तां पद्मना-भी सनाननीम्। प्रागादिषु नथा दिक्षु पूजयेत् कुसुमादिभिः॥

अस्मादीनी खरान पूज्य नमसुर्ज्यात भक्तितः। ततो नीराजनं दला श्रीस्तेन नु वैष्णवः ॥ पुरतो जुहुयादग्नी पायसं धतमि श्रितम्। तन्मन्नेणीव साहस्रं स्ताप्यां सरुदेव हि ॥ हुत्वा म न्नेण साहस्रं दचान् पुष्पाणि शाङ्गिणे । वैष्णवं वि्ममिथुनं पू जयेद्रोजयंत्रया ॥ इमां पाद्मी श्वनामिष्टिं यः कुयदिष्णवीत्तमः य्मूत्धनधान्याद्यो महाश्रियमवाभुयात्॥ सर्वान् कामानवा मोति विष्णुलोकं स गच्छति । लक्ष्यायुक्तो जगनाथः मत्यक्षः समभूद्धरिः ॥ददाति सक्छान् कामानिह् छोके प्रत्र च। पुण्यैः पवित्र देवत्येरिज्यते यत्र केशवः ॥ तां पवित्रेष्ट्रिमित्याहुः सर्व-पापमणाशिनीम्। यत्ते पित्नमित्यादि क्रिभियेत्र यजेद्दिजः॥ मायाश्वितार्थे सहसा शान्त्यर्थेवा समाचरेत्। एवं विधानिमिधी नां सम्यगुक्तं, महर्षिभिः॥ वैदिकेनैव विधिना यथाशक्तया स माचरेत्। अवैदिकिकियाजुषं प्रयत्नेन विवर्जयेत् ॥ सीराच्यी शोषपयङ्गे बुध्यमाने सनातने । अत्रोत्सवं पकुर्वीत् पञ्चरात्रं निरन्तरम् ॥ नदास्य पुष्करिण्या वा तीरे रम्यतले शुची । मण्डपं नम कुर्वीत बनुभिस्तोरणेयुतम् ॥ विनानपुष्पमारादि प्ता-काध्यनशोभितम्। अङ्कुरापणपूर्वेण यज्ञवेदिव्य कल्पयेत्॥ भ्रित्गिभः सार्द्भाचार्या दीक्षितो मङ्गलस्वनैः। रथमारोप्य देवेशं छत्रचामरसंयुतम् ॥ प्रुन्वेशाकुनान् मन्तान् यज्ञशाः लां प्रवेशयेत्। स्वस्तिवाचनपूर्वेण कुर्यात्कीतुकवन्धनम् ॥ पूर्णकुमान् शस्ययुतान् पारिकाः परितः क्षिपेत्। अभ्यर्च गन्धपुष्पाद्यैः पश्चादावरेणं यजेत् ॥ वास्तदेवम्ननेन्त्रः सत्यं य शं तथाच्युतम्। महेन्द्रं श्रीपतिं विस्वं पूर्णकुष्मेषु प्रचयेत्॥पा लिकाः सर्दिगीशांश्य दीपिकास्वय हेनयेः। तोरणाषु न चण्डा याः पूजनीया यथाकमम् ॥ वेद्याश्व दक्षिणे भागे कुण्डं कुयी

सरुसणम्। निक्षिप्यानि विधानेन इध्माधानान्तमाचरेत्॥ आचायीपासनाग्नी वा लीकिके वा नृपोत्तम !। आधानं पूर्वव न् कृत्वा पश्चात्करमी समाचरेन्॥ पातः स्नात्वा विधानेन पूज यिता सनातन्म । प्रत्युनं पावमानी भिर्जुह्यात्पायसं शुभूम्॥ वैष्णवेरनुवाकेश्व मन्तेः शक्तया पृथ्क पृथक्। चतुर्भिव्यपि-कैश्वान्येः मत्येकं जुहुयाद् एतम् ॥ वैकुण्ठं पार्षदं हुत्वा होमशे षं समाचरेत्। ताभिरवचं पुष्पाणि दद्याच ज्यताम्पतेः॥ उ द्रोधियत्वा शयने देवदेवं जनार्दनं । पश्चात् सवीमिदं कुर्यादुत्स गर्थे हिजोत्तमः॥ अथ नावं सुविस्तीणीं कृत्वा तस्मिन् जले अ भे। पुष्पमण्डपिक्कादि समास्तीणीसम्निताम् ॥सत्तोरण्यि नानांख्यां पनाकाध्वजशोभिनाम्। निसान् कन्कपर्यद्वे निवेश्य कमलापतिम् ॥ अर्चियत्वा विधानेन सहस्या साई सनातनम् । पुष्पाञ्जिरिशतं तत्र मन्तरलेन कारयेत् ॥ श्रीपीरुषाप्यां सूका भ्यां दद्यात्पुष्पाञ्जार्हे नतः। परितः शक्तयः पूज्या स्तुथावरणेरे वताः ॥ दीपेनीराजनं कत्वा बिंदिद्यात् सम्नतः । नीपिः सम् न्ताइहिभ गीतवादित्रसंयुतम् ॥ दीपिकाभिरनेकाभिः स्तोत्री रपि मनोरमेः। प्रावयन्तो जगनाथं तत्र तत्र जलाशये। फरी-भृद्येश्व ताम्बूटीः कलशेद्धिमिश्रितेः। कुङ्कुमेः कुस्मेलीि-विकिरन्तः परस्परम्॥ गानैवेदिः पुराणीश्व सेवेत निशि केशव म्। ऋतिजो बारुणान् सूक्तान् जपेयुस्तव भक्तितः॥ जपेच भगवनान्लान् शान्तिपाठव्यरेत्तथा। एवं संसेव्य बहुधा रात्रा वस्मिन् जलाशये।। मद्वनेति स्केन यत्रशालां प्वेशयेत्।तः तत्र नीराजन् दिजः॥स्नात्वा पूर्ववेदभयंच्यी इत्वा पुष्पाञ्जिति त था। आशिषोवाचनं कत्वा भोजयेद्वाह्मणान् शुपान्॥शाय-

यिलाथ देवेश भुञ्जीयाद्याग्यतः स्वयम्। एवं प्रतिदिनं कुर्यादु सावं पञ्चवासरम् ॥ अन्ते चावभृथेषिं च पुष्पयागञ्च कारयेत् आचार्य मृत्विजो विपान् पूजयेद्दिणादिभिः ॥ एवं क्षीराब्धिय जनं पराबं कार्येन्य ।। स्वसम्यगर्थरध्यर्थं भीगायकम्का-पतेः ॥ इस्त्रर्थेमपि राष्ट्रस्य शत्रूणां नाशनाय च । सर्व्य धर्मिवि रुसर्थं क्षीराध्ययजनं चरेत्। तत्र दुर्पिक्षरोगाग्निपापबाधा न सनि हि॥ गावः पूर्णदुघा नित्यं बहुउस्य फलाधरा। पुष्पिताः फिरता रक्षा नायों भर्तृपरायणाः॥ आयुष्मन्तस्य शिदावो जा यते भक्तिरच्युते।यः क्रोति विधानेन यजनं जलभायिनः॥ऋ तुकोटिफ उं तम पामोत्येव न संशयः। यस्ति दं शृण्यानित्यं धीराब्धियुन्नं हरेः॥सर्वान् कामानवामोति विष्णुकोकन्त्र वि न्द्रि। पुष्पिते तु रसाछे तु नत्राप्युत्सवमात्मनः ॥ त्रिवासरं पकु र्वीत दोलानाम महोत्सवम्। उपोषितः संयतात्मा दीक्षितो मा-धवं हरिम्।। उछत्रचामरवादिवैः पताकैः शिविकां शुप्ताम्। आ रोप्यालङ्कतं विष्णुं स्वयञ्च समलङ्कतः॥ हरिद्रां विकिरनो वै गायन्तः परमेश्वरम्। गच्छेयुरादुमं प्रातनिरनारीजनः सह॥ नत्राम्बरक्ष-छायायां नवेद्यम्यू जयेद्धरिम्। चूतपुषीः सगन्धी भिर्माधनीभिश्व यूथिकैः॥ मरीनिमिश्वं दध्यन्नं मोदकञ्च सम् पैयेत्। शब्कुल्यादीनि मध्याणि पानकञ्च निवेदयेत् ॥ संकर्पर श्र ताम्बूलं पूगीफलसमन्वितम्। सर्वमावरणं पूज्यं होमं पश्चा स्माचरेत्। कृत्वेधानादिपर्यन्तं विष्णुस्ते भेवरं यजेत्। मा धवेनैव मनुना शर्करासंयुतान् तिळान्।। सहस्रं जुहुया दक्षी भक्तया वैष्णवसत्तमः। वैकुण्ठं पार्षदं हुत्वा होमशेष समाप्ये त्॥ पत्युचं पावमानीभिर्देद्यात् पुष्पाञ्जेि हरेः। अथ दोलां भुभाकारां बद्धास्मिन् समलङ्कताम् ॥ वज्नवेडूर्यमाणिक्यमु-

वृद्धारीत संहितायाम्। २९६ क्ताविद्रमभूषिनाम्। तस्यां निवेश्य देवेशां उद्मया साई पपून-येत्॥ गन्धैः पुष्पेधूपदीपेः फर्छे मध्ये निवेदनेः। कुस्तमासेत् द्वीय तिलसापिमधूदकम् ॥ सर्पपाणि च निक्षिप्य अषाङ्गर्धं निवेदयेत्। पादेषु चतुरो वेदान् मन्ताण्योक्तेषु चास्तरे॥नाग्रा जञ्च दोलायां पीटे सर्वस्वरेरपि। व्यजनेविनतेयब्ब सावित्रीं-नामरे तथा। दिनिशामनीयेदिसु ऊर्ध्व ब्रह्म बहुस्पती । अध स्ताचण्डिकां रुद्रं क्षेत्रपाछिनायको ॥ विताने चन्द्रसूर्यीचन क्षत्राणि यहांस्तथा । वेदाश्च सेतिहासाश्च पुराणं देवता गणाः॥ भूधराः सागराः सर्वे पूजनीयाः समन्ततः। एवं सम्पूज्य दोहा-यां उक्त्या सह जनाद्नम् ॥ दोलयेच तृतो दोढां चतुर्वेदैश्यतु दिनम्। सूक्तेश्च ब्रह्मणोऽपत्यैः सामगानैः प्रबन्धकैः॥ नाम्भिः कीर्नयन् देवमेव मन्दं पदोलयेत्। श्वियः स्वलङ्कताः सर्वाग यन्त्यो विभुमच्युतम्।। चरितं रघुनाथस्य कृष्णस्य चरितं नषा। दोलयेयुर्मुदा भक्तया दोलायां परमेश्वरम् ॥ दोलायादर्शनं विष्णे महापातकनादानम्। भक्तित्रसादनं नृणां जन्ममृत्युनिहन्तनम्॥ देवाः सर्वे विमानस्था दोलायामचितं हरिम्। दर्शयन्ति तृतः पु ण्यं दोडानामोत्सवं हरेः॥ भक्तया नीराजनं दद्यात् श्रीसूक्तेनेव वेष्णवः। ब्राह्मणान् भोनयेसम्बाद्धिणाभिश्व तोष्येत्॥एवं त्रिवास्रं कुर्यादुत्सवं वैष्णवोत्तमः। पद्मामेवं कुर्वीत तत्तता ले तु वैष्णवः ॥ श्रीतेनैव च मार्गण जपहोमपुरः सरम्। उत्सव ग्सुदेवस्य यथाशात्त्या समाचरेत् ॥ यत्र यत्रोत्सवं विष्णोः क न्मिच्छिति वैष्णवः। होमं कुर्यात्त्रं मन्से स्तथाविष्णुप्रकाश कैः।। अतो देवेति सूक्तेन तथा विष्णोर्नुकेन च। परोमानेति सू काभ्यां पीरुषेण च वैष्णवः॥ नारायणानुवाकेन श्रीस्केनापि वै ष्णवः। प्रत्यृचं जुहुयाद्वद्धी चरुणा पायसेन वा ॥ चतुर्भि वेष्णावे

र्मन्तेः पृथगष्ट्रोत्तरं शतम्। आज्यहोमं प्रकृत्वित गायव्या विष्णुसंज्ञया,॥ वेकुपूरुपाष्ट्रं हत्वा शेषं पूर्व्ववदानरेत्। अना-दिष्यु सर्वेषु क्यदिवं विधानतः ॥ बाह्मणान् भोजयेदियान सर्व संपूर्णतां वजेत् । अथ वा मन्त्ररतेन सहस्रं प्रतिवा सरम् ॥ हत्वा पुष्पाणि दत्तान शेषं पूर्ववदानरेत् । होमं वि ना न कत्त्व्य मुत्सवं परमात्मनः ॥ जपहोम्बिहीनन्तु न गृह्णा ति जनार्दनः । तस्माच्छ्रोतं प्रवस्यामि विष्णाराराधनं नृप ॥ अन्तयुक्कृष्णपक्षे तु सम्यगभ्युदिते खों । आद्शीत् सप्तरा-त्रन्तु पूजेरेत्यभुमय्ययम् ॥ स्मात्वां नद्यां विधानेन कृत्कत्यः समाहितः । गृहीता जलकुमान्तु वारुणान् प्रवरान् बज़ेत्॥प व्यतक्षवान् पुष्पाण्याभिमन्त्यं विनिक्षिपेत्। स्रीर्भयीं त था मुद्रां दर्शियत्वा च पूजयेन् ॥ विवारं वैष्णविमन्तेः शङ्खेनेवाभिषेचयेत्। पूजयित्वा विधानेन गन्धपुष्णाक्षतादि-भिः॥अपूरान् पायसं सक्त्न् कृसरञ्च निवेद्येत् । मन्तेर ष्ट्रोत्तरशतं दत्त्वा पुष्पाणि चिक्रिणः॥ पश्चाद्दोमं पकुवित सा ज्येन चरुणा ततः । कस्य वा नितिस्केन वृष्णावेरिप वृष्णावः॥ हुला तु मन्त्ररलेन घृतमधोत्तर् शतम्। बैकुण्ठं पार्षदं हुला वैषावान् भोजयेत्ततः ॥ सरुद्रोजनसंयुक्तः क्षितिशाया भ वैनिशि। सायाद्गेऽपि समभ्यच्ये जातिपुष्येः सुगन्धिभिः ॥ बहुभिदीपदण्डैश्च सेवेरन् पुरवासिनः। एवं महोत्सवं हता धनधान्ययुतो भवेत् ॥ तृत्तत्कालोचितं विष्णोरुत्सवं परमा सनः। द्रयद्दीनोऽपि कुर्जीत् पत्रपुषीः फलादिभिः ॥ समिद्रि बिल्वपत्रीर्जी होमं कुर्जीत वेष्णवः। सन्तपयेच विषांस्तु की मलेस्तुलसीदलेः ॥ भक्तया वे देवदेवेशः परितृषो भवेद्भावम् आस्तिक्यः शद्धानश्च वियुक्तमदमत्सरः॥ पूजयित्वा जग- चृद्धारीतसंहितायाम्।

365

न्नायं याबजीवमतन्द्रितः । इह फत्का मनीरम्यान् भोगान् स व्यनि यथेप्सितान्॥ सरवेन देहमुत्सृज्य जीर्णत्वच मिवोरगः स्यू उस्हमा सिकाञ्चेमां विहाय मह तिन्द्रतम् ॥ सारूपमीम रस्याश्व गता तु स्वजनैः सह। दिव्यं विमानमारुद्ध वैकुण्ठं नाम भास्करम्॥ दिव्याप्सरोगणेर्युको दिव्यभूषणभूषितः। स्तूय मानः सरेगणेगियमानश्च किन्नरेः ॥ ब्रह्मछोकेमितिक्रम्यग त्वा श्रह्माण्डमण्डपम् । विष्णुचकेण वे भित्वा सर्वानावरणा न् घनान्॥ अतीत्य वारजामाशु स्विवेदस्रवां नदीम्। अशु द्रञ्छद्भिरव्ययेः पूज्यमानः सुरोत्तमेः॥ सम्प्राप्य परमं धाम योगिगम्यं सनातेनम् । यद्रत्वा न निवर्तन्ते तदाम परमंहरेः तिह्याोः प्रमं धाम सुदा पश्यन्ति योगिनः । शतिाशुकोटिस इन्त्रीः सवैश्व भवनेर्युतम् ॥ आरुद्ध्योवनेदियीः पूंपिः स्विषि र्श्वे सङ्कुलम्। सर्वेलक्षणसम्पन्ने दिच्यभूषणभूषितेः ॥ अस रं परमं व्योम यस्मिन्देवा अधिष्ठिताः । इरोवती धैनुमती व्य क्तमास्यवासिना । युत्र गावी भूरिशुद्भाः सायोध्या देवपू-जिता। अनन्तच्यह्छोकेश्व तया तुल्यसुभावहैः॥ सर्ववेदम् यं तत्र मण्डपं सुमेनोहरम्। सहस्त्रस्थूणसदसि ध्रुवे रम्यो त्तरे शुभे ॥ तस्मिन् मनोरमे पीठे धर्माद्येः स्रिभिईते। सहा सीनं कमलया दृखा देवं सन्।तनम् ॥ स्तुतिभिः पुष्कलाभि-श्च प्रणम्य च पुनः पुनः। प्रह्मपुरुको भूत्वा तेन चारिङ्गिनः कमात्॥ पूजितः सकरेभागः श्विया चापि प्रपूजितः। अन् न्तविहरोशा द्येरिचितः सर्वदेवतेः ॥ तेषामन्यतमो भूत्वा मो दते तन देववत्। एषु केषु च लोकेषु तिषते कमलापितः॥ नेषु नेष्वपि देवस्य नित्यदासी भवेत्सदा । दासवत्पुत्रवनस्य मि त्रवहन्धवन् सदा॥ अश्वते सकलान् कामान् सह तेन विपश्चि

ता। इमान् छोकान् कामभोगः कामरूप्यनुसञ्चरन् ॥सर्व-दा दूरविध्यस्त दुःरगवेश छवां शकः । गुणानुभवज्ञ शत्या कु यद्दिनमशेषतः ॥इममेव परं मोक्षं विदुः परमयोगिनः।का इक्षानि परमंदासा मुक्तमेकं महर्षयः ॥ हरेदिर्येक परमां भ किमालम्ब्य मानवः । इद्देव मुक्तो राजर्षे ! सर्वकर्मानिबन्ध नैः॥ ॥ इति हारीनस्मृतौ विशिष्ट परमधर्मिशास्त्रे नाना विधोत्सवविधानं नाम सप्तमोऽध्यायः॥

हारीत उवाच। अथ वस्यामि राजेन्द्र ! विष्णुपूज्यि धिं परम् ॥ श्रीतं महिष्तिः मोक्तं वाशिष्ठाद्येः पुरात्नेः । वेर्बा न्सेन भूगाधीः सनकाधीत्र योगिषिः ॥ वैष्णवैवेदिकेः पूर्वे पैद्यानिश्तं पुरा। तत्ते वस्यामि राजेन्द्र! महाभियतमं हरेः॥ श्राह्मे पुहर्त्ते उत्याय सम्यगानम्य वारिणा। ध्यात्वा हत्यङ्के विष्णुं पूज्येन्मन्सेव तु॥ तं प्रतेवेति स्रक्तेन वोधयेत्कम्या पितम्। वनस्पतिति सूक्तेन त्र्यघोषं निनादयेत् ॥ कुर्यास्य दक्षिणं विष्णोरतोदेवेत्यनेन तु । तद्दिष्णोरिति मन्त्राभ्या-न्तिः पणम्याचारेत्ततः ॥ कृतशीचस्त्रथाचान्तो दन्तधावनपूर्व कम्। सानं कुर्यादिधानेन धात्रीश्रीतुलसीयुतम्॥ नाराये णातुषाकेन कूला तत्राध्मष्णम्। कृतकत्यः श्रीनभृत्वा न्पिया न पूर्ववत् ॥ धृतोध्वीपुण्डु देहस्य पवित्रकर एवं न । प केन्यु मन्दिरं विष्णोः समार्जन्या विशोधयेत् ॥ वास्तोष्पते-नि वे स्कं जपन् संमार्जयेद्रहम्। आगाव इति स्केन गोम येनानुरुपयेत्। आनोभद्रति स्केन् रङ्गविद्ध्य निसिपेत् ॥ततः करुशमादाय जपन्येशाकुनोक्तवः। गला जरुश्यं रम्यं निर्मारं श्रुचि पाण्डुरम्॥ इमं मे गङ्गेति ऋचा जरुं भ-च्याभिमन्त्रयेत्। आपो अस्मानिति ऋचा करुशं क्षारुयेद्दिजः।

समुद्र ज्येष्ठमन्त्रण गृद्धीयात्ययतो जरुम् । उतस्मेनं वस्तुषि म्यविशेद्रहम् । धान्योपरि तथा कुम्भं न्यसे दक्षिणतो हरेः॥ इ मं मे वरणेत्युचा मङ्गलद्रव्यसंयुनम्। आञ्जनि मित्रत्वेतिस् केन कुर्यात्युष्यस्य सञ्चयम् ॥ अर्वाञ्चि समगे द्वाप्यां ग न्धांश्व पेषयेत्तथा। वाग्यतः प्रयतो भूत्वा श्रीसूक्तेनेव वैष्णवः विश्वानिन इति ऋचा दीपं दद्यात्सुदीपितम् ॥ तचरात्रेषु स-हिलं दत्ता गन्धांस्तु निक्षिपेत् । शन्तोदेव्या न सहिलं गायव्या च कुशांस्तथा ॥ आयुनेति च पुष्पाणि युनेऽसीति ऋचाऽक्ष-तान्। गन्धद्दारेति वै गन्धान् औषध्या तिलसर्पपान् ॥ का-ण्डात्काण्डेति दूर्वायान् सहिरण्येति रह्मकुम् । हिरण्यस्पति ऋना हिरण्यं निक्षिपेत्तथा। एवं द्याणि निक्षिप्य सुरु-स्या न् समर्पयेत्। सवितुश्वेत्यादि ऋना द्यादघ्येद्रिंह रेः ॥ श्रियेति पादेति ऋचा दद्यात् पादज् तथा । भद्रने ह स्तेत्यूनेन हस्तप्रक्षाउनं चरेत्॥ वयः सप्पेति ऋचा मुखस म्मार्जनं तथा। आपी अस्मानिति ऋना वऋगण्ड्षमेव न ॥ हिरण्यदन्तेत्यनेन दन्तकाषुं निवेदयेत्। बहस्पते भथमेति नि द्धालेखनमेच च ॥ आपयित्वा उभेषजेरिति गण्ड्षमाचरेत्। आपोहिषा इत्यनेन कुय्यदि। चमनीयकम्।। सूधीमव इत्यने न तैलाभ्यद्गं समाचरेत्। मूर्धानन्दीच इत्यनेन् गन्धान् के शेषु छेपयेत्॥ त्रियस्तस्थीं केशवन्ते केशान् वे क्षाउयेत्य नः। श्रिये पृत्रति कर्चा तद्दचिद्वर्तनादिकम्॥ आपोय्स्दू प्रथमिति स्केनाभ्यक् सूचनम्। कृतादः स्मापयेत्स्के वै ष्णवेगन्धवारिणा॥ ततः प्रज्यामृतेगव्येः स्मापयेत्तस्रक्राश्के आप्यायसंत्युचा क्षीरं द्धिकार्योति वे द्धि॥ इतिमिमिहोति

इतं मधुवानेति वे मधु। तन्तेवयं यथा गोभिरित्यूचेक्षुरसं का भम्॥ एभिः पञ्चामृतैः साप्य चन्दनञ्च निवेदयेत् । श्रीस्त पुरुषसूका प्यां पुनः संस्थापये द्विम् ॥ वनस्पतिति सूकेन कु र्याद्वीपे समन्वितम्। श्रियेजात इति ऋचा द्यान्धीराजेनं त तः ॥ युवा सुवासति अरुवा वस्त्रेणाङ्गं भमार्जयेत् । भसेनाने-ति मन्त्रेण वस्यं सम्बेष्टयेत्ततः ॥ युवं वस्त्राणीति ऋचा उत्तरी यं तथेव च । सर्वत्राचमनं द्याच्छ्नो देवीत्यृचा च तु ॥ उप-वीतं तनो दचाद् ब्राह्मणानिति वे ऋचो । ऋतस्पत्न्त वित ते द्याकुशपवित्रक्षे। पत्रादाचमनं द्याद्भूषणे भूषिये दिएम्। विन्वजित्स्केन द्याद्भूषणानि शुभानि वै॥ हिर ण्यकेशीत अन्ता केशान् संशोषयेत्था। स्तपुषीः कवरीं द्या दिहिसोनेत्यनेन वे ॥ हपायमिन्द ने रथ इत्युचा निस्कं सुभ म्। गन्धञ्च लेपयेदात्रे गन्धदारेति वे अर्वा ॥ ञातारमिन्द इ त्युंचा पुष्पमालां समर्पयेन् । चक्कपः पितेति ऋचा चक्षुषो र-ज्जनं शुभम् ॥ सहस्रशीषेति ऋचा किश्टं शिरसि सिपेत्। अरक्सामाभ्याभिति श्रोत्रे कुण्डले मा क्रेडपीयेत्।। दमूनसी अपस् इति केयूरादि विभूषणम्। आश्वेते यस्येति ऋचा हाराणि विमहानि च। हस्ताभ्यां दशशाखाभ्या मित्यूचा चा ङ्गुडीयकम्। अस्य त्रिपूर्णमनुना सूर्व्याके विन्यसेच्छुभे॥ इन्द्रन्तदुत्तर इति कृटिस्त्र्त्रं सुरोविष्म्। स्वस्तिदाविशस्यित रित्यायुधानि सम्पूर्येत्॥ द्योनिय इन्द्रोति द्याच्छनं साविमसं तथा। सोमः प्वर्तनेत्युचा चामरं हैममुत्तम्म् ॥ सोमापूषणे ख़ुना तालचुन्ती स्वचिसी। रह्पं रूपमिति अरना दघादाद शुँके शुभुम् ॥ इन्द्रमेच धीषणेति ऋचा आसने विनिवेशयेत्। इहैंगार्लमेति ऋजां द्याच कुशविष्टरम् ॥ अपुरवन्तरिति ऋ

वृद्धारीत् संहितायाम्। 307 चा पाचं द्याच भक्तिनः। गौरीमिमाय स्केन् अर्घ्यं हस्ते नि वेदयेत्।। न तमं होनदुरितमित्याचमनं सम्पेयेत्। पिवासो-मिरियनेन मधुपर्क्त्र पाशयेत्॥ अपुरवर्ने सिष्वविति पुन राचमनं चरेत्। अचिन्तस्ताह् वाहैत्यक्षतेर्रच्येच्छुभैः॥ तृण्डुंबः सहरिद्रास्तु असता इति कीर्तिताः। विष्णोर्नुकमिति स्तेन-धूपं दद्याद्धृतान्वितम् ॥ भाषामिनेति स्केन दीपानीराजये च्छुभान्। इन्द्र ते पात्रमिति भाजनं विन्यसेच्छुभम्॥ तस्मा अरंडु-माममेति पान्यसालनं चरेत्। अस्मिन् पदे परमेत-च्छिवांसिमिति गवाज्येनाभिपूरयेत्। पितुं नुस्तोषिमिति सूक्तेन द्द्याद न्नाद्विकं इविः ॥ तदस्योनिकिमिति अनुचा सहिरण्यें घ तं तथा। तस्मिन् रायवतय इति दद्यादापो शने घृतम्॥ नतः प्राणाद्याहुत्यो होतच्याः परमात्मनि । अग्नेविवस्बदुषस इति पञ्चॅिभिश्व यथाकमम्॥ समुद्रा ऊमीति स्केन एत धाराः समानरेत्। प्रोमानति स्केन् भोजयेत्सिश्यं ह्रिम् ॥ तुभ्यं हिन्बान् इत्यनेन वयः सर्वे निवेदयेत्। इन्द्र पीवेत्य नेन दद्यादापोशनं पुनः॥ प्रत आश्विनि प्वमानेत्युचा हू स्तप्रक्षालनं चरेत्। सरस्वतीं देवयन्त इति तिस्तिरीण्डूषमे

व्या वृष्टिं दिवीशः तदारेति दाभ्यां दद्यादान्मनं ततः। शिखं जिज्ञाग्निनमिति ऋचा मुखहस्तो च मार्जयेत्॥ दक्षि-णावनामिति ऋचा दद्यात्ताम्बूलमुत्तमम्। स्वादुः पवस्वेति-अस्वा द्यादाचमन् पुनः। अयं गीरिति स्काभ्यां द्यात्

पुष्पाञ्जितिं ततः॥ दीपान्तीराजयेत्यस्वाद् घतस्तेन वैष्णवः यनइन्द्रेत्यादि षड्भिदिक्षु रक्षां भदापयेत्॥ यज्ञो देवाना-मिनिस्तेन उपस्थानजपं चरेत्। निद्ध्योरिति दाभ्या भण मंचेव भक्तिनः॥ गीरिमिमायेति ऋचा दद्यादाचमनन्ततः।

सहस्रनामिशः स्तुत्वा पृश्वाद्योमं समाचरेत् ॥ भातरीपासनं हुला तस्मिन्मनी जनादनम् । ध्याला संपूज्य जुहुयादेषावैः मैत्रुचं ह्विः॥ श्रीभस्काभ्यामपिच हत्वो ध्तसुतं ह्विः। याभिः सोमो मोदनेत्यनेन मानुभ्यां जुहुया द्विः ॥ किं सिद् निमत्यान्नन्तं जुहुयाद्वविः। सुपर्ण विभा इति ऋचा स्मपणी यमहात्मने ॥ चमूषु च्छेन इति च सेनेशायापि ह्यताम्। प विजन्त इति द्वापयोञ्चकायामित्तेजसे ॥ स्वाद्षं स इति क ना हेतिभ्यो जुहुयाद्धविः। उन्द्रश्रेष्ठानितीन्द्राय अग्निम्द्रिति पापक्षम्॥ यमाय सोमिति यगिन्नैर्यत व्योषुणित्युचा। यन्छि न्दिनेति वरुणं वायवामेति मारुतम्। द्रविणोदाददानुना द्र-विणाद्यारामेव च॥ त्यम्बकअर्चा रुद्रे आनः प्रजां प्रजापति म्। यज्ञेनेत्युचा साध्येभ्यो मरुतो यद्वेति च॥ येनः सपह्ये ति अस्वा वस्तरुद्रेपयुर्व च । विश्वेदेवाः सचतस्विभिये देवा स अर्वा तथा ॥ सर्वेभ्यश्रेव देवेभ्यो जुहुयादन्त्रम्तम्म्।ना सत्याभ्याम्ति अर्वा अश्विच्छन्दोभ्यएवच ॥ सोम्पूषेति ऋचा स्ट्याचन्द्रमसोस्तथा। संसमिद्युदस्केन वैष्ण्वेभ्य स्तथा पुनः ॥ ततः स्विष्टकृतं हुत्वा भुक्ते भ्यश्व बिहं क्षिपे-त्। नमो महत्व ऋचा बिंह कि विनिक्षिपेत्॥ आचम्य गरिणा पश्चानम्लयागं समाचरेत्। एतच्छीतं नूपश्चेष्ठ। मु निभिः सम्प्रकी तितम् ॥ सम्यगुक्तं भया तेउ च निश्चितं मतुमु नुमम्। एतत्मियतमं विष्णोः स्थियोनाथस्य सर्वदा ॥श्रीत नै्व हरिं देवमर्चयन्ति मनीषिणः। श्रोतस्मार्त्तागमेविष्णो -सिविधं पूजनं स्मृतम् ॥ एत् उड़ोनं तृतः स्मार्त्तं पीरूषेण स यत् स्मृतम् । मन्त्रेरष्टोक्षरां देस्तु निह्व्यागममुच्यते ॥ श्री नमेव विशिष्टं स्यात्तेषां नृपवरोत्तमः । श्रीतमेव तथा विशाः

च्द्रहारीत संहितायाम्। 308 मकुर्वन्ति जनार्दने ॥ यजन्ति केचित्त्रित्यन्तिसन्ध्यासु व दे शिकाः। यजन्ति केचित्रितयन्त्रयो वर्णा हिजोत्तमाः॥शुत्रूषा च तथा नामकीतेनं श्द्रजन्मनः। अपि वा परमेकान्ति बाले कृष्णवपुंहरिम्॥ स्त्रीणामप्यचेनीयः स्यात्स्ववणस्यानुस्त पतः। मन्तरलेन वे प्रज्यो हित्वा श्रीतं विधानतः ॥ एवम-भ्यर्च नं विष्णोर्मुनिषिः सम्प्रकीर्त्तितम्। श्रीतस्मार्नागमो-काश्व नित्यनेमितिकाः कियाः॥ प्रायश्वितमकृत्यानां दण्ड मप्याननायिनाम्। अधुना सम्प्रवध्यामि वृतिमेकानिस् णाम्।। नारीणामपि कर्तच्या महन्यहिन शांश्वतीम्। उत्भा य पश्चिमे यामे भृतुः पूर्वमनिद्रताः॥ इत्वा शीनं विधाने न दन्तधावनमाचरेत्। कृत्वाय मङ्गलसान् धत्वा शासाम् रं तथा॥ आचम्य धारयेद्ध्यिपण्डं शुक्तं मृदेव तु । चन्दने नापि कस्तूर्या कुड्-कुमेनापि वा सती॥ जस्वा मन्तं गुरुं पश्चादिभनन्दा च वैष्णावान्। नमस्कत्वा जगन्नाथं जस्वा च शरणागतिम् ॥ आत्मानं समछङ्कृत्य चिन्तयेनमधुसूद नम् । गृहभाण्डादिकं सर्व वाग्यता नियतेन्द्रिया ॥ संशा-धयेत्मतिदिनं यज्ञार्थं परमात्मनः। मार्जियित्वा गृहं पश्चा द् गोमयेनानु छिप्य च ॥ रङ्ग बल्यादिभिः पश्चादलङ् कृत्य समन्ततः। चतुर्विधानां भाण्डानां क्षालनन्तु समाचरेत्॥ पाचुकानि बहिषानि जलस्यानयनानि च। स्थापनानि ज-सार्थं वा चतुर्विध मुदाहतम्॥ पृथक् पृथगुद्ज्यानि तेषु ते प्विपि विन्यसेत्। नान्योन्यं सङ्गरं क्र्योद्राण्डानां सर्वकर्म सा। तानि नानि स्पृशेत्पाणि प्रक्षात्येव पुनः पुनः। सम्यक् मसाल्य भाण्डानि दाह्ये द्यति ये स्तृणेः ॥ पुनः मुसाल्य स नम्बा पश्चाटाचनमाचरेत्। रसमाण्डानि सर्वाणि सारुये-

दुष्णवारिणा ॥चतुर्भिः पञ्चभिध्यां साक्सुवी क्षार्येन दा। बहर्न निष्कामयीत पाचकानि गृहान्तिकात्। नाभिरेव न दद्यानु अञ्जतां हि कथञ्चन । दत्या पात्रान्तरे द्द्यात्कांस्ये गा मृणमयेऽपि गा॥ पुटे पणमये गापि द्यादत्रतु वैणवे। स्तु वं दारुमयं कांस्यं कुर्व्वीतायोमयं नतु ॥ न दद्यादारनारुस्य घरं तस्मिन् महावने । आरनालस्य यत् कुम्भन्त्यजेन्मध्य घरं यथा॥ आरंनाउडूनरशाकं करव्तं तिउपिष्टकम्। ठशुनं मूठ कं शियुं खत्रां को भातकी फलम्। अलावुज्यान्त्र शाकव्य के-रनिर्मिथितं दिध ॥ विम्वं विङ्जञ्च निर्यासं पीलुं श्लेष्मातकं पूरुम्। आरग्वधञ्च निर्शण्डी कारिङ्गन्नारिकां तथा ॥ना हिकेयरियशाकञ्च वेवेन इन्ताकमेव च । उष्ट्राविमानुषीसीर मबत्सानिर्दशाहगोः ॥ एतान्यकामतः स्युध्या सवासा ज्ल माविशेत्। मृत्या जग्ध्या व्रतं कुर्यान्मुजी जग्ध्या पतेद्धः॥ केशा नां रञ्जनार्थे वा न स्पृशेदारनाउकम्। चन्दनं घनसार वा म क्रन्दमथापि वा ॥ माष्मुद्रादिचूणी वा तकं जाम्बीरमेव वा । निनिद्वज्य कलायुं वा केशरज्जनमाचरेन् ॥ ऊर्ध्व मासात्य जेत्सर्व मुद्राण्डं वेष्णावोत्तमः। न त्यजेह्योहभाण्डानि नाप येच हुनाशने ॥ दारूणां सन्त्यजेहापि नहाणं वा समाचरेत्। अश्मनामश्मिभ्यात्वा गोवाले घूपियेत्तथा ॥ स्त्तके मृतके गापि शुनादिस्पर्शने तथा। स्पर्शने वाप्यभक्ष्याणां सद्य ए व परित्यनेत्। एवं संशोध्य भाण्डानि यज्ञार्थे वाचये द्विः ॥सम्मोक्ष्याद्भिः श्रुची देशे धान्यं संशोधयेद्भवि। अवह-न्याच्युभतरं गायान्तमधुसूदनम्॥ संशोध्य तण्डुलान् प श्रादिः संक्षालये शिषिः। अम्भात्यवारं वस्त्रेणं शोध-यित्वा घरान्तरे ॥ कुशेनेव पवित्रेण तण्डुरान् निर्वपेच्छुभा

वृद्धहारीतसंहिनायाम्। ३०६ न्। अन्तर्धाय कुषां तत्र मन्तरत् मनुस्मरन् ॥ पाचयेत्सपि त्रेण वाग्यतो नियतेन्द्रियः। उपविश्य शुप्ते कुण्डे विह्नं प्रज्ञा उयेत्ततः ॥ अवैष्णवस्य श्रद्धस्य पतितस्य त्थैव च । पाषण्ड स्याप्यश्रदस्य गृहेष्विनि विवर्जयेत्।।सम्बोध्य मन्तरहो-न विह्नं कुशानसिश्विभिः। यज्ञीयैर्विमसेः काष्ट्रेर्व्यजनेन पर दीपयेन्। सान्तधीनम्खेनापि धमयन्या पदीपयेत्।पारा शैरवादिरे बिल्वेगों शरू तिटकेरपि ॥ अन्येर्वा यज्ञीयेः का ष्ठेस्त्णेर्चा यज्ञीयेः शुभीः। वर्जयेनमद्दिर्धानि तथा वेभि नकीनि च , आर्ग्बधानि शीमूणि तथा नेगुण्डिकानि च। ने पानि च कपित्थानि कापिसैरण्डकानि च ॥ अमेध्यानि सकीरा नि दोर्गन्धानि तथेव च असद्दाहानि चैत्यानि काकखद्वास् नानि च॥ देवालयानि योप्यानि तथोपकरणानि च। महिषा पुरवरादीनां करीषपीठकानिच ॥ अन्यानां पाक्शेषाणि व जैये इज्ञकर्मीण। मदीप्याग्निं तनो नार्यं पच्यानियन्मान सः॥ विन्तयन् परमात्मानं जपनमत्रद्यं नथा। शुद्धं हद्यं तथा रुच्य पश्चाद्रम्यतरं शुभम्॥ निषिद्वानि च शाकानि फलमूलानि वर्ज्येत्। अतिरूक्षञ्चातिदुष्मितिरक्त्ञ्च वर्ज्ये त्। भावदुषं कियादुषं कालदुषं तथेव न। संसर्गदुष्मपि च वर्जये बज्ञकर्माणि ॥ रूप्तो गन्धतो वापि यचा मध्येः स मम्भवेत्। भावदुष्ट्यं यत्मोक्तं मुनिभिर्धर्मपारगैः॥आर्ग लच्च मद्यञ्च करनिम्मिथितं दिधे। हस्तद्त्तञ्च उव्णं क्षीरं ध्तपयांसि च ॥ हस्तेनो इत्य यनोयं पति वक्रण वे कदा। शब्देन पीत्ं भुक्तञ्च ग्यं नामेण संयुनम्॥ क्षीरञ्च छव-णोनियं कियादुष्मिहीच्यते। एकाद्श्यां नु य्चान यचा न्नं राहुद्धनि । सूनके मृतके चान्नं शुष्कं पर्धियतं तथा॥अ

भिर्दशाहगोसीरं षष्ट्यां तेलं तथापिच्। नदीष्यसमुद्रगासु सिं हरकेटयोर्नेलम्।। निःशेषजलवाप्यादी यत्यविष्टं नवोदकम्। नानीनपञ्चरात्रं तत्कारुदुष्मिहोच्यते ॥ शीवपाषण्ड पति नैर्विकर्मस्थेनिरीश्वरेः । अवेष्णवेदिज्ञेः श्र्द्रेहरिवासरभोक्तु-भिः।। अकाकभूकरोष्ट्रा दौरुदक्यास्तिका दिभिः। पुंश्वली भि श्व नारी भिर्वषरी पति भिस्तथा ॥ दष्टं स्पृष्टं च दत्तं च भुक्त शेषुं तथैव च। अनस्याणां च संयुक्तं संसर्गदृष्टमुच्यते॥ विम्बं शि मुचकाछिङ्गं तिलपिष्ट्य मूलकम्। कोशानकी मलावुट्य त था कर्फलम्ब न ॥ नालिका नालिकेत्यादिजातिदुष्टाम्होच्य ते। एवं सर्वाण्यभृह्याणि तत्सङ्गान्यपि संत्यजेत् ॥ तथैवा-मस्यमोक्तृणां हरिवास्रभोजिनाम्। लोकायनिकविपाणां दे बतान्तर सेविनाम्॥ अवैष्णाचानामपि च संसर्ग दूरतस्त्यजेत् ॥पकानाद्यं यथा पकं वाग्यतो नियते न्द्रियः । सम्मार्ज्येच्यु भतरं वारिणा वाससीव् च ॥ क्रकेरपिधायाय चकेणेवाडू येत्तः। गन्धेन् वा हरिद्रेण ज्हेनाप्यथ वा हिरवेत् ॥ सुर्दे-श्निं पात्रजन्यं भाण्डानां यज्ञंयोगिनाम्। कुशोत्तरे श्वची दे शे विन्यस्य कुश्वारिणा॥ सम्बोध्य मन्त्ररतेन बुर्नेणाच्छा द्येनतः। क्षारुयिखाथ देवस्य भाजनानि शुप्तेजिरीः॥अपि पूर्व ततो द्याद्रोजयेच विशेष्तः। भोजयेदागतान् काले स सिसम्बन्धिबान्धवान् ॥बाहान् रहान् भोजधित्वा भत्तरिशो जयत्तनः। स्वयं हण् नतोऽश्रीयाद्रतिश्वकावशोषनम्॥ पे शाविकानां यक्षाणां शक्तानां छिद्रभारिणाम्। हादशीविमु लानां च सहापादि विवर्जयेत्॥ शैवची दस्कान्देशाकस्था नानि न विशेत् किन्त्। वर्जयेत्तस्यमीपस्थं जरुपुष्पफरा दिच॥ न निरीक्षेत देवानामुल्सवानि कदाचन । स्तुतिं वाप्य

न्यदेवानां न् कुयन्छिणुयान्न च् ॥ कामम्सङ्गसछापान् परि हासादि वर्जयेत्। अन्यचिह्नाड्डितं वस्त्रं भूषणासनपाजन म् ॥ वृक्षं पश्चं कूपगृहान् भाण्डं नैंव विवर्जयेत्। अन्यालये ह रि हस्या देवतान्तरसंसदि॥ नार्चयेन्नप्रमाणे च तीर्थसेवां वि वर्जयेत्। अवैष्णवस्य हस्तानु दिव्यदेशादुपागतम् ॥ हरेः प्रसा द्तीर्थां यहोन परिवर्जयेत्। आकारत्रयसम्पन्नो नवेज्याक-म्मीण स्थितः ॥ विष्णोरनव्यशेषत्वं तथेवानन्यसाधनम् । त धेवानन्यभोग्यत्वमाकारत्रयमुच्यते ॥ अर्चनं मन्त्रपरनं धा नं होमश्व वन्दनम्। स्तुतियोगं समाधिश्व तथा मन्लार्थिच न्तनम्॥ एवं नवविधा प्रान्ता चेज्या वैष्णवसत्तमेः। प्राप्यस्य ब्रह्मणीहर्षं माप्यञ्च मत्यगात्मनः॥ मास्यपायं फलब्रीव त था प्राप्तिविरोधिन। ज्ञातव्यमेतदर्थस्य पञ्चकं मन्त्रवित्त-मैं:।।जगतः कारणत्वं च तथा स्वामित्वमेव च। श्रीशत्वं सगुरु न्बच्च ब्रह्मणो रूपमुच्यते ॥ देहेन्द्रियादिभयोऽन्यत्वं नित्य लादिगुणीघना। श्रीहरेर्दास्यधुम्मित्वं स्वरूपं प्रत्यगात्मनः॥ उपायाध्यवसायेन त्यत्का कमीधिमात्मनः। हरेः रूपावल मिलं पास्युपायमिहोच्यते ॥ सवैश्वर्यफ्ठं त्यत्का शब्दा दिविषयानपि। दास्यैकस्तरासङ्गित्वं विष्णोः फलिमहोच्य ने॥ तज्जनस्यापराधित्वं शब्दादिष्वनुरक्तता। कृत्यस्य न् परित्यागः अकृत्यकरणं तथा॥ दाद्शीविमुखत्वं च विरोधि स्यात् फलस्यहि। अर्थपञ्चकमेतिहि ज्ञातव्यं स्यान्सुमुक्त-भिः ॥विहितं स्कलं कर्म विष्णोराराधनं परम्। निबोध तन्तृ पश्रेष्ठ ! भोगार्थे पर्मात्मनः ॥ इत्त्याख्यस्य तरीरस्य सहदं पू लमुच्यते। त्यागेन चैव धम्मिस्य निषिद्वाचरणेन च।। आज्ञाति कगणाहिज्ञः पतत्येच न संशयः । ज्योतिष्टोमाद्यः सर्वे यज्ञा

वेदेषु कीर्तिनाः ॥ पुण्यत्रनाः पुराणोक्ता दाना नेमित्तिकादिषुं। विष्णोभीगत्या सर्वाः कर्तच्या वेष्णवोत्तमेः ॥ यस्तूपायुनया कृत्यं नित्यनेमितिकादिकम्। सत्कृत्यं कुरुते विष्णोविष्णवः संउदीरितः ॥विष्णी रज्ञत्या यस्तु सत्कृत्यं कुरुते बुधः। स एकान्तीति मुनिभिः पोच्यते वैष्णवीत्तमः ॥यस्तु भागतया विष्णोः सत्कृत्यं कुरुते सदा। स भवेन परमैकान्ति महाभागव तोत्तमः॥ वर्जनीयम्कृत्यन्तु सर्वेषां करणे स्त्रिभिः। अकाम तत्तु यसाप्तं प्रायुश्चित्तादिनश्यति॥ अकृत्यं वेष्णवेः पाप बुध्या शास्त्रविरोधितः। एकान्ति परमेकान्ति रुच्यभावाच स न्यजेत्॥श्रुतिसमृत्युदितं धर्मे यस्त्यजेदेष्णवाधमः । स पाष ण्डीति विज्ञेयः सर्वेठोकेषु ग्रिंतः॥ अकृत्यक्रणादापि कृ त्यस्या करणाद्पि। द्वादशीविमुखत्वेन पतत्येव न संशयः॥ तस्मात्सर्पयदोन सत्हत्यं सर्वदा चरेत्। आज्ञातिकमणादि
ष्णो मुक्तोऽपि विनिबध्यते॥ समस्तयज्ञभोक्तारं ज्ञात्वा वि ष्णुं सनातनम्। देवं पेत्रं तथा यज्ञं कुर्याननतु परित्यज्ञेत्॥ निदण्डमवलम्बन्ते यतयो ये महाधियः । तेषामपि हि कर्तव्यं सत्कृत्यमितरेषु किम्॥ ब्रह्म ब्रह्मा ब्राह्मणश्च वितयं ब्राह्ममु यते। तस्माद्वाह्मणविधिना परं ब्रह्माणमूर्चयेत्॥ समस्त युज्ञभोक्तारमजात्वा विष्णुम्ययम्। वेदोदितं यः कुरुते स छोकायतिकः स्मृतः॥ यस्तु वेदोदितं धर्मन्यत्का विष्णुं सम वियत्। स पाषण्डत्वमापनी नरकं प्रतिपद्यते॥ वेदाः प्राणा भगवतो वासुदेवस्य सर्वदा। तदुक्तकम्माकुर्व्वाणः पाणहत्ती भवेद्दरेः॥विष्णाराराधनाद्देदं विना यस्त्वन्यकर्मणि। प्रयु ज्जीत विमूदात्मा वेदहन्ता न संशयः॥ वत्सं माता छेढि यथा नथा लेढिंस मातरम्। भूतं विष्णोः त्रियं झात्वा विष्णुं वेदे

- बृद्दहारी तसंहितायाम्। 340 न वै यजेत् ॥ तस्माहेदस्य विष्णोश्य संयोगो यस्तु दश्यते।स एव परमो धर्मी वैष्णवानां यथा नृप । ॥ कश्चित् पुरा नृपश्चेषः। काश्यपो ब्राह्मणोत्तमः। शाण्डिल्य इति विख्यातः सर्वशास्त्रवि शारदः॥ स तु धर्मा प्रसङ्गेन विष्णौराराधनं प्रति। अवैदिकेन विधिना कतवान् धर्मासंहिताम्॥ अवलम्ब्य मतं तस्य केविद् त्र महषयः। अविद्रिकेन् मार्गण पूजयन्ति स्म केशवम्॥अशा स्वविहितं धर्म सर्वे कुर्वन्ति मानवाः। स्वाहास्वधावषद्कार चर्जितं स्यान्महीतलम्॥ नृतः कुद्धो जगन्नायः शङ्खचक्-गदाधरः। इदमाह मुनिश्चेषं शाण्डिल्यममिनीजसम्॥ दुर्बदे! मामकं धर्म परमं वैदिकं महत्। अवैदिकि किया जुएं पाग-क्यात् कृतवान्सि॥ यस्मादवैदिकं धर्मे पवर्तयसि मां हि ज। तस्माद्वेदिकं छोकं निरयं गच्छ दारुणम् ॥ तद्दाक्यादे-व देवस्य शाण्डिल्योऽभूद्रयाकुलः। स्तुवन् प्राहजगन्नायं प णिपत्य पुनः पुनः॥ शाहि शाही हि छोकेश। मां विभी। सापरा धिनम्। ततः स रूपया विष्णुर्भगवान् भूतभावनः ॥ दिव्यव षेशतं विष् । भुत्का नरकयाननाम् ॥ उत्पन्स्यस् भूगोर्वशे ज मदिगिरितः॥त्त्राराध्य पुनर्मां नु वैदिकेनैव धर्मातः। गच्छ तस्मिन् मुनिश्रेष्टः। मम लोकं सुनिर्मिलम्॥ इत्युका भ गवान्विष्णुस्तत्रवान्तरधीयत । शाण्डिल्यो निरयं प्राप्य पुनरु यद्य भूतंले॥ बेदोक्तविधिना विष्णुम्चियता सनात्नम् । विश्वद्रमावात् सम्पाप्य तदाम परमें हरेः॥ तस्मादवैदिकं ध मं दूरतः परिवर्जयेत्। वेदिकेनेव विधिना भक्त्या सम्पूजये द्रिम्॥श्रोतेन विधिना नक् ध्ला वै बाहुम्लयोः।धतीर्ध-पुण्डः शुद्धात्मा विधिनैवार्चये द्रिम्॥ कर्माणा मन्सा गाना न ममाद्येत् सनातनात्। न ममाद्येत्यरं धम्मति श्रुतिसमृत्युक्त

गीरवात्॥ संशीलन्तु परं धर्म नारीणां नृपसत्तम !। शीलभङ्गे न नारीणां यमछोकः सुदारुणः॥ मृते जीवति वा पत्यो या ना न्यमुपगच्छति। सेव कार्ति मवाभोति मोदते रम्या सह॥ प तिं या नातिचरित मनोवाकायकुम्मीभिः। सा भूतृं होकमामो ति यथैवारुन्धती तथा॥ आर्तार्त मुदिते हृषा पोषिते मिलना क्शा। मृते मूर्येत या पत्यो सा स्वी ज्ञेया प्रतिव्रता॥ या स्वी मृ तं परिष्यज्य दंग्धा चेद्वव्यवाहने। सा भर्तृ होकमाप्नोति हरि-णा कमला यथा॥ ब्रह्मझं वा सुरापं वा छनेझं वापि मानवम् । यमादाय मृता नारी तं भत्तरि पुनाति हि॥ साध्यीनामिह ना-रीणामग्निप्पतनाहते। नान्यो धमोऽस्ति विज्ञेयो मृते भर्तरि कुत्रचित्।। बैष्णावं पतिमादाय या दग्धा हव्यवाहने। सा वष्णावपदं याति यत्र गुच्छान्त योगिनः॥ मृते प्ततिरिया ना री भवेद्यदि रजस्वला। वितानि संयहे तावत स्माला तस्मिन् मवेशयेत्॥गर्तिणी नानुगन्तच्या मृतं भर्तारमच्यया। ब्रह्म-चरीवतं कुर्योधावज्जीवम्तन्द्रिता ॥ केशर्ज्जनताम्बूल्ग-न्धपुषादिसेवन्म्। भूषितं रङ्गवस्यञ्च् कांस्यपाने च भोज नम्॥ दिवार भोजनञ्चास्णोरञ्जनं वर्जयेत्सदा। स्नात्वा शु क्राम्बरधरा जितकोधा जितेन्द्रिया॥ न कल्क कुहका साधी न्द्रालस्य विवर्जिता। सानिर्माला श्रुभाचारा नित्यं सम्पूज येद्रिम्॥ क्षितिशायी भ्वेद्रात्री शुनौ देशो कुशोत्तरे।ध्या-नयोगपरा नित्यं सतां सद्गे ब्यंवस्थिता॥ तप्रवरणसंयुक्ता यावजीवं समाचरेन्। तावतिष्ठे निराहारा भवेद्यदि रजस्व छा॥सभर्तका सती वापि पाणिपूरान्नभोजनम्। एकवारं समग्नीयाद्रजसा च परिषुता॥ एवं स्नियताहारा सम्यग् वनपरायणा। भन्नी सहसमामोति वेकुण्ठपदमञ्ययम्॥ द

च्द्रारीतसंहितायाम्।

392

ग्धंच्या साग्निहोत्रेण भर्तुः पूर्व मृतातु या। स्वांशमग्निं समा दाय भर्ना पूर्ववदाचरेत्॥ कत्वा कुशमयीं पदीं यावज्ञीवम निद्तः। जुहुयादिनि होत्रं तु पञ्चयज्ञादिकं तथा॥ अथ् च पद्मजे हिहान कन्यां वापि समुद्दहेत्। पद्मज्यामपि कृष्णीत कम्मी वेदोदितं महत्॥ आत्मन्यिनिं समारोप्य जुहुयादाता वान् सदा । मनसा वा पकुर्व्यात नित्यनेमितिकाँकैयाः॥गृ इस्यो वा वनस्थो वा यतिवापि भवेद्हिजः। अनाश्रमी न तिषेत् यावज्जीवं हिजोत्तमः॥वण्यिमेषु सर्वेषां पूजनीयो-जनार्दनः। न व्यापकेन मन्त्रेण सदैव च महीपते।॥ व्यापका नां च सर्वेषां ज्यायानषाक्षरो मनुः। अषाक्षरस्य ज्ञातु सा क्षान्नारायणः स्वयम्॥ सन्यासं च समुद्रञ्च सर्विश्छन्दोऽधि देवतम्। न दीक्षा विधि न ध्यानं सार्थं मन्त्रसुद्राह्तम्॥स्ना त्वा शुद्धः पसन्नात्मा कृतकृत्यो जनार्दन्म् । मनसाप्यचित्वा गाजपैनमन्तं सदा बुधः॥दानमतियही यागं स्वाध्यायं पितृ नर्पणम्। पितृक्रियाषाक्षरस्य जस्ता कुर्यादतन्द्रितः॥धतो-ध्ये पुण्ड्देहश्च चकाङ्कित्मजस्तथा। अष्टास्रं जप्नित्यं पु नाति भुवनत्रयम् ॥जपेद्रोगतया मन्त्रं सततं वैष्णवोत्तमः। न साधनतया जप्यं कर्तव्यं विष्णुतत्परेः ॥ अष्टोत्तरसहस्रं ग शतमष्टोत्तरन्त् वा। त्रिसन्ध्यास जपेनान्तं तदधी मन् वि-न्तयन् ॥ उपोध्य पूर्वदिवसे नद्यां स्नात्वा विधान्तः। आचा र्य संश्रयेत् पूर्व महाभागवृतं दिजः॥ आचार्यो विष्णुमभ्य-र्च्य पवित्रं चापि पूजयेत्। पुरतो वासुदेवस्य इध्माधानान्त-माचरेत्। प्रजपेत् अस्य सूक्तेन पवित्रन्तेवतैत्युचा। पवमा नस्य आद्येन बर्ग्भिश्चतस्य भिः क्रमात्॥ आज्यं हुत्वा तत-श्वकं तद्ग्नो प्रतपेदुरुः। चरणं पवित्रमिति यजुषा तचके णा-

इ्येद्भुम् ॥ वामां सम्ध्तपैत्पृश्चात् पाञ्च जन्येन देशिकः॥ अनिर्मन्वेति यजुषा नहोमाग्नी प्रतप्यवै। ततस्तु पार्थिवै र्क्ताभाईत्वा पुण्डाणि धारयेत्॥ अतोदेवेति स्केन विष्णो र्नुक्रमणेन च। पूजयेद्दादशभिषे वेशवादिननुक्रमात्॥ कु शयन्येषु संपूज्ये जुहुयाताभिरेव तु। हत्वाय चरुणा सम्य क मृदा शुक्रेण देशिकः॥ उलाटादिषु चाङ्गेषु ऋग्भिस्ताभिः क्रमेण व । नामभिः केशवाद्येश्व सञ्छिद्राण्येव धारयेत्॥ शिये जात इति ऋचा कुङ्कुम् हुे षु धारयेत्। परोमान्ति स्केन उपस्थाय जनादनम् ॥होमेशेषं समाप्याय मूर्सुद्दा पनमाचरेत्। एवं पुण्ड्कियां कृत्वा नाम् द्धात्ततः परम्॥ म्दः मान्तमिति स्केन् नामम् ति सम्वयेत्। गवाज्यं पत् चं इला नाम दद्याच वैष्णवः॥ अभिप्रियाणीति सूक्तेन उप स्याय जुनार्दनम् । पदिक्षण् नमस्कारी कृत्वा शेषं सुमान्रेत् ॥ मन्त्रदीक्षा विधानन्तु शीतं मुनिभिरीरितम्। नैवाहिता भवेदीक्षा न पृथत्केन बस्यते ॥ अदीक्षितो भवेदास्त मन्त्रं वैष्णव्युत्तमम् । अर्चनं वापि कुरुते न संसिद्धिम्वाग्नयान् ॥ नादीक्षितः मकुर्व्यति विष्णोराराधनकियाम्। श्रीतं वा यदि वास्मार्त् दिव्यागूममथापि वा॥ तस्मादुक्तप्रकारेण दीक्षितो हरिमर्च्येत्। पूर्वेत्सुपोष्य गुरुणा नद्यां स्नात्वा कृतिकयः॥ आचार्यः पूजयेदिष्णुं गन्धपुष्पाक्षतादिभिः। ईशान्यादि चतु दिशु संस्थाप्य कलगान् शुभान्॥ तेषु गच्यानि निक्षिप्य च तुर्मुचीन् समर्चयेत्। वाराहं नारसिह्ज्य वामनं कृष्णामेव न॥ निह्णोरिति व हाभ्यां वारोहं पूज्येत्ततः। प्रतृहिष्णु इति -क्या नारसिंहम्नामयम्॥ न ते विष्णो रित्यनेन वामनं पू जयेतथा। वषर्तेविष्णव रेति कृष्णं संपूजयेन् हिजः॥संपूरे

398 वृद्धारीत संहितायाम्। ज्यावरणं सर्वे ग्न्धपुष्पेविधानतः। प्रतिष्ठाप्य ततो वहिमि-ध्याधानान्तमाचरेत्। चतुर्भिचैष्णचैः सूक्तेः पायसं मधुमित्रित म्। इलाज्यं जुह्यात्पश्वाच्छ्रीस्तेन समाहितः। अनिमीड इत्यस्वाकेन सावित्र्या वैष्णवेन च ॥ संवैत्र्य वेष्णवैर्मन्तेः पृथगष्टीतरं शतम्। इत्वा वेदसमाप्तिञ्च जुह्यादेशिकोत्तमः ॥तनो भुद्रासने शिष्यमुपिवश्याभिषेचयेत्। चतुर्भिचैष्णावैर्म न्तेः सूक्तेस्तत्कल्शोदकैः॥ ऋतिग्भिब्रह्मिणैः शिष्यमभिष च्याथदेशिकः। कोपीन कटिसूत्रञ्च तथा वस्त्रञ्च धारयेत्॥ऊ ध्वपुण्डाणि पदाक्ष तुरुसीमाहिकेऽपि च। कुशोत्तरे समासी नमाचान्तं विनयान्वित्म्॥अध्यापयेद्देष्णवानि स्कानि वि मलानि च। व्यापकान् वैष्णवान् मन्त्रान्त्यांश्वापि विधान-तः॥तदर्थन्यासमुद्रादि सिष्टेचन्दोऽधिदेवतम्। तिसानिवे श्य सहनी शास्येच्छासनाच्छ्रतेः॥शासिनो गुरुणा शिष्यः सहती सत्पर्ध स्थितः। अर्चयेत्परमेकान्त्य सिद्ध्ये हरिमब्य-यम्। आचार्यात्समनु पासं वियहं समनोहरम्। उच्याथ वि धिना विष्णोः पूजयेनदनुज्ञया ॥ पूर्वेऽक्कि पूववन् पूज्यः श्रीते नैवोपचारकैः। ताभिरेव च इत्वाथ् अरिभराज्यं तथाकमात्॥ शय्यासूकान्तमाज्येन हत्वाग्नि वैकावोत्तमः। अध्यापयि-ला तान् मन्त्रान् वेदिकान् वेदिकोत्तमः॥ पूजाविधानं विवि धं तस्मे होमान्तमाविशेत्। स्नान् तर्पण होमार्चा जप्याद्या वि विधाः कियाः ॥ वैशिष्येण गुरोज्ञीत्वा शक्तया सूर्व समा्चरेत्। परमापद्रना बापि न भुञ्जीत हरेदिने ॥ न तिर्यग्धारयेत्युण्डू न्नान्यं देवं मपूज्येत्। वैष्णवः पुरुषो यस्तु शिव ब्रह्मादिदेव-

नान्।। मणमेनाचियेदापि विषायां जायते किमिः। रजस्तमोऽ

भिभूतानां देवतानां निरीक्षणात् ॥ पूजना इन्दना हापि वैष्णवी

यात्यधोगतिम् । शन्दसत्वमयो विष्णुः पूजनीयो जगत्प्तिः ॥अ नर्चनीया रुद्रोद्याः विष्णोरावर्णं विनो । यस्तु स्वात्मेश्वरं वि णामतीत्यान्यं यजेत हि॥ स्वात्मेश्वराय हर्ये च्यवने नात्रसं-शयः। यज्ञाध्ययनकार्छे तु नमस्यानि वषट्कता ॥ तानि वै यज्ञियान्यत्र यज्ञो वे विष्णुरव्ययः। तस्येवावरणं प्रोक्तं यज्ञाध्ययनकर्मासः॥ स्त्वान्तं वेदास्तस्यात्र गुणक्रपविभूत यः। तस्मादावरणं हिला ये यजन्ति परान् सरान्॥ ते यो-नि निरयं घोरं कत्पकोटिशतानि वै। रुद्रः काली गणेशश्व कूष्णाण्डा भैरवाद्यः ॥मद्यमांसात्रिनश्वान्ये नामसाः परि कीर्तिताः । शुद्धानामपि देवानां या स्वतन्त्रार्चनिकया ॥ सा हुर्गतिं नयत्येव वैष्णवं वीतकल्मषम्। अर्चयित्वा जगन्नाथं वैष्णवः पुरुषोत्तम्म् ॥ तदावरणरूपैण यजेदेवान् समन्ततः अन्यथा न्रकं याति याचदाभूत संप्रवृम् ॥ वास्त्रदेवं जगन्ना थमर्वियलीव मानवः। पामोति महदैश्वर्यं ब्रह्मेन्द्रत्वादिकं क्षणात्।। मन्सापि ज्लेनापि जगन्नायं जनार्दनम् । सम्प्राप्तो समलां सिद्धिं जगत्सर्वे समाञ्चितम् ॥ हषीकेशं त्रूपीनाथं छ क्षीशं सर्वदं हरिम्। तं विना पुण्डरीकाक्षं कोऽर्चयेदितरा न् सरान् ॥ नारायणं परित्यज्य योऽन्यं देवसुपासते । स्व पितं रूपतिं हित्वा यथा स्वी पुरुषाधम्म् ॥ विष्णोर्निवेदितं हयं देवेभ्यो जुहुयात् तथा। पितृभ्यश्चेव तद्यात्सर्वभान न्यमश्चते॥निमल्यिमितरेषां तु यदन्नाद्यन्दिवीकसाम्। उप्भुज्य नरो याति ब्रह्महत्यां न संशयः ॥ नेवेदा भोजनं वि ष्णी स्त्यादाम्युनिषेवणम्। तुरुसी खादनं चूणां पापिना मिपिसुक्तिदम् ॥ एकादश्युपवास्त्र्य शङ्खनकादिधारणम् वुहस्या पूजनं विष्णो स्थितयं वैष्णवं स्मृतम्॥ अवेष्णवः

च्दहारीतसंहिनायाम्। ३१६ स्याद्यो विभो बहुशास्त्रश्रुतोऽपि वा। सजीवन्नेच चण्डालो मृ नः श्वासोऽभिजायने ॥ ऋनुसाहित्यणं वापि छोके वित्रमवेषा वम्। चण्डालमिव नेक्षेत वर्जयेत्सर्वकर्माकः॥भगवद्गिति प्तानि द्रधद्रजीतिकलाषः। चण्डाळोऽपि बुधे श्लाघ्यो नतु पूज्यो हा वैष्णवः ॥ शङ्ख्वनकोध्विपुण्डादिरहितं ब्राह्मणा्ध मम्। पूज्यिष्यति यः श्रान्हे सर्वकम्सियं निष्फलम्।। तिर्यक् पुण्ड्रधरं विमं यः श्राह्रे भोजयिष्यति । पितरस्तस्य यात्येव-कारुसूनं सुदारुणम्।। ऊर्धापुण्डुधरं विघं चकाड्डिन भुनं तथा। पूज्यिष्यति यः शाहे गया शाहा यतं उभेतं ॥ शहू-खनकोधीपण्डाद्येरान्वतं वैष्णवं हिजम्। भक्तया सम्पूजये दक्त देवे पित्र्ये च कम्मीण ॥ कल्पकोट सहस्राणि कल्पको टिशतानि च। यास्यन्ति पितरस्तस्य विष्णुलोकं सनिर्मल-म्॥ ऊर्धपुण्ड्धरं विमं तस्चकाडितांसकम्। शादे सम्पूज येद्यस्तु गयाश्राद्यसुतं उभेन् ॥ तसंचकेण विधिना बाहुम्-छेन ढॉन्छितः। पुनाति सक्छं छोकं नारायण इवाघिभित्।।अ विद्यो वा सविद्यों वा शङ्खनको ध्वेषुण्डू ध्क्। ब्राह्मणः स वेलोकेषु पूज्यमानो हरियेथा॥ दुराशी वा दुराचारी शब्ख चकोधींपुण्ड्रधत्। नृणां हिन्ते समस्ताघं तमः स्योदये य था।। चुकाङ्कितस्य विषस्य पादमकाछितं जलम्। पुनाति स क्लं लोकं येथा त्रिपथगा नदी ॥ तिस्तः कोट्यर्द कोटी चती थानि भुवन्त्रये। चक्राङ्कितस्य विषस्य पादे तिष्ठन्य संश-यं ॥ चकाङ्कितस्य विषस्य पादपसाछितं जलम्। पीला पा नक्साइसे मुन्यते नात्र संशायः ॥ शाहे दाने वते यज्ञे विवा हे चोपनायन्। चुकाड्कितं विषमेव पूजयेदितरान्नतु॥ वि ष्णुचका द्विनो वित्रो भुक्जानोऽपि यतस्ततः। न छिप्यते न

पापेन तमसेव यभाकरः॥ चकाङ्कित भुजो विपः पङ्कि म-ध्ये तु भुञ्जते। पुनाति सकलां पैंड्निक गङ्गे वेतरवाहिनीम् ॥ चकाङ्कित भुजं विषं यो भूम्यामभिवादयेत्। ल्लाटे पांशर संख्यानि विष्णु होके महीयते ॥ ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः श्रदो वा वैष्णुवः पुमान् । अचियत्वेतरान् द्वान् निरयं यान्य् संश यम्॥ विष्णोरावरणं हित्वा पूजियत्वेतरान् सरान्। वैष्ण वः पुरुषो याति काउसूत्रमधो मुखः॥ महापोपी महोपापैर-न्वितायदि वैष्णवः। म्न्वादि धमिशास्त्रीकं प्रायश्चितं समा चरेत्। प्रायश्वित विशेषं तु पश्चात् कुर्वात वैषावः। वैया-भिकी वैष्णवीं च पविश्वीच्च सम्।चरेत्।। वैष्णवानानु विमा णां पत्र्यात्पादज्ञ पिबेत्। इत्ती न परिपूर्णि ध कम्मस्विधि कतो भवत्॥ मन्तरताथ विच्छान्तो नवज्यो कम्मसंयुत्ः। हादशी नियतो विषः स एव पुरुषोत्तमः ॥ किमन बहुनोक्तेन सारं वस्यामि ते चृप्। एकाद्श्युपवास्त्र्य शङ्खनकादि धारणम्॥नदीयानां पूज्नञ्च विष्णुवं त्रितयं स्मृतम्। पु ण्याहिष्णु दिनादन्यन्नीपोध्यं वैष्णावैः सदा ॥ तथा भागव तादन्यों नार्चनीयों हि कुत्रचित्। भगवन्तमनु हिश्य न दद्या नयजेत् क्वित्॥ नावेष्णवान्नं फुळीत द्यान्ना वेष्णवा-यच। नार्चयेदिनरान् देवान्न तिर्यग्धारयेत्तथा ॥ एकादश्या न भन्नीत वसेन्ना वैष्णवैः सह। अष्टाक्षरस्य जप्तारं शङ्-रान्क्रधरं हिजः॥ अवमत्य विमुदात्मा सद्यश्यण्डालता ब्रेजे त्। वैष्णवं ब्राह्मणं गाञ्च तुरुसी हादशीं तथा ॥ अनर्चिय त्या मूहात्मा निरयं दुर्गतिं व्रजेत् । विष्णोः प्रधानतनवो वि पा गावश्च वेष्णवाः ॥शक्तया संपूज्य तानेव याति विष्णोः परम्पदम्। एकादश्युपवासम्ब हादश्यां विश्व पूजनम् ॥ नित्य

बुद्हारीत सहिनायाम्। 390 मामलक स्नानं पापिनामपि मुक्तिद्म्। पक्षे पक्षे हरि दिने नक्ष द्भित भुजे नृप्। ॥ संयुज्यमाने विभेन्द्रे हरिस्तेषां भसादिते। अभावे वेष्णवे विषे संयाप्ते हरि वासरे॥ तहत्सम्पूज्येद् गू वं तुल्सीं वापि वैष्णवः। अग्निहोत्रन्तु जुह्यात्सायं प्रातिही जोन्मः॥ पञ्चयज्ञांश्व कुर्वित वैष्णवान् विष्ण्मर्चयेत्।त दर्पितं वे भुञ्जीत पिबेन्तत्पादवारि वे।। एकाद्यं न भुञ्जीत प्क्षयोरुभयोरपि। यूजये देखावं विमं दादश्यामपि वैष्णवः॥ विष्णोः मुसाद तुरुसीं तीर्थे वापि दिजोत्तमः। उपवासदिने वा पि पाशयेदविचारयन् ॥ उपवासदिने यस्तु नीर्थं वातुल्सी-दलम् ॥ न पाश्चे दिस्दातमा रोरवं नरकं वजेत्। हथीपित-न्तु यचानां तीर्धे वा पितृकरम्णि॥ दद्यात् पितृणां यद्रक्यं ग्याश्राद्युतं लभेत्। हरेनिवेदितं भक्तया यो दे हाशाद्भक माणि ॥पित्रस्तस्य यान्येव तिह्णोः परमं पदम्। तीर्थे व नुलमीपनं यो दद्यातिनृदेवन्म्॥ आकल्पकोटि पित्रः परि नृप्ता नसंशयः। यः श्राह्काले मुढात्मा पितृणाञ्च द्विक-साम्॥ न ददाति हरेफीतं तस्य वे नारकी गतिः। हर्यपितन्तु यचानं यच पादीदकं हरेः॥ तुल्सीं वा पितृणाञ्च दला-शाह्ययुतं रुभेत्। सर्वे यज्ञमयं विष्णुं मत्वा देवं जनादेनम्। आमन्त्य वेषावान् विमान् कुर्याच्छाँ इमतन्द्रितः ॥ प्रत्यब्दं पार्वणश्चान्दं कुर्यासित्रोमृति ३ हिन । अन्यथा वैष्णवो याति ब्रह्महत्यां ने संशयः॥अमायां कृष्णपक्षे च पित्र्ये वाभ्युद्ये नथा। कुर्यात् श्राद्धं विधानेन विष्णोराज्ञा मनुस्मरन्॥ न कुर्यात् यो विधानेन पितृयज्ञं नराधमः ॥ आज्ञातिक्रम्णा-

कुयात् या विधानन् पितृयम् नराधमः ॥ आज्ञातकम्णाः हिष्णोः पनत्येव न संशयः। शङ्खचकोर्धपुण्डादिचिन्हेः पि यनमहरेः॥ आन्वितान् ब्राह्मणानेव पूजयेत्सव्यकम्मस्य। अ-

शाहिनोध्ययज्ञस्य कर्मत्यागिन एव च ॥ वेद्र्याप्यनधीत स्य संसर्ग दुरतस्त्यजेन्। पित्रोः श्राह्यं पकुर्वित् नैकाद्रश्यां हिजोत्तमः ॥ होदश्यान्तत्यकुर्वित नोपवास दिने क्वित्। विष्णोर्ज्नाद्दिने वापि गुरुणाञ्च मृतेऽहिन्॥ वेष्णविष्टिं मकु जीत वेदिकं वैष्णवोत्तमः। अगम्यागमनं हिसा मभूस्याणा ज्य प्रक्षणम् ॥ असत्य कथनं स्तेयं मनसापि विवृजीयेत्।त मचकाइनं विष्णोरेकादश्यामुपाषणम् ॥ धनोध्वी पुण्डुदेह स् तन्मन्त्राणां परियहः। नित्यमामलकस्मानं देवतान्तरे व र्जनम्। ध्यानं मन्तं जपो हो मस्तुलस्याः पूजनं हरेः॥ यसाद स्तिर्थसेवा च् तदीयानाञ्च पूजनम्। उपायान्तरसन्त्याग-स्तथा मन्त्रार्थ चिन्तनम्॥ श्रुवणं कीर्त्तनं सेवा सत्हत्यकर णं तथा। असत्कृत्य परित्यागी विषयान्तर वर्जनम् ॥दानं द म स्तृपः शीनं आर्जवं धान्तिरेव च। आनृशंस्यं सतांसङ्गः पारमेकान्त्यहेतवः॥वैष्णावः परमेकान्ती नेतरो वेष्णावः समृ
तः। नावेष्णावो अजेनमुक्तिं बहुआस्त्र श्रक्तोऽपि वृ।। वेष्णावो वर्णबाह्योअप यानि विष्णोः परं पद्म । एतत्ते कथिनं राजन्। पारमेकान्यसिद्धित्म्॥ वैद्याखं वैष्णवं धर्मशास्त्रं वेदोप्रं हितम्। विष्वक्सेनाय धावे च सम्योक्तं प्रमात्मना॥ विष्य क्सेनाय सम्योक्तमेनदिधनसे पुरा। भूगोः योक्तं विधनसा भृगुणाच महिष्णा॥ भृगुणाच मनोः योक्तं मनुनाच ममेरि तम्। मनुस्तु धर्मशास्त्रन्तु सामान्येनोक्त्वान् स्वयम्॥तदेव हि मयाराजन्। वैशिष्येण त्वेरितम्। विशिष्टं पर्मं धर्म-शास्त्रं वैष्णवसुत्तमम्॥ यद्दं शृणुयाद्वत्त्रया कथयेदा समा हितः। पारमेकान्त्य संसिद्धिं प्राप्नोत्यव न संशयः॥ सर्वपा पविनिर्सको याति विष्णोः परंपदम्। यस्त्वदं शृणुयाद्ग-

भीशनसं धर्मशास्त्रम्। 320 त्तया नित्यं विष्णोश्न सन्निधी॥ अश्वमेधसहस्रस्य फरं पा मीत्यसंदायः। हारीतमेतच्छारुयन्तु परमां धर्मासंहिनाम्॥ आलोक्य पूज्यन् विष्णुं पारमैकान्त्यमश्चते। एतच्छुताम्ब रीषस्त हारीतोकिं नृपोत्तमः॥ वयन्दे परया भत्तया तमृषि वैष्णवात्मः। त्वमेव परमोधम्मस्त्वमेव परमं तपः॥त्वदंङ् वियुगरं पाप्य सर्वसिद्धिमवास्याम्। म्हासुनिमिति स्तु-त्वा राजिंदः स महानपाः॥ प्राप्तवान् परमेकान्त्यं तत्यसादा-स्कसिद्धिदम् । वेशिष्ट्यं पारमेकान्त्यं एतच्छास्त्रं ममाव्ययम्॥ भारद्दाजादयः सर्वे नृपाश्च जनकादयः । योगिनः सनकाद्या श्र नारदाद्याः सर्पयः ॥ वसिष्टाद्या वैष्णवाश्य विष्वक्सेना दयः कराः। एतच्छार्यानुसारेण पूजयामा्सरच्युत्म्॥ प-रमं वैदिकं शास्त्रमेन देखावमुत्तमम्। ज्ञात्वेच प्रमुक्तानी पूज्येहिष्णुमी न्वरम्।। ॥ इति हारीतस्मृती विशिष्टध मेरिशास्त्री वृत्यधिको नाम अष्टमोऽध्यायः॥ समाप्ता चेयं रहहारीतसंहिता ॥

ओशनसं धर्मशास्त्रम्।

अतः परं मवस्यामि जाति हिति विधानकम्। अनुरोम-विधानक्त प्रतिरोमविधि तथा॥१॥ सान्तरारुकसंयुक्तं सर्वे संक्षिप्य चोच्यते। नृपाद् ब्राह्मणकन्यायां विवाहेषु समन्य-यात्॥२॥ जातः स्तोऽत्र निर्दिष्टः प्रतिरोमविधिहिजः। वेदा नईस्तथा चैषां धम्मणामनुबोधकः॥३॥ स्ताहिप प्रस्ता यां स्तो वेणुक उच्यते। नृपायामेव तस्येव जातो यश्वम्यका रकः॥४॥ ब्राह्मण्यां क्षत्रियाचीय्यद्रिथकारः मजायते। हत्तव्र

भूद्रवृत्तस्य दिजत्वं प्रतिषिध्यते॥५॥ यानानां येच वोदा रस्तेषाञ्च परिचारकाः।शूद्रहत्या तु जीवन्ति न क्षात्रं धर्म माचरेत्।।६॥ ब्राह्मण्यां वैश्यसंसगाँजातोमाग्ध उच्यते। वन्दिलं ब्राह्मणानाञ्च क्षत्रियाणां विशेषतः॥ ७॥ प्रशं-सारतिको जीवेद्देश्यपेष्यकरस्तथा । ब्राह्मण्यां श्रद्भंस-र्गाजातश्राण्डाल उच्यते॥८॥ सीसमाभरणं तस्य का ष्णियसम्थापि वा। वधीं कण्ठे समाबध्य झछरीं कक्ष नोऽपि वा ॥९॥ महापकर्षणं यामे पूर्वाहे परिश्वदिकम्। नापराहे पविषोदि बहिर्यामाच नैर्नरते ॥१०॥ पिण्डीभू-ता भवन्यत्र नोचेद् बध्या विशेषतः। चाण्डाला हेश्यकन्या यां जातः श्वप च उच्यते ॥११॥ श्वमांसभूसणां तेषां श्वान एव च तद्दलम्। नृपायां वैश्यसंस्गिद्ययोगव इति स्मृतः ॥१२॥ तुन्तुवाया भवन्त्येव वस्तुकांस्योपजीविनः। शीँिक-काः केचिद्नैव जीवनं वस्त्रनिमित्ति ॥१३॥आयोग्वेन वि पायां जातास्ताम्गोपजीविनः। तस्येव नृपकन्यायां जातः सू निक उच्यते ॥१४॥ सूनिकस्य नृपायान्तु जाता उद्दन्धकाः स्मृताः। निर्णेजयेयुवेस्त्राणि अस्पृथ्याश्च भवन्यनः॥१५ न्पायां वैश्यतश्वीर्यात् पुरिन्दः परिकीर्तितः । पशुरित-भवित्तस्य हन्युस्तान् दुष्ट्रसत्वकान्।।१६॥ नृपायां शूद्रसंस ग्जितः पुक्रश उच्येते । करारुतिं समारुह्य मध्विक्यक र्मणा ॥१७॥ कतकानां स्राणांच्य विक्ता याचको भवेत्। पुक्साह्रैश्यक्रन्यायां जातो रजक् उच्यते ॥१८॥ नृपायां -मूद्रतभौयिजातोरञ्जक उच्यते । वेश्यायां रञ्जकाजा-नी नृत्तिको गायको भवेत्॥१९॥ वैत्रयायां श्रद्रसंसगाज्ञा-तो वैदेहिकः स्मृतः। अजानां पालनं कुर्य्यान्महिषीणं गवा-

औशनसं धर्मशास्त्रम्। 322 मपि॥२०॥दधिक्शराज्यतकाणां विक्रयाज्जीवनं भवेत्।वेदे हिकाल विभायां जाताश्वममेपिजीविनः ॥२१॥ नृपायामेव ते स्येव स्किचिकः पाचकः स्पृतः । वेश्यायां शूद्रतश्चीय्याज्ञात श्वकी च उच्यते ॥२२॥ तेर पिष्टक जीवी तु रेवणं भावयन् पु नः। विधिना ब्राह्मणः पाप्यं नृपायान्तु समन्त्रकम् ॥२३॥ जानः सुवर्ण इत्युक्तः सानुरोमहिजः स्मृतः। अथे वर्णिक यां कृष्विनित्यनैमितिकीं कियाम् ॥२४॥ अश्वं रथं हितनं वा वाहयेदा नृपाज्ञया। सेनापत्युञ्च भेषज्यं कुर्याज्जीवे तु रितिषु ॥२५॥ नृपायां विमतश्वीर्यात् संजातो यो पिः षक्रसमृतः। अभिषिक्तनृपस्याज्ञां परिपाल्येतु वैद्यक्म्॥॥१६॥आयुर्वेदम्थाष्ट्राङ्गं तन्लोक्तं धर्ममाचरेत्।ज्योतिषं गणितं वापि कायिकीं इतिमाचरेत्॥२०॥ नृपायां विधिना विपाज्जातो नृप इति स्मृतः । नृपायां नृपसंसर्गात् प्रमादादू गूढजानकः ॥२८॥ सोऽपि क्षत्रिय एव स्यादिभिषेके च वर्जि नः। अभिषेकं विना पाप्य गोज इत्यभिधायुकः ॥२९॥सर्वे न्तु राजवत्तस्य शस्यते प्रवन्दनम्। पुनर्भूकरणे राज्ञां नृ पकालीन एव च ॥३०॥ वैश्यायां विधिना विपाज्नातो ह्यान षु उच्यते । रुष्याजीवो भवेत्तस्य तथैवाग्नेयवृत्तिकः ॥३१॥ ध्वजिनी जीविका वापि अम्बषाः शुरुवजीविनः । वैश्यायां विप्रतश्रीयाति कुम्भकारः स उच्यते ॥३२॥ कुठालच्त्या जीवेत नापिता वा भवन्यतः । सूतके पेतके वापि दीक्षा-कालेऽथ वापनम् ॥११॥ नाभेक्द्रस्तु वपनं तस्मान्नापित उ च्यते । कायस्थ इति जीवेतु विचरेच इतस्ततः ॥३४॥ का-काछील्यं यमान् कीर्व्यं स्थपनेरथ कन्तनम् । आद्याक्षरा णि संगृह्य कायस्थ इति कीर्तितः ॥ ३५॥ शृद्रायां विधिना

विपाज्नातः पारवाबोमतः। भद्रकादीन् समाश्रित्य जीवेयुः पूनकाः स्मृताः ॥३६॥ शिवाद्याग्मविद्याद्ये स्तथा मण्डलं र तिभिः। तस्यां वै चौरसो वृत्तो निषादो जात उच्यते ॥३७॥ वने दुष्मृगान् हत्वा जीवनं मांसविकयम् । नृपाज्ञानोऽध वैश्यायां मृह्यायां विधिना सुतः ॥ ३८॥ वैश्यवस्या तु जीवे तक्षात्रधममें न चाचरेन् । तस्यां तस्येव चीरेण मण्कारः प्रजायते ॥३९॥ मणीनां राजतां कुय्यन्यिकानां वेधनिकया म्। प्रवालानाञ्च सूत्रितं शंखानां वलयकियाम्॥ ४०॥ भूद्रस्य विषसंसगीजात उथ इति स्मृतः । नृपस्य दण्ड धारः स्यादण्डं दण्डयेषु सञ्चरेत् ॥४१॥ तस्येव् नावसं र-त्याजातः शुण्डिक उच्यते । जाते दुष्टान् समारोप्य शुण्डा कम्मीण योजयेत् ॥४२॥श्रद्रायां वैश्यसंसगीदिधिना स् चकः स्मृतः। स्चूकादिपकन्यायां जातस्तक्षक उच्यते॥ ॥४३॥ शिल्पकम्माणि चान्यानि पासाद उक्षणं तथा। नृपा-यामेव तस्यैव जातो यो मत्स्यबन्धकः॥४४॥शुद्राया वैषय तश्रीयात् कटकार इति स्मृतः। वशिष्ठशापालेतायां केनि त् पारशवास्तथा ॥४५॥ वैरवानसेन केचित्त केचिद्रागवते नेच। वेदशास्त्राबलम्बास्ते भविष्यन्ति कलौ युगे॥४६॥ कटकारास्ततः पश्चान्नारायणगणाः स्मृताः । शाखा वैखा नसेनोक्ता तन्तमार्गविधिकियाः ॥४०॥ निषेकाद्याः ध्मशा नान्ताः कियाः पूजाङ्गस्चिकाः । पञ्चरात्रेण वा पासं पोक्तं धर्मी समाचरेत्॥४०॥ शूद्रादेव तु श्रद्रायां जातः शूद्र इति स्मृतः । दिज्यश्रूषणपरः पाक्यज्ञपरान्वितः ॥४९॥सन्छ दं तं विजानीयादेसच्छ्द्रस्ततोऽ न्यथा। चौय्यात् काकव-चो ज्ञेयश्राश्वानां तृणवाहकः॥५०॥ एतत् संसेपतः यो-

२२४ भोत्रानसस्मृती। कं जातिवृत्तिविभागर्थाः। जात्यन्तराणि दृश्यन्ते संकल्पा-दित एव तु ॥५१॥ ॥ इत्योत्रानसं धर्मात्रास्त्रं समाप्तम्॥

ओशनसस्मृतिः।

शीनकादाश्व मुनय औश्ननं भागवं मुनिम्। नलाप मुच्छरस्विलं धूर्माशास्त्रविनिर्णूयम्॥ ऋषीणां शृणवतां पू वीमुराना धर्मतत्ववित्। धर्मार्थकाममोक्षाणां कारणं पा पनाशनम्॥ सत्समाधिहरो यूयं शृण्धा दतो मम्। भा र्गवं पितरं नला उशनं धर्मामं इवीत् ॥ इतीपन्यनो वेदा नधीयीत हिजोत्तमः। गर्भाष्टमे व्यष्टमे वा स्वस्त्र्वोक्त बि-धानतः॥ दण्डे च मेखलासूत्रे कृष्णाजिनधरो मुनिः। भि क्षाहारी युरुहिते वीक्षमाणी युरोर्मुखम् ॥ कार्पासमुपवीता त् सन्निर्मितं ब्रह्मणा पुरा। ब्राह्मणानान्त्य वृत् सूत्रं की-शिवादास्त्रमेव वा॥ सदापवीती चेव स्यात् सदा बह्दिश्रो दिजः। अन्यथा यत्रुतं कर्मतद्भवत्या यथाकमम्॥ वृसेद विकृतं वासः कार्पासं वा कषायकम् । तदेव परिधानीयं-शुक्रमत्स्य द्रमुत्तमम् ॥ उत्तरीयं समारच्यातं वासः रूष्णाजिनं शुभम्। अभावे भव्यमजिनं रीरवं वा विधीयते॥ उपवीतं-वामबोहं सव्यं बाहु समन्वितम् । उपवीतं भवेनित्यनिवी नं कर्णलम्बनम् ॥ सञ्यबाहं समुद्धत्य दक्षिणेन धृता दिजाः पानीन्वित्मिखुकं पित्र्ये कमीणि धारयेन्॥ अग्न्यगरि-गवाङ्गोषे होमे जुप्ये तथीव च। स्वाध्यायभोजने नित्यं बा-सृणानाञ्च सन्निधी ॥ उपासने गुरूणाञ्च सन्ययोरुभयो रिप । उपवीती भवेनित्यं विधिरेषः सनातनः ॥ मौज्जी वि-

रुत्समा श्रुक्णा कार्या विषय मेख्या । मुख्यभावे कुशा नाहु यन्थिनेकेन वा त्रिभिः॥ धारये हैल्पपालाशी दण्डी के शान्तगो हिनः। यज्ञारव्यव्सनंवाथ सौम्यं व्षणमेव च ॥ सायं पात्रहिजः सन्यासुपासीत् समाहितः। कामाछो-गाइयानमोहान् कदा न पतितो भवेत्। अपनिकार्यं ततः कु यिसायं मातः म्सन्नधीः। स्नात्वा स्नन्पयेदेदेवा नृषीन् पितृगणांस्तया॥ देवाभ्यचोन्ततः कुर्यात् पुष्पैः पत्रेण चाम्बु भिः।अभिवादनशीलः स्यानित्यं रुद्देष्टधम्मत्ः॥असाब्ह मो नामेति सम्यक् प्रणतिपूर्वकम् । आयुरारोग्यवान् वि तुं द्रव्याद्यपरिवर्जितः ॥ आयुष्मान् भवसोम्येति वाच्यो विपाभिवादने । अकारश्चास्य नाम्नो उन्ते वाच्यः प्रविक्ष र्स्ततः ॥यो न चेत्यभिवादस्य हिजः पत्यभिवादनम् ।ना-भिवादः स विदुषा यथा श्रद्धस्तथेव सः॥ सच्येन पाणिना का र्ये उपसंग्रहणं गुरोः। सच्चेन सच्यः स्प्रष्ट्यो दक्षिणेन नु दक्षणम्॥ छोकिकं वैदिकं वापि तथाध्यात्मिकमेव वा।आ
ददीत यतो ज्ञानं तत्पूर्वमिष्णवाद्येत्॥ नोदकं धारयद् भेरे-क्षं पुष्पाणि समिधस्तथा। एवं विधानि चान्यानि न देवार्थे षु किञ्चन ॥ ब्राह्मणं कुशलं पृच्छेत् क्षत्रियञ्चाप्यनामयम्॥ वैश्यं क्षेमं समाग्स्य श्रुद्रमारोग्यमेव च । उपाध्यायः पि ता ज्येषो भाता चैव महीपतिः॥ मातु छ्र्वशुरभातृ माता महिपतामही । वर्णकाश्चे पितृच्यश्च पञ्चेते पितरः रमृताः ॥ माता मातामही गुर्जी पितृमातृस्वसादयः । श्वश्च पितृना मही ज्येषा ज्ञातव्या गुरवः स्थियः ॥ इत्युत्का गुरवः सर्वे-मातृतः पितृतस्तथा । अनुवर्तनमेतेषां मनोवाकायकम्म-भिः॥ गुरुं हेस्वा समुति छेंदिभिवाद्य कृताञ्जििः। न ते रुपव

३२६ भोशनसस्मृती । सेत्सार्च विवादेनार्थकारणात्।। जीवितार्थमपि देषं गुरुषि नेव भाषणम्। उदिनोऽपि गणेर्न्ये गुरुदेषी पतत्यधः॥ गुणानामपि सर्वेषां पूजाः पञ्च विश्रोषतः। तेषामाद्यस्त्रि यः श्रेष्टास्तेषां माता सुपूजिता॥ यो हि बासयित दिवाधे न सद्योपदिश्यते। ज्येषो भाता च भूक्ति पञ्च ते गुरब-स्तथा॥ आत्मनः सर्वयद्येन पाणत्यागेन वा पुनः। पूजनी याः भयत्नेन पञ्चेते भूतिमिच्छता ॥ यावत् पिता च मा-ता च दावेता निर्विकारणम् । तावत् सूर्व परित्यज्य पुत्ः -स्यानत्परायणः। पिता माता च सुधीती स्यातां प्रत्रगणीर्य दि॥ स्युत्रः सक्लं कर्मा प्राप्त्यातेन कर्माणा। नास्ति मा नृसमं देवं नास्ति पिनृसमो गुरुः ॥ तयोः पृत्युप्कारोऽपि न हि कश्चन विद्यते। तयोनित्यं भियं कुर्यात्कर्माणा मन सा गिरा। न ताभ्या मन्जुज्ञातो धर्मिमकं समाचरेत्॥ व जीय्ला मुक्तिफढं नित्यनामितिकं तथा। धर्मीसारः समुद्दि ष्टः मेत्यानन्दफलमदः॥सम्यगाचारवक्तारं विसृष्स्तदन्त ज्ञया। शिष्यो विद्यापतं भुङ्के पेत्य चापद्वते दिवि॥ यी भातरं पितृसमं ज्येष्ठं मूढों उवमन्यते। तेन दोषेण संपेत्य निरयं सम्प्रयच्छिति ॥ पुंसाञ्चात्मिन वेषेण पूज्यो भत्ति स म्मतः। यानि दात्रि छोकेअस्मिन्नुपकारोऽपि गीरवम्॥ये नरा भर्नु पिण्डार्थं स्वान् पाणान् सन्त्यज्ञान्ते हि। तेषामेष परान् होंकानुवाच् भगवान् भृगुः ॥ मानुहांऋ पितृव्यां श्च श्वेशुरान् ऋतिजान् ग्रेक्ट्न् । असावयमिति ब्र्यात्य-पि यो भवत्। भोःशब्दपूर्वकं चैनम्भिभाषेत धर्मिवत्।। अभिवाद्याश्चे पूर्वन्तु शिरसावंद्यशमे च। ब्राह्मणस्त्रिया-

धैश्व श्रीकामेः सादरं सदा ॥ नाभिवाद्यास्तु विशाणां क्षत्रि याद्याः कथञ्चन । ज्ञानकर्मगुणोपेता यद्यप्येते बहुश्चनाः ॥ ब्राह्मणाः सर्ववर्णानां स्वस्ति कुर्प्यादिति स्थितिः । सवर्णे ज्यस्वर्णानां कार्यमेवाभिवाद्नम्॥ गुरुरिनिद्विजातीनां वणीनां बाह्मणो गुरुः। पिन्रिको गुरुः स्वीणां सर्वस्याभ्या गतो गुरुः॥ विद्या कर्मा वयो बुन्धु वित्तं भवति यस्य वे मान्यस्थानानि पञ्चाहुः पूर्व पूर्व गुरूणि च ॥पञ्चानां त्रिषु वर्णेषु भूवेतु गुणवान् हियः। यत्र स्यात्सोऽत्र मानाहः क्षुद्रों पि संभवेद् यदि ॥ पिण्डादे भयो ब्राह्मणे भयः स्त्रि पैराज्ञेऽस्य चक्षुषे। रहाय भावहीनाय रोगिणे दुर्बलाय च ॥भिक्षामाहस्य शिष्टानां गृहेभयः भयतो इन्वह्रम् । निवेद्य गुरवेऽश्रीयादाग्यतस्तदनुज्ञया ॥भवत्पूर्वं चरेद्भेक्षमुप-नौतो दिजोत्तमः। भवन्मध्यन्तु राजन्यो वैश्यस्त भवद्त रूम्॥ मातरं वा स्वसारं वा मातुर्वा भगिनीं तथा। भिर्देत भिक्षां मथ्मं यातु नैनं विमानयेत् ॥ सजातीययहेद्वेवंसा वैवर्णिकमेव वा । भैक्षस्याचरणं प्रोक्तं पतितादिषु वर्जितम्॥ वैदयज्ञादिहीनानां प्रशस्तानां स्वकम्मिसु। ब्रह्मचारी चरे द्रैक्षं गृहस्थः पयतोऽन्वहम्॥ गुरोः कुछेन् भिक्षेत् न ज्ञाति कुछबन्धुषु। अभावेऽप्यथ गेहानां पूर्व पूर्व विवर्जयेत्।।सर्वे वापि चेरद् यामं पूर्विकानामसम्भवे। नियम्य पयूत्रो वाचं दिशश्चान्वेठोकयन्। समाहत्य तु तद्रेक्षं यावदर्थि। महाज्ञ या। भुजीत पयतो नित्यं वाग्यती नान्यमान्सः ॥भैक्षेण वर्तयोन्न्सं कामनाशीभ्वेद् वृती। भैक्षेण वृत्तिनो वृत्तिरुप गाससमं स्मृता॥ पूजयेदशेनं नित्यमद्यादनमकुत्सयन्। दृश्चा हृष्येत्रसीदेच प्रतिनन्देच सर्वतः॥ अनाराग्यमना

ओशनसस्मृती।

375

युष्यमस्वर्यं कुत्सभोजनम्। अपुण्यं छोकविद्विष्टं तस्मान्त त्परिवर्जयेन्।। पाङ्गुरवोऽन्नानि भुञ्जीत दक्षिणामुख ए व व। नाद्यादुदङ्गुरवो नित्यं विधिपूर्व्वं सनातने।। पक्षाव्यं पाणिपादो च भुञ्जानो दिरुपस्पृशेत्। शुची देशे समासीनो भुङ्त्वान्ते दिरुपस्पृशेत्।। मण्डलं पूर्वतः हत्वा तत्र रथाप्या थ भोजयेत्। स्वपाणाहृतिपर्यन्तं मोनमेच विधीयते।। ॥ इत्योशनसस्यृतो प्रथमोऽध्यायः॥

भुत्का पीता च स्नात्वा च तथा रथ्योपसपीं। ओप्राच-होमकें स्पृथ्वा वासी विपरिधाय च ॥रेतो मूत्रपुरीषाणा मुत्स-गैणान्त भाषणे। तथा चाध्ययनारम्भे कासश्वासागमे त-था॥ चत्वरं वा शमशानं वा समागम्य हिजोत्तमः। सन्ध्ययोरु भयोस्त्ददाचान्ते चाचमेत् पुनः ॥ चण्डालम्हेच्छसम्भाषे -स्त्रीशूद्रोच्छिष्टभाषणे । उच्छिष्टं पुरुषं स्पृष्ट्या भोज्यं वापित थाविधम्।। अश्वपातं तथाचामे अहितस्य तथेव च। भोजये-त् सन्ध्ययोः स्नात्वा पीत्वा मूत्रपुरीषयोः ॥ आचान्तोऽप्याच मेन् स्पृष्वा सङ्गत् सरुद्धान्येनः । अग्नेर्गवामयालम्भे स्पृष्ठा मयत एववा ।। नृणामधारमनः स्परी नीवीं विपरिधाय च। उपस्पृशेज्जलं शुद्धं तृणं वा भूमिमेच वा ॥ कोशानां चात्मनः स्प शे वाससां क्षािंवतस्य च। अनुष्णाि निरफ्नािभरदुषािभन सर्वशः॥ शीचे च मुखमासीनः पाङ्गुरगो वाप्युदङ्गुरगः। शिरः पावृत्य कर्ण वा मुक्तकच्छ शिखों अपि वा ॥ अरुखा पा दयोः शीनमानान्तोऽप्यशानिभ्वित्। सोपानत्को जलस्यो वा नोष्णीषी वाचमंद बुधः॥ न चैव वर्षधाराभिने निष्ठन ध नोदकै:। नैकहस्तापितजले विना शृद्रेण वा पुनः॥ न पादुका सनस्थो वा बह्जिनुरथापि वा। न जल्पन्न हसन् पेक्षमाण- श्व पह्णप्य वा। नावी्संमाणादिनोष्णादिनकेनादथापि वा॥ भूद्रामुचिकरेर्भुक्तेर्नक्षाराभिक्तथेव च । न चैवाङ्गु छिभिः शब्दमकुर्वन्नान्यमानसः॥ न वर्णरसदुष्टाभिनेनीय पदरोद्कैः। न पाणिजनिता भिर्वा न बहिः कुलमेव वा ॥ हदाभिः पूचते विमः कणाभिः सत्रियः श्रुचिः । मात्रिना भिस्तथा वै स्वीः श्रद्धेः संस्पर्शनं ततः॥ अङ्गुष्ठमूलान्त रतो रेखायां ब्रह्म उच्यते । अन्तराङ्गुष्टदेशिन्यो पितृणा नीर्यमुत्तम्म्॥ किन्छो मूलनः पश्चात्माजापत्यं अचक्षते । अङ्गुल्यये स्मृतं देवं तथेवार्षं पकीर्तितम्। मुछे स्यादेव मार्षे स्यादाग्नेयं मध्यतः स्मृतम् ॥ तदेवं सीमिकं तीर्थमेनन् ज्ञाला न मुस्ति। ब्राह्मेणेव तु नीर्थेन हिजी नित्यसुपस्पृशे त्। कायेन् वा दैवतेन नतु पित्र्येण वा द्विजाः।॥ त्रिः मानी योद्पः पूर्वे ब्राह्मणः प्रयतः स्मृतः । संवृत्ताङ्गुष्ठमूलेन मु खं वै समुपेस्पुरीन् ॥ अङ्गुषाना मिकाभ्यां तु स्पृरीनेत्रह यं ततः। त्र्न्यङ्गुष्ट्योगेन स्पृशेन्नासापुरं नतः॥कनि ष्ठाङ्गुष्ठयोगेन श्रवणे समुपस्पुत्रीत्। सर्व्यासामध योगेन हदयन्त नलेन वा ॥ संस्पृशेहै शिरस्तहदङ्गुष्ठेनाथवा ह्य म्। बिः पान्नीया देवमेव भीतास्तेनास्य देवताः ॥ ब्रह्मवि-ष्णुमहेशाश्व सम्भवन्यनुशस्त्रमः। गङ्गाच यमुना चैव भी यत् परिमार्जनात्।। प्रसंस्प्शिहाचन्योः प्रीयेत शशिक्षा क्तरी। नासत्यो नैव प्रीयेते स्पृष्टं नासापुरह्यम् ॥ कर्ण-योः स्पृष्टयो स्तह्सीयने चान्ह्रानिही। संस्पृष्टे हदये ना स्याः प्रायन्ते सर्वदेवताः ॥ मूर्धि संस्पर्शनादेव प्रीतस्तु पुरुषो भवेत् । नोच्छिषं कुर्वते मुख्यं विषयोगं नयन्ति याः ॥ अन्तवदन्तसिळळिजिद्धास्पर्शे ग्रुचिर्भवेत् । स्पृशन्ति वि-

ओदानसस्पृती । 330 न्दवः पाद्री य आचामयतः परम् ॥ भूमिगेस्ते समाज्ञेयाः न तैरपयतो भवेत्। मधुपर्के च सीमे चे ताम्बूहस्य च भक्षणे॥ फलमूलेखुदण्डेच न्दोष उशाना बबीत्। यचरम्बान्नपानेषु युद्धिकी भवेद् हिजः ॥ भूमी निक्षिप्य नद्वयमाचम्य-पोस्पयेतु यत्। नैजसं वै संमादाय भवेदुन्छेषणात्ततः॥ अनिधायं च तेद्रव्यमाचान्तः शुचितामियात्। व्स्यादीनां विकल्पत्वान् स्पृष्ट्या च देवमेव हि॥ आरम्यानुद्के रात्री चो री वाप्याकरे पथि। कृत्वा मूत्रपुरीषं वा द्रव्यहस्तेन दुष्यति ॥ निधाय दक्षिणे कणे ब्रह्मस्त्र मुदङनुखः। अय क्र्यति शुक्रणमूत्रे रात्री बेह्सिणामुखः॥अन्तध्यि महीं काष्टेः पणै लेषित्णेन वा। प्रतिश्वीनाहीराः कुर्यात् रुच्छम्बावसर्ज-ने ॥ च्छायाकूपनदीगोषे चैत्याम्मः पथि भूसास्। अमी चैव शम्शाने च विष्मूत्रेन समाचरेत्॥ न गोमये न कुड्ये-वा न गोष्ठेनेच शाहरे। न तिष्ठन् या न निर्धासा नच पर्वत्म स्तके ॥ न जीणदिवायतने न वल्मीके कदाचन । नच सर्वे-षु गर्नेषु न च गच्छन् समाचरेत् ॥ तुषाङ्गारकपाछेषु राज् मार्गे तथीव च। न क्षेत्रे न बिसे चापि न ती थींच चतुष्पथे।।नो धानोपसमीपे वा नोषरेन प्राश्वची। न चोपानत्कपादी च च्छनी वर्णान्तरीक्षके॥ न चैवामिसुरवः स्त्रीणां गुरुबाह्मण् योगीयाम्। न देवदेवालययो निपामपि कदाचन्।। नदीन्योतीं षि वीक्षित्वा तहा ह्याभिमुखोऽपिया। प्रत्यादित्यं प्रत्यनि लं प्रतिसोमं तथेवं च ॥ आहत्य मृतिकां कुर्यात् लेपगण्डा-पकर्षणम्। कुर्यादतन्द्रितः शोचं विशुन्देरुन्हतो द्केः॥ नाह रेन्मृतिकां विषः पांश्रालां न्च कर्दमान् । ने मार्गान्नोषरादेशा च्छींचविष्टोऽपरस्य च॥ न देवायतनांत् कुड्याद् यामान्न-

तु कदाचन । उपस्पृशेत्तं नित्यं पूर्वोक्तेन विधानतः ॥तार -व्याहतिगायत्र्या वर्णनामेरणोः कमात् । तन्मन्तितं पिवेद्य स्तु मन्त्राचमनमीरित्म् ॥ गायत्र्या चमनेनाथ श्रुत्याचमन-मीरितम्। ॥इत्योशन्सस्मृतो दित्रीयोऽध्यायः॥

एवं देहादिभिर्युक्तः शीनानारसमन्वितः। आहत्याध्य-यनं कुर्व्याद्यासमाणो गुरोर्मुखम् ॥ नित्यसुद्यतपाणिश्व स न्ध्याचारसमन्वितः । आस्यतामिति चोक्तश्च नासीनाभिमु खं गुरोः ॥ प्रतिश्रव्णसम्भाषे शयानो न समाचरेत्। आ-सीनी नच भुञ्जानी न तिष्ठन प्राड्युखः । नच शय्यास नं नास्य सर्वेदा गुरुसन्निधी ॥ गुरोस्तु चक्षुविषये न यथेषा सनी भवेत्। नोदाहरेदस्य नाम परीक्षमाप् केवलम् ॥न चै वास्यानुकुर्वीत ग्रानिभाष्ण्चेष्टिनम् ॥ गुरोर्यत्र परीवादो -निन्दा वापि पवर्तते । कुणी तत्र पिधातव्यी गन्तव्यं परितो उन्यतः ॥ दूरस्थो ना्र्चयदेवान्न कुद्दो नान्तिके स्थियः ।न नै गास्योत्तरं ब्रेयान्न तेनासीत सन्तिधी ॥ उद्कुम्भं कुशानु पु ष्यं समिधोऽप्याहरेत्सदा। मार्जनं रेपनं नित्यमङ्गानां वै स मान्रेत्॥ नास्य निर्माल्यश्यनं पादुकोपानहाविषि। आ कामेदासनं तस्य च्छायामपि कदाचन ॥ येदन्तकाषादी-न् रुख्या न चास्ये विनिवेदयत्। अनापृच्छ न गन्तव्यन्तत्व पियहिते रतः ॥ न पादी स्थापयेदस्य सन्धि। ने कदाचन। जुम्मितं हसितंचैव क्षपकं पावरणं तथा॥ वर्जयेत् सन्नि-धो नित्यं नखस्फोटनमेव च। यथाकालमधीयीत यावन्न विमना गुरुः। आसनादी गुरोः कूर्चे फलके वा समाहिनः॥ आसने शयने पाने नच तिष्ठेत्कथेञ्चन । धावन्त म्नुधावे त गच्छन्त मनुगच्छति॥ गजीषुयान पासाद पस्तरेषु कटे

षु च। नासीत गुरुणा साई शिलाफलतलेषु च ॥ जितेन्द्रियः स्यात् सततं वश्यात्माकोधनः श्रुविः । प्रयुञ्जीत सदा वाचं मधुरां हितमाषिणीम् ॥ गण्डमाल्यां रसं कन्यां सूक्ष्मप्राणि विह्सिनम् ।अभयङ्गञ्चाञ्चनोपान्च्छन्रधारणमेव च ॥का मं कोधं भयं निद्रां गीतवादित्रनर्तन्म्। घुनं जनपरीवादं -स्त्रीमेक्षालापनं तथा ॥ परोपतापपे फन्यं पयलेन विक्री येन्। उद्कुम्भं सम्मनसो गोश्कृन्मृतिकां कुशान्॥ आहरे-द्यावदन्यानि भैक्षञ्चाहरहश्चरेत्। तथेव उवणं सर्वे पास्यं पर्युषितं नयेत्। अनन्यदंशीं सततं भवेद्रीतादिनिःस्पृहः। नाद्विञ्चेव वीक्षेत् न चरेद्दन्तधावनम्॥ एकान्तुमुकािकः स्त्रीभिः श्रदाधेरिभभाषणम्। गुरुखिषं भेषजार्थं न पयुञ्जी तकामतः॥ यछापकषीणं स्नानन्नाच्रेद् वैकदाचन। न्या-तिसृषी गुरुणा स्वान् गुरूनिभगदयेत्॥ विद्यागुरुष्वेतदे य नित्यवनिः स्वयोनिषु । मनिषेधत्स् वा धर्म हितं चौपदि शन् स्वयम्॥ श्रेयः सर्गुरुषद्वनि नित्यमेवं समावरेत्। ग्र रुपलीपु पुत्रेषु गुरोक्त्रीय स्वबन्धुषु ॥बाहः समानजनमा गा शिष्यो वा यज्ञकर्मासु। अध्यापयन् गुरुक्ततो गुरुवनमा नमहीति॥ उत्सादनं वै गात्राणां स्नानं चो खिएभोजने। न कुर्याद् गुरुप्तरस्य पादयोः शोचमेव च॥ गुरुवस्मतिपूज्या-श्च सवणा गुरुयोषितः। असवणस्ति संपूज्याः पृत्युत्थाना भिवादनैः॥ अभ्यञ्ज्ननं स्नापनञ्च गात्रोत्सादनमेव च। गु रुपत्यां न कार्याणि केशानाञ्च प्रशोधनम् ॥ गुरुपत्नी च युवती नाभिवाद्येह पादयोः। कुर्जीत वदनं भूम्यामसावह मिति झुवन् ॥ विघस्य पाद्यहणमन्बहञ्चाभिवादनम्। गुरु दारेषु कुळीत सदा धमीमनुरमरन् ॥मातृब्बसा मातुला-

नी श्वश्रुश्वापि पितृष्वसा। संपूज्या गुरुपही च समास्ता गु रुभार्यया॥भातृभार्योपसंयोह्या ज्ञातिसम्बन्ध योषितः। पितुर्भगिन्या मातुश्य जायायाच्य स्वसर्यपि॥मातृबद् रुनि मातिष्ठेन्माता तेभ्यो गरीयसी। एवमाचार्सम्पन्नमात्मवन्तं सदाहित्म्॥ वेदं धर्मे पुराणञ्च तथा तत्वानि नित्यशः। सम्ब त्सरीषिते शिष्ये गुरुर्ज्ञानमनिर्दिशेत्॥ हरते दुष्कृतं तस्य शिष्यस्य वत्स्रे गुरुः । आचार्य्यपुत्रशुश्रुषु ज्ञानदो धार्मिकः श्विः॥शक्तो गुर्विद्यमिधावी नाध्याप्यौ दश्यम्मितः। कृत ज्ञा तथा दोही मेधावी इहमरूनमः ॥ पाप्य विपोऽप्यविधि चत् षडध्यात्मा दिजोत्तमेः। एतेषु ब्राह्मणो दानमन्यत्र न य षोदिनम् ॥ आचम्य संयतो नित्युमधीयीत उदङ्युखः । उप संगृह्य तत्यादी वीक्यमाणी गुरोमुरबम्॥ अधीष्व भी !रिति ब्रुयात् विरामोऽस्विति वाचयेत्। पाक्कशेषु समासीनः पवि-वैरैवपोवितः॥ पाणायामे स्थिभिः पूर्व तथाचोडुनर्महित। ब्रा ह्मणः प्रणवं कुर्यादेने च विधिवद् हिजः ॥ कुर्याद्ध्ययनं नित्यं ब्रह्माञ्जिछिकृत्स्थितिः । स्वैषामेवभूतानां वेदश्यक्षः सनातनः ॥अधीते विधिवन्तिसं ब्राह्मण्याच्यवते उन्यथा । योऽधीयीत् ऋचो नित्यं क्षीराहुत्या स् देवताः ॥ शीणाति तर्प यन्त्येनं कामेस्तृप्ताः सदेव हि। यज्ञं योऽधीते सतत् द्धाः भीणाति देवता ॥ सामान्यधीते भीणाति धृताहतिभिर्न्बह म्। अथर्गाद्गिरसो नित्यमध्यात् भीणाति देवता ॥धर्माद्गा नि पुराणानि मीमांसे स्तृप्यते सररान्। अपां समीपे नियती नैत्यकं विधिमाश्रितः॥ गायत्रीमप्यधीयीत गत्वारणयं समा हितः। सहस्रपरमां देवीं शतमध्यात् दशापराम्॥ गायत्रीं चैजपेन्नित्यं जपन्य त्रिः प्रकीर्तितः। गायत्रीं चैव वेदांत्र्य तुल

या तुलयन् अभुः॥ एकतश्यतुरो वैदान् गायत्रीं च तथैकतः। ओङ्कारमादितः रुखा चाहतीस्तदनन्तरम्।। ततोऽधीयीत ए कार्ये श्रिया परमयान्वितः। अध्यापयेतु एकायं गायत्री पर या तु या॥ पुराकल्पे समुखन्ना भूभीवः स्वर्गनामतः। महाच्या हतयः स्तिस्नः सर्वाशानीबर्हणाः ॥ यधानं पुरुषः कालो ब्र-हाविष्णुमहेश्वराः। सत्यं रजस्तमस्तिस्रः कामा व्याहतस्त्रयः ॥ओङ्कारस्तत्परं ब्रह्म गायत्री स्यात्तदक्षरम्। एवं मन्त्री म हायोगें साक्षात्सार् उदाह्तः॥ योऽधीतेऽहन्यमाने तां गाय त्रीं वेदमातरम् । विज्ञायार्थे ब्रह्मचारा स याति परमाङ्गतिम्॥ न गायत्र्याः परे जप्यमेतदिज्ञानमुच्यते । शावणस्य तु मास-स्य पीर्णमास्यां दिजोत्तमाः !॥ आषाद्यां मीष्ट्रपद्यां वा वेदोप क्रमणं स्मृतम्। उत्सुज्य यामनगरं मासान्विमोऽर्थपद्ममान् ॥अधीयीत शुची देशे ब्रह्मचारी समाहितः। पुष्ये तु छन्दसाँ क्रयोद्दिहरुत्सर्जनं दिजाः॥ माधेवा मासि संयासे प्विहि म थमें इनि। छन्दांस्यूर्धिमधीयीत शुक्रपक्षे तु वै दिजाः। ॥ वेदाङ्गानि पुराणं वा कृष्णपक्षे तु मानवः । इमन्तित्यमनध्या यानधीयानी विसर्वयेत्॥ अध्यापनञ्च कुर्व्याणो अध्यष्य न्निप यहातः । कम्धिरे दिवा रात्री दिवावासं समूहने ॥विद्य त्त्तनित्वषिषु महोल्कानाञ्च पान्ने। आकस्मिक मनध्याय मेतेष्वेव प्रजापतिः॥ एता न स्युर्दिता नाद्यान्यद्पागृदुष्कृता दिषु। तदा विन्धादनशीय मन्यते जायदर्शने ॥ निर्धाते वाथू चलने ज्योतिषां चोपसपीणे। एतानकालिकान् विन्धादन्थीं-याग्ताविष ॥ प्राग्दुक्कतेष्विनिषु च विद्युत्स्तेनितिस्वने ! सधो हि स्यादनध्यायमनृतं मुनिरब्बीत्।।निध्याय एवं स्याद् यामेऽरण्येषु नगरेषु च।कर्मनेषुण्यगामानां पूनिग-

न्धे च नित्यशः॥ अन्त्यानां स्दुन्ते ग्रामे वृषहस्य च सन्निधी। अनध्यायो निन्धमाने समवाये जनस्य च ॥उद्ये मध्यरात्री च विण्मूत्रे च विसर्जयेत्। उच्छिष्टभाद्भाक् चैव मनसा न विचिन्तयेत् ॥ प्रतिगृह्य हिजो विद्यादेको हिष्टस्य केतनम् । त दाह् कीर्तयेद् ब्रह्म राज्ञो राहोश्य सूत्के ॥ धावको उन्निसस्य स्मेहोगाधस्य तिषुति। विपस्याविदुषो देहे नावद् ब्रह्म नकी त्येत्।शयानः प्रीदपादश्च रुत्वा वै वावसत्थिकाम्। नाधी यीतामिषञ्जग्धा सूतकान्नार्यमेव च ॥ नीहारेब्णिशब्देश्व सन्ध्ययोरुपयोर्पि। अमान्स्यां नतुर्दश्यां पीर्णमास्यष्टमी षुच ॥ उपाकर्माणि चोत्सर्गे निरानं सपणं स्मृतम्। अष्टका सु च कुर्वीत मिनमान् तासु रात्रिषु ॥ मार्गशिष तथा प्रोषे मा घें मासे तथेव च। तिस्रोऽष्टकाः समार्याता रूपो पक्षेचसू रिभिः ॥ श्लेष्मात्कस्य छायायां शाल्मलेमेधकस्य च । कदाचि दपि नाध्येयं कोविदारक्षिययोः ॥समान्विद्रे नुमृते तथा सब्रह्मचारिणि। आचार्ये संस्थिते वापि विरावं सपणं स्मृत म्। छिद्रेष्वेतेषु वियाणां अनध्यायाः प्रकृतिनाः। हिंसाना रोक्सास्ते च तस्मादेतान् विसर्जयेत्। नैत्यके नास्त्यन -ध्यायः सन्ध्योपासन् एव च । उपाकम्मीणि कम्मन्ति होमम न्तेषु चैव हि॥ एकार्चमंथ्वैकं वा यजुः सामाथवा पुनः।अ ष्टकायाः स्वधीयीत मारुते चापि वापदि॥ अन्ध्यायो विना शेच नेतिहासपुराणयोः। नधम्मिशास्त्रेष्व्नयेषु पर्वण्येता न विसर्जयेन्॥ एष धर्माः समासेन कीर्तितो ब्रह्मचारिणः। बहाणाभिहितः पूर्वमृष्णां भावितात्मनाम् ॥ योऽन्यन् कु रुते यत्मनधीत्यं श्रुतिं हिजः। स ये मूढी ने सम्भाष्यो वद बाह्यो हिजातिभिः॥ न वेदपाठमात्रेण सन्तुष्टो वे हिजोत्तमः ओंशनसस्मृती।

३३६

पाठमात्रावसान्स्त पुद्रेः गीरिव सीदित ॥ योऽधीत्य विधिवहे दं वेदान्तं न विचारर्थेत् । स सान्वयः शूद्रकल्पः स पाचं न प पद्यते। यदि या अन्तिकं वासं कर्तुमिच्छति वै गुरी। युक्तः परिचरेदेनमाशारीरविमोक्षणात् ॥ गत्वा वनं वा विधिवज्नह याज्ञातचेदसम्। अधीयीत सदा नित्यं ब्रह्मविद्यां समाहितंः ॥सावित्रीं शतरुद्रीयं वेदानां च विशेषतः । अभ्यस्तातं वे दं भसास्त्रानपरायणः ॥ वेदं वेदी तथा वेदाः वेदान्वे चतुरो हिज!। अधीत्य विधिगम्यार्थं तृतः स्तायाद् हिजोत्तमः ॥ वेदोदितं स्वकं कम्मी नित्यं कुर्यादतिन्द्रतः। अकुर्वाणः पत-त्याका निरयानित्भीषणान्।। अभ्यसेत्प्रयतो वदं महायज्ञा न्न हापयेत्। क्यदि गृह्याणिकम्माणि सन्ध्योपासनमेव च॥ निसं स्वाध्यायशीलः स्यानित्यं यज्ञोपबीतकः। सत्यवादी जितकोधो ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥ सन्ध्यास्नानरतो नित्यं ब्रह्म यज्ञपरायणः। अनस्यो मृदुद्नो गृहस्थः पत्यवत्ति॥ उ दानाय ततः कुयित्समानायेति पञ्चमम्। विज्ञाय तत्त्वमेते षां जुह्यादात्मनि दिजः॥शेषमन्नं यथाकामं भुञ्जीत व्य ज्जेनेर्युतम्।ध्यात्वा तन्मानसे देवमात्मानं वे प्रजापतिम्॥ अमृतापिधानमसीत्यपरिष्टादपः पिबेत्। आचान्तः पुन्रा चामद्यं गीरिति भाष्येत्॥ अधीत्य विधिवहेदानर्थे चैवो पलप्यं ग्। धर्माकार्यनिवृतिस्ये देन दिज्ञान मुख्यते ॥ यः स्य यं नियनो भूता धर्मापाठं पठेद् हिजः। अध्याप्येच्छ्रावयेद् वा ब्रह्मडोके महीयते॥ मातः रुत्यं समाप्याथ वैश्वदैवपुरः सरम्। मध्याद्धेः भोजयेदियान् सम्यक् भृतात्मभावनः॥ पाडन्त्रेरगे नानि भुन्नीत सूर्याभिमुख एवं गा आसीन-स्तासने शुद्धे सूमी पादी निधापयेन्।आयुब्यं पाङ्खरगो

भुइन्ते युशस्यं दक्षिणामुखः। श्रियं मत्युङ्गुखो भाइन्ते ऋ णं भड़के उदङ्गुरवः। पश्चात् स भोजनं कुर्यात् भूमी वा निर्धापयेत्।।उपवासेन तत्तुत्यमित्येवमुभाना ब्वीत्।उ प्रिप्य शत्वी देशे पादी प्रक्षाल्य वै करी ॥ आचान्ती की ध नो न्कं पश्चाचु भोजनं चरेत्। इह व्याह्रतिभिस्त्वन्नं परिधा योद्केन तु ॥परिषेचनमन्त्रेण परिषिच्य नतः परम् । चित्रगु स्वारुं दत्वा तद्नं परिषिच्य च॥ अमृतोपम्तरणमसीद्या-पोशनिकयां चरेन्। स्वाहायणवसंयुक्तं पाणायेत्याहानं त तः ॥अपानायाहुतिं हुत्या व्यानाय नदनन्तरम् । उदानाय-नतः कुर्यात्समानायैति पञ्चमम् ॥ विज्ञाय नत्वमेनेषां जु ह्यादात्मनि दिजः । शेष्मृन्नं यथाकाम् भुज्जीत् व्यञ्जने-र्युत्म्। ध्यात्वा नन्मानसे देवमात्मानं वे प्रजापतिम् ॥अमृ-तापिधानमसीत्युपरिष्टादपः पिबेन्। आचान्तः पुनराचाम द्यं गौरिति मन्त्रतः ॥ त्रिप्दां वा त्रिराच्त्य सर्वपापपणाश नीम्। प्राणानां यन्थिरसीत्यारुभेद्दयं ततः॥ आचम्या इगुषूमानीय पादाइ गुष्ठेन दक्षिणम्। निः स्रावये दस्तज लेसू देहस्तः समाहितः। हलानुमन्त्रणं क्याति स्वधायामि ति मन्त्रतः। अथोक्षणे स्वमात्मानं यो जपेद् ब्रह्मणेति च ॥ सर्वेषामेव यागानामात्मयागः परः त्मृतः। अथ श्राह्ममावा स्यापाप्तं कार्यं हिजोत्त्मेः ॥पिण्डान्याहार्य्कं श्राह्मं स्राणं राजनिशस्यते। अपराहे दिजातीनां मशस्तेनामिषेण नु॥ मितपत्यभृति हिन्यास्तिथयः रूष्णापश्वके। चनुर्दशीं वर्जीव त्वा पञ्चमी द्युन्रोत्तराम् ॥ अमावास्याष्ट्रकास्नस्यः पीर्णमा स्यादिषु त्रिषु। तिस्तश्याप्यृष्टकाः पुण्या मासि पञ्चद्शी नथा॥ त्रयोदंशी मधा हष्णावर्णासः त्वविशेषतः। नैमिनिकं तुकर्न-

् औरानसस्पृती। 335 व्यं दिवसे चन्द्रसूर्ययोः ॥ बालकानां च मरणे नारकी स्यात्ततो उन्यथा। काम्यानि नेच श्राह्मानि शस्यन्ते यहणादिष्य॥ अय ने विष्ये वैव व्यतीपाते त्वनन्तुकम्। संकान्त्यामृक्षयं श्रा-न्दं तथा जन्मदिनेष्वपि॥ नक्षत्रतिथिवारेषु कार्य्य काम्यं वि रोषतः। स्वरंति उभते रुखा रुतिकास दिजोत्तमाः!॥ द व्यब्राह्मणसम्पत्ती न काल नियमं ततः। कर्मारमोषु सर्वेषु क्रमीदिभ्यद्यं ततः॥ पुत्रजन्मादिषु शाहं पार्वणं पार्वणं स्मृत म्। अहन्यहिन नित्यं स्यात् काम्ये नैमितिकं पुनः ॥ सन्तिकः ष्ट्रमतिकस्य श्रोभियं यः प्रयच्छति। सतेन कर्मणा पापी द हत्पासप्तमं कुरुम् ॥ यदि स्याद्धिको विषः शीरुविद्यादिभिः स्वयम्। नसी यहोन दानव्यमितकम्यापि सन्निधिम्॥अपू पञ्च हिरण्यं च गामथ्वं पृथिवीं तिलान्। अविदान् पतिगृ हानी भरमीभवति काष्ठवत् ॥ मासुमारोहणं कुर्यात् भर्तृ-चित्यां प्रतिव्रता। तन्मृताह्नि संप्राप्ते पृथक् पिण्डे नियोज्ये न्॥धर्मिपिण्डोदकं श्रान्द्रं पार्वणं नग्नसंज्ञकम्। अस्यसञ्चय नं कम्मे दशाइभवनं तथा ॥ औधं दशाह मुत्कषे शेषस्य य दिवा भवेत्। पिण्डोदकं नवश्राः पुनः कार्ये यथाविधि॥ य द्यास्थिसञ्ज्यं कर्मा दशाहमूर्ध्वभाक भवेत्। नष्टे वापहतेऽ स्थीनि दाइयेद्दि वा पुनः ॥ क्यदिहरहः भादं भमीतिपन को हिजः। सामिकोऽ निमको वापि नीथे वेषाविद्योषतः॥ उत्तानं वा विवर्त्तं वा पिनुपात्रं यदा भवेन् । अभोज्यं तद्भवेद नं कुदेः पितृगणेश्य तैः ॥ अन्महीनं कियाहीनं मन्लहीनं तु यद्वेन । सर्वमञ्जिद्र मित्युत्का ततो यहोन भोजयेत्॥ एको हिष्नु विजेयं रहिशाहं तुं पार्वणम्। एतल्ज्यविधं शाह भृगुपुत्रेण स्वितम्। यात्रायां षष्ठमारव्यातं नत्ययहोन पा-

वनम्। इन्द्रयेत् सप्तमं शादं ब्रह्मणा परिकीर्तितम् ॥ देवि कं चारमं शाहं यत् रुत्या मुच्यते भयात्। सन्ध्यारात्री न कर्तव्यमहोरात्रमदर्शनात् ॥ देशानान्तु विरोषेण भवेत् पु-ण्यमनन्त्रम् । गयायामक्षयं श्राह् प्रयागे मरणादिषु ॥ गाय न्ति गाथां ते सर्वे कीर्तयन्ति मनीषिणः॥ एष्ट्या बहुवः पुत्राः शीलवन्ती गुणान्विताः। तेषां तुसमव्तानां य्येकोऽपि गयां व्रजेत्।।गयां पाप्यानुषङ्गेण यदि श्राहं समान्रेत्। नारिताः पित्रस्तेन स याति परम् दुनिम्। बाराइपर्वते चैव गयां चैव विदोष्तः। एवमादिष्वतीतेषु तुष्यन्ति पितरस्त्दा॥ बीहिपि श्र्य यवैमिषिरिद्रिम् छफ्छेन् वा। श्याम् फेर्स्य तु वे शाकेनीवा रेश्व पियइ गुभिः॥ गोधूमेश्व तिले मुद्देमिषेः पीणयते पित् न्। मृषान् फलरसानिध्तन् मृदुकान् सस्यदंडिमान् ॥ विदा-च्यात्रि करण्डात्र्य शाहकाले मदापयेत्। हाजां मधुयुतां द चाद् द्धाश फ्रिया सह।। द्यान् श्राहे प्रयतेन शृह्गं गज शुकैर्रकान्। द्वी पासी म्ल्यमांसन विमासान् हरिणीन न॥ औरफ़ोणाथ चतुरः शाके नेह च पञ्च तु । षण्मासांस्डागमां सेन रीरवेण चंचे नतु ॥ दशमातांस्तु तृप्यन्ति वराहमहिषा विकै:। शशणीचकयोमसिमिसानेकादशेव तु ॥ सम्बत्सर-न्तु गच्येन प्यसा पायसेन च। सदेव सस्यमांसेन तृप्ति-हींदशवार्षिकी।। कालशाकं महाशाकं खगलोहामिषं मधुः अनन्तान्येव कल्पन्ते मूडान्यन्यानि सर्वशः॥ कृत्वा ह च्या स्वयं वाथ मृतानाहत्य वे हिनः। द्याच्छाद्रे पयहोन दत्तस्यास्यमुच्यते ॥ प्रिप्पछीकमुकं चैव तथा चैव मसूर-कम्। कश्मलालाबुवात्तिकान् मन्त्रणं सारसं तथा॥ कूटञ्च भद्रमुखञ्च तण्ड्ढीयकमेव ने। राजमापांस्तथा क्षीरं माहि

् औश्रानस्स्मृती ।

380

षञ्च विवर्जयेत्॥कोद्रवान् कोविदारांश्व स्थलपाक्यामरी-स्तथा। वर्जयेत्सर्वयद्गेन श्राह्यकाले हिजोत्तमः॥ ॥ इत्यो शनसस्मृती तृतीयोऽध्यायः॥

स्नात्वा यथोक्तं सन्तर्य पितृदेवान् अषीं स्तृथा। पिण्डा न्वाहार्यकं श्रादं कुर्यात् सीम्यमनाः शुनिः ॥ पूर्वमेव निरी-क्षेत्र ब्राह्मणान्वेदपारगान्। तीर्थे तद्यक्यानां प्रदाने चातिथिः स्मृतः॥ ये सोमपाननिर्ता धर्माज्ञा सत्यवादिनः त्रतिनो नियमस्याश्च ऋतुकाराभिगामिनः॥ पञ्चाग्निरप्य धीयानो यजुवैद्विदो्अप च। बह्बुस्तु सवणात्र्य विम्धुर्वा थ वा भवेत्।। श्रीनाविकेन च्छन्दो वे ज्येष्ठसामगणोऽपिचा। अथवंशिरसोऽध्येत रुद्राध्यायी विशेषतः ॥ अग्निहोत्रपरो विद्यान् पापविच् षडङ्गावित्। गुरुदेवाग्नियूजासः पसकी ना नतत्परः॥ अहिंसोपरना नित्यं अपनियाहिणस्तथा । सिवणी दाननिरता ब्राह्मणाः पड्निपावनाः ॥ असमान पवरगा असगोता रतथेव च । असम्बन्धश्च विज्ञेयो ब्राह्मणाःपड्-किपावनाः॥ भोजयेद्योगिनं पूर्वं तत्त्वज्ञानरतं परम्। अहा मे नैषिकं दान्तमुपकुर्वाणः तुवा ॥ तदलाभे गृहस्यस्तु मु मुक्षः सङ्गवर्जितः। सर्वालाभ साध्कं वा गृहस्थं मा विभोज यन्। परंते गुणतत्त्वज्ञं योऽभातीह यतिभवे। परंवेदवि दांतस्य सहस्रादितिशिच्यते॥ तस्माद्यक्षेन योगीन्द्रमीश्वर-ज्ञान्तसरम्। भोजयन्द्रव्यक्रव्येषु अलामादिह च दिजान्॥ एष वे प्रथमः कल्पः पदाने हव्यकव्ययोः । अनुकल्पः स्व-यं ज्य सदा स्दिरनु छिनः॥ मानाम्हं मानु उछा सस्य श्वशुर् गुरुम्। देतिहम विषुधं सर्वमानिकर्याभ्य भाजयेत्॥ न श्रान्हे भोजयेनिम्नं धंनैः कार्योऽस्य संयहः। पेशाचदि

णाही नेव्यमित्र फलसम्पदः ॥ कामं श्राद्धे ऽचीये निमनं नाभि स्पमतित्वरम्। दिषतां हि हविर्भुक्तं भवति पेत्यनिष्मलम्।। तथानुचेद्दविद्त्वा न दाता लभते फ्लम्॥ यावतो यस ते पिण्डान् हव्यक्वेषु मन्त्रवित् ॥ ततोऽहि यसते प्रत्य-दीप्तान् स्थूलानधो मुखान्। अथ विद्यानुक्ले हि युक्ताश्र स वृताऽथवा ॥ यत्रेते भुञ्जते हव्यं तद्भवेदासुरं हिजाः।। य श्र वेदश्य वेदीच विच्छेदोत त्रिप्रषम् ॥ स वेदुर्बोह्मणो त्रोयः श्राह्यदो न कदाचन। शूद्र प्रष्योद्दतो राज्ञो वृष्णो या मयाजकः ॥ वधबन्धोपजीवी च षडेते ब्रह्मबन्धवः । दत्ता तु वेदानत्यर्थे पतितान्मनुरब्रवीत् ॥ वेदविक्रयिणश्चेते श्रा-द्वादेषु विगहिताः । श्रातिविक्रयिणो यत्र प्रपूर्वाः समुद्र गाः॥ असमानान् याजयनि पतितास्ते पकी तिताः। अस स्तुताध्यापका ये भृतकान् पाठयन्ति ये॥ अधीयीत तथा वेदान् मृतकास्ते पकीर्तितोः । एइआवक निर्गृद्ाः पञ्चरा त्रविदी जनाः ॥ कापालिकाः पात्रपताः पाषण्डाश्चीय तद्दि-धाः। यस्याश्वनित ह्वींष्यते दुरात्मानस्तु तामसाः ॥ न् त्-स्या सद्भवेत् शादं पेत्यापि हिं फलपदाः । अनाश्रमी यो हि जः स्यादाश्रमी स्यान्निरर्धकः ॥ मिथ्याश्रमी च विपेन्द्रा विज्ञेयाः पङ्क्ति दूष्काः । दुश्चमीं कुन्रवी कुष्ठी विज्ञी च भ्यावदन्तकः ॥ कूरो बीजनकश्रीव स्तेनः द्वीबोऽथ नास्ति कः। मद्यपीर्षती सक्तो गिरहा दीधिष्पतिः॥ आगारदी-ही कुण्डाशी सोम्बिक्यिणो हिलाः। परिवेत्ता तथा हिंसः परिवेतिरिरास्तिः ॥पीनर्भवः कुसीदीच तथा नक्षत्रदर्श कः।गीत्वादित्रशीलश्च व्याधितः काणएव च ॥हीनोङ्गश्चा निरिक्ताङ्गो खबकीणी तथेव च। कन्याद्रोही कुण्डगोठी अ

ओ्रानसस्मृत<u>ी</u>।

387

भिशक्तोऽथ देवलः ॥ मित्रधुक् पिश्वनश्चेव नित्यं नार्या नि कन्तनः । मातापितृगुरुत्यागी दारत्यागी तथेव च ॥ अन पत्यः क्रसाक्षी पाचकोरगजीवकः । समुद्रयायी कृतहा रथ्यासमयभेदकः ॥ वेदनिन्दारतश्चेव देवनिन्दारत स्तथा दिजनिन्दारतश्चेव ते वज्यीः श्रान्दकर्माषु ॥ कृतन्नः पिश्वनः क्रो नास्तिको वेदनिन्दकः । मित्रघ्नः पारदार्यश्च प्रिथ्याप णिडतद्षकः ॥ बहुनात्र किमुक्तेन विहितान्येव कुवते । निदि त्तान्याचरन्तेते वज्यीः श्रान्दे प्रयह्मतः ॥ ॥ इत्योशनस स्मृतो चतुर्थे। ध्यायः॥

गोमयूनोदकैः पूर्व शोधियत्वा समाहितः। सन्निपात्य हिजान स्वीन साधितः सिनमन्त्रयेत्॥ श्र्वो भविष्यति मे शाहं पूर्वेद्युरिमवस्यति॥ असम्भवे परेद्युवी यथोकेर्रकः णेयुतम् । तस्य ते पितरः श्रुत्वा शाह्कार उपस्थिते ॥अन्योः न्यमनसा ध्यात्वा सम्पतन्ति मनोजवाः । ब्राह्मणस्ते स-मायान्ति पितरो ह्यन्तरिक्षगाः॥ वायुभूताश्च तिष्ठन्ति भु-का यानि पराङ्गतिम् । आमन्त्रिताश्च ये विभाः श्रादका ल उपस्थिते ॥ वसेरिनियताः सर्वे ब्रह्मचर्घपरायणाः ।अ कोधनोऽत्वरो युत्र सत्यवादी समाहितः॥ भरमेथुनम्भा नं भाइभुगवर्जीयेज्जपम्। आमन्त्रितो ब्राह्मणो वै योऽ न्यस्मे कुरुते क्षणम् ॥ आमन्त्रियत्वा यो मोहादन्यं वाम न्त्रयेत् दिजः। स तस्माद्धिकः पापी विश्वाकीरोहि जाय ते॥ श्रान्द्रे निमन्त्रितो विमो मैथुनं योऽधिगच्छति। ब्ह्यहू व्यामवाभीति तिर्यक्योनिषु जायते ॥ निमन्तितश्य यो वि मो स्थानं यानि दुर्मितिः। भवन्ति पितरस्तस्य तन्मासं पां शुभोजनम्॥ निमान्वतश्य यः श्रान्हे प्रकुर्यात्कलहं हिजः।

भवन्ति तस्य तन्मासं पितरोम् छभोजनाः ॥ तस्यान्तिमन्ति तः श्राद्धे नियतात्मा भवेद्दिजः । अकोधनः शीचपरः क त्ती चैव जितेन्द्रियः॥शोभैते दक्षिणां गला दिशं दभित समाहितः। समूढानाहरेद्दारि दक्षिणायान् सुनिर्मछान्॥ दिसणां प्रवणं स्विग्धं विभक्तशुभलक्षणम्। शुविदेशं वि रिसात्तुषु । विविक्तेषु च तुष्यन्ति दत्तेन पितरस्तथा ॥ परस्य भूमिभाग तु पितृणां चै न निर्विपत् । स्वामित्वात् स विहन्येत माहाचत्रियते नरेः ॥अटच्यः पर्वताः पुण्या स्ताथिन्यायत नानि च । सर्वाण्यस्यामिकान्याहुर्निह तेषु परियहः ॥तिछां श्याचिकरेत्त्व सर्वतो बन्धयेद् अजः । असुरोपहतं सर्वति कैः शुष्यत्यजेन या॥ नृतोऽनं बहुसंस्कारं नैक्ययन्तनम्य-यम्। चोष्यं पेयं समृद्धं च यथाशात्त्युपकल्पयेत्॥ ततो नि रते मध्याहे असलोमन्रवान् दिजान्। अभिगम्य यथामार्ग भयच्छे इन्ते पावनम् ॥ तैलम्भयञ्जनं स्नानं स्नानीयं च पृथ विध्म्। पात्रेरीदुम्बरे द्धा देश्वदेवं तु पूर्वक्म् ॥ तत्र स्नाला निर्तेभ्यः मत्युत्यान्सनाञ्जिषः। पाद्यमोचमनीयं च संय-यच्छेद्यथाकमम्॥ येचाव विवदेरन् तु वियाः पूर्व निमन्ति नाः। माङ्युरवान्यासनान्येषां सद्भीपिहितानि च्॥दक्षिणा चैकदर्भाणि पोिसतानि तिसोदकैः । तेषूप्वेशयदेतान् ब्रा ह्मणान् देवकत्पकान्॥ अस्यन्ध्यमिति संकल्य खासिरं-स्ये पृथक् पृथक् । ही देवे पाडनुसी पिश्यंत्रय श्रोदङ्च-खास्तथा ॥ एकेकं वा भवेत्तत्र एवं मातामहेष्वपि । सन्तियां देशकारो च शीचं ब्राह्मणसम्मदम् । फन्नेतान्विस्तरोहन्ति तस्मान्नेहेत विस्तरम्॥ अथवा भौजयेदेकं ब्राह्मणं वेदपा

औशनसस्मृती ।

388

रगम् । श्रुतिशीहादिसम्पन्नमस्रक्षणविवर्जितम् ॥ प्रशस्तुषा त्रे चान्तन्तु सर्वस्मात् त्रयतात्म्नः। देवतायतने चास्मैत्रि लोकान् सम्प्रवर्तते॥ पाश्येद्ग्नी नद्नन्तु द्धाच ब्रह्मचा रिण। भिक्षको ब्रह्मचारीवाभोजनार्थमुपस्थितः॥ उपवि-एषु यच्छा दे कामन्तम्पि भोजयेत्। अतिथि येत्र नाभा-नि न नन्धादं पकाश्यते॥ तस्मान् पयलान्धिषु पूज्या अ तिथयां हिजे:। अतीर्य रमते शाहे भुञ्जते ये हिजातयः॥ काकयोनि वजन्त्येने दत्त्वा चैचन संशयः। हीनाङ्गः पतिनः कृषी विणक्षुक्तसनासिकः ॥ कुक्कुटः शूकर्श्वानी वज्यीः शाहेषु दूरतः। वीभत्समशुनिं म्लेन्छं न स्पृशेच रजस्वला म्। नीलक्ष्पायवसनं पाषण्डांश्व विवर्जयेत्। यत् तत्र कि यते कम्म पैतृके ब्राह्मणान् यति ॥ तुत्सवीमेवं कर्तव्यं वैश्व-देवस्य एजनम्। यथोपविषान् सर्वोस्तानसङ्क्रयादिभू-पणीः ॥ यो दिव्यो इति मन्त्रेण हस्तेत्वर्ध्य विनिक्षिपेत् । पदे याद् गन्धमाल्यानि धूपादीनि च शक्तितः ॥ अपूसव्यं ततः कृ ला पितृणां दक्षिणामुरगः। आगहनं ततः कुर्यादुशन्तस्ते-त्युचा बुधः॥ आवाह्य तदनुज्ञातो जपेदायान्त न स्ततः। श नौ देच्युद्र पात्रे तिछोऽसीति तिछांस्तथा ॥ किस्वा बाध्ये तथा पूर्वे दत्वा हस्तेषु वे पुनः। संस्नावांश्व नतः स्व्यन् पा त्रीकुर्योत् समाहितः॥ पितृभिःसममेतेन ह्यर्घपात्रं निधा यच। अग्नी करिष्येत्वादाय पृच्छेदन्नं घृतप्रतम्॥ कुरु-ष्यति हानुज्ञानी अहुयादपवीतवन्। यज्ञीपवीतिन्। होमः कत्तंच्यः कुशपाणिना ॥ प्राचीनाचीनकः पित्र्यं वैशवदेवं तु हो मयेन्। दक्षिणं पानयेज्ञानुं देवान् परिचरंस्तदा ॥ सोमाय रेपिनुमनं स्वधा नम इति श्रुवन् । अग्नये कव्यवाइनाय स्व-

धेति जुहुयात्ततः॥ अग्न्यभावे तु विशस्य पाणावेवोप्पाद येत्। महादेवान्तिके वाष गोष्ठे वा सुसमाहितः॥ नत्सीरभ्य नुज्ञातो कृत्वा देवपदिसणम् । गोमयेनोपिलप्योर्जा कुर्या त् स्वस्यच देवतम् ॥ मण्डसं चतुरसं वा दक्षिणं चोन्नतं सुभ म्। त्रिरुहिरवेतस्य मध्यं दर्भणिकेन चैव हि॥ तनः संस्ती-र्यं तत् स्थाने दर्भान् वे दक्षिणायकान् । त्रीन् पिण्डान्तिर्पे त्तन होवेः शेषान् समाहितः ॥ दाप्यपिण्डां स्तेन स्तन निमृ ज्याहेपभागिनाम्। तेष्वद्भीष्वयाचम्य भिराचम्य शुनैरस् न्।। उद्कं निन्येच्छेषं शनैः पिण्डान्तिके पुनः। अविक्षिप्या वहन्यात्तान् पिण्डान् यथा समाहितः ॥ अथ पिण्डाविश्वा नं विधिना भोजयेद् दिजम्। षडप्यत्र नमस्कुरयित् पितृ न् देवांत्र्य धर्मिविन् ॥ श्राह्मीजनकारे तु दीपी यदि विन-श्यति । पुन्रनं न भोक्तव्यं भुत्का चान्द्रायणं चरेत्॥माषा-नपूरान्विविधान्दद्यान् सरसंपायसम्। सूप्शाकफेळानिश न् पैयो दिध एतं मधु ॥ अन्नऋवेच यथाकामं विधिसम्भक्ष्य पेयकम्। यद्यदिष्टं हिजेन्द्राणां तत्तत् सर्वे निवेदयेत् ॥ धा न्यास्तिराश्च विविधाः शर्करा विविधा स्तथा। उष्णमन्नं हि जातिभयो दातव्यं श्रेय इच्छता ॥ अन्यत्र फलमूलेभ्यः पान केप्य स्तथेव न। नाश्र्णि प्तयेज्ञातु न कृप्यान्नानृतं वदे न्॥न पादेन स्पृशेदन्नं न चैनमवधूनयेत्। क्रोधेनेव च यद्तं यद् दत्तं त्वरया पुनः॥ यातुधोना विदुम्पन्ति यच पा पोपपादितम्। स्विन्नगात्रो न तिष्ठेत सन्तिधी त हिजन्मना म्॥ नच पत्रयेत काकादीन् पक्षिणस्तु न वारयेत् । तद्र्णः पितर स्तत्र समायान्ति बुभुत्सवः ॥ न दद्यात्तत्र इस्तेन प्रत्य क्षरवणं तथा । नचायसेन पात्रेण न चैवाश्वस्या पुनः॥का- भीशनसस्मृती।

388

ञ्चनेन तु पात्रेण तथा खीदुम्बरेण च । उत्तमाधिपतां याति खड़ेन तु विशेषतः॥ पात्रे तु मूण्मये यो वै श्रान्दे भोजयते पितृन्। संयाति नरकं घोरं भोका चैव पुरोधसः ॥ न पड़-त्त्या विषमं दयान् न याचेत न बादयेत्। याचितादिषं ना त्मानं नरकं याति भीषणम् ॥ भुञ्जीत वाग्यती अस्पृषं न ब्र्यात् प्रकृतान् गुणान् । ताबदि पितरोऽश्वति याव्नो-क्ती ह्विरीणाः ॥ नासयानोपविष्टत्तु भुन्तीत मथमं हिजः। बहुना प्रयतां सोध्तः पङ्क्या हराते किल्बिषम्॥ न कि ब्रिइजीयेन् शाहे नियुक्तरंतु हिजीतमः। न मापं प्रतिषध त न चान्यस्यान्नमीक्षयेत् ॥ यो नाशाति हिजोमाषं नियु-क्तः पित्कर्मणि। स प्रत्य पशुनां याति सन्ततामेकविंशति म्। स्वाध्यायं श्वावयेदेषां धर्माशास्त्राणि चैव हि। इतिहा-सपुराणानि शान्दकल्पान् सुशोभनान् ॥ ततोऽ न्यसुरस्जे द् भुक्तेष्वयतो विकिरेद् भुवि। पृष्ट्या स्वदित्मित्येव तृप्ता नाचामयेत्रतः ॥आचान्तानचुजानीयादितितो रम्यतामिति स्वस्थाः स्मेति च तं ब्रुयुब्रीह्मणा स्तदनन्तरम्॥ तनो भुक्तव तां तेषामन्नशेषन्तु वेदयेत्। यथा ब्र्यात्तथा कुर्यादनुज्ञा नस्त तैर्दिजेः ॥ पित्रोः स्वदितमित्येवं वाच्यं गोषेषु स्तृत-म्। सम्पन्नित्याभ्युदये देवेनोच्यत इत्यपि ॥ विस्ज्य ब्राह्म णांस्तान् वे देवपूर्वन्तु वाग्यतः । दक्षिणां दिशुमाकाङ्कन् याचतें इरो वरान् पितृन्॥ दातारी नौअभिवर्धन्तां वैदाः स-तिरेव च। श्रद्धां च नो मा व्यगमद् बहुदेयञ्च नोऽस्ति।। पिण्डांस्तु भोज्यं विशेषयो दद्याद्ग्नी जलेऽपि वा। यक्षिपेत्स त्सु विभेषु हिजोि छिएं न मार्जियेत्।। मध्यमं तं ततः पिण्ड द्यात्पत्ये सुनार्थकः । पक्षान्यहस्तावाचम्य ज्ञानिशेषेण

भोजयेत्॥ ज्ञातिष्विप च तुषेषु स्वान् भृत्वान् भोजयेत्ततः। पश्चात् स्वयंच पहािभिः शेषमन्नं समाचरेत्॥ नोदीसेत् नदु च्छिष्टं यावन्नास्तं गतोर्विः । ब्रह्मचर्या चरेनान्नु द्रम्पती रज नीं तु नाम्॥ दत्वा शाइं तनो भुत्का सेवते यस्तु मैथनम्। महारीरवमासाद्य की टयोनिं ब्रजेन् पुनः ॥ शुनिरको धनः शा न्तः सत्यग्दी समाहितः। स्वाध्यायञ्च तथा ध्यानं कर्ता भो का विसर्जयेत्॥ शाहं दत्त्वा परं शाहं भुज्जते ये दिजातयः महापातिकना तुल्या यान्ति ते नरकान् बहुन्॥ एष बोऽभि-हितः सम्यक् शाद्दकत्यः सनातनः । आमं निवृत्तियनित्य मुदासीनो न तत्त्वतः ॥ अनम्निरध्यगो वापि तुथैव व्यसना-न्वितः। आमशाद्धं हिजः कुर्याद् रूष्ठस्तु सदेव हि॥ आम श्रान्द्रं हिज् कुर्योद्विधिज्ञः श्रन्दयान्वितः । तेनाग्नी करण् क्रयानि पिण्डांसीरेब निर्वपेन्।। यो हि नद् विधिना क्र्या च्छा इं संयतमानसः। व्यपेत्रेत्वाषो नित्यं यात्यसी वैष्ण वं परम्॥ तस्मात् सर्वः पयत्नेन श्राहं कुर्याद् द्विजोत्तमः। आराधिनो भवेदीशस्तेन सम्यक् सनात्नः ॥ अपि मूहफ-छैबीपि प्रकुर्यान्निधेनो हिजः। तिछोद्के स्तर्यिखा पितृ न स्मात्वा हिजोत्तमः ॥ न जीवत् पितृक्ते द्याद्यामान्तं वावि धीयते। तेषां नापि समग्ददातेषां चैके प्रचस्ते ॥पितापि नागह सेव तथेव प्रामहः। यो यस्य धियते तसी देयं मान्यस्य ने नतु॥ भोजयेद्याप जीवन्तं यथाकामं तु भक्ति तः। नुजीवन्त मित्रकम्य ददाति श्रयते श्रातिः॥द्वापुष्या यणको द्वादीजहेतु स्तथाहि सः। रिक्तया भार्यया द-द्यानियोगोत्पादितो यदि॥ अनियुक्तः सुतो यस्तु श्वकतो जायने लिह। पद्या दीजिने पिण्ड क्षेत्रिणे तु तदन्यथा ॥

३४८ औषानसस्मृती।

द्दी पिण्डो निर्वपेनाभ्यां क्षेत्रिणे वीजिने यथा। कीर्नयेदथ वै कस्मिन् बीजिनं क्षेत्रिणे ततः॥ मृतेऽहनि तु कर्त्तच्यमेकोहिष् विधानुतः। आशीचत्वनिरीक्षाणः काम्यं कामयते पुनः॥पू र्चाहे चै्व कर्त्यं शाहमभ्यद्यार्थिना । देवं तत् सर्वमेवं -स्यान्न वैकार्या बहिः क्रियाँ ॥ दर्भाश्य परितः स्थाप्या स्तदा सं भोजयद् हिजान्। नान्दीमुखाश्च पितरः प्रीयन्तामिनि ग चयेत्। मातृथादं तु पूर्वे स्यात् पितृणां तद्नन्तरम्॥ ततो मानामेहानाच्य इन्हीं शाह्त्रयं स्मृतम् । देवपूर्व पद्याद् वैन कुर्याद भद्किणम् ॥ पाङ्चुरवी निर्विपेत् पिण्डानुप्रवीती समाहितः। स्थण्डिछेषु विचित्रेषु प्रतिमासु हिजातिषु॥पुषी ध्पित्र नेवेद्येभूषणेरिप पूज्यच। पूजियता मातृगणं कु योच्याह्मयं बुधः॥अहत्वा मात्यागञ्च यःश्रादं परिषे षयेत्। तस्य क्रीधसमाविषा हिंसामिच्छन्ति मातरः॥ इत्योशनसस्मृती पुञ्चमोऽध्यायः॥

द्शाहं पाहुराशीनं सिपण्डेषु विपश्चितः। मृतेऽथवाध-जातेषु ब्राह्मणानां हिजोत्तमाः। ॥ निट्यानि चेव कर्माणि का म्यानि च विशेषतः। न कुर्यादिहतं किञ्चित् स्वाध्यायं मन-सावि च ॥श्विरकोधनस्वन्यान् कालेऽग्नी भोजयेद्दिजा न्।शुष्कान्तन् फंडेर्चापि पितरं जुहुयात्तथा॥ न स्पृशियुरि-मानन्ये न भृतप्यः समाचरेत्। सूतके तु सिपण्डानां संस्य श्री नेव दुष्यति। सूतके सूतकाञ्चेव वर्जयित्वा तृणं पुनः॥ अधीयानस्तथा यज्वा वद्विचाडिप या भवेत्। चतुर्थे पञ्चमं वाह्मि संस्पर्शः कथिनां बुधेः ॥स्पृश्यान् सर्वमेवेने स्नानान् दशमे द्वि॥दशाहं निर्णुणं प्रोक्तमाशीचन्दासनिर्णुणे। एवं हित्रगुणेर्युक्तं चतुर्श्वकदिने शुनिः॥दशाहानु परं स- म्यगधीयीत जुहोतिच। चतुर्थे तस्य संस्पर्शी मनुराह पजा-पतिः ॥ कियाहीनस्य मुर्यस्य महारोगिण एवच। ये एषां मरणस्याह मेरणान्तमशीचकम् ॥ विरावं दशरावं वा ब्राह्म णानामशीचकम्। पाक्संस्काराबिशवं स्याह्शरावमतः प रम्॥ जन्महिवर्षगे येते मातापित्रोस्ति दिष्यते। विरावण श्रिक्तन्यो यदिहात्यन्तिन्युणः ॥ अदन्त जात मरणे मा गापित्रोस्ति दिष्यते। जातदन्ते विरावं स्यादन्तः स्यात् यव

निर्णयः॥ आदन्तजन्मनः सद्य आचीलादेकरात्रकम् । त्रि राष्ट्रपुपनयनाद्श्रराजमुदाहतम् ॥ जातमावस्य वा तस्य यदि स्यान्मरणं पितुः। मानुश्च स्तकाति स्यान् पिताऽस्य स्पृत्य एव हि॥ सद्यः शीचं संपिण्डानां कर्त्तव्यं सींदरस्य तु ऊधी दशाहादेकाहं सोदरो यदि निर्गुणः ॥अथोर्द्धं दन्तुन-न्म स्यात् सपिण्डानामशीचकम् । एकरात्रं निर्गुणीनाञ्ची-राद्द्वे विरात्रकम्॥ आदन्तजातमर्णं सम्भवेद्यदि सन्माः। एकरोंने स्पिण्डानां यदि चात्यन्त्निर्यणः॥ बतादेशात् सपि ण्डानां गुर्भस्रावाच पाततः। गर्भन्युतावहोरानं सपिण्डेऽत्य न्त्निर्गणे ॥ यथेषाचरणाद्ज्ञाती विरात्रादिति निर्णयः। सू तके यदि स्तिश्व मरणे वा गति भीवेत् ॥शेषेणीव भवेच्छुहि रहः शेषे दिरानकुम्। मरणोत्यतियोगे तु मरणीन समाप्यते ॥ अर्द्रविम्नाशीचमूर्ध्वमन्येन शुद्धात् । देशान्तरगतः श्वता सूतकं शाव एवं वा ॥ तायदमयतोऽन्यं वा यावच्छेषः स्माप्यते। अतीते सूतके प्रोक्तं सपिण्डानां विरात्रक्ष्म्॥ त थैव म्रणे स्नान्मुई संवत्सराहृती । वेदांश्य यस्त्धीयानी न भवेत् वृत्तिकशितः ॥ सद्यः शीनं भवेतस्य सर्वविस्था-सु सर्वदा । स्त्रीणामसंस्कृतानान्तु पदानात् परतः पितुः॥

सपिण्डान्। त्रिरात्रं स्यात् संस्कारी भृत्रीव च। अहस्त्वद्त्तक न्यानामशीनं मरणे समृत्म् ॥ दिवर्ष जन्म्मर्णे सदाः शीच-मुदाहतम्। आद्नात् सोदरः सद्य आचीलादेकरात्रकम्॥ आव्रतानां त्रिरात्रं स्याद्शमन्तु ततः परम्। मातामहाना म रणे त्रिरात्रं स्यादशीचकम् ॥ एकोदराणां विज्ञेयं स्त्रेके चै तदेव हि। पक्षिणी योनिसम्बन्धे बान्धवेषु तथेव च॥ एक रात्रं समुद्दिषं गुरी सब्रह्मचारिणी। येते राजनि सद्यस्तु य स्य स्यादिषये स्थितः॥ गृहे मृतासु दत्तासु कन्यकासु न्यहं पितुः। परप्रविसु भायिक प्रतेषु कुळजेषु च ॥ शिरावं स्यान थानार्ये भाषासु प्रत्यगासु च। आनार्यपुत्रपत्योश्र अहोरा त्रमुदाहतम्। एकरात्रमुपाध्याये तथेव श्रोवियेषु च। एक रात्रं सापण्डेषु स्वगृहे सांस्थितेषु च ॥ विरात्रं श्वश्चमरणो श्व शरे च त्येव च। सदाः शीचं समुद्दिष्टं सगोवे संस्थिते सति॥ शुस्तेत दिजो दशाहेन द्वादशाहेन भूपतिः। वेश्यः पञ्चद्शा हेन श्रूद्रो मासेन शुध्यति ॥ क्षत्रविद् श्रूद्रदायादा ये स्यवित्र स्य सेवकाः। तेषामशेषं विभस्य दशाहात् शुद्धिरिष्यते॥ रा जन्यवेश्यावप्येवं हीनवर्णास्त योनिषु । षडुात्रं वा तिरात्रं वा उप्येकरात्रक्रमेण हि॥ वैश्यस्त्रियविमाणी श्रुद्रैश्वाशीनमे वत्। अर्द्रमासोऽध्षषुत्रं त्रिरानं दिज्युद्भवा।॥ शर्द्रसनि यविपाणां श्रद्रेष्त्रशीच्मिष्यते। प्रज्ञां हाद्शाहञ्च विपा णां वेश्यशृद्योः ॥ अशोचं स्तिये प्रोक्तं क्रमेण दिजपुद्गः -गः।। शृद्धिवर्क्षत्रियाणान्तु ब्राह्मणे संस्थिते यदि॥दश रात्रेण शुद्धिः स्यादित्याह कमलोद्भवः । असपिण्डं हिज्येतं वियो निः सत्य बन्धुवत् ॥ अशित्वा च सहोवित्वा दशरात्रेण शुस्ति। यदि निर्देहति सिपं पहोप्तात् कान्तमानसः॥र

शाहेन हिजः शुद्धेत् हादशाहेन भूमिपः। अईमासेन वैश्य-स्तु श्रद्धो मासेन शुझिति॥षड्रात्रेणाथवा सप्तात्रिरात्रेणाथ वा पुनः।अनाथञ्जीव निर्वन्धुं ब्राह्मणं धनवर्जितम्॥स्रात्वा सम्बाश्य तु घृतं शुध्यन्ति ब्राह्मणादयः । अपरस्रीत्परं वर्ण मपरस्थापरो यदि ॥ एकाहान् क्षत्रियं शिद्वेशये तु स्यात् घ हे सित। श्रद्रेषु च त्र्यहं मोक्तं प्राणायामशतं पुनः ॥ अनिस्थ स्त्रिते शर्दे रीति चेद् ब्राह्मणः स्वेकः। निरानं स्यात्र्याऽ शीनमेकाहं क्षत्रवैश्ययोः ॥अन्यथा नैवस ज्योतिब्रह्मि-णे स्नानमेव च। अनस्थिसञ्चिते वित्रे ब्राह्मणो रिति चेत-दा॥सानेनेव भवेच्छुदिः सचैलेन न संश्यः। यस्तेः सहा नं कुर्याच याना दानि तु चैव हि॥ ब्राह्मणे वापरे वापि दशा हेन विश्वध्यति । य स्तेषामन्नमश्चाति संतु देवोऽपि कामतेः ॥तदाशोचूनिच्तेषु स्नानं कृत्या विश्वध्यति । यावत्तदन्नम-आति दुर्भिक्षाभिहतो नरः। ताचन्त्यहान्यशुद्धिः स्यात् पाय श्वितं तत्रश्वरेत् ॥दाहाधुशीचं कर्तव्यं हिजानामग्निहोबि णाम्। सपिण्डानां तु मरणे मरणादितरेषु च ॥ सपिण्डता च पुरुषे सप्तमे विनिवर्तते । समानोदक्भावस्तु जन्मनाम्नो र वैदने॥ पिता पितामहन्त्रीय तथेव प्रपितामहः। छेपभाजस्त थन्नात्मा सापिण्ड्य स्मूपीरुषम् ॥ ऊर्द्रागञ्जीव सापिण्ड्य माह देवः प्रजापितः । ये चैकजाना बहवी भिन्नयोनय एव च ॥ भिन्नवर्णास्तु सापिण्डचं भवत्तेषां त्रिपूरुषम् । कारवः शिल्मिनो वैद्यदास्द्रासास्तरीव च ॥ राजानी राजभूत्याश्र संधःशोचाः मकीर्तिताः। दानारो नियमी चैव ब्रह्मविद्ब्रह्म चारिणो ॥सत्रिणो व्रतिनस्तावत् सद्यः शोच् मुदाहतम् । राजा चैवाभिषिक्तश्व भाणसत्रिण एवच॥ यज्ञे विवाहकारे

औरानस्स्मृती।

343

च देवयागे नथेव च। संद्यः शौचं समाख्यातं दुर्भिक्षे वाष्युप द्रवे॥ विषाद्यपहतानाञ्च विद्युता पाधिवेदिजेः। संद्यः शौचं समाख्यातं सपिदिमरणेऽपि च॥ अग्निमेरुपपतने विषो-धान्यपराशने। गोब्राह्मणान्ते सन्यस्ते सद्यः शोचं विधीयते ॥ नेष्ठिकानां वनस्थानां यतीनां ब्रह्मचारिणाम्। नाशोचं वि-द्यते सद्भः पतिते च तथा मृते॥ ॥ इति षष्ठोऽध्यायः॥

पतितानां नराहः स्यान्नन्योष्टिनीस्थिसञ्जयः। नचाश्च-पातः पिण्डेच कार्यं शाहादिकं क्वित् ॥ व्यापाद्येत्रधात्मानं स्वयं योशिनविषादिभिः। सहितं तस्य नाशीनं नचस्यादुद कादिकम्।। अथ कश्चित्यमादेन मियते अनिविषादिभिः। नस्याशीचं विधात्व्यं कार्व्यञ्जीवोदकादिकम् ॥जाते कुमा रेतदह आमं कुर्यात् प्रतियहम्। हिरण्यधान्यगोवासंसि लानगुलसपिषः॥ फलानीक्षुञ्च शाकञ्च लवणं काष्ठमेव च। तोयं द्धि घृतं तेल्मीष्धं सीरमेच च॥ आशीचिनो गृ-हात् याह्यं शब्कान्नञ्जीच नित्यशः। आहिताग्निर्यशान्यायं दात्रव्यं त्रिभिरम्निभिः॥ अनाहिताम्निगृह्येण होकिकेने तरेंहिजे: । देहाभागान् पछाशोन कला प्रतिकृति पुनः ॥ दाहः कार्यो यथान्यायं संपिण्डैः श्रद्धयान्वितेः। सक्त्यसि-क्रो दुद्कं नाम गोत्रेण वाग्यतः ॥ दशाहं बान्धवेः सार्दे सर्वे चैवादिवाससः। पिण्डं प्रतिद्रिनं द्युः सायं पात्रयेथाविधि ॥ प्रेनाय च गृहहारि चतुरो भोजयेद् हिजान्। हितीयेऽहिन कर्नव्यं क्षुरकर्म् स्बान्ध्वेः॥ सर्वेरस्यां सञ्चयनं ज्ञातिरेव भवेत्था। त्रिपूर्व भोज्येदिमानयुगमान् शह्या शुनीन् ॥ पञ्चमे नवमे चैव तथेवैकाद्शेऽहनि। अयुग्मान् भोजये हिमान् नचश्राह्तं तिहिद्धः॥ एकादेशे इक्षि कुळीते मेतसुहि-

१य भावतः। द्वाद्शे वाथ कर्त्वय मग्निदेस्त्यथवाऽ ह्नि॥एकं पवित्र मेकं वा पिण्डमात्रं तथेव च। एवं मृतेऽद्धि कर्त्तव्यं प्रति मासन्त बत्सरम् ॥ सपिण्डी करणं प्रोक्तं पूर्णे सम्बत्सरे पुनः। कुर्यात् नत्वारि पात्राणि मेनादीनां हिजोत्तमाः। ॥ मेनार्थे पि तृपात्रेषु पात्रमासेचयेत्ततः। ये समाना इति द्वाभ्यां पिण्डानप्ये वमेच हि॥ स्पिण्डीकरणश्चान्द्रं देवपूर्वे विधीयते। पितृनावा हपेत्रत्र पुनः मेतव्य निर्दिशेत् ॥ ये सपिण्डी कृताः मेता न ते पां स्यात् पृथक्किया। यस्त कुर्यात् पृथक् पिण्डं पित्हा ल भिजायते ॥ मृत पितरि वे पुत्रः पिण्डशब्दं समाविशेत् । द्या नानं सोदकुमां प्रत्यहं पेत्रधर्मातः॥ पार्चणेन विधानेन सा म्बत्सरिक्मिञ्चते । प्रति सम्बत्तरं कार्यं विधिरेषःसनातनः॥ मातापित्रोः सतोः कार्य्य पिण्डदानादि किञ्चन। पत्नीकुर्यान् स्ताभावे पत्यभावे तु सोदरः ॥ एषवः कथितः सम्यक् गृह स्यानां यथाविधि। स्त्रीणाञ्च भूतृशुश्रुषा धर्मी नान्य इहैष्यते ॥यः स्वधर्मपुरो नित्यमीश्वरापितमानसः । प्राप्नोति परमं स्थानं यदुक्तं वेदसम्मितम् ॥ ॥ इत्योशनसस्मृती सप्त-मोऽध्यायः॥

अथ प्रायम्बित्तम्॥

ब्रह्महा मद्यपः स्तेनो गुरुतल्पग एव च। महापातिकन्त्ते ते यः स तेः सह सम्बसेत् ॥ सम्बस्तरेण पतित संसगे कु स्ते तु यः। यो हि शय्यासने नित्यं वसन्वे पतितो भवेत्॥ याजनं योनिसम्बन्धं तथेवाध्ययनं हिजः। कृत्वा सद्यः प तेत् ज्ञानात् सहभोजनमेव च॥ अविज्ञायापि या मोहात् कृष्यीद्ध्ययनं हिजः। सम्बत्सरेण पतित सहाध्ययनमेव च॥ ब्रह्महा वा दशाब्दानि कुण्ठी कृत्वा वने वसेत्। भेष्ट्यं

ओशनस्स्मृती। 348 चात्मविशुद्धार्थे रुत्वा श्विशिरोध्वजम्। ब्राह्मणावसथान् सर्वान् देवागाराणि वर्जयेत्। विनिन्ध च स्वमात्मानं ब्राह्म णञ्च स्वयं समरेत्॥ असङ्कराणि योग्यानि सम्गाराणि संविशेत्। विधूमे शनकैिंद्यं व्याहारे भुक्तवर्जिते ॥ कुर्या दनशनं वाद्यं भूगोः पतनमेष च। ज्यलन्तं वा विशेदिनं ज हं वा मविशेत् स्वयम् ॥ ब्राह्मणार्थे गवार्थेवा सम्यक् पाणा न परित्यजेत्। दीर्घमामयिनं विश्व कत्वा नामयिनं तथा॥द त्वा नान्नं स विदुषे ब्रह्महत्यां व्यपोहति। अश्वमेधावभृतके स्नात्ना यः शुध्यति हिजः॥ सर्वस्वं वा वेदविदे ब्राह्मणाय प दापयेत्। ब्रह्महा मुच्यते पापेर्देखा वा सेतुदर्शनम्॥ सुराप स्तु सुरां तमामानिवणां पिबेत्तदा । निर्देग्धकायः संतदा मु च्यते न दिजोत्तमः॥गोमूत्रमम्निवणी वा गोशाहः द्वयमेववा। पयो घतं जछं वाथ मुच्यते पातकात्ततः॥ जलाद्रेवासाः अ यतो ध्यात्वा नारायणं हरिम्। ब्रह्महत्याव्रतं चाथ चरेत्तता-प्शान्तये॥ स्वर्णस्तेयी सहहिपो राजानमधिगम्य तु।स्वक में ख्यापयन् ब्र्यान्गा भवाननुशास्तिति॥ गृहीत्वा मुसरं राजा सरुद्रन्योतु तं स्वयम्। स वैपापात्ततः स्तैनो ब्राह्मण स्तपसाथ गा। करेणादाय मुसलं लगुडं गाय घातिनम्। सु ब्रित्यो भयतस्तीक्णमायसं दण्डमेव च ॥ राजा न स्तेन मुद्दी त मुक्तकेशेन धावता। आवक्षाणन्य तत्पापमेवं कर्माणि शाधि माम्।। शासनादापि मोक्षाद्वा ननः स्तेयादिमुच्यते। अशासिला च तं राजा स्तेयस्यामोति किल्विषम्। तपसा द्रुतमन्यस्य सव्यक्तियजं फलम्। चीरवासा हिजीऽरण्ये -संब्बरेद् ब्रह्मणो ब्रतम् ॥ स्मालाश्वमेधावभृते पूनः स्याद थ वा हिजः। प्रद्धाचाथ विपेश्यः स्हात्मतृत्यं हिरण्यकम्॥

चरेद्वा वत्सरं कृत्सं ब्रह्मचर्यपरायणः। ब्राह्मणः स्वर्णहारीच तत्यापस्यापनुत्तये॥ गुरुभाय्यी समारुख ब्राह्मणः काममो हिनः। उपग्हेन् सियं तप्तां कान्तां का्लायसी कृताम्।। स्वयं वा शिश्ववृषणे उत्कृत्यादथबाञ्जली। आतिषे दक्षिणा माशा मा निपातमजिह्मतः॥ गुर्वर्थे बहवः शन्ही चरेद्रवा ब्रह्मणी ब्रतम् । शारवां कर्कटकोपेतां परिष्वज्याथ बत्सरे ॥अधः शयीत निरतो मुच्यते गुरुतत्यगः । रुच्युच्याब्द-ऋरेहिम्श्रीरवासाः समाहितः॥ अश्वमेधावभृतके स्ना ला मुच्येद् हिजीतमः। कालेऽ एके वा भुज्जानी ब्रह्मचारी सदा वतः ॥ स्थानासना चं विचरेद्धनोऽ प्यूपयल्तः। अधः शायी त्रिभिविषेत्ततः शुध्येत पात्कात्॥ चान्द्रायणानि वा कुर्यात् पञ्च चलारि वा पुनः।पतितैः सम्प्रयुक्ताना मयं ग च्छिति निष्कृतिम्। पतितेन् तु संस्पर्धे छोभेन कुरुते हिजः सरुत् पापापनोदार्थे तस्येच ब्रतमाचरेत्। तस्कृच्छं चूरे हाथू सम्बत्सरमतन्द्रितः ॥ षाण्मासिके इथे संसर्गे प्रायि तार्थमाचरेत्। एभिः प्ते रथो हन्ति महापात्किनो मलम् ॥ पुण्यतीर्थाभिगमनात् पृथिच्यामथ निष्कृतिः। ब्रह्महसा सुरापानं स्तेयं गुर्बङ्गनाग्मम् ॥ कत्वा चैवं महापापं बाह्य णः काममोहितः। कुर्यदिनशनं विशः पुण्यतीर्थे समाहि-तः॥जले वा पविशेदग्नी ध्याला देवं कपरिनम्। न ह्यन्या दुष्कृतिर्देश मुनिभिः कर्मावेदिभिः॥ ॥ इत्योशनस-स्मृती अष्टमोऽध्यायः॥

गत्वा दुहितरं विषं स्वसारं सा सुषामपि। प्रविधोत् ज्वलनं दीप्तं मितपूर्वमिति स्थितिः ॥मातृष्वसां मातुलानी तथेव च पितृष्वसाम्। भागिनेथीं समारुद्य कुट्यत् कुच्छा ३५६ शोधानसस्मृती। दिपूर्वकृष् ॥ चान्द्रायणानि चत्वारि पञ्

दिपूर्वकम् ॥ चान्द्रायणानि चत्वारि पञ्च वा सुसमाहितः । पैतृष्वस्येयीं गतातु स्वित्यां मातुरेव च॥ मातुरुस्य सुतां वापि गत्वाचान्द्रायणं चरेत्। भार्या सखीं सँगारुह्य गला श्याली तथैव च ॥ अहोरात्रोषितो भूत्वा तसकच्छ्रं स्माचरे त्। उद्यागमने विमस्यिरात्रेण विशुद्धाति॥ क्षत्रीमेथुनमा साध चरेचान्द्रायणवतम् । पराकेणाथवा श्विदिरित्याह भगवा नजः। मण्ड्कं नुकुलं काकं विड्वराहञ्च मूषिकम्॥श्वानं ह ला हिजः कुर्यात् षोडभारव्यमहावतम्। पयः प्वेशिरात्र-न्तु श्वानं हत्या त्वतन्द्रितः ॥ माजरिं चाथ नुकुछं योजनं गाउ ध्वनी वजेत्। कृच्छं होदशमात्रन्तु कुर्यादेखवधे हिजः॥ अथ कृष्णायसी दद्यात् संपेहत्वा हिजोत्तमः। बढाकं रङ्क्षवं चैव मूषिकं कृत्रहम्भकम्॥ वर्राहन्तु तिरुद्रोणं तिरुाटश्चेवति तिरिम्। शुक्कं दिहायनं वत्सं कीञ्चं हत्वा विहायनम्॥ इला इंसंबलाकन्त्र बकटिटिममेब च। वानरन्त्रेव भासन्त्र स्वयं व ब्राह्मणाय गाम्।। कव्यादांस्तु मृगान् हत्वा धेनुं दद्यात पय-स्विनीम्। अकव्यादं वत्सत्तरसृष्टं हत्वा तु कृष्णाढम्॥जीविते चैच तृप्ताय दद्यादस्थिमनां वर्षे । अस्थाञ्जीव हि हिंसायां प्राणायामेन शुद्धाति॥ फलदानन्तु विप्राणां चेदनादाहिकं शतम्। गुल्मवहीलतानाञ्च वीरुधां फलमेव च ॥पुष्पागमा नाञ्च तथा ध्तपाशो विशोधन्म्। चान्द्रायणं पराकञ्च कु च्यति हला ममादतः॥ मतिपूर्वे वधे चास्याः मायाश्रितं न विद्यते। मनुष्याणाञ्च हरणं स्त्रीणां कत्वा यहस्य च॥ वापी कूपजलानाञ्च शुध्येचान्द्रायणेन तु। द्याणामल्पसाराणां स्तेयं हत्वाऽन्यवेशमनः ॥ बरेत् सान्तपनं हच्छूं चरित्वात्म-विश्वद्ये। धान्यादिधनचीर्येच पञ्चगव्यविशोधनम्॥तृण

340

काष्ट्रमाणाञ्च पुष्पाणाञ्च बरुस्य च । चेलचमामिषाणा ञ्च त्रिरात्रं स्यादभोजनम्॥ मणिप्रवालरहानां स्वर्णरजन स्य च। अयः कांस्योपरानाच्च दादशाहमभोजनम्॥ एतदे व वतं कुर्याद् दिशाफेकशफस्य च। पक्षिणामोषधीनाञ्च हरेबापि ब्राहं पयः ॥ न मांसानां हतानान्तु देवे चान्द्रायणं चरेन्। उपोध्य दादशाहं तु कुष्माण्डेर्जुह्याद् धनम्॥ नकु होत्रेमान्तिरं जग्धा सान्तपनं चरेत्। श्वानं जग्धाथ रुखे ण श्रीभक्षेण च शुध्यति ॥ पकुर्याचिव संस्कारं पूर्विणेव वि धानतः। शललञ्च बलाकञ्च हंसं कारण्ड्वं तथा।।चक्रवा-कब्र जम्धा च दौदशाहमभोजनम्। कपोतं टिहिभं भासं शुकं सारस्मेव च ॥ जहीकं जालपात्या जग्धा होत हत-ञ्चरेत्। शिशामारं नथा मापं मत्यं मासं तथेव च॥ जग्धा चैव वराहञ्च एतदेव व्रतन्त्ररेत्। कोकिलं चैव मत्स्यादं मण्ड क् भुजगं तथा॥ गोसूत्रयावका हारे मिसे नेकेन शुध्यति । जलेचरांश्च जलजान्यातुधानविपावितान्॥ रक्तपादांस्त्था जग्धा सप्ताहं चैतदाचरेत्। मृतमांसं चथा चैवमात्मार्थे ग् यथारुतम्॥ भुत्का मासञ्चरेदेतत्तत्पापस्यापसुत्तये। कपो तं कुञ्जरं शियुं कुक्करं रजकां तथा ॥ प्राजापत्यं चरेजाय्या तथा कुम्भीरमेव च । पलाण्डं लशुनञ्जीव भुत्का चान्द्रायणं च रेत्। बातिकं तण्डुलीयं च प्राजापत्येन शुध्यति। अभ्मातकं तथोपेतं तसकच्छ्रेण शुद्धाति॥ माजापत्येन शुद्धिः स्याक कुम्यां शशमसणी। अलावुं गुन्तनं चैव भुत्काऽप्येतद् व तं चरेत्।। उदुम्बरव्य कामेनं तसकुच्छ्रेण शुस्त्रति। रथो -हस रसंयावं पायसाऽपूपशष्कुळीन् ॥ मुल्का चैवं व्रतं त त्र त्रिरात्रेण विशुद्धित । पीत्वा सीराण्यपयानि ब्रह्मचारी

औशनसस्मृती।

345

विशेषतः॥गोमूत्रयावकाहारो मासार्द्धन विश्वद्याति। अनि देशाया गोः सीरं माहिषं वार्समेव च ॥ गर्भिण्या वा विवत्सा याः पीत्वा दुग्धमिदं चरेत्। एतेषाञ्च विकाराणि पीत्वा मो हैन वा पुनः । गोमूत्रयावकाहारी सप्तरात्रेण शुन्द्राति । भुत्का चैव नवशान्दं स्तके मृतके श्वा। चान्द्रायणेन शुध्येत बा-ह्मणस्तु समाहितः। यस्य यद्भयते नित्यं न यस्यायं नदीय ते॥ चान्द्रायणं चरेत् सम्यक् तस्यान्नन्नाशने दिजः। अ भाज्यानान्तु सवैषां भुन्का चान्नमुपस्कृतम्॥ अन्त्यस्यात्य-यिनोडलक्च तप्तरुच्छुमुदाहतम्। चाण्डालानं दिजी भुत्का सम्यक् चान्द्रायणं चरेत्।। अज्ञानात् प्राश्य विषमूत्रं सुरासं स्पर्शमेव च। पुनः संस्कारमहिन्त त्रयो वर्णा हिजातराः॥ क्रव्यादानां पक्षिणाञ्च पायय मूत्रपुरीषकम् । महासान्तपनं कुर्यानेषां मोहाद् हिजातयः॥ भासमण्ड्ककुकुर् वायसे कृच्छ्माचरेन्। प्राजापत्येन् शुन्दोत्रबाह्मणः क्रिष्मोजनात्॥ क्षत्रिय स्तप्तकुं स्याद् वैश्यश्येव त्रिकुकुकम्। सुराभाषी दकं वापि पीत्वा बान्द्रायणं बरेत्॥ शुनोच्छिष्टं हिजा भुत्का त्रिरात्रण विश्वद्यति। गोसूत्र याचकाहारः पीतशेषञ्च वा प यः ॥ आपो मूत्रपुरीषा हो रुपेताः पाषा यहा है। तदा सान्तप नं कुर्याद् वर्तं कायविशोधनम् ॥ चाण्डालकूपभाण्डेषु यद् ज्ञानात् पिबेज्जलम्। चरेत् सान्तपनं रुच्छं ब्राह्मणः पापशो धनम्। बाण्डालेन च संस्पृष्टं पीत्या वारि दिजोत्तमः। बि्रा त्रेण विशुध्येत पञ्चगचेन शुक्ति॥ महापातकसंस्पशै भु त्का सात्वा हिजात्तमः। बुद्धिपूर्वन्तु मूहात्मा तप्तक्षच्छ्रं स माचरेत्। अन्यजातिविवाहे च से महापात्की भवेत्। तस्य पातिकसंसर्गात्मातिकत्वमवाम्यात् ॥ चतुर्विशतिकृच्छं स्याद्

विवाहे त्वन्यकन्यया। संसर्गस्य तद्ई स्यात् पायश्चित्तं सु तेन हि॥ दृष्या महापातिकनं चाण्डा हं वा रजस्व हाम्। प मादाद्रीजनं कत्वा विरावेण विश्वन्यति॥स्नानाद्री यदि भु न्त्रीत अहोरात्रेण शुन्द्राति । बुद्धिपूर्वे तु रुच्ब्रेण भगवान्।ह पदानः ॥ शुष्कं पर्युषितादीनि गन्धोदियतिद्षितम् । भुत्कोप गसं कुर्जीत बरेहिंगः पुनः पुनः ॥ अज्ञानात् भुक्तिशुस्पर्-मृज्ञानस्य विशेषतः। भृत्यानां यजनं कृत्वा परेषामन्यकर्म णि॥ अभिचारमनहीच त्रिभिः कृच्छे विश्वसाति। ब्राह्मणा-भिह्नानाञ्च कुला दाहादिकं हिजः॥ गोसूत्रयावका होरः पा जापत्येन शुद्धति। तैराभ्यक्तः प्रभाते च् कुर्याणमूत्रपुरीष के॥ अहीरात्रेण श्रध्येत श्मश्रुकम्मिणि मेथुने। एकाहेति विवाहाग्निं परिभाव्य हिजोत्तमः ॥ विरात्रेण विशुन्होत वि रात्रात् षडहं पुनः। दशाहे दादशाहे वा परिहास्य प्रमादतः॥ क्र्यंचान्द्रायणं कुर्यातत्यापस्याप्चत्तये।पतितद्रव्यमादा य तदुसर्गण शुद्धति ॥ बरेच विधिना रुच्छ मित्याह भगवा न् प्रभुः। अनाशकनिवना तु प्रवज्योपासिता तथा॥ आच रेत् श्रीणि रुच्छाणि श्रीणि चान्द्रायणानि च। पुनश्च जातक म्मादिसंस्कारैः संस्कृता हिजाः॥ शुद्धो य स्तद् व्रतं सम्यक् चरेयुर्धमर्पदिशिनः ॥ अनुपासितसिद्रस्तु तं व्यापकवशेन च। अजसं संयतमना रात्री वैद्रात्रिमेच हि॥ अरुत्वा स-मिधाधानं श्विः सात्वा समाहितः। गायव्येष्टसहस्रस्य ज पं रुत्वा विश्वस्मित्। उपासीत न नेत्सन्धां गृहस्थोऽपि म मादतः। स्मात्वा विशुन्धते नद्याः परिश्रान्तः ससंयमात्॥ वैदिकानि च नित्यानि कमाणि च विलोप्य तु। स्नातकव्रत-रोल्यन्त कता चोपवसेहिनम्॥ सम्बत्सरव्वरेत् कृच्छुं म- औशनसस्मृतो।

३६०

नुच्छन्दे हिजोत्तमः। चान्द्रायणं चरेद् गृत्या गोप्रदानेन शु-न्याति ॥ नास्तिक्या द्यदि कुर्वीत प्राजापत्यं चरेद्दिजः। देव द्रीहं गुरुद्रोहं तप्तरुख्रेण शुद्धिति॥ उष्ट्रपानं समारुख स रपानव्य कामतः। विरावेण विश्वद्योत् नग्नोन प्रविशेज्न लम्। षष्टान्नकालमासं वा संहिताजपमेव वा। होमाच शा कलानित्यमपत्यानां विशोधनम्।। नीलं रक्तं वसित्वातु ब्रा ह्मणी वस्त्रमेव हि। अहोरात्रोषितः स्नातः पञ्चगव्येन शुध्य ति ॥ वेदधम्मी पुराणांश्य चण्डारुस्य च भाषणम् । चान्द्राय-णेन शुद्धिः स्यान्न सन्या तस्य निष्कृतिः ॥ उद्दन्धनादिनि ह तं संस्पृश्य बाह्मणः कचित्। चान्द्रायणेन शुद्रः स्यात् प्रा जापत्येन वा पुनः ॥ अन्छिषो यदि नाचान्तश्रण्डासादीन् सृ शेद्दिजः। उच्छिए स्तत्र कुर्वित पाजापत्यं विश्वद्ये॥ चण्डा लस्तकशवांस्तथा नारी रजस्वलाम्। स्पृष्टा स्नायादिशुध्य धुं तत् स्पृशान् पतिनांस्तथा ॥ चण्डालसूतकशावैः संस्पृष्टं स्प शियेद्यदि। प्रमादान् स्नात आचम्य ज्यं कृत्वा विशुद्धाति ॥अस्पृष्ट्रपर्शनं कत्वा स्नात्वा शुद्धोहिजोत्तमः। आचमेत हिसुद्धार्थ प्राह देवः पितामुद्दः॥ विज्ञानस्य तु विपस्य कवा चित् स्वतं गुदम्। इत्या शीचं ततः स्नाता उपोध्य जुहुया द्धतम्।। चण्डाउन्तु शवं स्युख्वा कच्छं कुय्यति हिजोत्तमः। हैंसा नेभस्थं नसूत्र महोरावण शन्द्राति॥ सुरांसुसा हि जः कुर्यात् पाणायामनयं श्विः। पलाण्डुं रुशुनं चैच एतं पात्रय विश्वस्ति॥ ब्राह्मणस्तु शूना दृष्टस्यहं सायं पयःपि बेत्। नाभेक् ईस्य दषस्य तद्व त्रिगुणं भवेत्॥ स्यादेत्ति-गुणे बाह्नोम्धि स्यातु चतुर्गणम्। स्नात्वा जपेतु गायत्रीं श्विभदेशो दिजोत्तमः॥ पत्र्ययज्ञानरुतातु यो अङ्के म

सहं गृही। अनातुरस्य निधन द्यस्त ईन विश्रान्धिति॥आ हितामें रूपस्थानं यः कुर्यान्न तु पर्वाणिप अस्ती गच्छेत् न आ र्यायां सोऽपि रुच्यान्हेमाच्रेत्॥ विना दिरप्स वा केय्यी-च्छरीरं सिन्चेषत्॥ सचेलो जलमापुत्य गामॉलभ्य विदाः द्मित ॥गाय्त्रयष्संहस्नन्तु त्र्यहं चोपवसेद् गृही।अनुगच्छे न्यः शूद्रं पेतभूतं हिजोत्तमः॥ गायत्र्यष्ट्रसहस्रन्तु जपं कु र्यानदीषु च। अरुत्वा शपधं विभो विभस्य विधिसंयुते॥ मृषेव यावकानने के कुर्याचान्द्रायणं वतम्। पंकी विषमदा नन्न हता हन्धेण सुद्धति॥ न्छायां श्वपोकस्यारुद्ध स्ना ला सम्प्राश्येद्वतम्। रक्षेदादित्यमशुचिं द्याग्नीन्द्रजमे-वन।। मानुष्यास्यि न संस्पृत्वा स्नानमेव विशुद्धति। हता पध्ययनं विषश्चरेद्रिभक्षानुबत्सरम् ॥ कृतम्रो ब्राह्मणगृहे पब्बसम्बत्सरं व्रती । हुङ्गरं ब्राह्मणस्योत्का त्युङ्गरन्तु गरी यसः ॥ स्नात्वाच्म्य तर्नेः शेषं प्रणिपत्य प्रसाद्येत् । ताडिय या तृणेनेव कर्णे बद्धा च वास्सा ॥ विवादे परिनिर्जित्य प्रणि पत्य मसादयेत्। अवगृह्य चरेत् रुच्छम्तिरुच्छ्निपात्ने॥ रुखातिरुखः कुर्जीत विभस्योत्याच शोणितम्। गुरोराको शने चैव रुच्छं कुर्यादिशोधनम् ॥ एकरात्रं दिरात्रं वा तता पस्यापनुत्तये। देवषीणामित्रमुखं ष्ठीवताकोशानाकृते॥ उ स्कादि जनुर्जिला दातव्यञ्च हिरण्यकम्। देवोद्यानेन यः कुर्व्याण्यूत्रीचारं शरुद्दिजः॥ च्छिन्दाच्छिन्नन्तु शरुद्राधी नरेचान्द्रीयणं मतम् । देवतायतने मूचं कत्वा देहाद् दिजोत्त मः॥शिभस्योत्क्रंत्तनं कृत्वा चान्द्रायणमथावरेत्। देवता नामृषीणाञ्च वदानाञ्चेव कुत्स्नम् ॥ छत्वा सम्यक् प्रकु-चीतं माजापत्यं दिजोत्तमः। तेस्तु सम्माषणं रुखा स्ना-

<u> भौशनसस्मृती।</u> ३६२ ला देवान समर्चयेत यतमा यदा बालभावेन महापापं करोति हि। प्रायश्चित्तं व्रतन्यास्य पित्रा तद्वतचारिणीम्।। उद्देद भिरूपान्तमन्यया पतितस्तु सः। अपि राजन्यकवये वाषि कब्राह्मणोव्रतम्॥ तस्यान्ते वृषभेकेन सहस्र गोदानमाच रेत्। सर्पे हत्वा माष्मात्रं दद्यात् रुवणर्जततामत्रपु-सीसकांस्यासनामद्भिरेवमृत्सायुक्ताभिस्तेजसाब्बोखिः ष्टानां भस्मनात्रिः। पक्षालनं कनकरजत्मणिशाङ्खकः त्तयुपलानां वज्नविदलरज्ज्चमर्मणाञ्चाद्भिः शीचिमिति। अ पि चण्डालश्चपच स्पृष्टेचा विण्मूत्र एव च । त्रिरात्रेण वि शुद्धिः स्याद्भात्को च्छिष्टः सदाचरेत् ॥ पिता पितामहो यस्या अयुजी वाय कस्यचित्। तपोऽग्निहोत्रमन्लेषु नदो षः परिदेवने ॥ अमावास्यायां यो ब्राह्मणं स्मुद्दिश्य पिता महम्। ब्राह्मणीं स्त्रीं समाप्यच्ये मुच्यते सर्वपातकैः॥ अ मावास्यां तिथिं पाप्य यममाराधयेद्भवम् । ब्राह्मणान् भोज-यित्वा तु सर्वपापैः ममुच्यते ॥ कृष्णाष्ट्रम्यां महादेवं तथा कृ ष्णचतुर्देशीम्। संपूज्य ब्राह्मणमुखैः सर्वपापैः ममुच्यते॥ अयोद्ध्यां तथा रात्री सोपहारं विलोचनम्। दृष्ट्येष पृथमे यामे मुच्यते सर्वपातकेः ॥ सर्वत्र दानग्रहणे मुच्यते सोमग गृतः। शान्त्याच दक्षिणां गृह्णन् हिरण्य प्रतिमाम्पि॥ अयु नेनेव गायत्र्या सुच्यते सर्वपातकैः। ॥ इत्यो शनसस्य ती नवसोऽध्यायः॥

समाप्ता औशनसस्पृतिः॥

अथ आद्गिरसस्मृतिः।

गृहाश्रमेषु धर्मेषु वर्णानामनुपूर्वशः। पायश्रित विधि दस्वा अङ्ग्रिसम्बिन् ॥१॥ अन्त्यानामपि सिद्दान्नं भ-स्वित्वा दिजातयः। चान्द्रं कुच्छ्रं तद्दन्तु ब्रह्मसूत्र विशां विदुः॥२॥रजकश्वमिकारस्य नटीवुरुड एवं च। कैवर्तमेद भिलाश्व स्पेतेचान्यजाः स्मृताः॥३॥ अन्यजानां गृहे तोयं भाण्डे पर्ध्युषिनञ्च यन् । प्रायश्वित्तं यदा पीतं नदेव हि समाच रेत्। चाण्डालुक्प्माण्डेषु त्वज्ञानात् पिवते यदि। भायिनं कथं तेषां वर्णी वेणी विधीयते ॥५॥ चरेत् सान्तपनं विमः मा जापत्यन्तु भूमिपः । तद्ईन्तु चरेद्देश्यः पादं स्द्रेषु दापयेत्॥ ॥६॥ अज्ञानान् पिबते तीयं ब्राह्मणस्वन्यजातिषु। अही-रात्रोषिनों भूत्वां पञ्चगब्येन शुध्यति ॥७॥ वित्री वित्रेण सं सृष्ट उच्छिषेन कदाचन्। आचान्त एव शुध्येत अङ्गिरामु निरम्बीत् ॥८॥ क्षियेण यदा सृष्ट उच्छिष्टेन कदाच्न । स्नानं जप्यन्तु कुर्व्वीत् दिनस्यार्टेन शुध्यति ॥९॥ वैत्रयेन तुयदा स्पृष्टः शुना श्रद्रण वा हिजः। उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगव्येन शुध्यति॥१०॥अनुन्छिप्टेन संस्पृष्टी स्नानं यन विधीयते । तेनैवो खिष्ठसंस्पृष्ठः माजापत्यं समाचरेत्॥१९॥ अनु ऊर्ह् प्रवस्यामि नीली वस्त्रस्य वै विधिम्। स्त्रीणां की डार्धसंयोगे शयनीये न दुष्यति॥१२॥ पालने विक्रये चैव तद्वनेरुपजीवन । प्रित्सत् भवेदिमस्यिभिः क्रच्छेट्यपो-हति॥१३॥ स्नानं दानं जपो होमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम्। हेथा तस्य महायज्ञा नीलीवस्त्रस्य धार्णात् ॥१४॥ नीली रक्तं यदा वस्त्रमज्ञानेन नु धारयेन् । अहोरात्रीषितोपह्ला पञ्चगच्येन शुध्यति ॥१५॥ नीडी दारु यदा भिन्दा ह्राह्मणं

आङ्गिरसस्मृतिः। 368 वै भमादनः। शोणितं दृश्यते यम दिज्ञभान्द्रायणञ्चरेत् ॥१६॥ नीही वृक्षेण प्कन्तु अन्मम्साति चेद्दिजः। आहार वमनं रुत्वा पञ्चगच्येन शुध्यति॥१७॥ भसन् प्रमादतो नीडी हिजातिस्व समाहितः। त्रिषु वर्णेषु सामान्यं चान्द्रा यणमिति स्थितम् ॥१८॥ नीहीरक्तेन वस्त्रेण यदन्नमुपनी-यते। नोपतिष्वति दातारं भोका भुइन्के तु किल्विष्म्॥१९॥ नीलीरकेन बस्तेण यत्पाके श्रापितं भूषेत्। तेन फक्तेन वि-प्राणां दिन मेक मफ्रीजनम् ॥२०॥ मृते भर्तरि या नारी नीली वस्त्रं प्रधारयेत्। भन्ति नरकं याति सा नारी तदनन्तरम्॥ ॥२१॥ नील्या चीपहते क्षेत्रे शस्यं यतु मरोहति । अभोज्यं त हिजातीनां भुत्का चान्द्रायणं चरेत् ॥ २२॥ देचद्रोण्यां चृषो-स्मेरी यही दाने तथेव च। अञ्च स्मानं न कर्त्तव्यं दूषिना च व सन्धरा ॥२३॥ वापिता यत्र नीली स्यात्तावद्भम्यश्चाचिर्मवेत्। यावद्वादशववूणि अन्ऊर्ध्वश्चाचिर्मवेत् ॥२४॥ भोजने वेव पाने चे तथा चीषधभेषजीः। एवं मियन्ते या गावः पादम्कं स्मान्रेन्॥२५॥ धंण्टाभर्णदोषेण यत्र गोविनिपीड्यते । चरेदर्ई वर्त तेषां भूषणार्थं हितत् कृतम् ॥२६॥ द्मने दा-मने रोधे अवधाते च बैक्तते। ग्वा प्रभवना धातैः पादी-नं बतमाचरेत्।।२७॥अङ्गुष्ठपर्वमात्रस्तु बाहुमात्रः प्रमाण तः। सपल्यभ्यं सायभ्यं दण्डइत्यभिधीयते ॥ १८॥ दण्डाहु काद्यदान्येन पुरुषाः प्रहरनि गाम्। दिगुणं गोवनं नेषां म् यश्चित्तं विशोधनम् ॥२९॥ शृङ्गभङ्गे त्वस्थिभङ्गे चर्मानिमो चने तथा। दशरात्रं चरेत् रुच्छं याचेत् स्वस्थी भवेत्तदा॥३० गोमूत्रेण तु संभिश्रं याचकन्त्रोपनायते। एतदेव हितं रू-च्छ्मिदमाद्गिरसं मतम् ॥३१॥ असमर्थस्य बाहस्य पितावा

यदि वा गुरुः। यमुद्दिश्य चरेद्धमी पापं तस्य न विद्यते ॥ ३२॥ अशीतिर्यस्य वर्षोणि बालोबाप्यूनषोडशः। प्रायश्चित्तार्द्दे महिन्त स्थियो रोगिण एवच ॥१६॥ मूर्च्छिते प्रतिने चापि ग वियष्प्रहारिते।गायत्र्यष्टसहस्त्रन्ते प्रायश्चितं विशोध नम् ॥३४॥ स्नात्वा रजस्वरा चैव चतुर्थेऽहि विशुध्यति।क र्याद्रजिस निरुत्तेऽनिरुत्ते न कथञ्चन ॥३५॥ रोगेण यद् जः स्वीणामत्यर्थं हि प्रवर्नते। अशुच्यस्ता न तेन स्यूस्तासां वैकारिकं हि नत् ॥३६॥ साध्याचारा न नावत् स्याद्रेजी या वत् प्रवर्तते । इने रजिस गम्या स्वी गृहकर्माणि चैन्द्रिये ॥३७॥ प्रथमेऽहिन चाण्डाली हितीये ब्रह्मघातिनी। तृती-ये रजकी मोक्ता चतुर्थेऽहिन शुध्यति ॥३८॥रजस्वता यदा स्पृष्टा शुना शूद्रेण चुँच हि। उपोष्य रजनीमेकां पञ्चगच्ये न अध्यति॥३९॥ दावेनावशुची स्यानां दम्पनी शयनद्भनी शयनादुत्थिता नारी शुचिः स्यादशुचिः पुमान् ॥४०॥गण्डूषं पादशीचञ्च न कुर्यात् कांस्यभाजने । भरमना शुध्यते कां स्यं ताममम्खेन शुध्यति ॥४१॥ रजसा शब्यते नारी नदी वेगेन शुध्यति । भूमो निःक्षिप्य षण्मासमत्यन्तोपहतं शु वि॥४२॥ गवाघानोनि कांस्यानि शुद्रोन्छिशानि यानि तु। भस्मना दशिभः शुस्नेत् काकेनोपहते तथा॥४३॥ शीच सीवर्णरूपाणां वायुनार्केन्दुरिमितिः ॥४४॥ रेतःसृष्टं श वस्पृष्टमाविकञ्च न दुष्यति । अद्भिदा च तन्मात्रं प्रक्षा-ल्य च विश्वध्यति ॥४५॥श्रष्कमन्त्रमविप्रस्य भूत्का सप्ता ह्युच्छति। अन्नं व्यञ्जनसंयुक्तम्ईमासेन् जी येति॥४६ प्याद्धि चू मासेन षणमासेन घृतं नथा। तेउं संवत्त्र्रेणीव कोषे जीर्व्यति वा नवा ॥ ४७॥ यो भुङ्के हिच श्रूद्रान्ने मास

३६६ आङ्गिरसस्मृतिः। मैकं निरन्तरम्। इह जन्म्नि शूद्रत्वं मृतः श्वाचाभिजायते॥ ॥४८॥श्रद्रान्नं श्रद्रसम्पर्कः श्र्द्रेण् च सहासनम्। श्रुद्रान्ता नागमः किश्विज्वलनमपि पातयेत्॥ ४९॥ अप्रणामे तु भू देशप स्वस्ति यो वदित हिजः। शुद्रोऽपि नरकं याति ब्राह्मणो अपि तथेव च ॥५०॥ दशाहाच्छुध्यते विघोदादशाहेन भूमिपः। पाक्षिकं वैश्यएवाह श्रुद्रोमासेन शुध्यति ॥५१॥ अग्निहो-शीचयो विभः श्रद्धान्ने चैव भीजयेत्। पञ्च तस्य प्रणश्य-नि आत्मा वदास्त्रयोऽग्नयः ॥५२॥ श्रूद्रान्नेन तु भुक्तेन यो दिज्ञो जनयेन् सुनान्। यस्यानं नस्य तै पुत्रा अनान्सुकं प वर्नते॥५३॥ श्रेद्रेण स्पृष्ट्युच्छिष्टं प्रमादाद्थ पाणिना निर् जेक्यो न दातव्यमापस्तम्बोऽ ब्रबीन्मुनिः ॥५४॥ ब्राह्मणस्य सदा भुड़के क्षत्रियस्य च पर्वसु। वैश्येष्वापत्स भुज्जीत न भूद्रेऽपि क्दाचन ॥५५॥ ब्राह्मणान्ने द्रिद्रत्वं क्षत्रियाने प शुस्तथा। वैश्यान्नेन तु शुद्रत्वं श्रुद्रान्ने नरकं ध्रुवम्॥५६॥ अमृतं ब्राह्मणस्यान्नं संत्रियान्नं पयः स्मृतम् । वैश्यस्य चा नमेंवानं श्रद्रानं रुधिरं धुवम् ॥५७॥ दुष्कृतं हि मनुष्या णायन्नमाशित्य तिष्ठति। यो यस्थान्नं सम्भानि सं न-स्यासानि किल्विषम्॥५८॥ स्तकेषु यदा विभो ब्रह्मचारी जिनेन्द्रियः। पिबेन् पानीयमज्ञानाद्भक्ते भक्तमथापि ग ॥५९॥ उत्तार्याचम्य उदक्षमवतीर्या उपस्पृशेत्। एवं हिस सुदाचारो वरुणीनाभिमन्तिनः ॥६०॥अम्बगारे गवां गोष्ठे देवब्राह्मणसन्निधी। आहारे जपकारे च पादुकानां विस कृनिम्।।६१॥ पादुकासन् मारुदोगेहान् पञ्चगृहं वर्जन्। छेदयेत्तस्य पादी तु धार्मिकः पृथिवीपतिः ॥६२॥ अनि होत्री तपस्वी च श्रोतियो वेदपारगः। एने वे पाद्कैर्यान्ति

श्वान्दण्डेन ताडयेन् ॥६३॥जन्मप्रभृतिसंस्कारे चूडान्ते भोजनं नवम् । असंपिण्डेन भोक्तव्यं चूडस्यान्ते विशेष-तः॥६४॥ याचकान्तं नवश्राद्धमपि सूतकभोजनम्। नारी प्रथमगर्भेषु फत्का चान्द्रायणं चरेत् ॥६५॥ अन्यदत्तातु या कन्या पुनरन्यस्य दीयते । तस्याश्चान्नं न भोक्तूव्यं पु-नर्भःसा प्रगीयते ॥६६॥ पूर्विश्व स्नावितोयश्च गुर्भीयश्चा प्यसंस्कृतः। दितीये गुर्भसंस्कारस्तेन शुद्धिर्विधीयते॥ ॥६०॥ राजाचेदेशिभिमिसियवितिष्ति गुविणी।नाबद्रक्षा विधातच्या पुनरन्यो विधीयते ॥६८॥ भर्तृशासन् मुहङ्घ्य याचस्त्री विषवर्तते । तस्याभ्येव न भोक्तव्यं विशेषा का म्चारिणी ॥६९॥ अनपत्या नु या नारी नाश्नीयात्त हुहेऽपि वै। अथ भुइक्ते तु यो मोहात् पूयसं नरकं ब्रुजेत्।। ७०॥ शि याधनन्तु ये मोहादुपजीवनि बान्धवाः । स्त्रियां यानानि वासांसि ते पापा यान्यधोग्तिम् ॥७१॥ राजान्न हरते तेजः श्रुद्रान्नं ब्रह्मवर्चसम् । स्त्तकेषु च यो भुङ्क्ते स भुङ्के पृ थिवी मलम्॥७२॥ ॥ इत्यङ्गिरसा महाविणा पणीतं धम्मिशास्त्रं समाप्तम्॥

यमस्मृतिः॥

अधातो ह्यस्य धर्मास्य प्रायश्चिताप्तिधायकम्। चत् णिमपि वर्णानां धर्मिशास्त्रं प्रवर्तते ॥ १॥ जलाग्न्युद्दन्धन-भ्रषाः प्रवज्यानधानच्युताः। विषयपतनपायशस्त्रधान च्युताश्च ये॥ २॥ सर्वे ते पत्यवसिताः सर्वलोकविष्कृताः चान्द्रायणेन शुद्धान्ति तसहुच्छुद्दयेन वा ॥ ३॥ उभयाव-

यमस्मृतिः। 386

सिनाः पापा येऽ याम्यशरणाच्युनाः । इन्दुद्वयेन शन्द्यनि दत्ता धेनुं नथा व्षम्॥४॥ गोबाह्मणहनं दंग्धा मृतमुद्दन्धने नच। पाशंतस्यैव खिला नु तप्तरुख्यं समावरेत्॥५॥ इ मिभिन्नणसंभूते मिसिका श्वापघातिनः। सञ्झाई संप्रु वीन शक्तया देवाल दक्षिणाम् ॥६॥ ब्राह्मणस्य मलहारे पूर्यशाणितसम्भवे। रुमिमुक्तव्रणे मोञ्जीहोमेन स विशु न्द्राति ॥७॥ यः क्षियस्तथा वैश्यः शूद्रश्वाप्यनुरोमजः। ज्ञात्वा भुइन्ते विरोषेण चरेचान्द्रायणं वतम्। नाकुकु-टाण्डपमाणन्तु यासञ्च परिकल्पयेत् । अन्यथाहारदीर्षेण नस तम विश्वसानि ॥९॥ एकैकं वर्दयेच्छक्के रूष्णपसे च हासयेत्। अमावास्यां न भुज्जीत एष चान्द्रायणोविधिः॥ ॥१०॥ सरान्यमद्यपानेन गोमांस प्रक्षणे कृते। तप्तकुञ्ज रेद्दिमस्तत्पापस्तु पणश्यति॥१४॥ प्रायश्चिते सुपकान्ते के-र्ना यदि विपद्यते। पूतस्तदहरेवापि इहलोके परत्रच।।१२॥ यावदेकः पृथक् द्याः प्रायश्चित्तेन शुध्यति । अपरास्ते नच स्पृश्यास्तेइपि संवेविगर्हिताः॥१३॥ अभोज्यास्त्राप्रतियासा असंपाठ्या विवाहिनः । प्रयन्तेऽनुव्रते चीर्णे सर्वे ने ऋक्ष भागिनः ॥१४॥ ऊनैकाद्शीवर्षस्य पञ्चवर्षात् परस्य च । प्रायश्चित्तं चरेद्राता पिता बान्योऽपि बान्धवः॥१५ अतोबा छनरस्यापि नापराधो न पानकम्। राजदण्डो न तस्यास्ति प्रायश्चिनं न विद्यते॥१६॥अशीतिर्यस्य वर्षाणि बालोवा प्यूनषोड्शः। पायश्चित्तार्द्धमईन्ति स्त्रियोरोगिण एवच॥१० अस्तंगतो यदा सूर्य्यश्याण्डालरजकस्थियः। संस्पृषास्तु तद् कैश्विन् पायश्चिनं कथं भवेन् ॥१८॥ जातरूपं सुव्पव्यि हि वानीनं च यज्जलम् । तेन स्नात्वा च पीत्वा च सव्ये ते शुचयः

स्मृताः ॥१९॥ दासनापितगोपालकुरुमित्राईसीरिणः।एते शृद्रेषु भोज्याना यश्वात्मानं निर्वेदयेत् ॥२०॥ अन्नं शृद्र-स्ये भीज्यं वा ये भुद्धांत्यबुधा न्राः। पायश्चिनं तथा पातं चरेचान्द्रायणं व्रतम् ॥२१॥ प्राप्ते दाद्शमे वृषे यः क्न्यां न प्रयच्छति । मासि मासि रजस्तस्याः पिता पिवति शाणिनम् ॥२२॥ माता चैव पिता चैव ज्येष्टोष्ट्राता नथेव च । त्रयस्ते नर कं यानि दृष्टा कन्यां रजस्वलाम् ॥२३॥ यस्तां विवाहयेत् कृन्यां ब्राह्मणी मदमोहितः। असंभाष्यो ह्यपाइन्केयः से विमो वषसीपतिः॥२४॥ बन्ध्या तु व्षसी होया वषसी तुम् तमजाः।श्रद्धी तु रूपसी होया कुमारी तु रज्यला॥२५॥ यत् करोत्येकरात्रेण रूपसी सेवनाँद् हिजः । नईस्प्रभुग् जप नित्यं निभिर्वषेटिपोहति॥२६॥ स्वर्षं या परित्यज्यान्य व्षेणब्हस्पतिः। व्षली सा तु विज्ञेया न श्रद्री वृषली भ वेत्।।२७।। रूषहीफेनपीतस्य निः श्वासीपहतस्य च। त-स्याञ्जेव पस्तस्य निष्कृतिनैव विद्यते ॥२८॥ श्वित्रकुषी तथा चैव कुनरवी श्यावदन्तुकः। रोगी हीनाति रिक्तां कः पि शुनोमत्सरस्तथा ॥२९॥ दुर्भगोहि तथा षण्डः पाषण्डी बंदिनि न्दकः । हेतुकः शरद्रयाजी च् अयाज्यानाञ्च याजकः ॥३०॥ नित्यं प्रतियहे लुक्यों याचको विषयात्मकः। श्याव्दन्नोऽथ वे गुन्न असदालाँपकस्तथा ॥३१॥ एते शाहे च दाने च चर्जी नीयाः प्रयत्नतः ॥ १२॥ ततो देवसकम्बेच भूनको वेदविक यी। एते बर्ज्याः प्रयुक्षेन एतदास्य तिरब्रुवीत् ॥३३॥ एता-नियोजयेद्यस्तु हृद्ये कृद्ये च कर्मणि। निराशाः पितरस्त-स्य यान्ति देवाँमहर्षिभिः॥३४॥ अग्रे माहिषिकं दृष्या म ध्ये तु इवडीपनिम्। अन्ते वाधुषिकं दृष्ट्या निराशाः पित-

यमस्मृतिः। 300 रोगताः॥ ३५॥ महिषीत्युच्यते भार्या या चैव व्यभिचारिणी। तानु दोषान् क्षमते यस्तु सबै माहिषिकः स्मृतः ॥३६॥स माधीन्तु समुद्धत्य महार्घे यः प्रयच्छति । संवै वाद्धिको नाम ब्रह्मचादिषु गहितः ॥३७॥ यावदुणां भवत्यनं या वडुञ्जिति वाग्यताः । अश्वान्ति पितरस्तावद्यावन्तीका ह विशुणाः ॥३८॥ हविर्शुणा न वक्तव्याः पितरोयन तरिताः। पितृभिः स्तर्पितेः पश्चाइक्तव्यं शोभनं हिवः ॥३९॥ यावतो यसते यासान् हव्यकव्येषु मन्त्रवित्। तावतीयसते पिष्डा न् शरीरे ब्रह्मणः पिता ॥ ४०॥ उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टः श्राना श्र्द्रेण वा हिजः। उपोध्य रजनीमेकां पञ्चगच्येन शुद्धाति॥ ॥४१॥ असुच्छिष्टेन संस्पृष्टे स्नानमात्रं विधीयते। तेनैषो-खिष्संस्पृष्टः पाजापत्यं समाचरेत् ॥ ४२॥ याविद्यानपू ज्यन्ते सम्भोजन हिर्ण्यकैः । तावचीर्णव्रतस्यापि ततापं ने मणश्यति॥४३॥ यहेषितं काकब्रहाकविहेरमेध्याउम्तुभ वेच्छरीरम् । गोत्रे मुखे च प्रविशेच सम्यक् स्नानेन हेपीपह तस्य शुद्धिः ॥४४॥ ऊद्धेनाभाः क्री मुखा यदद्गमुपहन्यते । ऊई सानगधः शीचं तन्माचेणीव शुध्यति ॥४५॥ अभस्या णामपेयानामलेह्यानाञ्च भक्षणे। रेतोम्बपुरीषाणां पाय श्चिनं कथं भवेत्।। ४६॥ पद्मोदुम्बर्बिल्बाश्च कुशाश्वत्थ-पराशकाः। एतेषासुदकं पीत्वा षड्वांचेणीव शुन्सति॥४७॥ यः प्रत्यवसितीविषः पञ्ज्यानि निराप्दि। अनाहितानि र्व्तेत गृहित्वञ्च विकीषीते॥४८॥ आचरेत्रीणि रुच्छाणि चरेचान्द्रायणानि च। जातकम्मादिभिः प्रोक्तैः पुनः संस्का-रमहित ॥ ४९॥ त्रिका उपधानानि पुष्पं रक्ताम्बराणि च।शो षयित्वा प्रतापेन प्रोक्षयित्वा श्विभविन् ॥ ५०॥ देशं काउं

तथात्मानं द्रव्यं द्रव्यं प्रयोजनम् । उपपत्तिमयस्थाञ्च ज्ञाला धर्मी समाचरेत्॥ ५१॥ रथ्याके ईमतीयानि नाबायस तु-णानि च। मारतार्कण शुध्यन्ति पद्मेष्टकचितानि च॥५२॥ आतरे स्नानसम्प्राप्ते दशकलोह्यनातुरः। स्नाला स्नाला -स्थानन्तु ततः शुध्येत् आतुरः ॥५३॥ रजकश्वममकारश्च न रोब्रह एव च। कैवर्तमेदभिष्ठाश्व सप्तेते चान्यजाः स्मृताः ॥५४॥ एषां गत्वा तु योषां वे तप्तरुच्छं समाचरेत् ॥५५॥ स्त्रीणां रजस्वलानान्त स्पृष्टास्पृष्टि यदो भवेत्। पायित्रतं क्यं तासां वर्णी वर्णी विधीयते ॥ पद्मा स्पृष्टा रजस्वलां यानु सगोत्राञ्च सप्तर्काम्। कामादकामतो वापि स्नात्वा कार्डे न शुध्यति ॥५७॥ स्पृक्षा रजस्वरान्योन्यं ब्राह्मणी श्रद्रजा तथा। रुच्छेण शुध्यते पूर्वा शूद्रा पादेन शुध्यति ॥५८॥-स्पृषा रजस्वेडान्योन्यं क्षत्रिया शेर्द्रजा तथा। पादहीनं चरे न् पूर्वी पादाईन्तु तथोत्तरा॥ ५९॥ स्पृष्टा रजस्य ठान्योन्यं वैश्येजा शहजा तथा। रुच्छ्पादं चरेत् पूर्वा तद्द्नित त थोत्तरा॥६०॥ सृष्टा रजस्वठा चैव श्वानजम्बूकरासभैः। ता वतिष्ठेन्निराहारा स्नाला काठन शुध्यति ॥६१॥ सृष्टा रजस्व स केश्विचाण्डारेररजस्वरा। प्राजापत्येन कृच्छ्रेण प्राणाया मशतेन च ॥६२॥विमः स्पृष्टोनिशायाञ्च उद्यया पतिनेन च । दिवानीतेन तोयेन स्नाप्येचाग्निसन्निधी ॥६३॥दिवा करिप्रसंस्पृष्टं रात्री नक्षत्ररिमिशः। सन्ध्योभयोश्व सं-न्धायाः पवित्रं सर्वदा जलम् ॥६४॥ अपः करनखस्पृष्टाः पिबेदाचमने दिजः। सुरां पिबति सञ्यक्तं यमस्य वच्नं य था ॥६५॥ खातवाप्योस्तथा क्रूपे पाषाणैः शस्त्रघातनैः ।य स्या तु घातने चैच मृत्पिण्डे गोकुछैन च ॥६६॥ रोधने बन्धने

३७३ यमस्मृतिः। चैव स्थापिते पुष्कले तथा। काष्ट्रे वनस्पती रोधसङ्कृटे रज् वस्त्रयोः ॥६७॥ एतते कथितं सर्वे प्रमादस्थानमुत्तेमम्।य त्र यत्र मृतागावः पायश्चितं समाचरेत् ॥६८॥ दारुणा घा तने हच्छुं पाषाणे हिंगुणं भवत् । अई हच्छुन्तु खाते स्यात् पादक्रच्छन्त पादपे ॥ ६९॥ शस्त्रघाते त्रिक्रच्छाणि यषिघा ते ह्यं चरैत्।। ७०॥ रुच्छेण वस्त्रघातेऽपि गाम्नश्चेति विश्व-ध्यति। योवर्त्तयति गोमध्ये नदीकान्तारमन्तिके॥७१॥रोमा णि पथमे पाद हितीये शमश्च वापयेत्। तृतीये तु शिखा धा-र्ध्या नतुर्धे स्वीरवं वपेत्॥ ५२॥ न् स्त्रीणां वपनं कुर्धात् नच सा गामनुबनेन्। नच रात्री वसेद्रोष्टे न कुर्याद् वैदिकीं भ तिम्॥७३॥ सर्वान् केशान् समुहत्य चेंदयेदङ्गुिह्यम्। एवमैव तु नारीणां शिरसी वपनं स्मृतम् ॥ ७४॥ मृतकेन तुं जातेन उपयोः स्तवं भवेत्। पातकेन तु विधेन नास्य स्तिकिता भवेत्॥७५॥चलारि खलु कम्माणि सन्धाकारे विवर्जयेत्। आहारं मैथुनं निद्रां स्वाध्यायञ्च चतुर्थकम्॥ ॥७६॥ आहाराज्जायने व्याधिः क्ररगर्भभ्य मैथुने। निद्रा-श्रियो निवर्तने स्वाध्याये मरणं क्षेत्रम्॥७७॥ अज्ञानानु हिज्ञेष्ठ। वर्णानां हितकाम्यया। मया पोक्तमिदं शास्त्रमा ॥ इति यमप्रोक्तं धर्माशा-वधानोऽवधारय॥७८॥ स्य समाप्तम्॥

अथ आपस्तम्बस्मृतिः।

आपस्तम्बं प्रवक्ष्यामि प्रायश्चित्तविनिर्णयम्। दूषिना-नां हिनार्थाय वर्णानामनुपूर्वशः॥१॥परेषां परिवादेषु निः

वृत्तमृषिसनमम् । विविक्तदेश आसीनमात्मविद्यापराय णम्॥२॥ अनुन्यम्नस् शान्तं स्त्यस्थं योगविनसम् । आपस्तम्बम्षि सर्वे समेत्यं मुनयोऽब्रुवन् ॥३॥ भगवेन्। मानवाः सर्वे अस्नमार्गे स्थिता यदा । चरेयुद्धम्मका-र्याणां नेपांब्र्हि विनिष्कृतिम् ॥४॥ यतो ६वर्यं गृहस्येन गवादिपरिपालनम्। कृषिकम्मोदि नापत्सु हिजामन्नणमे व च ॥५॥देयञ्चानाथकेऽवृश्यं विपादीनाञ्च भेषजम् । बालानां स्तन्यपानादिकार्यञ्च परिपालनम् ॥६॥एवं केते क्यञ्चित् स्यात् प्रमादां यद्यकामतः। गवादीनां ततोऽस्मा कं भगवन । ब्रुहि निष्कृतिम् ॥७॥ एवमुक्तः क्षणं ध्यात्वा प णिपानादधी सुरवः। द्वा ऋषी नुवाने दुमापस्तम्बः स्नि-श्वितम् ॥ ८॥ बालानां स्तनपानादिकार्धे दोषो न विद्यते । विपत्तावपि विद्याणामामन्त्रणचिकित्सने ॥९॥ गवादीनां प बस्यामि प्रायश्वितं रुजादिषु। केचिदाहर्न दोषोऽत्र देहधा-रणभंपने ॥१०॥ औष्धं उन्णेद्धेन स्नेहपुष्यन्नभोजनेम्। पाणिनां पाण्यस्यर्थः पायश्चित्तं न विद्यते ॥११॥ अतिरिक्तं नदानव्यं कालं स्वल्पन्त दापयेत्। अतिरिक्ते विपन्नानां क्र खुमेव विधीयते॥१२॥ त्र्यहं निरशनान् पादः पादश्यायाः चितं त्र्यहम्। पादः सायं त्र्यहं पादः पातभीज्यं तथात्र्यहम् ॥१३॥ मानः सायं दिनाईव्य पादानं सायवर्जिनम् ॥१४॥ पातः पादं चरेच्छूद्रः सायं वेषयस्य दापयेत्। अयाचिनन्तु राजुन्ये त्रिरात्रं बौह्मणस्य च ॥१५॥ पादमेकं चरेद्रोधे ही पादी बन्धने चरेत्। योजने पादहीनच्च चरेत् सर्व निपातन ॥१६॥ घण्टाभूरणदेषिण गोस्तु येत्र विषदते। च्रेदईव्रतं तम भूषणार्थे कृतं हितन् ॥१७॥ दमने वा निरोधेवा संघा

आपस्तम्बस्मृती। 308 ते चैव योजन्। स्तम्भूम् इन्बरुपाषीत्र्य मृते पादीनमाचरेत ॥१८॥ पाषाणेईगुडेविपि शस्त्रेणान्येन वा बलात्। निपाते यन्ति ये गास्त तेषां सर्वे विधीयते ॥१९॥ प्राजापत्यं चरेहि मः पादोनं संभिय्भ्यरेत्। कच्छार्डन्त च्रेहेभयः पादं शूद्र स्य दापयेनु ॥२०॥ ही मासी दापये इत्सें ही मासी ही स्तनी दुहेत्। ही मासावेकवेठायां शेषकाले यथारुचि॥२१॥द मतामेर्द्रमासेन गीस्त यत्र विपद्यते । सिश्रवं वपनं कृत्या पा जापत्यं समाचरेत् ॥२२॥इडमष्टगवं धर्मो षड्गवं जीविता थिनाम्।चतुग्वं नृशंसानां द्विगवृञ्ज् जिघांसिनाम्॥२३॥ अतिवाहातिदोहाभ्यां नासिकाभेदने तथा। नदीपर्वतसं-रोधे मृते पादोनमाचरेत् ॥२४॥ न नारिकेखबाडाप्यां न मुक्तेन न चुर्मणा। एभिगेन्ति न बशीयाहद्या परवशीभवे न्।।२५॥ कुशैः काशैश्च बधीयाद् वृषभं दक्षिणामुखम्। पा दलेगामिदीषेषु प्रायश्चित्तं न विद्यते ॥१६॥ व्यापन्नानी बहु नान्तु रोधने बन्धनेऽपिच्। भिषाङ्गिथ्योपचारेच द्विगुणंगी व्रतन्त्ररेत्॥२७॥शृदुःभद्गेऽस्थिभद्गे च लाइन्गूलस्य च कर्त्त ने। सप्तरात्रं पिबेद्दुंग्धं यावत्त्वस्था पुनभवित्॥२८॥गो मूत्रेण तु संभित्रं यावेकं भक्षये हिजः। एत हिमिश्रितं चैवम् क्तेत्रोशनसा स्वयम् ॥२९॥देवद्रोण्यां विहारेषु कूपेष्वा यतनेषु च। एषु गोषु विपन्नेसु प्रायश्चितं न विदेते॥३० एका पाँदानु बहुँभिदेवा द्यापार्दिना कचित्। पादं पादन्तु हत्यायाश्वरेयुरते पृथक पृथक ॥ ११॥ यन्त्रेणे गोश्चिकित् सार्थे मूदगर्भविमीचने। यही कते विपत्तिश्चेत् पायित्रं न विद्यते ॥३२॥ सरोम पथमे पादे हितीये शमश्रकतनम्। न्तीये तु शिखा धार्या सशिखन्तु निपातने ॥३३॥ सव्यन्

द्वितीयोऽध्यायः।

304 केशान् समुद्धत्य च्छेदयेदइ गुरिद्यम्। एवमेव तु नारी-णां शिर्सो मुण्डनं स्मृतम्॥ ३४॥ ॥ इत्यापस्तम्बी

ये धर्माशास्त्रं प्रथमोऽध्योयः॥ कारहस्तगतं पुण्यं यच यामाहिनिःस्तम्। स्वीबार हृद्वाचरितं प्रत्यक्षादृष्टमेव च ॥१॥ प्रपास्वरण्येषु जलेऽथ सीरे द्रोण्यां जलं यच विनिःस्तं भवेत् । श्वपाकचाण्डालप रियहेषु पीला जलं पञ्चगच्येन शुद्धिः॥२॥ न दुष्येत् संत-नाधारा वानोन्द्रनाश्च रेणवः । स्त्रियो वृद्धाश्च बालाश्च न दु श्यनि कदाचने ॥३॥ आत्मशय्या च वस्त्रञ्च जायापत्यं क मण्डलः। आत्मनः शुचिरेतानि परेषामश्वीनि तु॥४॥अ नीस्त खानिताः कूपास्तडागानि तथैव च। एषु स्नाला च पीलांच पञ्चगय्येन शुर्यति ॥५॥ उच्छि एम् शुचित्वञ्च यच विषानुरुपन्म्। सर्वे शुस्त्राति तोयेन् तत्तीयं केन शुध्य ति॥६॥ सूर्यर्शिमोनेपातेन मारुतस्पर्शनेन च। गवां मूत्र प्रीष्ण् तत्तोयं तेन अध्यति ॥ शाअस्थिनमादियुक्तन्त से राश्वीष्ट्रीपद्षितम्। उद्देदद्कं सर्वे शोधनं परिमार्जनम् गर्ग क्षो मूत्रपुरीषेण छीवनेनापि द्षितः। श्वशृगालखे र्षिय कवादेश जुराप्सितः॥९॥ उद्देखेव च त्तीयं सप्त पिण्डान् समुद्धरेत्। पञ्चग्यां मृदा पूर्व कूपे तच्छोधनं समृत म्॥१।॥ वापीकूपतंडागानां दूषितानां ऋ शोधनम्। कुम्भा ना भत्मुहत्य पञ्चगव्यं ततः क्षिपेत् ॥११॥ यश्च कूपात् पिबेनोयं ब्राह्मणः शवद्षितात्। कथं तत्र विशुद्धिः स्यादि नि में संशयों भवेत्।। १२॥ अक्रिन्नेनाप्याभिन्नेन श्वन परिदृषिते। पीत्वा कूपे सहोरात्र पञ्चग्रयोन शुध्यति॥१३ किने भिने शवे चैव तेत्रस्थं यदि तत् पिबेत्। शुहिस्यान्द्रा

यणं नस्य तप्तक्रच्छमथापिवा॥१४॥ ॥ इत्यापक्तम्बीये धर्मशास्त्रे हितीयाऽध्यायः॥

अन्यजातिमविज्ञातो निवसेद्यश्च वेषमनि। सम्यग् ज्ञात्वा तुकालेन हिजाः कुर्वन्यनुयहम्॥१॥ चान्द्रायणं प राकीवा दिजातीनां विशोधनम्। प्राजीपत्यन्तु श्रद्रस्य शेषं तद्नुसारतः॥२॥ येफ्रिकं तत्र पकानं रुच्छं तेषां पदापये-न्। नेपामपि च येफीतं रुच्छपादं मदापयेन्॥३॥ रूपैक-पानेर्पृ एनां स्पराने शबद्षिणाम्। नेषामेकोप्रास्न पुञ्ज गुळान शोधनम् ॥४॥ बाढी रुद्धस्तथा रोगी गर्भिणी वापिपी डिना । तेषां नके मदातव्यं बालानां महरद्वम् ॥५॥ अशी निर्यस्य वर्षाणि बालोबाप्यून्षोडशः। प्रायश्चिताईम्ह्नि श्चियोच्याधितएव च ॥६॥ न्यूनैकाद्शवष्ट्य पञ्चवर्षाधि-कस्य च । चरेद्रगुरुः सुहद्वापि प्रायश्चित्तं विशोधनम्॥७॥ अथवा कियमाणेषु येषामार्तिः मद्दयते। शेषसम्पोदना-च्छुदिविपत्तिनी भवेद्यथा॥८॥ क्षुधा व्याधितकायानां याणोयेषां विपद्तते। येनरक्षन्ति भक्तेन तेषां त्कि ब्लि षं भवेत् ॥९॥ पूर्णेऽपि कालनियम् न शुहिब्रिह्मणेविना। अपूर्णेष्वपि कालेषु शोधयन्ति हिजात्तमाः॥१०॥ समाप्ति ति नो वाच्यं त्रिषु वर्णेषु किहिनित्। विप्रसम्पादनं कार्यः-मुत्यन्ने पाणसंशये ॥११॥ सम्पादयन्ति यहिपाः स्नाननीर्थे फलञ्च तत्। सम्यक् कर्त्तरणायं स्याहत्। च फल्मामुया-१२॥ ॥ शत्यापस्तम्बीये धम्मिशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः॥
चाण्डालक्ष्पभाण्डेषु योऽज्ञानात् पिबत् जलम्। भाय

चाण्डालकूपभाण्डेषु चाड झानात् ।पषत् जलम्। आप श्चितं कथं तस्य वर्णे वर्णे विधीयते ॥१॥ चरेत् सान्तपनं विपः प्राजापत्यन्तु भूमिपः । तदहन्तु चरेहेशयः पादं श्टूह- स्य दापयेत्।।२॥ भुत्को छिष्ट्रस्तनाचान्त्रशाण्डातेः श्वप-वेन वा। प्रमादात् स्पर्शनं गच्छेत्तत्र कुर्याहिशोधनम्॥३ गायत्र्यष्रसहस्रन्ते द्रुपदां वा शतं जपेन्। जपं निरात्रमञ्जूरं पञ्चगच्चेन शुध्यति॥४॥ चाण्डालेन यदा स्पृष्टो विण्मूत्रे च कृते हिजः। प्रायश्चितं त्रिरात्रं स्यात् भुत्की खिष्टः षडा चरत्।।५॥पानमेथुनसम्पर्क तथा मूत्रपुरीषयोः। सम्प कं यदिगच्छेतु उद्देशा चान्यजैस्तथा ॥६॥ एतरेव यदा स्पृष्टः प्रायभितं कथं भुवेत्। भोजने च विराव स्यात् पा ने तु त्यहमेच च ॥७॥ मेथुने पादकच्छं स्यात्या मूत्रपुरी षयोः। दिनमेकं नथा मुत्रे पुरीषे तु दिनेत्रयम्।।८॥ एकाई न्य निर्दिषं दन्तधावनभेक्षणे ॥९॥ वक्षाक्रदे तु चाण्डारे हिज्रस्तत्रेव तिष्ठति। फलानि भक्तयेत्तस्य क्यं शुद्धि विनि हिँशेत्॥१०॥ श्राह्मणान् समनुज्ञाप्य सवासाः स्नानमाच रेत्। एकरात्रोषिती भूत्वा पञ्चग्र्येन शुस्ति॥११॥ येन केनचिदुच्छिषो अमेध्यें स्पृशते हिजः। अहोरात्रोषितो भू ला पञ्चगव्येन शुध्यति॥१२॥ ॥ इत्यापस्तम्बीये धर्म शास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः॥

नाण्डालेन यहां स्पृष्टो दिज्ञवर्णः कदाचन। अन्भयुक्ष्य पिबेत्तायं प्रायश्चितं कथं भवेत्॥१॥ ब्राह्मणस्तु त्रिरात्रेण पञ्चगव्येन शुध्यति। क्षत्रियस्तु दिरात्रेण पञ्चगव्येन शुध्यति॥२॥ नतुर्थस्य तु वर्णस्य प्रायश्चितं न वे भवेत्। व्रतं नास्ति तपो नास्ति होमोनेव च विद्यते॥३॥ पञ्चगव्यं नदातव्यं तस्य मन्त्रविवर्जनात्। ख्यापयित्वा दिजानान्तु श्रद्धोदानेन शुध्यति॥४॥ ब्राह्मणस्य यदोच्छिष्टमश्नात्य ज्ञानतो दिजः। अहोरात्रन्तु गायत्र्या जपं इत्वा विश्वध्यति

305 आपस्तम्बस्मृतीन ॥५॥ उच्छिषं वैश्यजातीनां भुड़न्ते ज्ञानाद्दिजो यदि। श-इस्वपुष्पीपयः पीत्वा त्रिरात्रेणीव शुध्यति ॥६॥ ब्राह्मण्या सेह योऽश्रीयादुच्छिष्टं वा कदाचन। न तत्र दोषं मन्यन्ते नि त्यमेव मनीषिणः ॥७॥ उच्छिष्टमितरस्त्रीणामश्रीयात् पि-वतेऽपिवा। प्राजापत्येन शुद्धिः स्याद्भगवानि द्विरा ब्रवीत्॥ ॥८॥अन्त्यानां भुक्तशेषन्तु मुस्यित्वा हिजातेयः। चान्द्रा-यणं तदइ दि ब्रह्मक्षत्र विशां विधिः ॥९॥ विषमूत्र भक्षणे विपस्तमकुच्छं समाचरेत्। श्वकाकोच्छिष्टभोगे च प्राजाप त्यविधिः समृतः ॥१०॥ उच्छिषः स्पृशते विमो यदि कशिद-कामतः। शुनः कुकुटश्रद्रांश्य मराभाण्डं तथेव च ॥११॥ प क्षिणाधिष्रितं यच यद्मैध्यं कद्वाचन। अहोरात्रोषितो भू त्वा पञ्चगद्येन शुध्यति ॥१२॥ वैषयेन च यदा स्पृष् अञ्चिर ष्टेन कदाचन। स्नानं जपञ्च त्रेकाल्यं दिनस्यान्ते विश्वध्यति ॥१३॥ विघो विषेण संस्पृष्ठ उच्छिपेन कदाचन। स्नालाच-म्य विशुद्धः स्यादापस्तम्बो ऽ ब्र्बीन् मुनिः ॥१४॥

पत्तम्बीयं धर्मिशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः॥
अत ऊर्ध्व प्रवस्यामि नीलीवस्त्रस्य यो विधिः। स्वी
णां कीडार्थसम्मोग् शयनीयं न दुष्यति॥१॥पालने विक्रये
चेव तहत्तेरुपजीवने। पतितस्तु भवेहिप्र स्विभिः इन्छैि वि
शुध्यति॥२॥ स्नानं दानं तपोहीमः स्वाध्यायः पितृतपणम्।
पञ्चयज्ञा वृषा तस्य नीलीवस्त्रस्य धारणात्॥३॥ नीलीर कं यदा वस्त्रं ब्राह्मणोऽङ्गेषु धारयेत्। अहोराबोषितो भू-त्वा पञ्चग्र्येन शुद्धाति॥४॥ रोमकूपैर्यदा गच्छेद्रस्रो नी ल्यास्तु कहिचित्। पतितस्तु भवेहिपस्त्रिभिः इन्छेविशु-ध्यति॥५॥ नीलीदारु यदा भिन्द्याद्बाह्मणस्य शरीरकम्। षष्ठोऽध्यायः।

शोणितं दृश्यते तत्र दिजन्त्रान्द्रायणं चरेत् ॥६॥ नीली मध्ये यदा गच्छेत् प्रमाद्रद् बाह्मणः कृषित्। अहोरात्रोषितीभूखा पञ्चगव्येन शुध्यति॥७॥ नीहीरक्तेन वस्त्रेण यद्नमुपनी यते। अभोज्यं तद्विजातीनां भुत्का चान्द्रायणं चरेत्॥०॥ मक्षयेद् यस्य नीलीन्तु यमादाद् बाह्मणः किचित्। चान्द्रा यूणेन शुद्धिः स्यादापस्तम्बोऽब्रवीन् सुनिः ॥९॥ योष्त्यां वा पिता नीली तावती चाशुचिमेही। यमाणं हादशाब्दानि अ त्रुध्व शतिभवित्॥१०॥॥ इत्यापस्तम्बीये धम्मिशा स्त्रे षष्ठोऽध्यायः॥

स्नानं रज्यकायास्त चतुर्थे इनि शस्यते। इसे रजिस गम्या स्त्री नानिवृत्ते कथञ्चन ॥१॥ रोगेण यद्रजः स्त्रीणा मत्यधें हि मवर्तते । अधुद्धास्तु न तेनेह तासां वैक्रिंरिकं हि नत्॥२॥ साध्याचारा न स्मे नावुद्रजी यावत् पवतते। इते रजिस साध्यी स्याद्गहरूममणि चैन्द्रिये॥३॥ प्रथमेऽहिन चा ण्डाही हितीये ब्रह्मघातिनी। तृतीये रजकी प्रोक्ता चतुर्थेऽ इनि मुध्यति ॥४॥ अन्त्यजातिश्वपाकेन संस्पृषा चै रजस्वरा अहानि नान्यतिकम्य पायश्चित्तं पकल्पयेत् ॥५॥ त्रिरात्रमु प्वासः स्यात् पञ्चगच्यं विशोधनम् । निशों पाप्यत् ना योनिं प्रजाकोरञ्च कारयेत्॥६॥ रजस्वतां त्यजेत् स्पृष्टां शुना च १वपचेन च। विरावीपोषितो भूत्वा पञ्चगव्येन शु ध्यति॥७॥ मथमेऽ ह्नि ष्डानं हिनीये ते त्यहन्त्था। तृती ये चोपवासस्त चतुर्थे वहिद्रीनात्॥८॥ विवाहे वितते य इत्संस्कारेच रुते तथा । रजस्वरा भवेत् कृत्या संस्कारस्त कथं भवेन्॥ १॥ स्नापियवा तदा कन्या मन्ये वृश्चे रल इन्हें-नाम्। पुनः पत्याद्दृति हुत्वा शेषं कम्म समाचरेन्॥१०॥ रज आपस्तम्बस्मती।

300 स्वला तु संस्पृष् प्रवकुक्करवाय्सेंः। सा विरात्रोपवासेन पञ्चगब्येन शुध्यति॥१९॥ उच्छिष्टेन तु संस्पृषा कदाचित् स्वी रजस्वता। रुच्छेण शुन्हते विमस्तथा दानेन शरुझति ॥१२॥ एकशाखासमास्द्रदा चाण्डाला वा रजस्वला। ब्राह्मणे न स्मंत्र सवासाः स्नानमाचरेत्॥१३॥ रजस्वलायाः सं-स्पर्शः कथित्रज्ञायते शुना । रजोदिनात्तु यच्छेषस्तदुपोष्य विशुध्यति॥१४॥ अशुक्तां चीपवासे तु स्मानं पश्चात् समाच रेत्। तथाप्यशक्ता चैकेन पञ्चगव्यं पिवेत्ततः ॥१५॥ उच्छिष स्तु यदा विशः स्पृथीन्मदां रजस्वलाम्। मद्यं स्पृष्ट्या चरेत् कृ च्छुं तदर्नु रजस्वलाम् ॥१६॥ उद्क्यां स्तिकां विम अखि एं स्पृशते यदि। कुच्छोर्डन्त चरेहिमः प्रायिश्वतं विशोधः न्म्॥१७॥ चाण्डाहैः श्वेपचै वीपि आत्रेयी स्पृशते यदि। शेषाहात् फालकृष्टेन पञ्चग्चीन् शुन्मति॥१८॥ उदक्या ब्राह्मणी भूद्रामुद्रक्यां स्पृशते यदि। अहोरात्रोषिता भूता पञ्चगञ्येन शुध्यति॥१९॥ एवञ्च क्षत्रियां वैश्यां बाह्मणी-बेद्रजस्वलाम्। सचेलपुवनं कत्वा दिनस्यान्ते घृतं पिवृत्॥२० स्ववणेषु तु नारीणां सद्यः स्नानं विधीयते। एवमेव विशेष् द्धिः स्यादापस्तम्बोऽबर्वान्मुनिः॥२१॥ ॥ इत्यापस्तम्बीये धर्मशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः॥

भस्मना शाध्यते कांस्यं क्तरया यन्न विष्यते। सुराविष्यू त्रसंस्पृष्टं शिध्यते तापछेरवनैः॥१॥ गवाद्यातानि कांस्यानिशुं तानि च ॥२॥ शोचं सम्वर्णनारीणां वायुसूर्यन्दुरिमिभिः॥ ॥३॥रेतस्पृषं शवस्पृष्माविकन्तु प्रदुष्यति । आदिर्मदा चत न्मात्रं प्रक्षाल्य च विशुद्धाति ॥४॥शुद्धमन्नमविष्रस्य पञ्च-

रात्रेण जीर्घति। अनंब्यञ्जनसंयुक्तम्ईमासेन जीर्घति॥५ पयस्त द्धि मासेन षणमासेन घृतं तथा। सम्बत्सरेण तै-हन् कोषे जीर्घाति वा नवा ॥६॥ भुक्तते ये तु श्रद्धानं मा-समेकें निरन्तरम्। इहजन्मनि शुद्रत्वं जायन्ते ते मृताः शानि ॥७॥ शूद्रान्नं शूद्रसम्पर्कः श्रुद्रेणीवं सहासनम् । शूद्रान्जा नागमः कञ्चिज्येउन्तमपि पातयेत्॥ । । आहिताग्निस्तु योविमः शूद्रान्नान्न निवर्त्तते । तथा तस्य प्रणश्यन्ति आ साब्रह्म बयोऽग्नयः॥९॥ शुद्रान्नेन तु भुक्तेन मैथुनं योऽ धिगच्छति। यस्यान्नं तस्य ते पुत्रा ह्यन्नाँच्छुकस्यँ सम्भवः ॥१०॥ श्रद्धान्नेनोदरस्थेन यः कश्चिन्नियते हिजः। स भवे च्छूकरो याम्योस्तः श्वावायु जायते॥११॥ ब्राह्मणस्य स दा भुड़के स्वियस्य तु पर्वणि। वैश्यस्य यज्ञदीक्षायां श् इस्य ने कदाचनु ॥१२॥ अमृतं ब्राह्मणस्यानं स्त्रियस्य पयः स्मृतम्। वैश्वस्याप्यन्नमेवान्नं श्रद्धस्य रुधिरं स्मृतम्॥११॥ वैश्वदेवेन होमन देवताभ्य चीने जेपेः। अमृतं तन विमान्नमृग्यज्ःसामसंस्कृतम् ॥१४॥ व्यवहारानुरूपेण ध र्मेण च्छलंव जितम् । क्षत्रियस्य पयस्तेन भूतानां यच पा लनम् ॥१५॥ स्व्कर्म्पणा च रूपभेरतस्याधशक्तितः । खलयज्ञातिथित्वेन वैश्यान्नन्तेन संस्कृतम् ॥१६॥ अज्ञान तिमिरान्धस्य मद्यपानरतस्य च। रुधिरं तेनशूद्रान्नं वि धिमन्त्रविवर्जितम् ॥१७॥ आमगांसं मधु घृतं धानाः सी रंतथेव च। गुडं तकं समंयाह्यं निवृत्तेनापि श्रूद्रतः ॥१८॥ शाकं मांसं मृणाछानि तुम्बुरुः सक्तवस्तिछाः। रसाः प्रहा नि पिण्याकं मित्याह्या हि सर्वतः ॥१९॥ आपत्काले तु वि पेण भुक्तं शूद्रगृहे यदि। मनस्तापेन शुध्येत द्रुपदांचा पानं ३८२ आपस्तम्बस्मृती।

जपेत्॥२०॥द्रव्यपाणिश्च श्रद्भेण स्पृक्षोच्छिषेन कहिंचित्। तिहुजैन न भोक्तव्यमाप्क्तम्बोऽब्रचीन्मुनिः॥२१॥ त्यापक्तम्बीये धम्मशास्त्रेऽष्टमोऽध्यायः॥ ॥इ

भुज्जानस्य तु विशस्य कदाचित् स्ववते गुदुम्। उच्छि-ष्ट्याशुचे स्तस्य पायश्वित्तं कथं भवेत्॥१॥ पूर्वी शीचनु नि र्वर्य ततः पश्रादुपस्पृशेत् । अहोरात्रोषितोभृत्वा पञ्चग-योन शुध्यित ॥२॥ अशित्वा सर्वमेवान्नमकृत्वा शोचमात्म नः। मोहाद्भत्का त्रिरात्रन्तु यवान् पीत्वा विश्वध्यति॥३॥ प्रसृतं यवशस्येन् पलमेकन्तु सिषेषा । प्लानि पञ्च गोमूबं नातिरिक्तवदाश्येत् ॥४॥ अठेह्यानाम्पेयानामभृह्याणा ञ्च भक्षणे। रेतोमूबंपुरीषाणां पायश्वित्तं कथं भवेत्॥५॥ पद्मोदुम्बरबिल्वाश्चं कुशाश्वत्थपलाशकाः । एतेषामुद्कंपी ला पड़ानेपा विशुन्हाति ॥६॥ ये मत्यवसिना विमाः प्रव्या मिजलादिषु। अनापाकनिवृत्ताश्च गृहस्थत्वं चिकीर्षतः॥७ ॥ यरेयुस्त्रीणि कुच्छाणि त्रीणि चान्द्रायणानि वा। जातकर्मा दिभिः सर्वैः पुनः संस्कारभागिनः । तेषां सान्तपनं रुच्यं चान्द्रायणम्यापिवा॥८॥ यदेषितं काकबलाकचिलेरमेध्य लिसञ्च भवेच्छरीरम्। श्रोत्रे मुखेच पविशेच सम्यक् स्ना-नेन लेपोपहतस्य शुद्धिः॥९॥ ऊई नाभीः करी मुत्का यद् मुपहन्यते। ऊई स्नॉनमंघः शीचं मोर्जनेनेच शुद्धाति॥ १०॥ उपानहावमेध्यं वा यस्य संस्पृशते मुख्यम् । मृतिकाशोधन स्नानं पञ्चग्यं विशोधनम् ॥११॥दशाहान्स्थ्यते विमो ज न्महानी स्वयोनिषु। षड्भिसिभिरथेकेन सम्बिद्भूद्रयी-निषु॥१२॥उपनीतं यदा त्यन्नं भोका च समुपस्थितः। अधी नवन् समुत्सृष्टं न दद्यानीव होमयेत् ॥१३॥ अन्ने भोजनस-

माने मिक्षकाकेशद्षिते। अनन्तरं स्पृशेदापस्तचानं भ-साना स्पृशेत्॥१४॥ शुष्कुमांसमयं चान्नं शुद्रान्नं वाप्यका मतः। भुत्का कच्छं चरे दियो ज्ञानात् कच्छूत्रयं चरेत्॥१५॥ अभुक्ते मुद्धते यश्च सुद्धान् यश्वापि मुच्यते। भोका च भोज केंसेव पङ्क्या गच्छति दुष्कृतम्॥१६॥ यच भुङ्के तु भुक्तं वा दुष्टं वापि विशेषतः । अहीरात्रोषिती भूत्वा पञ्चग ब्येन शुद्धांति ॥१७॥ उदके चोदकस्थस्तु स्थलस्यऋष् स्थले शु निः। पादी स्थाप्योभयञेषु आचम्योभयतः शुनिः॥१८॥ उत्तीयिचम्य उदकाद्वतीर्घ्य उपसृशेत्। एवन्तु श्रोयसायु क्तो वरुणेनापिपूज्यते ॥१९॥ अग्न्यूगारे गवां गोष्ठे बाह्मणा मास्त्र सन्तिधो । स्वाध्याये भोजने चैव पादुकानां विसर्ज-नम्।(२०)। जन्मप्रभृतिसंस्कारे श्मशानान्ते च भोजनम्।अ सपिण्डेन कर्त्तृत्यं चूडाकार्ये विशेषतः॥२१॥ याजकान्न नवशाहं सग्रहे बैच भोजनम्। स्त्रीणां प्रथमगर्भी व भू-का चान्द्रायणं चरेत्।।२२॥ ब्रह्मीदने च श्राद्धे च सीमन्ती-नयने तथा। अन्नश्राद्धे मृतश्राद्धे भुत्का चान्द्रायणं चरेत् ॥२३॥ अपजाता तु नारी स्यान्नाश्मीयादेव तद्गृहै। अथ भ्र जीत मोहाद् यः पूर्यसं नरकं ब्रजेत्॥२४॥ अल्पेनापि हि शुल्केन पिताकन्यां देदाति यः। रीरवै बहुवर्षाणि पुरीषं मू त्रमस्ततं ॥२५॥ स्वीधनानि च ये मोहादुपजीवान्त बान्ध-याः। स्वर्णे यानानि वस्याणि ते पापा यान्त्यधोगतिम् ॥ ॥२६॥ राजान्नं तेजअदिते श्रद्धान्नं ब्रह्मवर्श्वसम्। असंस्कृ तन्तु यो भुङ्के स्भुङ्के पृथिवीमलम् ॥२०॥ मृतके सू तके चैच गृहाते शशिमांस्करें। हिस्तिच्छायान्तु यो भुइके पापः स पुरुषो भवेत् ॥२८॥ पुनर्भूः पुनरेता च रेतोधा का-

३८४ आपस्तम्बस्मृती। मचारिणी। आसां मथमगर्भेषु भुत्का चान्द्रायणं चरेत्॥३९ मातृ धन्य पितृ धन्य ब्रह्मधी गुरुतत्यगः। विशेषाद्रकमेते-षां भुत्का चान्द्रायणं चरेत्॥३०॥ रजकच्याधशैलूषचेणु-च-म्मीपनीविनाम्। सुरक्षेषां ब्राह्मणश्चान्नं शृहिंचोन्द्रायणेन तु॥३१॥ उच्छिष्टोच्छिष्टसंस्पृष्टः श्वनाृशूद्रेन वा हिजः। उ पाष्य रजनीमेकां पञ्चगच्येन शुस्मित ॥ ३२॥ ब्राह्मणस्य सदाकालं शूद्रे प्रेषणकारिणः। भूमावन्तं भदातव्यं यथेव श्वा तथेच सः ॥३३॥ अनूदकेष्वरण्येषु चीरव्याघाकुले प थि। रुत्वा मूत्रं पुरीषञ्च द्रेच्यहस्तः कथं शुचिः॥ ३४॥ भूमा वनं प्रतिष्ठाप्ये कृता शोवं यथाईतः। उत्सङ्गे गृह्य पद्धाने मुपस्पृत्रय ततः शुनिः॥३५॥ मूत्रोचारं हिजः केलो अकला-शीचमात्मनः। मोहाद्भुत्का शिरात्रन्तु गव्यं पीत्वा विशुध्य-नि॥३६॥ उदस्यां यदि गच्छेनु ब्राह्मणी मदमोहिनः । बन्द्रा यणेन शुध्येत बाह्मणानाञ्च भोजनैः ॥३०॥ भुक्तोच्छिष्टस्य नाचान्तश्चाण्डालेः श्वपचेन वा। प्रमादाद् यदिसंस्पृष्टी बा-ह्मणो ज्ञानदुर्वछः॥३८॥ स्नात्वा विषवनं नित्यं ब्रह्मं बारी धराषायः। सं त्रिरात्रोषितो भूत्वा पृष्ट्यगय्येन शुध्यति॥३९ चण्डाछेन तुसंस्पृष्टो यश्चापः पिचित हिजः। अहीराबोधि नो भूता विषवनेन शुध्यति ॥४०॥ सायं पातस्तहोरात्रं पादं केच्छ्रस्य तं विदुः। सायं पातस्तथेवेकं दिन्द्यमया-वितम्॥४१॥ दिनद्यञ्च नाश्वीयात् कृच्छाई निर्धियते। प्रायित्वं उद्यु होतन्यायेषु तु यथाईतः ॥४२॥ कृष्णाजिन तिलगाही इस्त्यश्वानाञ्च विक्रयी। मेतनियतिकश्रीव न भू यः पुरुषोभवेत् ॥४३॥ ॥ इत्यापस्तम्बीये धम्मशास्त्र यः पुरुषोभवेत् ॥४३॥ नवमोऽध्यायः॥

आचानोऽप्यशुविस्नावद् यावनोद्भीयते जलम्। उद् तेऽप्यशाचिस्तावद् यावद्भिनी लिप्यते ॥१॥ भूमाविष च ि प्तायां तावन् स्यादेश्विः पुमान्। आसनाद्खितस्तस्माद् यावनाक्रमते महीम्॥२॥ न यमं यममित्याहरात्मा वे य मउच्यते। आत्मा संयभिनो येन तं यम किं करिष्यति॥३॥ न तथासिस्तथा तीक्ष्णः सपी वा दुरिधिष्ठितः। यथा कोधी हि जन्तूनां शरीरस्थो विनाशकः॥४॥ क्षमा गुणोहि जन्तूना मिहामू ने सुखपदः । एकः क्षमावनां दोषो दिनीयो नोपपद्य ते। यदैनं क्षम्या युक्तमशक्तं मन्यते जनः॥५॥ न शक्तिशा स्माभिरतस्य मोक्षो नचैव रम्यावसथाप्रयस्य। न भोजना खादनतत्परस्य एकान्नशीलस्य दृढ्वनस्य ॥६॥ मोक्षो भ्वेत् मीनिनिवर्त्तकस्य अध्यात्मयोगेकरतस्य सम्यक् । मोक्षो भवे नित्यम् हिंसकस्य स्वाध्याययोगागत्मानस-स्य॥७॥कोधयुक्तो यद्यज्ते यज्जुहोति यद्विति। स्वै हरति तत्तस्य आमकुम्भेइबोदकम् ॥ दे।। अपमानात्तपोर द्धिः सम्मानात्तपसः क्षयः । अर्चितः पूजतो विप्रो दुग्धा गौरिव सीद्रित्। ९॥ आप्यायते यथा धेनुस्तृणैरमृतस मावैः। एवं जपेश्व होमेश्व पुण्येराप्यायते हिजः ॥१०॥मा तृवत् परदारांश्य परद्रव्याणि छोषुवत् । आत्मवत् सर्व भूतानि यः पुत्रयति स पत्रयति ॥१९॥ रजकव्याधत्रील्पवे णुचमीपजीविनाम्। यो भुङ्के भक्तमेतेषां माजापस्य वि शीधनम् ॥१२॥ अगम्यागमेनं कृत्वा अभस्यस्य च भस् णम् । शुद्धिंचान्द्रायणं कृत्वा अथवीक् तथेव च ॥१३॥ अग्निहोत्रं त्यजेद् यस्तु स नरो देवहा भवेत्। तस्य शुद्धिर्व धातच्या नान्या चान्द्रायणाहते॥१४॥ विवाहोत्सवयज्ञेषु

३८६ सम्बर्त्तस्मृतिः। अन्तरामृतस्तके। सद्यः शुद्धि विजानीयात् पूर्वे सङ्ख्य-तं चरेत्॥१५॥ देवद्रोण्यां विवाहेषु यज्ञेषु यत्तेषु च किया तं सिद्धमन्नाद्यं नाशीचं मृतस्तके॥१६॥ ॥ इत्यापस्त म्बीये धम्मिशास्त्रे दशमोऽध्यायः॥

अथ सम्वर्तस्मृतिः ॥

सम्बर्तमेकमा्सीन्मात्मविद्यापरायणम्। ऋष्यस्तु समागम्य पश्च्छुद्धैर्मकाङ्खिणः॥१॥ भगवन्।श्रोतुमि च्छामः श्रेयस्कर्मि दिजोत्तम!। यथाबद्धमीमाचस्व शुर भाशुभविवेचनम्॥२॥ वामदेवादयः सर्वे तमपुच्छन् मही जसम्। तानब्रवीन्मुनीन् सर्व्वान् प्रीतात्मा श्रूयनामिति ॥३॥ स्वभावाद् यत्र विचरेन् रुष्णसारः सदा मृगः। धम्प देशः स विज्ञेयो दिजानां धर्मसाधनम्॥४॥ उपनीतः सदा विष्रो गुरोस्तु हिनमाचरेन्। स्वग्गन्धमधुमांसानि ब्रह्म-चारी विवर्जयेत्॥५॥ सन्ध्यां पातः सन्धनामुपासीत् य थाविधि। साद्तियां पश्चिमां सन्ध्यामुद्दिस्तिमितभास्करे॥ ॥६॥ तिष्ठन् पूर्वी जपं कुर्याद्ब्रह्मचारी सेमाहितः। आसी नः पश्चिमां सन्ध्यां जपं कुच्चौदतन्द्रितः ॥७॥ अग्निकार्ध्य ततः कुर्यान्मेधाची तदनन्तरम् । ततोऽधीयीत चेदन्तु बी क्षमाणी गुरोमुरवम् ॥८॥ मणवं भाक भयुञ्जीत ब्याहतिस्त द्नुन्तरम्। गायत्रीञ्चानुपूर्वण ततोवेदं समारभेत्॥ १॥ ह स्ती सुसंयुती कायी जानुभयासुपरिस्थिती। गुरीर्नुमनं क च्यति परनान्यमिति भवित्।।१०॥ सार्यं मातस्तु भिस्तेत ब्र हाचारी सदा बती। निवेद्यं गुरवंऽश्रीयान् भाडकुरवो वाग्य

तः शुचिः॥११॥सायं पानिहिजानीनाम्शनं शुनिचोदिन्म्। नान्तरा भोजनं कुर्घ्याद्मिहोत्रसमो विधिः ॥१२॥ आच्चम्यैव तु भुद्धीत भुद्धा चोपस्पृशे द्विनः। अनाचान्तस्त यो अभी यान् पायश्चित्तीयते तु संः ॥१३॥ अनाचान्तः पिवयुक्तु यो ऽपिया भक्षयेद्विजः। गायन्यष्टसहस्रन्तु जपं कत्वा विश्राध्य ति॥१५॥ अकुत्वा पादशीचन्तु निष्ठन् मुक्तिशिखोऽपिवा।वि ना यज्ञीप्वीतेन आचान्तोऽथ शुचिहिंजः ॥१५॥ आचामेद बाह्मतीर्थेन सोएवीती ह्यदङ्गुरंगः। उपवीनी दिजोनित्यं मो ङ्चरवो पाग्यतः सुचिः॥१६॥जरै जरस्य आचामेन् स्थलाचा न्तोबहिः शुचिः । बहिरन्तस्थ आचान्त् एवं शुद्धिमवास्यात् ॥१७॥ आमणिबन्धना दस्तो पादावद्भिविशोधयेत्॥१६॥ अ शुब्दाभिरतुष्णाभिः स्ववणिरसगन्धिभिः । इद्रताभिरफेनाभि सिश्वतुर्वीदिराचमेत् । परिमृज्य दिरास्यन्तु दादशाङ्गानि चस्पृशेत् ॥ १९॥ स्वात्वा पीत्वा तथा भुत्का स्पृष्ट्या चैव दिजो त्तमाः।। अनेन विधिना विप्रआचान्तः शुचितामियान्॥२० श्रद्धः अन्द्राति हस्तेन वैश्यो दन्तेषु वारिषिः । कपरागतेः स नियस्तु आचान्तः शुनिता मियात् ॥२१॥ आसनारूदपाद-श्व हतावसक् थिकरून्या। आऋदपादको वापि न शुध्यति कदाचन ॥२२॥ उपासीत न चेत् सन्ध्यामग्निकार्य्यं नवा ह नम्। गायत्र्यष्ट्यहस्मन्तु जपेत् स्नात्वा समाहितः ॥२३॥सू तकानं नवशाह् मासिकानं नथैव च। ब्रह्मचारी तु योऽश्री याश्विरावेणीय शुद्धति॥२४॥ बहाचारी तु यो गच्छेत् स्वियं कामपपीडितः। पाजापत्यं चरेन् रुच्छ्मथवैकं सुमन्तितः॥ ॥२५॥ ब्रह्मचारी तु योऽशीयान्मेधुमासं कथञ्चन । प्राजाप त्यन्त रुत्वासी मोञ्जीहोमेन शुध्यति॥ १६॥ निर्वपेच पुरो

सम्बत्तेसमृतिः।

355 डापां ब्रह्मचारी च पर्वणि । मन्त्रेः शाकलहोमान्तेरग्नाचाज्य-ञ्च होमयेत् ॥२७॥ ब्रह्मचारी तु यः स्कन्देत् कामतः शुक-मात्मनः। अवकीणी व्रतं कुर्यात् सात्वा शुन्दोदकामतः॥२८॥ भिक्षाटनम्नः कृत्वा स्वस्थां होकात्मनः श्रुतिः। अस्तात्वा चै व यो भुङ्के गायन्य एशतं जपेत् ॥ २९॥ भूद्रहस्तेन योऽश्री यात् पानीयं वा पिबेत् क्वित्। अहीरात्रोषिती भूत्वा पञ्च-गच्येन शुध्यति॥३०॥ शुष्यपर्ध्यितो खिएं भुत्कानं केशद् षितम्। अहोरानोषितो भूत्वा पुत्र्यगच्येन शुध्यति॥३१॥ शू द्राणां भाजने भुत्का भुत्का वा भिन्नभाजने । अहीरात्रोषिती भूत्वा पञ्चगच्येन शुध्यति॥३२॥ दिवा स्वपिति यः स्वस्यो ब ह्मचारी कथञ्चन। स्मात्वा सूर्य्य समभयर्च गायन्यएशतं जपेत् ॥३३॥ एषधर्माः समाख्यातः प्रथमात्रमवासिनाम्। एवं संव र्तमानस्तु पामोति प्रमां गतिम् ॥३४॥ अथ हिजोड्भ्यनुज्ञा तः सवर्णी स्थियमुद्दहेन्। कुछे महति सम्भूतां उक्षणेश्वसम न्विताम्। ब्राह्मेणेव विवाहेन शीलक्त्पगुणान्विताम्॥१५॥प ञ्चयज्ञविधानञ्च कुर्य्यादहरहर्द्दिजः। न हापयेत् सविदित्रः श्रेयस्कामः कदाचन ॥३६॥ हानि तस्य तु कुचीत सद्यू मर-णजन्मनोः॥३७॥ वित्रो दशाहमासीत दानाध्ययनवर्जितः। क्षत्रियो द्वादशाहेन येश्यः पञ्चदशेव तु। शुद्रः शुध्यति मा-सेन सम्वर्त्तवचनं यथा॥१८॥ प्रेतस्य तु जले देयं स्नात्वा च गोत्रज़ेबिहिः। प्रथमेशक्कि त्तायेच सप्तमे नवमे तथा॥१९॥ चतुर्थे सञ्ज्यं कुर्यात् संवेरित गोवजैः सह। ततः सञ्ज्यना दूई मङ्गस्पर्शी विधीयते॥४०॥ चतुर्थेऽहिन विशस्य षष्ठे वै क्षेत्रयस्य च। अष्मे दशमे चेव स्पर्शः स्यादेशयश्रद्रयोः ॥४१॥ जातस्यापि विधिर्देष एष एव मनीषिभिः। दशरात्रेण

शुध्यन्ति वैश्वदेवविवर्ज्जिताः ॥ ४२॥ पुत्रे जाते पितुः स्नानं स चैलन्तु विधीयते । माता शुध्येदशाहेन् स्नात्स्यस्पर्शनं पि तुः॥४३॥ होमस्तन तु कर्त्तव्यः शुष्कान्नेन फलेन च। पञ्च-यंज्ञविधानन्तु न कार्य्य मृत्युजन्मनोः॥४४॥द्शाहानु परं सम्यग् वियोऽधीयीत धर्मिवित्। दानञ्च विधिना देयम-शुभान्तकरं शुभम् ॥४५॥ यद्यदिष्टतमं डोके यचापि दियतं गृहे। तत्तरुण्यते ज्ञेयं तदेवास्यमिच्छता ॥४६॥ नानावि धानि द्रच्याणि धान्यानि सुबहूनि च। समुद्रजानि रह्यानि नरो विगतकल्मषः। द्त्वा विपाय महते प्राप्नोति महती शि यम् ॥४७॥ गन्धमाभरणं माल्यं यः मयन्छति धम्मेवित् । स सुगन्धः सद्हिष्टो युव त्रवोपजायते ॥४८॥श्रोवियाय कु डीनाय लिथनिच विशेषतः। यद्दानं दीयते भक्तया तद्भेतु महत् फुलम् ॥४९॥ आह्य शीलसम्पन्नं श्वनेनाभिजनेन च। शुचिवित्रं महापाजी ह्यक्येषु पूज्येत् ॥५०॥नाना विधानि द्रव्याणि रसवन्तीप्सिनानि च । श्रेयस्कामेन देयानि स्वर्गमक्ष्यमिच्छता ॥५१॥ वस्तदाता सुवेशः स्याद्रीप्यदो रूपमेच हि। हिरणयदो महचायुरीभेत्तेजस्य मानवः॥५२॥ भूताभयपुदानेन सर्वेकामानवासुयात्। दीर्घमायुश्च उभ ते सुरवी चैव तथा भवेत् ॥५३॥ धान्योदक पदायाँ च सपि र्दः सुरवमश्चते। अलङ्क्त्यं त्वलङ्कारं दत्त्वा पामोति त रफलम् ॥ ५४॥ फलमूलानि विषायं शाकानि विविधानि च। सुरभीणि च पुष्पाणि दत्वा माज्ञम् जायते ॥५५॥ ताम्बूलं चैव् यो दद्याद् श्राह्मणे भयो विचक्षणः । मेधावी सुमगः योज्ञो दर्शनीयऋ जायते ॥ पद्या पादुकीपानही च्छत्रं शॅयूनान्यास नानि च। विविधानि च यानानि दत्त्वा दिव्यगति भवित्।।५७

सम्बत्तंस्मृतिः। 360 द्याच शिशिरेलिनं बहुकाषं प्रयत्ननः। कायानिदीप्तिं पा ज्ञत्वं रूपसीभाग्यमाध्यान् ॥५८॥ औषधं स्नेहमाहारं रो गिणां रोगशान्तये। दत्त्वा स्याद्रोगरहिनः सुरवी दीघ्यिरे यच ॥ ५९॥ इन्धनानि च यो दद्याहिमेश्यः शिशिरागमे। नि संजयित संग्रामे शिया युक्तस्तु दीप्यते ॥६०॥ अलङ्क्तय तु यः कन्यां वराय सद्शायं वे। बाह्मीयेण विवाहेन देवाना न्तु स्तप्रितिताम् ॥६५॥ स कन्यायाः पदानेन श्रेयो विन्दति पु क्लम्। साधुवादं लभेन् सदिः कीर्ति प्राप्नोतिपुष्कलाम्॥ ॥६२॥ ज्योनिष्टोमादिसत्राणां शतं शतगुणी सतम्। प्राप्तीत पुरुषो दत्ता होममन्त्रेस्तु संस्कृताम् ॥६३॥अलङ्कृत्य पिता कन्यां भूषणाच्छादनासनेः। दत्त्वा स्वर्गमवाभोति पूजित-स्तु सरादिष् ॥६४॥ रोमदर्शनसंगाप्ते सोमो भुइन्केउथक न्यकाम्। रजीहस्या तु गन्धवीः कुची दस्या तु पावेकः॥६५ अख्वर्षा भवेदीरी नववर्षा तु रोहिणी। दशवर्षा भवेत क न्या अत्ऊर्ध्व रजस्वला ॥६६॥ माता चैव पिता चैव ज्येषी-भाता नथेवच। अयस्ते नरकं यान्ति दृष्ट्वा कृन्यां रजस्वला म्॥६७॥ तस्मादिवाहयेत् कन्यां यावन्नर्ज्ञमती भ्वेत् । विवाहो अष्टमवर्षायाः कन्यायास्तु पशस्यते ॥ ६८॥ नैलमा स्तरणं पादाः पादाभ्यद्गं ददानि यः। पहण्मानसो छोदे साची चैव सदा भवेत् ॥ ६९॥ अनु इहि च यो ददात् की लसिरेण संयुती। अलङ्कत्य यथाश्चया ध्रव्ही शुभ लक्षणी।। अग सर्वपापविश्वदात्मा सर्वकामसम्नितः। वर्षाणि वसित स्वर्गे रोमसंख्याप्रमाणतः॥ ११॥ धेनुञ्च यो हिजे द्द्यादल इन्कृत्य पयस्तिनीम्। कांस्यव्स्वादिभियुक्तां स्वर्गलंके महीयते॥७२॥ भूमिं शस्यवनी श्रेषां ब्राह्मणे वेद

पारगे। गां दत्वाईपस्ताञ्च स्वर्गहोके महीयते ॥७३॥ अ मेरपत्यं प्रथमं सुवर्णे भूवेष्णाची सूर्य्यस्ताश्च गावः । डो कास्त्रयस्तेन भवन्ति दत्तौ यः काञ्चनं गाँञ्च महीञ्च दद्या त्।। प्रा याचन्ति शस्य मुख्यानि आरोप्याणि च सर्वशः।न रस्तावन्ति वर्षाणि स्वर्गलोकै महीयते ॥५५॥ सर्वेपामेव दा-नानामेकजन्मानुगं फलम्। हाटकिसितिगीरीणां सप्तजन्मा नुगं फलम् ॥ ज्हा। यो ददाति स्वर्णरीध्ये हैं मश्हु भरोगिणी म्। सबसा बाससा बीतां सुशीलाङ्गां पयस्विनीम्॥ १७॥ न स्यां याचन्ति रोमाणि सवत्सायां दिवं गतः। ताबद्दर्धसहस्रा णिसनरो ब्रह्मणोऽन्तिके॥७८॥ यो ददानि वडीवर्द् मुक्तेन विधिना शुप्तम्। अव्यङ्गं गोघदानेन फ्लाइशागुणं फलम् ॥७९॥ जलदस्तृतिमतुलां वितृष्य सर्वस्तुषु। अन्नदः सु खमाप्नोति सुनुसः सर्ववस्तुषु॥८०॥ सर्वेषामेव दानानाम न्नदानं परंस्मृतम्। सर्वेषामेव जन्तूनां यतस्तज्ञीविनं फ लम्॥८१॥ यसमादेनान् प्रजाः सब्बीः कल्पे कत्ये ऽसृजन् मकः। तस्मादनात् परंदानं न भूतो न भविष्यति॥८२॥ अन्नदानात् परंदानं विद्यते न हि किञ्चन । अन्नाद्भतानि-जायन्ते जीवन्ति च न संशयः।।८३।। मृतिका गोशकुँ दुर्भा-नुप्बीतं यथोत्तरम्। दत्ता गुणाच्यविपाय कुले महित जा यते॥ १। स्रवासञ्च यो द्याद्न्धावनमेव च। श्रुवि गन्ध्समायुक्तो वाक्पटुः स सदा भवेत्॥८५॥ पादशीच-न्तु यो द्यानयाच गुद्रिङ्ग्योः। यः भयच्छिति विभाय भ -ह्बुद्धिः सदाभवेत्॥ ८६॥ औषधं पथ्यमाहारं स्नेहाभ्यद्वं प तिभ्यम्। यः प्रयच्छति रोगिभयः सर्वव्याधिविवृर्जितः॥८० गुडमिक्षुरसञ्चेव उवणं व्यञ्जनानि च। सुरभीणि चणना

सम्बर्त्तस्मृतिः।

नि द्लात्यन्तसुखी भवेत ॥ ८८॥ दानैश्व विविधेः सम्यक् पुण्यमेनदुदाह्तम्। विद्यादानेन पुण्येन ब्रह्मलोके महीय-ते॥ ८९॥ अन्योन्यान्न यदा विपा अन्योन्यपतिपूजकाः। अ न्योन्यं प्रतिगृह्धन्ति नारयन्ति तरन्ति च ॥९०॥ दानान्येनानि देयानि ह्यन्यानि च विशेषतः। दीनान्धरुपणादिभयः श्रेय-स्कामेन धीमता॥९१॥ ब्रह्मचारीयतिभयश्च वपनं यस्त कारयेत्। नखकर्मादिकञ्चीव चक्षुष्मान् जायते नरः ॥९२॥ देगागारे दिजानीनां दीपं दद्या चतुष्यथे। मेधाविज्ञानसम्प न्नश्चक्षान्जायते नरः॥९३॥ नित्ये नैमित्तिकेकाम्ये ति लान् दला तु शंकितः। प्रजावान् पशुमांश्रीव धनवान् जाय ते नरः॥९४॥ यो ददात्यथितो विभे यत्तत् संपतिपादिते। नुणकाषादिकञ्चेव गो मदानसमं भवेत् ॥९५॥ कत्वा गार्ह्या णि कम्माणि स्वभार्यापोषणे नरः। अरतुकालाभिगामीस्या न् प्रामोति परमां गतिम् ॥९६॥ उषिलेवं गृहे विपोदितीयादा श्रमान् परम्। बढीपछितसंयुक्तस्वृतीयन्तुं समाश्रयेन्॥९७ ग्चेदेवं वनं पाजः स्वभार्थीं सहचारिणीम्। गृहीत्वा चा-मिहीत्रञ्च होमं तत्र न हापयेत् ॥९८॥ कुर्याचिव पुरोडाशं वन्यैर्मध्येर्यथाविधि। भिक्षाञ्च भिक्षवे द्धान्छाकमूलफ लानिच॥९९॥ कुर्च्याद्ध्ययनं नित्यमनिहोत्रपरायणः । इष्टिं पाच्चियणीयाञ्च पकुर्धात् प्रतिपर्वसम्। १००॥ अष् त्वेचं वने सम्यागिधिज्ञः सर्व्यवस्तुषु। चतुर्पमाश्रमं गच्छे दुतहोमोजितेन्द्रियः ॥१०१॥ अमिँ मात्मिन संस्थाप्य दिजः मॅब्रजितो भूवेत् । वेदाभ्यासरतो नित्यमात्मविद्यापरायणः ॥१०२॥अधी भिसाः समादायस मुनिः सप्त पञ्च वा। अ द्विः मक्षाल्य तत्सर्व्य फञ्जीतं च समाहितः॥१०३॥ अरण्ये

सम्बर्तसमृतिः।

निर्जाने विमः पुनरासीत भुक्तवान्। एकाकी चिन्तयेन्नित्यं म नोवाकायसंय्तः॥१०४॥ मृसुद्धा नाभिनन्देत जीवितं वा क-थञ्चन। कालमेव प्रतीक्षेत् यावहायुः समाप्यते ॥१०५॥ संसे यसमान् सर्गन्जितकोधो जितेन्द्रियः। ब्रह्मछोकमगाप्नोति वेदशास्त्रार्थविद्हिनः॥१०६॥ आश्रमेषु च सर्वेषु ह्युक्तः प्रा सिक्कोविधिः। अधाभिवस्ये पापानां प्रायश्चित्तं यथाविधि ॥१००॥ ब्रह्मझ्य सरापश्य स्तेयी च गुरुनल्पगः। महापात किनस्वेते तत्संयोगी च पञ्चमः॥१०८॥ ब्राह्मघस्तु वनं ग च्छेत् कलक्वासाजरी ध्यजी। वन्यान्येव फलान्यश्चन् सर्व कामविवर्जितः ॥१०९॥ भिक्षार्थी च चरेद्रामं वन्यैयदि नजी वित। चातुर्वण्यं चरेद्रेक्षं खद्वांगी संयतः पुमान् ॥११०॥ भी क्षञ्चीव समादाय वनं गच्छेत्ततः पुनः। वनवासी सपापश्च सदाकालमतन्द्रितः॥१९१॥ ख्यापयन्नेव तसापं ब्रह्मझः पा परुन्तरः। अनेन तु विधानेन दादशाब्दब्रतञ्चरेत्॥११२॥ संनियम्येन्द्रिययामं सर्वभूतहितेरतः। ब्रह्महत्यापनोदा-य ततो मुन्येत किल्बिषात्।।१९३॥ अतः परं सुरापस्य प्रव-स्यामि विनिष्कृतिम्। श्रोत्मिन्छन भो विषा ! वेदशास्त्रानु रूपिकाम् ॥११४॥ गींडी पेष्टी तथा माध्वी विज्ञेया त्रिविधा सुरा। यथैवैका तथा सर्वा न पात्व्या हिनैः सदा॥११५॥ संरापस्तु सरां नष्टां पिबेत्तत्यापमोक्षकः। गोमूत्रमिनवर्ण ञ्च गोमयं वा तथाविधम् ॥११६॥ घृतञ्चीव स्त्तेपञ्च सीर् वापि तथाविधम्। वत्सरं वा कणानश्वन् सर्वकामविवर्जि तः॥११७॥ चान्द्रायणानि वा त्रीणि सरापी व्रतमाचरेन्। मु च्यते तेन पापेन पायश्चित्ते रुते सित ॥११८॥ एवं शुद्धिः सु रापस्य भवेदिति न संशयः। मद्यभाण्डोदकं पीत्वा पुनः स 368

सम्बर्त्तसमृतिः।

स्कारमहीति॥११९॥ स्तेयं रुत्वा सुवर्णस्य राज्ञे शंसेत मानवः। ननो मुषलमादाय स्तेनं हन्यात्तर्नोनृपः ॥१२०॥ यदि जीवति स स्तेनस्ततस्तेयात् प्रमुच्यते। अरण्ये चीरवासा वा चरेह्रह्म हणोवनम् ॥२१॥ समाछिङ्गेत् स्त्रियं वापि दीप्तां कत्वायसा कताम्। एवं शुद्धिः कता स्तेये सम्वर्तवचनं यथा॥२२॥गु रुत्से शयानस्तु नत्ये स्वप्यादयो मये। चान्द्रायणानि वाकु य्यचित्वारि त्रीणि वा दिजः। तत्रीविमुच्यते पापात् प्रायित्र त्ते रुते सित ॥२३॥ एभिः सम्पर्कमायाति यः क्शित् पाप मोहितः। षण्मासादिधकं वापि पूर्वोक्तव्रतमाचरेत्॥ २४॥ महापातिकसंयोगे ब्रह्महत्यादिभिर्नरः। तत्पापस्य विश्व-द्धर्ये तस्य तस्य वतञ्चरेत् ॥१२५॥ क्षत्रियस्य वधं रुत्वा त्रिभिः रुच्ये विशुध्यति । कुर्याच्चेवानुरूपेण त्रीणि रुच्या णि संयतः ॥२६॥ वैश्यहत्यान्तु संप्राप्तः कथित् काममी हितः। रुच्छातिरुच्छं कुर्वात सं नरो वेश्यघातकः ॥२७॥कु र्याच्छूद्वधं प्राप्तस्तमकुच्छं यथाविधि॥२८॥गोघस्यानः प्रवस्योमि निष्कृतिं तत्त्वतः पुमान्। गोघः कुर्वात संस्थानं गोष्टे गोरुपसंस्थिते ॥२९॥ तत्रीच क्षितिशायी स्यान्मासार्दे संयतेन्द्रियः। सक्त्याचकपिण्याकपयोद्धि सक्तनरः॥१३० एनानि कमनोऽभीयाद्दिजस्तु पापमोक्षकः। शुद्धाते सा र्द्रमासेन नखछोमविवर्जितः॥३१॥ स्नान् त्रिष्वणं चास्य गवामनुगमस्तथा। एतत् समाहितः कुर्यान्नरोविगतमस रः ॥३२॥ सावित्रीच्य जपोनिसं पवित्राणि च शक्तितः । तत श्रीणीव्रतः कुर्याद्विपाणां भोजनं परम् ॥३३॥ भुक्तवत्सुच विशेषु गान्त्र द्यान् सदक्षिणाम् ॥३४॥ न्यापादितेषु बहुषु बन्धनं रोधनेऽपिवा। द्विगुणं गोत्रतं तस्य प्रायम्बितं विश्वन्द

सम्बर्त्तस्मृतिः।

ये॥१३५॥ एका चेह्हुभिः केश्विदेवा सापादिता किन्। पा दं पादन्तु इत्यायाश्चरियुस्ते पृथक् पृथक्॥ ३६॥ यन्त्रणे गो चिकित्सार्थे मूढगर्भविमोचने। याति तत्र विप्तिः स्यान्नस पापेन छिप्यते ॥३७॥ निशाबन्धनिरूप्येषु सर्पव्याघहनेषु च। अग्निविझनिपातेन पायश्चित्तं न विद्यते ॥३८॥ पाय श्चित्तस्य पादन्तु रोधेषु बनमा्चरेत्। हो पादी बन्धने चैव्पा दोनं कुट्टने तथा॥३९॥पाषाणीर्ठगुडे देण्डेस्तथा शस्त्रादि-भिर्नरः। निपातने च्रेत्सर्वे प्रायश्वितं विशुद्धे॥१४०॥ ग जञ्च नुरगं हत्वा महिषोषु कपिन्तथा। एषु कुर्व्यात सर्वेषु स प्तराज्यभोजनम् ॥ ४१॥ व्याघं भ्यानं नथा सिंहमृक्षं सूक रमेव च। एतान् इत्वा हिजः रुच्छुं ब्राह्मणानाञ्च भीजन्म्॥ ॥४२॥ सर्वासामेव जातीनां मृगाणां वनचारिणाम् । विरात्रोपी-षितसिष्ठेज्ञपन् वे जातवेदसम् ॥४३॥ हंसं काकं बलाकञ्च पारावतमथापिवा । सारसञ्जाषभासञ्ज हत्वा त्रिदिवसं क्षि पेत् ॥४४॥ चकवाकं तथा कीव्यं सारिकाशुकतितिरिम् । १ये नगृभावुल्कञ्च कपोनकमथापिवा॥१४५॥ रिहिभंजा रुपादञ्ज कोकिरं कुक्करं तथा। एवं पक्षिषु सर्वेषु दिनमेक मभोजनम् ॥४६॥ मण्डकञ्चेव हत्वा च सर्पमाञ्जरिम् षिक म्। त्रिरात्रीपोषितसिष्ठेत् कुर्याद्बाह्मणभोजनम्॥४७॥अ नस्थीन् बाह्मणो इत्वा पाणायामेन शस्यित । अस्थिमत्रोव धे विमः किञ्चिदद्याद्विसणः॥४८॥ नाण्डाली यो दिनोग-च्छेत् कथ्ञित् काममोहितः। त्रिभिः कच्छेरिशुध्येन प्राजा पत्यानुपूर्वकैः ॥४९॥ पुक्सीगमनं कृत्वा कोमतोऽकामतोऽ पिवा । केच्छं चान्द्रायणं तस्य पावनं परमं समृतम् ॥१५०॥ नटीं शैल्षिकीञ्चीच रजकीं वेणुजीविनीम् । गत्वा चान्द्रायणं सम्बर्तस्मृतिः।

388 कुर्यात्तथा चम्मोपजीविनीम् ॥१५,१॥ क्षत्रियामय वैश्यां वा गच्छेद्यः काममोहितः। तस्य सान्तपनं कच्छं भवेतू पापा-प्नोदकम्।।५२॥भूद्रीं तुब्राह्मणोगत्वा मासं मासाइमैव वा। गोमूत्रयावकाहारो मासाईन विशुद्धति ॥५३॥ विमस्तु ब्रा ह्मणीं गत्वा माजापत्यं समाचरेत्। क्षत्रियां क्षत्रियोगत्वा त देवब्रतमाचरेत् ॥५४॥ नरोगोगमनं रुखा कुर्याचान्द्रायणं व्रतम् ॥१५५॥ गुरोर्द्धहितरं गत्वा स्वसारं पितुरेव च। तस्या द्दिनरञ्जीव चरेचान्द्रायणं वतम् ॥५६॥ मातुल्।नीं सना-भिञ्च मातुरस्यात्मजां सुषाम्। एता गला स्त्रियो मोहात् प राकेण विशुध्यति ॥५७॥ पितृव्यदारगमने भातृभार्याग्मे नथा। गुरुनल्पवनं कुर्यात्तस्यान्या निष्कृतिर्नच ॥५८॥पितृ दाराः समारुह्य मातृवर्जे नराधमः। भगिनीं मातुलसुनां स्व सारं चान्यमातृजाम्। एतास्तिस्यः सियो गत्वा तमकुच्छं स माचरेत्॥५९॥ मातरं याऽधिगच्छेच सुतां वा पुरुषाधमः। भ गिनीञ्च निजां गला निष्कृतिनी विधीयते ॥१६०॥कुमारीग मने चैव व्रतमेतत् समादिशेत्। पशुचेश्याभिगमने पाजाप त्यं विधीयते ॥६५॥ सस्विभार्यो कुमारीञ्च श्वश्यं ग १या-लिकां नथा। नियमस्थां बतस्थाञ्चं यो भिगच्छेत् स्त्रियं हि जः। सकुर्यात् पास्तं हुच्छं धेनुं द्यान् पयस्विनीम् ॥६२॥ रजस्वलाञ्च योगच्छेद्रभिणीं प्रतितान्तथा। तस्य पापविशु ध्यर्थमतिकुच्छं विधीयते॥६३॥वेश्याञ्च बाह्मणोगत्वा क च्छमेकं समाचरैत्। एवं मुद्धिः समाख्याता सम्बर्तस्य वची यथा ॥६४॥ त्राह्मणोत्राह्मणों गत्वा कृच्छेणेकेण शुध्यित ॥१६५॥ कथं विद्वासणीं गत्वा क्षत्रियो वैत्यएव च। गोस्त्र-यावकाहारी मासेनैकेन शुध्यति॥६६॥बाह्मणी श्द्रसम्य-

कें कथन्चित् समुपागने। रुच्छ्रं चान्द्रायणं कुर्यात् पावनं परमं स्मृतम् ॥६७॥ चाण्डालं पुक्से भीच श्वपाकं पतिनं तथा। एना न् श्रेषस्थियो गला कुर्युश्चान्द्रायणनयम् ॥६८॥ अतःपरन्त दुशनां निष्कृतिं शोनुमहर्षे । सन्यस्य दुम्मितिः कश्चिदपत्यार्थे सियं व्रजेत्। स कुर्यात् इच्छ्मश्रानाः षणमासन्तदनन्तरम् ॥६९॥विषानिश्यामशवं सतेषामेवं विनिर्दिशेत्। स्त्रीणास्त्र तथाचरणे गर्ह्याभिगमनेषुच। पननेषु तथेतेषु प्रायश्चित्तविधिः स्मृतः॥१७०॥ चूणां वि्यतिपत्ती च पावनः येतराडिह ॥१७१॥गो भिविषहते वैव तथा वैवात्मघातिनि। नासुप्रपाननं कार्ये स दिः श्रेयो अनुकाङ्क्षिभिः॥७२॥ एषामन्यनमं भेनं यो यहेत्त्दहे-तवे। तथोदकियां कृत्वा चरेचान्द्रायणवतम्॥७३॥ तच्छवं केवलं स्पृष्ट्या वस्त्रं वा केवलं यदि । पूर्वः कृच्यु।पहारी स्यादेका हस्तपणं नथा ॥७४॥ महापानिकनाञ्चीच तथा चैचात्मधातिनाम् उदकं पिण्डदानञ्च शाइचेंच नु यत् कृतम्। नोपतिष्ठति तत्स र्व राक्षसेविपकुष्यते ॥१५५॥ चाण्डाहिस्तु हना येच जलदंष्ट्रिस रीस्पैः। श्राह्मेषां न कर्त्रसं ब्रह्मदण्डहताश्य ये ॥ १६॥ कृत्वो मूनं पुरीषं वा भुक्तोच्छिएस्तथा दिजः। श्वादि स्पृषो जपेदेच्याः सहस्रं स्नानपूर्वकम् ॥७७॥ चाण्डालं पतितं स्पृष्ट्या शवमन्यज मेवच। उदक्यां स्तिकां नारीं सवासाः स्नानमाचरेत्॥७८॥ अस्पृथं संस्पृशेद्यस्तु स्नानं तेन विधीयते । ऊर्द्वमान्मनं प्रोकं द्रव्याणां मोक्ष्णं तथा॥७९॥ नाण्डाला दोस्तु संस्पृष्ट उच्छिषम् दिजोत्तमः। गोमूत्रयावकाहारः षड्विण विश्वध्यति॥१८०॥श्र ना पुष्पवती स्पृष्टा पुष्पवत्यान्यया तथा। शेषान्यहान्युपवसेत् स्नाता शुध्येहृताशनात्॥ = १॥ चाण्डारुभाण्डसंस्पृष्टं पीत्ना -कूपगतं जलम्। गोमूत्रयावकाहारस्त्रिरात्रेण विश्वध्यति॥ ११॥

अन्यजैः स्वीकृते तीर्थे तडागेषु नदीषु च। शुध्यते पञ्चगच्येन पीत्वा तोयमकामतः ॥ ८१॥ सराघटमपातीयं पीत्वाकाशजलं तथा। अहोराञोषितोभूत्वा पञ्चगव्यं पिबेद्दिजः॥ १४॥ कूपे विण्मूत्रसंस्पृष्टे पाश्य चापो हिजातयः। त्रिरात्रेणीव शुध्यन्ति कुम्भे सान्तपनं स्मृतम्॥१९५॥वापीकूपतडागानां दूषिनानां विशोधनम्। अपा घटशतोद्धारः पञ्चगव्यञ्च निक्षिपेत्॥८६ आविकेकशफोष्ट्रीणां क्षारं पाश्य हिजोत्तमः। तस्य शाहिवि धानाय त्रिरात्रं यावकं पिबेत्। ८७॥ स्त्री सीरमाजिकं पीत्वा स न्धिन्यास्त्रीय गोः पयः। तस्यं शुद्धिस्त्रिरात्रेण विड्मस्याणा-ञ्च भक्षणे॥८८॥ विषमूत्रभक्षणे चैव प्राजापत्यं समाचरेत्। श्वकाको चिष्यो चिष्यभक्षणे तु त्यहं हिनः ॥ ८९॥ विडालम् षको छिए पञ्चगव्यं पिबेहिजः। शूदो छिएं तथा भुका बि रात्रेणीय शुध्यति॥१९०॥ पठाण्डुलशुनं जग्धा तथेय यामकु कुटम्। छत्राकं विड्वराह्य चरेचान्द्रायणं हिजः॥९१॥मान वंः श्वरवरोष्ट्राणां कपेगेमायुकद्भयोः। प्राश्य मूत्रं पुरीषंवा चरे चान्द्रायण्वतम्॥१२॥ अन्तं पंच्छिषितं भुत्का केशकी देरुपद् तम्। पितनेः मेक्षितं वापि पञ्चग्वं पिवेहिनः॥९३॥ अन्त्य-जाभाजने भुत्का खुदक्याभाजनेऽपिवा। गौमूत्रयावकाहारी मासाईन विशुध्यति॥९४॥गोमांसं मानुषञ्चेव शनोहस्तात् समाहितम्। अभक्षम्तत् सर्वन्तु भुत्का चान्द्रायणं चरेत् ॥१९५॥ चाण्डालस्य करे विषः श्वपाके पुकसेऽपिवा। गीसूत्र यावकाहारो मासाईन विशुध्यति ॥९६॥ पतिनेन सुसम्पर्के मासं मासाईमेव वा। गोमूत्रयावकाहारो मासाधैन विसुध्यिति ।।९७॥ यत्र यत्र च सङ्गीर्णमात्मानं मन्यते हिजः। तत्र का-र्घिसिवेहीमो गायत्र्यावर्तनं तथा ॥९८॥ एव एव मया प्रोक्तः

पायभित्तविधिः पुनः । अनादिष्टेषु पापेषु पायश्चित्तं तथो च्यते ॥९९॥ दाने ही मेर्जपेनित्यं पाणायामे हिजोत्तमः । पात् केप्यः प्रमुच्येन वेदापयासान्त संशयः ॥२०० रुवणदानं गो दानं भूमिंदानं तथेव्च। नाशयन्त्याशु पापानि ह्यन्यजन्म कृतान्यपि॥२०१॥ निलधेनुक्य यो दद्यान् संयनाय दिज-न्मने। ब्रह्महत्यादिभिः पांपैर्मुच्यते नात्र संशयः॥२॥ माघ मासे तु संमाने पौर्णमास्यामुपाषितः। ब्राह्मणेश्यस्तिलान् दत्ता सर्वपूर्णः मुम्यते ॥३॥ उपवासी नरी भूत्वा पौर्णमा स्याञ्च कार्तिके । हिरणयं वस्त्रमन्नं वा दत्त्वा मुच्येते दुष्कृतेः॥ ॥४॥अमानास्या द्वादशी च संकातिश्व विशेषतः । एताः मश-स्तास्तिथयो भानुवारस्तथैव च ॥ २०५॥ अत्र स्नानं जपी होमो ब्राह्मणानाञ्च भोजनुम् । उपवासस्तथा दानमेकैकं पावयेन्न रम्॥६॥ स्नातः श्रुनिधीनिवासाः श्रुद्धात्मा विजितेन्द्रियः। सालिकं भावमाभित्य दानं दद्याहिन्क्षणः ॥७॥ सप्तव्याह तिभिद्दीमो दिजेः काच्ये हितात्मिभः। उपपातक सिध्यर्थे सहस्तपरिसंख्यया ॥ ८॥ महापानक संयुक्ती लक्ष होमं सदा हिजः। मुन्यते सर्वपापेभयो गायन्याश्चेव जापनात्॥ ९॥अ भ्यसेच महापुण्यां गायत्रीं वेदमातरम्। गत्वारणये नदीतीरे सर्वपापविश्वद्ये॥२१०॥ स्नात्ना च विधिवत्तत्र प्राणानायम्य बाग्यनः। पाणायामेस्त्रिभिः पूत्रो गायत्रीन्तु जपेद्हिजः॥११ अक्रिन्नवासाः स्थलगः शुची देशे समाहितः। पवित्रपाणि राचान्तो गायच्या जपमारमेत्।।१२॥ ऐहिकामुिककं होके-पापं सर्व्य विशेषतः। पञ्चरात्रेण गायत्रीं जपमानो व्यपोहति ॥१३॥ गायत्र्यास्तु परंनास्ति शोधनं पापकर्मणाम् ॥१४॥म हाच्याहतिसंयुक्तां माणायामेन संयुताम्। गायत्रीं प्रजपन् सम्बर्तस्मृतिः।

चित्रः सर्वपापेः प्रमुच्यते ॥२१५॥ ब्रह्मचारी मिताहारः सर्व भूतहिन रतः । गायव्या उक्षजप्येन सर्वपापेः प्रमुच्यते॥१६ अयाज्ययाजनं कत्वा सत्का चान्नं विगरितम्। गायत्रपूष्स हरान्त ज्यं रुत्वा विमुच्यते॥१०॥ अहन्यहान योऽधीत गायत्री वै हिजोत्तमः। मासेन मुच्यते पापादुरगः क्ब्रुकाद् यथा।।१८॥गायत्रां यः सदा विष्रोजपने नियतः शुनिः। स याति परमं स्थानं वायुभूतः खमूर्तिमान् ॥१९॥ प्रणवेन तु संयुक्ता व्याद्धतीः सप्त नित्यशः। गायत्रीं शिरसा सार्द्ध मन सा त्रिः पठेहिजः ॥२२०॥ निगृह्य चात्मनः पाणान् प्राणाया मो विधीयते। प्राणायाम्त्रयं कुर्यात्मित्यमेव समाहितः॥२१ मानसं वाचिकं पापं कायेनेव तु यन् कृतम्। तत् सर्वे नश्यते तूर्णं प्राणायामनये कृते॥२२॥ ऋग्वेदमभ्यस्यस्य यजुःशा खोमथापि वा। सामानि सरहस्यानि सर्वणपेः ममुच्यत्॥ ॥२३॥ पाचमानीं तथा कीत्सं पीरुषं स्क्रमेव च। जत्वा पापैः प्रमुच्येत् पित्र्यञ्च मधुच्छन्दसाम् ॥२४॥ मण्डतं ब्राह्मणं रुद्रस्कोन्ताश्च बहत्वथाः । वामदेव्यं बहत्सामजस्या पा-पैः प्रमुच्यते ॥ २२५॥ चान्द्रायणन्तु सर्वषा पापानां पावनं प रम्। छत्वा शिद्धमवाभ्रोति परमं स्थानमेव च ॥ २२६॥ धर्म शास्त्रमिदं पुण्यं सम्वर्त्तन तु भाषितम् । अधीत्य ब्राह्मणो गच्छे ह्रह्मणः सद्म शाश्वतम् ॥२२७॥ ॥ इति श्रीसम्ब र्त्तनोक्तं धम्मिशास्त्रं समाप्तम् ॥ ॥ इति श्रीसम्ब

समाप्ता सम्बर्तस्मृतिः।